ऋग्वेद

(सायण–भाष्यावलम्बी सरल हिन्दी भावार्थ सहित)

[तृतीय खण्ड]

लेखक :

वेदमूर्ति, तपोनिष्ठ

पं० श्रीराम शर्मा आचार्य

चार वेद, १०८ उपनिषद्, षट्दर्शन, योग वासिष्ठ
२० स्मृतियाँ और १८ पुराणों के
प्रसिद्ध भाष्यकार

प्रकाशक :

संस्कृति संस्थान

ख्वाजाकुतुब, (वेद नगर), बरेली–२४३००३ (उ० प्र०)

फोन नं० ४२४२

प्रकाशक :

डा. चमन लाल गौतम

संस्कृति संस्थान
ख्वाजा कुतुब, वेद नगर
बरेली–२४३००३ (उ. प्र.)
फोन : ४२४२

*

सम्पादक :

पं० श्रीराम शर्मा आचार्य

*

*

संशोधित संस्करण
१९८२

*

मुद्रक :

शैलेन्द्र वी० माहेश्वरी
नव ज्योति प्रेस,
भीकचन्द मार्ग, मथुरा।

*

मूल्य :

ग्यारह रुपये मात्र

सूक्त ७०

(ऋषि-भरद्वाजो बार्हस्पत्यः । देवता-द्यावापृथिवीत्योः छन्द जगती)

घृतवतो भुवनानामभिश्रियोर्वी पृथ्वी मधुदुघे सुपेशसा ।
द्यावापृथिवी वरुणस्य धर्मणा विष्कभिते अजरे भूरिरेतसा ॥१
असश्चन्ती भूरिधारे पयस्वती घृतं दुहाते सुकृते शुचिव्रते ।
राजन्ती अस्य भुवनस्य रोदसी अस्मे रेतः सिञ्चतं
यन्मनुर्हितम् ॥२

यो वामृजवे क्रमणाय रोदसी मर्तो ददाश धिषणे स साधति ।
प्र प्रजाभिर्जायते धर्मणस्परि युवोः सिक्ता विषुरूपाणि सव्रता ।३
घृतेन द्यावा पृथिवी अभीवृते घृतश्रिया घृतपृचा घृतावृधा ।
उर्वी पृथ्वी होतृवूर्ये पुरोहिते ते इद् विप्रा ईलते सुम्नमिष्टये । ४
मधु नो द्यावापृथिवी मिमिक्षतां मधुश्चुता मधुदुघे मधुव्रते ।
दधाने यज्ञं द्रविणं च देवता महि श्रवो वाजमस्मे सुवीर्यम् ॥५
ऊर्जं नो द्यौश्च पृथिवी च पिन्वतां पिता माता विश्वविदा
सुदंससा ।
संरराणे रोदसी विश्वशम्भुवा सनिं वाजं रयिमस्मे समिन्वताम्
।६।१४

हे द्यावापृथिवी ! तुम जल वाली हो । सुन्दर रूप वाली, वरुण द्वारा धारण की हुई नित्य और अनेक कर्म वाली हो ।१। हे द्यावा-पृथिवी ! श्रेष्ठ कर्म वाले पुरुषों को तुम जल प्रदान करती हो । तुम भुवन की अधीश्वरी हो । हमें हितकारी बल प्रदान करो ।२। हे द्यावा-पृथिवी ! तुम्हारा उपासक पुरुष सिद्ध काम होता है । वह सन्तानों के सहित बढ़ता है ।३। द्यावापृथिवी जल द्वारा आच्छादित हैं और जल का ही आश्रय करती है। वे विस्तीर्ण, जल से ओत प्रोत और जलवृष्टि का विधान करने वाली हैं । यज्ञ वाले यजमान, उनसे सुख माँगते हैं ।

।४। जल का दोहन करने वाली, यज्ञ, धन, यश, अन्न, बल प्रदात्री द्यावापृथिवी हमें मधु से अभिषिक्त करें ।५। हे पिता स्वर्ग और माता पृथिवी ! हमें अन्न प्रदान करो । तुम जगत् के जानने वाली, सुखदात्री हो, हमें बल, धन और अपत्य दो ।६।

(१)

सूक्त ७१

(ऋषि–भारद्वाज बार्हस्पत्यः । देवता–सविता । छन्द–जगती, त्रिष्टुप्)

उदु ष्य देवः सविता हिरण्यया बाहू अयंस्त सवनाय सुक्रतुः ।
घृतेन पाणी अभि प्रुष्णुते मखो युवा सुदक्षो रजसो विधर्मणि ॥१
देवस्य वयं सवितुः सवीमनि श्रेष्ठे स्याम वसुनश्च दावने ।
यो विश्वस्य द्विपदो यश्चतुष्पदो निवेशने प्रसवे चासि भूमनः ॥२
अदब्धेभिः सवितः पायुभिष्ट्वं शिवेभिरद्य परि पाहि नो गयम् ।
हिरण्यजिह्वः सुविताय नव्यसे रक्षा माकिर्नो अघशंस ईशत ।३
उदु ष्य देवः सविता दमूना हिरण्यपाणिः प्रतिदोषमस्थात् ।
अयोहनुर्यजतो मन्द्रजिह्व आ दाशुषे सुवति भूरि वामम् ॥४
उदू अयाँ उपवक्तेव बाहू हिरण्यया सविता सुप्रतीका ।
दिवो रोहांस्यरुहत् पृथिव्या अरीरमत् पतयत् कच्चिदभ्वम् ॥५
वाममद्य सवितर्वाममु दिवेदिवे वाममस्मभ्यं सावीः ।
वामस्य हि क्षयस्य देव भूरेरया धिया वामभाजः स्याम ।६।१५

श्रेष्ठकर्मी सवितादेव अपनी भुजाओं को ऊपर उठाकर संसार की रक्षा करते हैं ।१। उन सवितादेवके धन-दानके लिये हम सामर्थ्य पावें । हे सवितादेव ! तुम सब पशुओं और मनुष्योंकी रचना करने वाले और हमारा मङ्गल करो । हमारा अनिष्ट चाहने वाला शत्रु हमारा शासक न हो ।३। शांतमन वाले सुवर्ण हस्त, यश के योग्य सवितादेव रात्रि का अन्त होने पर सचेष्ट होकर हविदाता के लिए अभीष्ट अन्न प्रेरित करें

।४। वे सवितादेव दोनों भुजाओं को उठाते हुए पृथिवी से स्वर्गके उन्नत प्रदेश पर आरूढ़ होते हैं। वे सभी महान् वस्तुओं को पुष्ट करते हैं।५। हे सवितादेव ! हमें आज धन दो। कल भी हमें धन देना, इस प्रकार नित्यही देते रहना। तुम अपरिमित धन वाले हो, अतः हम स्तुति द्वारा धन पावेंगे।६। (१५)

सूक्त ७२

(ऋषि–भरद्वाजो बार्हस्पत्यः। देवता–इन्द्रसोमौ। छन्द–त्रिष्टुप्)

इन्द्रासोमा महि तद् वां महित्वं युवं महानि प्रथमानि चक्रथुः।
युवं सूर्यं विविदथुर्युवं स्वर्विश्वा तमांस्यहतं निदश्च ॥१
इन्द्रासोमा वासयथ उषासमुत् सूर्यं नयथो ज्योतिषा सह।
उप द्यां स्कम्भथुः स्कम्भनेनाप्रथतं पृथिवीं मातरं वि ॥२
इन्द्रासोमावहिमपः परिष्ठां हथो वृत्रमनु वां द्यौरमन्यत।
प्रार्णांस्यैरयतं नदीनामा समुद्राणि पप्रथुः पुरूणि ॥३
इन्द्रासोमा पक्वमामास्वन्तर्नि गवामिद् दधथुर्वक्षणासु।
जगृभथुरनपिनद्धमासु रुशच्चित्रासु जगतीष्वन्तः ॥४
इन्द्रासोमा युवमङ्ग तरुत्रमपत्यसाचं श्रुत्यं रराथे।
युवं शुष्मं नर्यं चर्षणिभ्यः सं विव्यथुः पृतनाषाहमुग्रा ।५।१६

हे इन्द्र और सोम ! तुम और अत्यन्त महिमा वाले हो तुमने मुख भूतों की सृष्टि की है और सूर्य तथा जल को भी पाया है। तुम्हीं ने निन्दा करने वालों को और अन्धकार को नष्ट किया है।१। हे इन्द्र और सोम ! तुम उषा को उदित करो और सूर्य की दीप्ति को उठाओ। अन्तरिक्ष के द्वारा स्वर्ग को स्तम्भित करो और माता पृथिवी को पूर्ण करो।२। हे इन्द्र और सोम ! तुम जल को रोकने वाले वृत्र को मारो। स्वर्ग ने तुम्हें प्रवृद्ध किया अतः नदी के जल को प्रवाहित कर समुद्र को भरदो।३। हे इन्द्र और सोम ! तुमने गौओं में परिपक्व

दूध रखा है और विविध वर्ण वाली गौओंके मध्य श्वेत वर्ण वाले दूध को ही धारण कराया है ।४। हे इन्द्र और सोम ! तुम हमें उद्धार करने वाला अपत्ययुक्त धन दो । तुम शत्रु सेना के अभिभूत करने वाले बल को बढ़ाओ ।५।

(१८)

सूक्त ७३

(ऋषि–भरद्वाज बार्हस्पत्यः । देवता— बृहस्पति । छन्द–त्रिष्टुप्)

यो अद्रिभित् प्रथमजा ऋतावा बृहस्पतिराङ्गिरसो हविष्मान् ।
द्विबर्हज्मा प्राघर्मसत् पिता न आ रोदसी वृषभो रोरवीति ॥१
जनाय चिद् य ईवत उ लोकं बृहस्पतिर्देवहूतौ चकार ।
घ्नन् वृत्राणि वि पुरो दर्दरीति जयञ्छत्रूँरमित्रान् पृत्सु साहन् ॥२
बृहस्पतिः समजयद् वसूनि महो व्रजान् गोमतो देव एषः ।
अपः सिषासन् त्स्वरप्रतीतो बृहस्पतिर्हन्त्यमित्रमर्कैः ।३।१७

बृहस्पति सर्वप्रथम उत्पन्न हुए और जिन्होंने पर्वत को तोड़ा था, जो अङ्गिरा और यज्ञ-योग्य, दोनों लोकों में भले प्रकार गमनशील हैं, वही बृहस्पति स्वग और पृथिवीमें घोर शब्द करते हैं ।१। जो बृहस्पति यज्ञ में स्तोता को स्थान देने वाले हैं,वही बृहस्पति वृत्र-हन्ता और शत्रु विजेता हैं । वे अपने वैरियों को हराते और राक्षसोंके नगरों को तोड़ते हैं ।२। इन्हीं बृहस्पति ने राक्षसों का गोधन जीता । यही बृहस्पति स्वर्ग के शत्रुओं को मन्त्र द्वारा मारते हैं ।३।

सूक्त ७४

(ऋषि—भरद्वाज बार्हस्पत्यः । देवता-सोमारुद्रो । छन्द–त्रिष्टुप्)

सोमारुद्रा धारयेथामसुर्यं प्र वामिष्टयोऽरमश्नुवन्तु ।
दमेदमे सप्त रत्ना दधाना शं नो भूतं द्विपदे शं चतुष्पदे ॥१
सोमारुद्रा वि वृहतं विषूचीममीवा या नो गयमाविवेश ।
आरे बाधेथां निर्ऋतिं पराचैरस्मे भद्रा सौश्रवसानि सन्तु ॥२

सोमारुद्रा युवमेतान्यस्मे विश्वा तनूषु भेषजानि धत्तम् ।
अव स्यतं मुञ्चतं यन्नो अस्ति तनूषु बद्धं कृतमेनो अस्मत् ॥३
तिग्मायुधौ तिग्महेती सुशेवौ सोमारुद्राविह सु मृलतं नः ।
प्र नो मुञ्चतं वरुणस्य पाशाद् गोपायतं नः सुमनस्यमाना ।४।१८

हे सोम और रुद्र ! हमें महान् बल दो । सब यज्ञ तुम्हें व्याप्त करें । तुम सात रत्नों के धारक हो । हमारे लिए मङ्गलकारी होओ और हमारे मनुष्यों और पशुओं को सुखी करो ।१। हे सोम और रुद्र ! हमारे घर में घुसने वाले रोग को दूर करो । दरिद्रता हमारे पास से भागे और हम अन्न प्राप्ति द्वारा सुखपावें ।२। हे सोम और रुद्र हमारी देह रक्षा के लिए औषधि धारण करो । हमारे पापों को दूरकर दो ।३। हे सोम और रुद्र ! तुम्हारे पास श्रेष्ठ धनुष और तीक्ष्ण वाथ हैं । तुम सुन्दर स्तुति की इच्छा करते हुए हमें सुखदो । हमको वरुण पाश से भी मुक्त करो । । (८)

सूक्त ७५

(ऋषि–पायुर्भारद्वाजः । देवता–वर्म धनु, सारथिः, रथः प्रभृति, छन्द—त्रिष्टुप् जगती, अनुष्टुप् उष्णिक, पंक्ति)

जीमूतंस्येव भवति प्रतीकं यद् वर्मी याति समदामुपस्थे ।
अनाविद्धया तन्वा जय त्वं स त्वा वर्मणो महिमा पिपर्तु ॥१
धन्वना गा धन्वनाजिं जयेम धन्वना तीव्राः समदो जयेम ।
धनुः शत्रोरपकामं कृणोति धन्वना सर्वाः प्रदिशो जयेम ॥२
वक्ष्यन्तीवेदा गनीगन्ति कर्णं प्रियं सखायं परिषस्वजाना ।
योषेव शिङ्क्ते वितताधि धन्वञ्ज्या इयं समने पारयन्ती ॥३
ते आचरन्ती समनेव योषा मातेव पुत्रं बिभृतामुपस्थे ।
अप शत्रून् विध्यतां संविदाने आर्त्नी इमे विष्फुरन्ती अमित्रान् ॥४।

बह्वीनां पिता बहुरस्य पुत्रश्चिश्चा कृणोति समना गत्य ।
इषुधिः सङ्काः पृतनाश्च सर्वाः पृष्ठे निनद्धो जयति प्रसूतः ।५।१६

संग्राम उपस्थित होने पर यह राजा जब मोह लोह कवच धारण करता है, तब वह मेघ के समान लगता है । हे राजन् ! तुम अहिंसक रहते हुए जीतो । महिमामय कवच तुम्हारा रक्षक हो ।१। हम धनुष के प्रभाव से युद्ध को जीतकर गौओं को प्राप्त करेंगे । शत्रु की इच्छा नष्ट हो । हम इस धनुष से दिशाओं में स्थित शत्रुओं को हटा देंगे ।२। धनुष की प्रत्यञ्चा संग्राम से पार लगाने के लिए प्रिय वचन कहती हुई कान के पास पहुँचती हैं । यह प्रत्यञ्चा बाण से मिलकर शब्द करती है ।३। धनुषकोटियाँ आक्रमण के समय माता द्वारा-पुत्र की रक्षा करने के समान इस राजा की रक्षा करें और शत्रुओं को विदीर्ण कर डालें ।४। यह तूणीर बाणों के पिता के समान हैं अनेकों बाण इसके पुत्र हैं । बाण के निकलने के समय जब यह शब्द करता है तब समस्त सेनाओं पर विजय पाता है ।६।

(१६)

रथे तिष्ठन् नयति बाजिनः पुरो यत्रयत्र कामयते सुषारथिः ।
अभीशूनां महिमानं पनायत मनः पश्चादनु यच्छन्ति रश्मयः ।।६
तीव्रान् घोषान् कृण्वते वृषपाणयो ऽश्वा रथेभिः सह वाजयन्तः ।
अवक्रामन्तः प्रपदैरमित्रान् क्षिणन्ति शत्रूँरनपव्ययन्तः ।।७
रथवाहनं हविरस्य नाम यत्रायुधं निहितमस्य वर्म ।
तत्रा रथमुप शग्मं सदेम विश्वाहा वयं सुमनस्यमानाः ।।८
स्वादुषंसदः पितरो वयोधाः कृच्छ्रेश्रितः शक्तीवन्तो गभीराः ।
चित्रसेना इषुबला अमृध्राः सतोवीरा उरवो व्रातसाहाः ।।६
ब्राह्मणासः पितरः सोम्यासः शिवे नो द्यावापृथिवी अनेहसा ।
पूषा नः पातु दुरितादृतावृधो रक्षा माकिर्नो अघशंस ईशत
।१०।२०

श्रेष्ठ सारथि आगे योजित अश्वों को मनोनुकूल चलाता है रस्सियाँ भी इच्छानुसार अश्वों के कण्ठ तक जाकर उन्हें आगे-पीछे चलाती हैं। उन रस्सियों का यश वर्णन करो।६। रथ के सहित वेग पूर्वक गमन करते हुए अश्व धूल उड़ाने का शब्द करते हैं,वे पीछे न हट कर शत्रुओं को रोंद डालते हैं।७। हव्य जैसे अग्नि को प्रवृद्ध करता है, वैसे रथ द्वारा वहन किया जाता धन इस राजा को बढ़ावे। इस राजा के शस्त्रास्त्र जिस रथ पर रहते हैं,हम उस रथके समीप प्रसन्नता पूर्वक गमन करते हैं।८। शत्रुओं के अन्न को रथ के रक्षक नष्ट करते और अपने लोगोंको अन्न देते हैं। सङ्कट कालमें इनका आश्रय लिया जाता है, क्योंकि यह अनेक शत्रुओं को जीतने वाले हैं।९। हे ब्राह्मणों ! पितरों ! तुम हमारे रक्षक होओ। द्यावापृथिवी हमारा मङ्गल करें। पूषा पाप से बचावें। शत्रु हमारे शासक न हों।१०। (२०)

सुपर्णं वस्ते मृगो अस्या दन्तो गोभिः संनद्धा पतति प्रसूता।
यत्रा नरः सं च वि च द्रवन्ति तत्रास्मभ्यमिषवः शर्म यंसन् ॥११
ऋजीते परि वृङ्धि नो ऽश्मा भवतु नस्तनूः।
सोमो अधि ब्रवीतु नो ऽदितिः शर्म यच्छतु ॥१२
आ जंघन्ति सान्वेषां जघनां उप जिघ्नते।
अश्वाजनि प्रचेतसो ऽश्वान् त्समत्सु चोदय ॥१३
अहिरिव भोगैः पर्येति बाहुं ज्याया हेतिं परिबाधमानः।
हस्तघ्नोविश्वा वयुनानि विद्वान् पुमान् पुमांसं परि पातु विश्वतः ॥१४

अलाक्ता या रुरुशीर्ष्ण्यथो यस्या अयो मुखम्।
इदं पर्जन्यरेतस इष्वै देव्यै बृहन्नमः।१५।२१

सुन्दर पंख वाले बाण का दाँत मृग की सींग हैं। यह प्रत्यञ्चा तांत से बन्धी हुई है। यह प्रेरित होकर गिरता है। जहाँ नेता विचरते हैं वहाँ यह बाण हमें आश्रय प्रदान करे।११। हे बाण हमें बढ़ाओ।

हमारा शरीर पाषाणके समान दृढ़हो । सोम हमारा पक्षले और अदिति मङ्गल करे ।१२। हे चाबुक ! सारथि तुम्हारे द्वारा अश्वको चलाते हैं । तुम अश्वोंको रणभूमि में ले जाओ ।१३। हे हस्तघ्न ! प्रत्यंचाके प्रहार का निवारण करता हुआ, सर्प के समान देह के द्वारा प्रकोष्ठ को व्याप्त करता है ।१४। जो बाण विषयुक्त, लौहमय और हिंसक मुख वाला है, वह पर्जन्य से उत्पन्न है उसे नमस्कार हो ।१५।   (२१)

अवसृष्टा परा पत शरव्ये ब्रह्मसंसिते ।
गच्छामित्रान् प्र पद्यस्व मामीषां कं चनोच्छिषः ॥१६
यत्र बाणाः सम्पतन्ति कुमारा विशिखा इव ।
तत्रा नो ब्रह्मणस्पतिरदितिः शर्म यच्छतु विश्वाहा शर्म यच्छतु ॥१७
मर्माणि ते वर्मणा छादयामि सोमस्त्वा राजामृतेनानु वस्ताम् ।
उरोर्वरीयो वरुणस्ते कृणोतु जयन्तं त्वानु देवा मदन्तु ॥१८
यो नः स्वो अरणो यश्च निष्ट्यो जिघांसति ।
देवास्तं सर्वे धूर्वन्तु ब्रह्म ममान्तरम् ।१९।२२

मन्त्र द्वारा तीक्ष्ण बाण ! तुम वध-कर्ममें चतुरहो अतः छोड़े जाकर शत्रुओंपर गिरो और उन्हें जीवित मत छोड़ो ।१६। जिस सँग्राममें बाण गिरते हैं, उस संग्राम में ब्रह्मणस्वत और अदिति सुख प्रदान करें ।१७। हे राजन् ! मैं तुम्हारे मर्म को कवच से ढकता हूँ । सोम तुम्हें अमृत से ढकें और वरुण तुम्हें महान् सुख प्रदान करे । तुम्हारी जीत से देवता हर्षित होते हैं ।१८। जो बान्धव हमसे रुद्रहोकर हमें मारना चाहता है, उसे सभी हिंसित करें । यह मन्त्र ही हमारे लिए कवच रूप है ।१९।
(२२)

॥ षष्ठम मण्डल समाप्तम् ॥

——

॥ अथ सप्तमं मण्डलम् ॥

सूक्त १ [प्रथम अनुवाक]

(ऋषि—वसिष्ठः । देवता—अग्निः । छन्द—गायत्री त्रिष्टुप्)

अग्निं नरो दीधितिभिररण्योर्हस्तच्युतो जनयन्त प्रशस्तम् ।
दूरेदृशं गृहपतिमथर्युम् ॥१
तमग्निमस्ते वसवो न्यृण्वन् त्सुप्रतिचक्षमवसे कुतश्चित् ।
दक्षाय्यो यो दम आस नित्यः ॥२
प्रेद्धो अग्ने दीदिहि पुरो नो ऽजस्रया सूर्म्या यविष्ठ ।
त्वां शश्वन्त उप यन्ति वाजाः ॥३
प्र ते अग्नयोऽग्निभ्यो वरं निः सुवीरासः शोशुचन्त द्युमन्तः ।
यत्रा नरः समासते सुजाताः ॥४
दा नो अग्ने धिया रयिं सुवीरं स्वपत्यं सहस्य प्रशस्तम् ।
न यं यावा तरति यातुमावान् ।५।२३

ऋत्विग्गण महान्, विस्तारपूर्ण, दूर रहने वाले अग्नि को अरणियों से प्रकट करते हैं ।१। जो अग्नि घर में नित्य पूजे जाते थे, उन्हीं अग्नि को वशिष्ठो ने भय से रक्षा करने को घरों में स्थापित किया था ।२। हे युवातम अग्ने ! तुम भले प्रकार प्रदीप्त होकर ज्वालाओं सहित तेजको प्राप्त होओ । तुम्हारे पास प्रचुर धन पहुँचता है ।३। जिस अग्निके पास सुन्दर जन्म वाले ऋत्विज् बैठते हैं वह सांसारिक अग्निसे अधिकतेजस्वी मङ्गलमय, पुत्र-दाता और प्रकाशमान होते हैं ।४। शत्रुओं को पराजय देने वाले हे अग्ने ! जिस प्रकार हिंसाकारी राक्षस हमारे कर्ममे बाधक

न हों, इस प्रकार की रक्षायें और पुत्र-गौत्र देने वाले श्रेष्ठ धन को हमे प्रदान करो ।५।

उप यमेति युवतिः सुदक्षं दोषा वस्तोर्हविष्मती घृताची ।
उप स्वैनमरमतिर्वसूयुः ॥६
विश्वा अग्नेऽप दहारातीर्येभिस्तपोभिरदहो जरूथम् ।
प्र निस्वरं चातयस्वामीवाम् ॥७
आ यस्ते अग्न इधते अनीकं वसिष्ठ शुक्र दीदिवः पावक ।
उतो न एभिः स्तवथैरिह स्याः ॥८
वि ये ते अग्ने भेजिरे अनीकं मर्ता नरः पित्र्यासः पुरुत्रा ।
उतो न एभिः सुमना इह स्याः ॥९
इमे नरो वृत्रहत्येषु शूरा विश्वा अदेवीरभि सन्तु मायाः ।
ये मे धियं पनयन्त प्रशस्ताम् ।१०।२४

हव्य से सम्पन्न नारी जुहूको जानने वाली है । वह अग्निके समीप गमन करती है । स्वयं उत्पन्न दीप्ति धनकी कामना करने वाली होकर उसके पास पहुँचती है ।३। हे अग्ने ! जिस तेज से तुम कठोर वाणी उच्चारण करने वाले राक्षस को दग्ध करते हो, अपने उसी तेज से सब शत्रुओं को भस्म करो । सभी उत्पातादि को नष्ट करते हुए हमारी रोग व्याधि को भी मिटाओ ।७। हे पावक ! तुम उज्ज्वल ज्योति से प्रदीप्त होते हो । तुम अपने समृद्ध करने वाले के पास जैसे ठहरते हो वैसे ही इस स्तोत्र से प्रसन्न होकर हमारे यज्ञमें भी निवास करो ।८। हे अग्ने ! पितरों का हित करने वाले जिन कर्मवीरों ने तुम्हारे तेज को विभिन्न कर्मोंमें विभाजित किया है, इस स्तोत्र से प्रसन्न होकर तुम उसी प्रकार हमारे यज्ञमें वास करो ।८। जो पुरुष मेरे उत्तम कर्म की प्रशंसा करे, वे रणभूमिमें उपस्थित होकर राक्षसों की माया को नष्ट करें ।१०। (२४)

मा शूने अग्ने नि षदाम नृणां माशेषसोऽवीरता परि त्वा ।
प्रजावतीषु दुर्यासु दुर्य ॥११

यमश्वी नित्यमुपयाति यज्ञं प्रजावन्तं स्वपत्यं क्षयं नः ।
स्वजन्मना शेषसा वावृधानम् ॥१२
पाहि नो अग्ने रक्षसो अजुष्टात् पाहि धूर्तेररुषो अघायोः ।
त्वा युजा पृतनायूँरभि ष्याम् ॥१३
सेदग्निरग्नींरत्यस्त्वन्यान् यत्र वाजी तनयो वीलुपाणिः ।
सहस्रपाथा अक्षरा समेति ॥१४
सेदग्निर्यो वनुष्यतो निपाति समेद्धारमंहस उरुष्यात् ।
सुजातासः परि चरन्ति वीराः ।१५।२५

हे अग्ने ! हम अन्य के गृह में नहीं रहेंगे। शून्य गृह में भी वास नहीं करेंगे। हम पुत्र रहित और वीरोंसे शून्य न रहते हुए तुम्हारे सनुग्रह से सुपुत्रवान् होकर समृद्ध घर में निवास करें। अश्ववान् अग्नि जिस यज्ञगृह में प्रतिदिन गमन करते हैं वैसा ही अपत्ययुक्त, भृत्य और सम्पत्ति युक्त गृह हम प्राप्त करें। हे अग्ने ! दुर्धर्ष राक्षसों से हमारी रक्षा करो। अदानशील पापियों और हिंसा-वृत्ति वालों से भी राक्षस करो। तुम्हारा अनुकूलताको प्राप्त हुए हम सेना एकत्र करने वाले शत्रु को हरायेंगे। हमारा दृढ़ भुजा वाला बलवान् पुत्र जिन अग्नि की परिचर्या करता है, वही अग्नि अन्य के अग्नि को प्रकट करे। जो अनुष्ठाता प्रबोध करने वाले की रक्षा करते हैं और श्रेष्ठजन्मा वीर जिन की सेवा करते हैं, वही अग्नि हैं।११-१५। (२५)

अयं सो अग्निराहुतः पुरुत्रा यमीशानः समिदिन्धे हविष्मान् ।
परि यमेत्यध्वरेषु होता ॥१६
त्वे अग्न आहवनानि भूरीशानास आ जुहुयाम नित्या ।
उभा कृण्वन्तो वहतू मियेधे ॥१७
इमो अग्ने वीततमानि हव्या ऽजस्रो वक्षि देवतातिमच्छ ।
प्रति न ईं सुरभीणि व्यन्तु ॥१८

मा नो अग्नेऽवीरते परा दा दुर्वाससेऽमतये मा नो अस्यै ।
मा नः क्षुधे मा रक्षस ऋतावो मा नो दमे मा वन आ जुहूर्थाः१९
नू मे ब्रह्माण्यग्न उच्छशाधि त्वं देव मघवद्भ्यः सुषूदः ।
रातौ स्यामोभयास आ ते यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ।२०।२६

जिन्हें हवि सम्पन्न यजमान भले प्रकार प्रदीप्त करता है और यज्ञ में जिनकी परिक्रमा की जाती है, उस अग्नि को अनेक देशों में आहूत किया जाता है।१६। हे अग्ने ! धनके अधीश्वर होकर हम प्रतिदिन ही तुम्हारी स्तुति करते हुए हव्यादि देंगे।१७। हे अग्ने ! तुम देवताओं के पास इन रमणीय हवियों को पहुँचाओ, क्योंकि सभी देवता हमारे इस श्रेष्ठ यज्ञ में भाग प्राप्त करना चाहते है।१८। हे अग्ने ! संततिहीन न हो, निकृष्ठ वस्त्र न पहनें। हमारी बुद्धि का नाश न हो, हम क्षुधार्त हों,। राक्षस के हाथ में न पड़े। हे अग्ने ! हम घर जङ्गल या मार्ग में कहीं भी मृत्युको प्राप्त न हों।१ । हे अग्ने हमारा अन्न परिष्कृत हो। तुम इन यज्ञ करने वालों को अन्न दो हम स्तोता और यजमान, दोनों ही तुम्हारे दानको पावें। तुम सदा हमारी रक्षा करते रहो।१०।(२६)

त्वमग्ने सुहवो रण्वसंदृक् सुदीती सूनो सहसो दिदीहि ।
मा त्वे सचा तनये नित्य आ धङ् मा वीरो अस्मन्नर्यो वि
दासीत् ॥२१
मा नो अग्ने दुर्भृतये सचैषु देवेद्धेष्वग्निषु प्र वोचः ।
मा ते अस्मान् दुर्मतयो भृमाच्चिद् देवस्य सूनो सहसो नशन्त॥२२
स मर्तो अग्ने स्वनीक रेवानमर्त्ये य आजुहोति हव्यम् ।
स देवता वसुवनिं दधाति यं सूरिरर्थी पृच्छमान एति ॥२३
महो नो अग्ने सुवितस्य विद्वान् रयिं सूरिभ्य आ वहा बृहन्तम् ।
येन वयं सहसावान् मदेमाऽविक्षितास आयुषा सुवीराः ॥२४

नू मे ब्रह्माण्यग्र उच्छशाधि त्वं देव मघवद्भ्यः सुषूदः ।
राती स्यामोभयास आ ते यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ।२५।७

हे अग्ने ! तुम भले प्रकार आहूत किये जाते हो । तुम अपनी दर्शनीय ज्वालाओं सहित प्रकट होओ । तुम हमारे पुत्रको दग्ध मत करो । हमारा पुत्र चिरंजीवी हो । तुम हमारे इस प्रकारसे सहायक होओ।२१। हे अग्ने तुम हमारी सहायता करो । ऋत्विजों द्वारा प्रदीप्त अग्नियों से हमारा सुख पूर्वक पोषण करने को कहो । तुम बलोत्पन्न हो, हमारी बुद्धि भ्रमित न हो जाय ।२२। हे अग्ने ! जो याज्ञिक तुम्हें हव्य दान करता हैं, वह धन से सम्पन्न हो जाता है । धनकी कामना वाला स्तोत्र जिसके आश्रयमें गमन करता है वह अग्नि यजमान की सदा रक्षा करते हैं ।२३। हे अग्ने ! हमारे कल्याणकारी कार्यों के तुम ज्ञाता हो । हम तुम्हारी स्तुति करते हैं । तुम हमें ऐसा कल्याणकारी धन प्रदान करो, जिससे हम पूर्ण आयुष्य पुत्र पौत्रादि से युक्त होंकर प्रसन्न रहें ।२४। हे अग्ने ! हमारे अन्न को भले प्रकार संस्कारित करो । तुम यज्ञकर्ताओंको अन्न प्रदान करो । हम स्तोता और यजमान, दोनों ही तुम्हारे दान को प्राप्त करे । तुम अपनी मङ्गलमयी रक्षाओं से सदा हमारी रक्षा करते रहो ।२५। (२७)

सूक्त २

(ऋषि—वसिष्ठः । देवता—आप्रम् । छन्द—त्रिष्टुप्, पंक्ति)

जुषस्व नः समिधमग्ने अद्य शोचा बृहद् यजतं धूममृण्वन् ।
उप स्पृश दिव्यं सानु स्तूपैः सं रश्मिभिस्ततनः सूर्यस्य ॥१
नराशंसस्य महिमानमेषामुप स्तोषाम यजतस्य यज्ञैः ।
ये सुक्रतवः शुचयो धियंधाः स्वदन्ति देवा उभयानि हव्या ॥२
ईलेन्यं वो असुरं सुदक्षमन्तर्दूतं रोदसी सत्यवाचम् ।
मनुष्वदग्निं मनुना समिद्धं समध्वराय सदमिन्महेम । ३

मा नो अग्नेऽवीरते परा दा दुर्वाससेऽमतये मा नो अस्यै ।
मा नः क्षुधे मा रक्षस ऋतावो मा नो दमे मा वन आ जुहूर्थाः।१९

नू मे ब्रह्माण्यग्न उच्छशाधि त्वं देव मघवद्भ्यः सुषूदः ।
रातौ स्यामोभयास आ ते यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः।२०।२६

जिन्हें हवि सम्पन्न यजमान भले प्रकार प्रदीप्त करता है और यज्ञ में जिनकी परिक्रमा की जाती है, उस अग्नि को अनेक देशों में आहूत किया जाता है।१६। हे अग्ने ! धनके अधीश्वर होकर हम प्रतिदिन ही तुम्हारी स्तुति करते हुए हव्यादि देंगे।१७। हे अग्ने ! तुम देवताओं के पास इन रमणीय हवियों को पहुँचाओ, क्योंकि सभी देवता हमारे इस श्रेष्ठ यज्ञ में भाग प्राप्त करना चाहते है।१८। हे अग्ने ! संततिहीन न हो, निकृष्ठ वस्त्र न पहनें। हमारी बुद्धि का नाश न हो, हम क्षुघार्त हों,। राक्षस के हाथ में न पड़े। हे अग्ने ! हम घर जङ्गल या मार्ग में कहीं भी मृत्युको प्राप्त न हों।१ । हे अग्ने हमारा अन्न परिष्कृत हो। तुम इन यज्ञ करने वालों को अन्न दो हम स्तोता और यजमान, दोनों ही तुम्हारे दानको पावें। तुम सदा हमारी रक्षा करते रहो।१०।(२६)

त्वमग्ने सुहवो रण्वसंदृक् सुदीती सूनो सहसो दिदीहि ।
मा त्वे सचा तनये नित्य आ धङ् मा वींरो अस्मन्नर्यो वि
दासीत् ॥२१

मा नो अग्ने दुर्भृतये सचैषु देवेद्धेष्वग्निषु प्र वोचः ।
मा ते अस्मान् दुर्मतयो भृमाच्चिद् देवस्य सूनो सहसो नशन्त॥२२

स मर्तो अग्ने स्वनीक रेवानमर्त्ये य आजुहोति हव्यम् ।
स देवता वसुवनिं दधाति यं सूरिरर्थी पृच्छमान एति ॥२३

महो नो अग्ने सुवितस्य विद्वान् रयिं सूरिभ्य आ वहा बृहन्तम् ।
येन वयं सहसावान् मदेमाऽविक्षितास आयुषा सुवीराः ॥२४

नू मे ब्रह्माण्यग्र उच्छशाधि त्वं देव मघवद्भ्यः सुषूदः ।
रातौ स्यामोभयास आ ते यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ।२५।७

हे अग्ने ! तुम भले प्रकार आहूत किये जाते हो । तुम अपनी दर्शनीय ज्वालाओं सहित प्रकट होओ । तुम हमारे पुत्रको दग्ध मत करो । हमारा पुत्र चिरंजीवी हो । तुम हमारे इस प्रकारसे सहायक होओ।२१। हे अग्ने तुम हमारी सहायता करो । ऋत्विजों द्वारा प्रदीप्त अग्नियों से हमारा सुख पूर्वक पोषण करने को कहो । तुम बलोत्पन्न हो, हमारी बुद्धि भ्रमित न हो जाय ।२२। हे अग्ने ! जो याज्ञिक तुम्हें हव्य दान करता हैं, वह धन से सम्पन्न हो जाता है । धनकी कामना वाला स्तोत्र जिसके आश्रयमें गमन करता है वह अग्नि यजमान की सदा रक्षा करते हैं ।२३। हे अग्ने ! हमारे कल्याणकारी कार्यों के तुम ज्ञाता हो । हम तुम्हारी स्तुति करते हैं । तुम हमें ऐसा कल्याणकारी धन प्रदान करो, जिससे हम पूर्ण आयुष्य पुत्र पौत्रादि से युक्त होंकर प्रसन्न रहें ।२४। हे अग्ने ! हमारे अन्न को भले प्रकार संस्कारित करो । तुम यज्ञकर्ताओंको अन्न प्रदान करो । हम स्तोता और यजमान, दोनों ही तुम्हारे दान को प्राप्त करे । तुम अपनी मङ्गलमयी रक्षाओं से सदा हमारी रक्षा करते रहो ।२५। (२७)

सूक्त २

(ऋषि—वसिष्ठः । देवता—आप्रम् । छन्द—त्रिष्टुप्, पंक्ति)

जुषस्व नः समिधमग्ने अद्य शोचा बृहद् यजतं धूममृण्वन् ।
उप स्पृश दिव्यं सानु स्तूपैः सं रश्मिभिस्ततनः सूर्यस्य ।।१
नराशंसस्य महिमानमेषामुप स्तोषाम यजतस्य यज्ञैः ।
ये सुक्रतवः शुचयो धियंधाः स्वदन्ति देवा उभयानि हव्या ।।२
ईलेन्यं वो असुरं सुदक्षमन्तर्दूतं रोदसी सत्यवाचम् ।
मनुष्वदग्निं मनुना समिद्धं समध्वराय सदमिन्महेम । ३

सपर्यवो भरमाणा अभिज्ञु प्र वृञ्जते नमसा बर्हिरग्नौ ।
आजुह्वाना घृतपृष्ठं पृषद्वदध्वर्यवो हविषा मर्जयध्वम् ॥४
स्वाध्यो वि दुरो देवयन्तो ऽशिश्रयू रथयुर्देवताता ।
पूर्वी शिशुं न मातरा रिहाणे समग्रुवो न समनेष्वञ्जन् ॥५॥

हे अग्ने ! हमारी हवियों को स्वीकार करो । यज्ञ योग्य धूम्र से सम्पन्न होकर प्रकाशवान् होओ । तुम अपनी ज्वालाओंके द्वारा अन्तरिक्ष तक पहुँचो और सूर्य-रश्मियों से जा मिलो ।१। जो सुन्दर कर्म वाले,श्रेष्ठ कर्मों में रत देवता सौमिक और हवि संस्यादि का सेवन करते हैं, हम उनके द्वारा अग्नि की महिमा का ज्ञान करते हैं ।३। हे यजमानो ! तुम स्तुति के योग्य, बलवान्, आकाश-पृथिवी में दूत रूप से विचरने वाले अग्नि का सदा पूजन करो ।४। सेवा की इच्छा करते हुए याज्ञिक, पात्र पूर्ण करते और हवि देते हैं । हे अध्वर्युओं ! तुम हवन करते हुए घृत पृष्ठ वर्हि प्रदान करो ।४। देवताओं की कामना वाले, सुन्दरकर्मा तथा रथ की अभिलाषा वाले पुरुषों ने यज्ञ द्वार की शरण ली है । गायें जैसे बछड़ों को चाटती हैं, वैसे ही चाटने वाले अग्नि को अध्वर्यु नदी के समान सींचते हैं ।५। (५)

उत योषणे दिव्ये मही न उषासानक्ता सुदुघेव धेनुः ।
बर्हिषदा पुरुहूते मघोनी आ यज्ञिये सुविताय श्रयेताम् ॥६
विप्रा यज्ञेषु मानुषेषु कारू मन्ये वां जातवेदसा यजध्यै ।
ऊर्ध्वं नो अध्वरं कृतं हवेषु ता देवेषु वनथो वार्याणि ॥७
आ भारती भारतीभिः सजोषा इला देवैर्मनुष्येभिरग्निः ।
सरस्वती सारस्वतेभिरर्वाक् तिस्रो देवीर्बर्हिरेदं सदन्तु ॥८
तन्नस्तुरीपमध पोषयित्नु देव त्वष्टर्वि रराणः स्यस्व ।
यतो वीरः कर्मण्यः सुदक्षो युक्तग्रावा जायते देवकामः ॥९
बनस्पतेऽव सृजोप देवानग्निर्हविः शमिता सूदयाति ।
सेदु होता स यतरो यजाति यथा देवानां जनिमानि वेद ॥१०

आ याह्यग्ने समिधानो अर्वाङिन्द्रेण देवैः सरथं तुरेभिः ।
बर्हिर्न आस्तामदितिः सुपुत्रा स्वाहा देवा अमृता मादयन्ताम् ।
।११।२

दिव्य रूप वाली, महिती, कुशास्थिता, बहुस्तुता एवं धन वाली महारात्रि, कामधेनु के समान कल्याण प्रदात्री होती हुई हमें आश्रय दे ।८। हे यज्ञकर्म करने वाले पुरुष ! मैं तुमसे यज्ञ करनेकी प्रार्थना करता हूँ । स्तुतिके पश्चात् तुम हमारे सरल यज्ञको देवताओंके सम्मुख करो। देवताओं के पास जो धन है, उसे हमको बाँट दो ।७। सूर्यात्मक वाणियों के साथ भारती आगमन करें ! देवताओं और मनुष्यों के साथ इला भी आगमन करें । सरस्वतीभी यहाँ पधारें । यह तीनों देवियों कुशाओं पर विराजमान हों ।८। हे त्वष्टादेव ! तुम अग्नि के समान तेजस्वी हो । जिस प्रकार सोमाभिषकारी, बलवान् और देवभक्त पुत्र की प्राप्ति हो, वैसा ही पुष्टिकर बल हमें दो ।९। हे वनस्पते ! तुम अग्निरूप होकर देवताओं को यहाँ लाओ । अग्नि देवताओं को हव्य प्रदान करें । वही देवताओं का आह्वान करने वाला यज्ञ करें । वे अग्नि ही देवताओं की उत्पत्तिके जानने वाले हैं ।१०। हे अग्ने ! तुम इन्द्रादि के साथ एक रथ पर बैठकर तेजस्विता युक्त होकर हमारे यहाँ आओ । पुत्रवती अदिति हमारे यज में कुश पर विराजमान हों । हमारी हवियों को प्राप्त करने वाले देवता तृप्त हों ।११। (२)

सूक्त ३

(ऋषि— वसिष्ठः । देवता—अग्नि । छन्द—त्रिष्टुप्, पंक्तिः ।)

अग्निं वो देवमग्निभिः सजोषा यजिष्ठं दूतमध्वरे कृणुध्वम् ।
यो मर्त्येषु निध्रुविर्ऋतावा तपुर्मूर्धा घृतान्नः पावकः ॥१
प्रोथदश्वो न यवसेऽविष्यन् यदा महः संवरणाद् व्यस्थात् ।
आदस्य वातो अनु वाति शोचिरध स्म ते व्रजनं कृष्णमस्ति ॥२

उद् यस्य ते नवजातस्य वृष्णो ऽग्ने चरन्त्यजरा इधानाः ।
अच्छा द्यामरुषो धूम एति सं दूतो अग्न ईयसे हि देवान् ॥३
वि यस्य ते पृथिव्यां पाजो अश्रेत् तृषु यदन्ना समवृक्त जम्भैः ।
सेनेव सृष्टा प्रसितिष्ट एति यवं न दस्म जुह्वा विवेक्षि ॥४
तमिद् दोषा तमुषसि यविष्ठमग्निमत्यं न मर्जयन्त नरः ।
निशिशाना अतिथिमस्य योनौ दीदाय शोचिराहुतस्य वृष्णः ।५।३

हे देवगण ! जो अग्नि यज्ञवान् सुकर्मा, तापक मनुष्योंके साथ रहने वाले, तेजस्वी और अन्नादि के शोधक हैं, वे यज्ञ करने वालों के प्रमुख होते हुए अन्य अग्नियों से मिलते हैं । तुम उन्हीं अग्नि को अपना दूत नियुक्त करो ।१। जैसे अश्व तृणका भक्षण करता है, वैसे ही अग्नि तृण का भक्षण करते और वृक्षोंमें दारु रूपसे अवस्थान करते हैं । उस समय उन का तेज प्रवाहमान होता है । फिर हे अग्ने ! तुम्हारा मार्ग कृष्ण वर्ण होता है ।२। हे अग्ने । तुम्हारी जो अभिनव ज्वाला समृद्ध और उन्नत होती है उसका धूम्र आकाश तक व्याप्त होता है और तुम दूत रूपसे देवताओके पास पहुँचते हो ।३। हे अग्ने ! जब तुम अपनी ज्वाला रूप दाँतों से काष्टादि का भक्षण करते हो तब तुम्हारा तेज पृथ्वी को व्याप्त करता है । तुम्हारी ज्वाला विमुक्त सेना के समान जाती है और तुम जैसे मनुष्य जो खाते हैं, वैसेही काष्ठ को खाते हों ।४। पूज्य अग्नि की अतिथि के समान पूजाकी जाती हैं । उपासक गण सदा चलने वाले अश्वकी तरह अग्नि की अभ्यर्थना करते हैं । कामनाओं की वर्षा करने वाले अग्नि की ज्वालायें दीप्तिमती होती हैं ।५। (३)

सुसंदृक ते स्वनीक प्रतीकं वि यद् रुक्मो न रोचस उपाके ।
दिवो न ते तन्यतुरेति शुष्मश्चित्रो न सूरः प्रति चक्षि भानुम् । ६
यथा वः स्वाहाग्नये दाशेम परीलाभिर्घृतवद्भिश्च हव्यैः ।
तेभिर्नो अग्ने अमितैर्महोभिः शतं पूर्भिरायसीभिर्नि पाहि । ७

या वा ते सन्ति दाशुषे अधृष्टा गिरो वा याभिर्नृवतीरुरुष्याः ।
ताभिर्नः सूनो सहसो नि पाहि स्मत् सूरीञ्जरितॄञ्जातवेदः ॥८
निर्यत् पूतेव स्वधितिः शुचिर्गात् स्वया कृपा तन्वा रोचमानः
आ यो मात्रोरुशेन्यो जनिष्ट देवयज्याय सुक्रतुः पावकः ॥६
एता नो अग्ने सौभगा दिदीह्यपि क्रतुं सुचेतसं वतेम ।
विश्वा स्तोतृभ्यो गृणते च सन्तु यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥
।१०।४

हे अग्ने ! तुम महान तेजस्वी हो । जब तुम सूर्य के समान प्रकाशित होते हो, जब तुम्हारा रूप शोभन दर्शन वाला होता है। बिद्युत रूप में तुम्हारा तेज अन्तरिक्ष में प्रकट होता है। तुम सूर्य के समान ही प्रकाश करने वाले हो ।६। हे अग्ने ! जैसे हम हव्यादि से युक्त हवियों द्वारा तुम्हें तुम करते हैं, तुम भी वैसे ही अपने अपरिमित तेज के बल से हमारी रक्षा करो ।७। हे अग्ने ! तुम बल से उत्पन्न एवं दानशील हो। तुम अपनी जिन तेजस्वी ज्वालाओं और वाक्यों द्वारा पुत्रवान् यजमान की रक्षा करते हो, उनके द्वारा हमारी भी रक्षा करो। तुम हविदान करने वाले यजमानका पालन करने वाले होओ ।८। अपने शरीर द्वारा तीक्ष्ण होकर जब अग्नि काष्ठ से आविभूत होते हैं तब वे यज्ञ-कर्म में समर्थ होते हैं। यह कर्म में समर्थ अग्नि मातृरूप अरणियों द्वारा उत्पन्न हुए हैं ।६। हे अग्ने ! हमें श्रेष्ठ धन प्रदान करो। हम यज्ञ करने वाला सुहृद पुत्र पावे। उद्गाताओं और स्तोताओं को समस्त धन मिलें। तुम हमारे लिये मंगलकारिणी होओ ।१०।

सूक्त ४

(ऋषि—वसिष्ठः। देवता—अग्निः। छन्द-पंक्तिः, त्रिष्टुप्)

प्र वः शुक्राय भानवे भरध्वं हव्यं मतिं चाग्नये सुपूतम् ।
यो दैव्यानि मानुषा जनूंष्यन्तर्विश्वानि विद्मना जिगाति ॥१

स गृत्सो अग्निस्तरुणश्चिदस्तु यतो यविष्ठो अजनिष्ट मातुः ।
सं यो वना युवते शुचिदन् भूरि चिदन्ना समिदत्ति सद्यः ॥२
अस्य देवस्य संसद्यनीके यं मर्तासः श्येतं जगृभ्रे ।
नि यो गृभं पौरुषेयीमुवाच दुरोकमग्निरायवे शुशोच ॥३
अयं कविरकविषु प्रचेता मर्तेष्वग्निरमृतो नि धायि ।
स मा नो अत्र जुहुरः सहस्वः सदा त्वे सुमनसः स्याम ॥४
आ यो योनिं देवकृतं ससाद क्रत्वा ह्यग्निरमृताँ अतारीत् ।
तमोषधीश्च वनिनश्च गर्भं भूमिश्च विश्वधायसं बिभर्ति ।५।५

हे हविर्वान् यजमानो ! तुम श्रेष्ठ प्रदीप्त वाले अग्नि को विशुद्ध हव्य दो । यह अग्नि अपनी बुद्धि के द्वारा देवताओ और मनुष्यों के सब पदार्थों में घूमते है ।१। तरुणतम अग्नि दो अरणियों से प्रकट हुए हैं वे इसलिए मेधावीं और दीप्तियुक्त शिखासे सम्पन्न हैं । वे जंगलोंमें व्याप्त होकर यथेष्ट काष्ठादि अन्न का भक्षण करते हैं ।२। पवित्रस्थानों में मनुष्यों द्वारा जिन अग्नि की स्थापना की जातो है और जो अग्नि मनुष्यों द्वारा जिन अग्नि की स्थापना की जाती है और जो अग्नि मनुष्यों द्वारा ग्रहण की गई वस्तु का सेवन करते हैं, वही अग्नि मनुष्यों के लिए, शत्रुओं द्वारा प्राप्त करने योग्य तेज को धारणा करते हैं ।३। अज्ञानी मनुष्यों के मध्य ज्ञानी, अविनाशी और तेजस्वी अग्नि निवास करते हैं । ह अग्ने ! तुम्हारे निमित्त हम अपनी बुद्धि को सदा सावधान रखेंगे । तुम हमें हिंसित मत करना ।४। अग्नि ने देवताओं को अपनी बुद्धि से ही पार लगाया इसलिए वे देवताओं के स्थान को प्राप्त हो गये । वृक्ष, औषधियाँ अग्नि को ही धारण करते हैं और यह पृथिवी भी अग्नि की सेवा करती है ।५।

ईशे ह्यग्निरमृतस्य भूरेरीशे रायः सुवीर्यस्य दातोः ।
मा त्वा वयं सहसावन्नवीरा माप्सवः परि षदाम मादुवः ॥६
परिषद्यं ह्यरणस्य रेक्णो नित्यस्य रायः पतयः स्याम ।
न शेषो अग्ने अन्यजातमस्त्यचेतानस्य मा पथो वि दुक्षः ॥७

नहि ग्रभायारण. सुशेषे ऽन्योदर्यो मनसा मन्तवा उ ।
अधा चिदोकः पुनरित् स एत्या ऽऽनो वाज्यभीषालैतु नव्यः ॥८
त्वमग्ने वनुष्यतो नि पाहि त्वमु नः सहसावन्नवद्यात् ।
सं त्वा ध्वस्मन्वदभ्येतु पाथः सं रयिः स्पृहयाय्यः सहस्री ।।६
एता नो अग्ने सौभगा दिदीह्यपि क्रतुं सुचेतसं वतेम ।
विश्वा स्तोतृभ्यो गृणते च सन्तु यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥
।१०।४

अमृत-दान में अग्नि समर्थ है। यह श्रेष्ठ अमृतत्व के प्रदान करने वाले हैं। हे अग्ने ! हम पुत्रादि से हीन न हों हम कुरूप न हों और तुम्हारी सेवा से भी कभी विरत न हों ।६। जिसके पास प्रचुर धन होता है बह पुरुप ऋण से मुक्त रहता है। हम भी ऋण से हीन रहने के लिए धनके स्वामी बनेंगे। हे अग्ने ! हम अन्यजात (दत्तक) सन्तान वाले न हों। तुम मूर्ख व्यक्ति के मार्ग पर मत जाना ।७। अन्यजात पुत्र को हृदय अपना पुत्र स्वीकार नहीं करता है क्योंकि उसका मन अपने स्थान पर ही रहता है। हे अग्ने ! हमें शत्रु का नाश करने वाला, अन्नसे सम्पन्न और नवोत्पन्न शिशु प्राप्त कराओ ।८। हे अग्ने! हिंसाकारी से हमारी रक्षा करो। पाप से हमारी रक्षा करो पवित्र हव्य तुम्हारी ओर गमन कर। हम भी सहस्रों प्रकार के धन पावें ।६। हे अग्ने ! श्रेष्ठ धन दो। हम यज्ञकर्ता पत्र पावें। स्तोताओं और उद्-गाताओं को समस्त धन मिले। तुम अपने कल्याण द्वारा हमारी रक्षा करो ।१०। (६)

सूक्त ५

(ऋषि–वसिष्ठः। देवता–वैश्वानरः। छन्द–त्रिष्टुप् पंक्तिः)

प्राग्नये तवसे भरध्वं गिरं दिवो अरतये पृथिव्याः ।
यो विश्वेषाममृतानामुपस्थे वैश्वानरो वावृधे जागृवद्भिः ॥१

पृष्ठो दिवि धाय्यग्निः पृथिव्यां नेता सिन्धूनां वृषभः स्तियानाम्।
स मानुषीरभि विशो वि भाति वैश्वानरो वावृधानो वरेण ॥२
त्वद् भिया विश आयन्नसिक्नीरसमना जहतीर्भोजनानि ।
वैश्वानर पूरवे शोशुचानः पुरो यदग्ने दरयन्नदीदेः ॥३
तव त्रिधातु पृथिवी उत द्यौर्वैश्वानर व्रतमग्ने सचन्त ।
त्वं भासा रोदसी आ ततन्थाऽजस्रेण शोचिषा शोशुचानः ॥४
त्वामग्ने हरितो वावशाना गिरः सचन्ते धुनयो घृताचीः ।
पतिं कृष्टीनां रथ्यं रयीणां वैश्वानरमुषसां केतुमह्नाम् ।५।७

यज्ञ में चैतन्य हुए देवताओं के साथ जो अग्नि वृद्धि को पाते है हे स्तोता ! तुम उन्हीं पार्थिव और दिव्य अग्नि की स्तुति करो ।१। जो वैश्वानर अग्नि नदियों के नेता, जल वृष्टिकारक और पूज्य होकर अन्तरिक्ष में और पृथिवी पर आविर्भूत होते हैं, वे हवियों से प्रवृद्ध होकर शोभायमान होते हैं ।२। हे अग्ने ! जब तुमने पुरु के शत्रु की नगरीको ध्वस्त किया और अपने तेज से प्रदीप्त हुए तब तुम्हारे भय से अशुभ कर्म वाले व्यक्ति भाग गये ।३। हे अग्ने ! आकाश, पृथिवी और अन्तरिक्ष तुम्हारे हित के लिए कर्म करते हैं । तुम अपने तेज द्वारा प्रकाशमान होकर आकाश-पृथिवी को समृद्ध करते हो ।४। हे अग्ने ! तुम मनुष्यों के स्वामी और दिवस के ध्वज रूप हो । तुम्हारी कामना वाले अश्व तुम्हारी सेवा करते हैं । स्निग्ध और पाप रहित वाणी स्तुति करती है ।५।

त्वे असुर्यं वसवो न्यृण्वन् क्रतुं हि ते मित्रमहो जुषन्त ।
त्वं दस्यूँरोकसो अग्न आज उरु ज्योतिर्जनयन्नार्याय ॥६
स जायमानः परमे व्योमन् वायुर्न पाथः परि पासि सद्यः ।
त्वं भुवना जनयन्नभि क्रन्नपत्याय जातवेदो दशस्यन् ॥७
तामग्ने अस्मे इषमेरयस्व वैश्वानर द्युमतीं जातवेदः ।
यया राधः पिन्वसि विश्ववार पृथु श्रवो दाशुषे मर्त्याय ॥८

तं नो अग्ने मघवद्भ्यः पुरुक्षु रयिं नि वाजं श्रुत्यं युवस्व ।
वैश्वानर महि नः शर्म यच्छ रुद्रेभिरग्ने वसुभिः संजोषाः ।९।८

हे अग्ने ! तुम मित्रों को सम्मानित करने वाले हो। वसूगण ने तुम्हें बलवान् बनाया है। तुमने कर्मवान् पुरुषों की रक्षा के लिए अपने तेज से राक्षसों को उनके स्थान से भगा दिया है।६। हे अग्ने ! तुम सूर्य रूप से प्रकट होकर वायु के समान सर्व प्रथम सोम-पान करते ही जल को उत्पन्न करते हुए, अन्न कामना वालेकी आशा देते हुए विद्युत के रूप में गर्जनशील होते हो।७। हे अग्ने ! तुम सबके द्वारा वरण करने योग्य हो। तुम जिस अन्न के द्वारा धन को पुष्ट करते हो और हव्य दाता के यश को क्षीण नहीं होने देते, वही श्रेष्ठ अन्न हमें प्रदान करो।८। हे अग्ने ! हविदाता यजमानों का अन्न, धन और प्रशंसनीय बल प्रदान करो। रुद्रगण और वसुगण के सहित तुम हमारा मङ्गल करने वाले होओ।९।

सूक्त ६

(ऋषि—वसिष्ठः। देवता—वैश्वानरः। छन्द—त्रिष्टुप, पंक्तिः)

प्र सम्राजो असुरस्य प्रशस्ति पुंसः कृष्टीनामनुमाद्यस्य ।
इन्द्रस्येव प्र तवसस्कृतानि वन्दे दारुं वन्दमानो विवक्मि ।।१
कविं केतुं धासिं भानुमद्रेर्हिन्वन्ति शं राज्यं रोदस्योः ।
पुरन्दरस्य गीर्भिरा विवासेऽग्नेर्व्रतानि पूर्व्या महानि ।।२
न्यक्रतून् ग्रथिनो मृध्रवाचः पणींरश्रद्धाँ अवृधाँ अयज्ञान् ।
प्रप्र तान् दस्यूँरग्निर्विवाय पूर्वश्चकारापराँ अयज्यून् ।।३
यो अपाचीने तमसि मदन्तीः प्राचीश्चकार नृतमः शचीभिः ।
तमीशानं वस्वो अग्निं गृणीषेऽनानतं दमयन्तं पृतन्यून् ।।४
यो देह्यो अनमयद् वधस्नैर्यो अर्यपत्नीरुषसश्चकार ।
स निरुध्या नहुषो यह्वो अग्निर्विशश्चक्रे बलिहृतः सहोभिः ।।५

यस्य शर्मन्नुप विश्वे जनास एवैस्तस्थुः सुमतिं भिक्षमाणाः ।
वैश्वानरो वरमा रोदस्योराग्निः ससाद पित्रोरुपस्थम् ॥६
आ देवो ददे बुध्न्या वसूनि वैश्वानर उदिता सूर्यस्य ।
आ समुद्रादवरादा परस्मादाग्निर्ददे दिव आ पृथिव्याः ।७।६

पुरियों को ध्वज करने वाले अग्नि की मैं स्तुति करता हूँ। वे अग्नि स्तुत्य बली सम्राट् इन्द्र के समान ही हैं। मैं इनके यशका वर्णन करता हूँ।१। अग्नि तेजस्वी, पर्वतों के धारणकर्त्ता, प्रज्ञापक, कल्याण-प्रद और आकाश पृथिवी के अधिपति हैं। उस अग्नि को देवता प्रसन्न करते हैं। मैं भी उनके प्राचीन श्रेष्ठ कर्मों का कीर्तन करता हूँ।२। यज्ञ-विमुख, बटुवक्ता, दुर्बुद्धि वाले 'प्राणियों' को अग्नि दूर भगावें और उनका पतन करें।३। अन्धकार में रहने वाले प्राणियों को अग्नि ने श्रेष्ठ मार्ग दिखाया। वे अग्नि धनों के स्वामी और दुष्टों का पराभव करने वाले हैं। मैं उनकी स्तुति करताहूँ।४। जिन्होंने अपने आयुध से आसुरी माया को नष्ट कर डाला और जिन्होंने उषा की रचना की, उन अग्नि ने प्रजा को अपने बल से रोका और राजा नहुष को कर देने वाला बनाया।५। सुख के लिए सब मनुष्य हव्य के सहित जाकर जिस अग्नि की कृपा-कामना करते हैं वे वैश्वानर अग्नि माता-पिता के समान आकाश-पृथिवी के मध्य स्थित अन्तरिक्ष में प्रकट हुए हैं।६। सूर्य के उदित होने पर वैश्वानर अग्नि अन्धकार को दूर करते हैं। समुद्र, आकाश, पृथिवी आदि सभी स्थानों का अन्धकार उनमें समा जाता है।७।

(६)

सूक्त ७

(ऋषि–वसिष्ठः। देवता–अग्निः। छन्द–त्रिष्टुपः, पंक्ति)

प्र वो देवं चित् सहसानमग्निमश्वं न वाजिनं हिषे नमोभिः।
भवा नो दूतो अध्वरस्य विद्वान् त्मना देवेषु विविदे मितद्रुः ॥१

आ याह्यग्ने पथ्या अनु स्वा मन्द्रो देवानां सख्यं जुषाणः ।
आ सानु शुष्मैर्नदयन् पृथिव्या जम्भेभिर्विश्वमुशधग्वनानि ॥२
प्राचीनो यज्ञः सुधितं हि बर्हिः प्रीणीते अग्निरीलितो न होता ।
आ मातरा विश्ववारे हुवानो यतो यविष्ठ जज्ञिषे सुशेवः ॥३
सद्यो अध्वरे रथिरं जनन्त मानुषासो विचेतसो य एषाम् ।
विशामधायि विश्पतिर्दुरोणे ऽग्निर्मन्द्रो मधुवचा ऋतावा ॥४
असादि वृतो वह्निराजगन्वानग्निर्ब्रह्मा नृषदने विधर्ता ।
द्यौश्च यं पृथिवी वावृधाते आ यं होता यजति विश्ववारम् ॥५
एते द्युम्नेभिर्विश्वमातिरन्त मन्त्रं ये वारं नर्या अतक्षन् ।
प्र ये विशस्तिरन्त श्रोषमाणा आ ये मे अस्य दीधयन्नृतस्य ॥६
नू त्वामग्न ईमहे वसिष्ठा ईशान सूनो सहसो वसूनाम् ।
इषं स्तोतृभ्यो मघवद्भ्य आनड् यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः७ १०

हे अग्ने ! तुमने राक्षस आदि को भगाया ! तुम अश्व के समान वेगवान् हो । तुम मेधावी हो । तुम देवताओं में दग्धद्रुम नामसे प्रसिद्ध हो । हमारे यज्ञ में दीप्त कर्म वाले होओ ।१। हे स्तुत्य अग्ने ! तुम देवताओं के मित्र हो । अपने तेज से पृथिवी तट को शब्दसे गुंजाते हुए सब वनों को भस्म करते हुए अपने मार्ग से आगमन करो ।२। हे अग्ने ! तुम युवा हो । जब तुम शोभन रूप में प्रकट होते हो तभी यज्ञ किया जाता है । तुम होता रूपसे बैठकर तृप्ति को प्राप्त होते हो । उस समय सबके लिए ग्रहणीय मातृभूत आकाश-पृथिवी के आह्वानकारी यज्ञ नेता अग्नि को मेधावीजन प्रकट करते हैं । जो अग्नि हविवाहक है, वही मनुष्यों के गृहोंमें निवास करतेहैं ।३ ४। आकाश और पृथिवी जिनअग्नि की वृद्धि करते हैं और जिन अग्नि के लिए होता यज्ञ करता है, वह अग्नि हवियों के वहन करने वाले तथा ब्रह्मादि देवताओं के धारणकर्त्ता है । वे मनुष्यों के घरों में निवास करते हैं ।५। जिन मनुष्यों ने मन्त्रों

से संस्कृत कर उन्हें बढ़ाया और जिन्होंने अग्नि को यज्ञ कामना से प्रज्वलित किया है, वे अग्नि के द्वारा सभी पोषक बलों को प्रवृद्ध करते हैं ।६। हे अग्ने ! तुम वसुओंके स्वामीहो । वसिष्ठ वंशज ऋषि तुम्हारी स्तुति करते हैं । तुम हविदाता यजमान और स्तोता को अन्न से शीघ्र ही परिपूर्ण करो और हमारी सदा रक्षा करते रहो ।७। (१०)

सूक्त ८

(ऋषि--वसिष्ठः । देवता--अग्निः । छन्द--त्रिष्टुप् पंक्तिः)

इन्धे राजा समर्यो नमोभिर्यस्य प्रतीकमाहुतं घृतेन ।
नरो हव्येभिरीलते सबाध आग्निरग्र उषसामशोचि ॥१
अयमु ष्य सुमहाँ अवेदि होता मन्द्रो मनुषो यह्वो अग्निः ।
वि भा अकः ससृजानः पृथिव्यां कृष्णपविरोषधीभिर्ववक्षे ॥२
कया नो अग्ने वि वसः सुवृक्तिं कामु स्वधामृणवः शस्यमानः ।
कदा भवेम पतयः सुदत्र रायो वन्तारो दुष्टरस्य साधोः ॥३
प्रप्रायमग्निर्भरतस्य शृण्वे वि यत् सूर्यो न रोचते बृहद् भाः ।
अभि यः पूरुं पृतनासु तस्थौ द्युतानो दैव्यो अतिथिः शुशोच ॥४
असन्नित् त्वे आहवनानि भूरि भुवो विश्वेभिः सुमना अनीकैः ।
स्तुतश्चिदग्ने शृण्विषे गृणानः स्वयं वर्धस्व तन्वं सुजात ॥५
इदं वचः शतसाः संसहस्रमुदग्नये जनिषीष्ट द्विबर्हाः ।
शं यत् स्तोतृभ्य आपये भवाति द्युमदमीवचातनं रक्षोहा ॥६
नू त्वामग्न ईमहे वसिष्ठा ईशानं सूनो सहसो वसूनाम् ।
इषं स्तोतृभ्यो मघवद्भ्य आनड् यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥
।७।११

अग्नि के रूप को घृत से आहुति करते हैं और हव्य देते हुए विद्वजन जिनकी स्तुति करते है, वे अग्नि स्तुतियों के साथ ही बढ़ जाते हैं । वे अग्नि उषा से पूर्व प्रदीप्त हो जाते हैं ।१। यह अग्नि होता है । यह

महान् कहे जाते हैं। इनकी दीप्ति सब ओर फैलती है। इनका मार्ग काला होता है। यह औषधियों द्वारा प्रवृद्ध होते हैं।२। हे अग्ने! तुम किस हवि को प्राप्त कर हमारी स्तुतियों से प्रसन्न होंगे? तुम किस स्वधा की कामना करोगे? तुम सुन्दर दान वाले हो। तुम हमारा दान पाकर कब धनाधिकारी होगे?।.। जब अग्नि सूर्य के समान तेजस्वी होकर प्रकाश फैलाते हैं तब वे यजमान द्वारा प्रशंसित होते हैं जिन अग्निने पुरु को हराया, वही अग्नि देवताओं के लिए प्रदीप्त होते हैं।.। हे अग्ने! तुम्हें प्रचुर हव्य दिया गया है। तुम तेजों के सहित प्रसन्न होओ और स्तुति सुनो। तुम स्तुतियों से प्रसन्न होकर अपने शरीर को बढ़ाओ।५। सौ गौओं का बिभाग करने वाले और सहस्र गौओ से युक्त कर्मवान् तथा मेधावी वसिष्ठ ने इस स्तोत्र को अग्नि की प्रसन्नता के लिए रचा है।६। हे अग्ने! तुम वसुगण के स्वामी हो, बल से उत्पन्न हुए हो। वसिष्ठ तुम्हारी स्तुति में प्रवृत्त हुए हैं। तुम हवि-युक्त यजमान और स्तोता को अन्न से शीघ्रही सम्पन्न करो और श्रेष्ठ रक्षकों से हमारी रक्षा करो।　　　　(११)

सूक्त ९

(ऋषि–वसिष्ठः। देवता—अग्निः। छन्द–त्रिष्टुप् पंक्तिः)

अबोधि जार उषसामुपस्थाद्धोता मन्द्रः कवितमः पावकः।
दधाति केतुमुभयस्य जन्तोर्हव्या देवेषु द्रविणं सुकृत्सु ॥१
स सुक्रतुर्यो वि दुरः पणीनां पुनानो अर्कं पुरुभोजस नः।
होता मन्द्रो विशां दमूनास्तिरस्तमो ददृशे राम्याणाम् ॥२
अमूरः कविरदितिर्विवस्वान् त्सुसंसन्मित्रो अतिथिः शिवो नः।
चित्रभाणुरुषसां भात्यग्रे ऽपां गर्भः प्रस्व आ विवेश ॥३
ईलेन्यो वो मनुषो युगेषु समनगा अशुचज्जातवेदाः।
सुसदृशा भानुना यो विभाति प्रति गावः समिधानं बुधन्त ॥४

अग्ने याहि दूत्यं मा रिषण्यो देवाँ अच्छा ब्रह्मकृता गणेन ।
सरस्वतीं मरुतो अश्विनापो यक्षि देवान् रत्नधेयाय विश्वान् ॥५
त्वामग्ने समिधानो वसिष्ठो जरूथं हन् यक्षि राये पुरंधिम् ।
पुरुणीथा जातवेदो जरस्व यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ।६।१२

अग्नि सब प्राणियों को पवित्र करने वाले, हर्षदायक और उषा के मध्य चैतन्य होने वाले हैं । वह देवताओं और मनुष्यों में वृद्धि को धारण करने वाले और पुण्यकर्मा यजमान में धन धारणकर्ता हैं ।१। पणियों के मार्ग का उद्घान करने वाले अग्नि श्रेष्ठ कर्म करते हैं । उन्होंने पयस्विनी गौओंको हमें प्राप्त कराया है । शान्त मन वातअग्नि अपने विशिष्ट तेज से सम्पन्न होकर उषाके मध्य जागृत होते और अन्न के रूप में औषधियों में प्रविष्ट होते हैं ।२-३। हे अग्ने ! तुम मनुष्यों के यज्ञानुष्ठान में स्तुतियों के पात्र होते हैं । तुम संग्राम भूमिमें अत्यन्त तेजस्वी होते हो । स्तुतियाँ अग्नि को प्रवृद्ध करती है ।४। हे अग्ने ! दूरकर्म के लिए देवताओं के पास गमन करो । तुम स्तुति करने वालों की हिंसा मत करना । तुम हमें धन के लिए मरुद्गण, अश्विद्वय जल, सरस्वती आदि सब देवताओं का यज्ञ करते हो ।५। हे अग्ने ! वसिष्ठ तुम्हारी परिचर्या करते हैं । तुम कटुभाषी दैत्योका हनन करो । अनेक स्तुतियों से देवताओं को प्रसन्न करो और हमारी रक्षा करो।६। (१२)

सूक्त १०

(ऋषि–वसिष्ठः । देवता—अग्निः । छन्द–त्रिष्टुप्)

उषो न जारः पृथु पाजो अश्रेद् दविद्युतद् दीद्यच्छोशुचानः ।
वृषा हरिः शुचिरा भाति भासा धियो हिन्वान उशतीरजीगः ॥१
स्वर्ण वस्तोरुषसामरोचि यज्ञं तन्वाना उशिजो न मन्म ।
अग्निर्जन्मानि देव आ वि विद्वान् द्रवद् दूतो देवयावा वनिष्ठः ।।२

अच्छा गिरो मतयो देवयन्तीरग्निं यन्ति द्रविणं भिक्षमाणाः ।
सुसंदृशं सुप्रतीकं स्वञ्चं हव्यवाहमरतिं मानुषाणाम् ॥३
इन्द्रं नो अग्ने वसुभिः सजोषा रुद्रं रुद्रेभिरा वहा बृहन्तम् ।
आदित्येभिरदितिं विश्वजन्यां बृहस्पतिमृक्वभिर्विश्ववारम् ॥४
मन्द्रं होतारमुशिजो यविष्ठमग्निं विश ईलते अध्वरेषु ।
स हि क्षपावाँ अभवद् रयीणामतन्द्रो दूतो यजथाय देवान् ॥५॥१३

सूर्य के समान ही अग्नि अत्यन्त तेजस्वी होते हैं। वे कामनाओं को वर्षा करने वाले, हवियों के प्रेरक, प्रदीप्त कर्मों को प्रेरित कर यश पाते हैं। वे अग्नि कामना वाले उपासकों को जागृत करते हैं।१। उषाकाल में अग्नि सूर्य के समान दमकते हैं। वे यज्ञ को विस्तृत कर श्रेष्ठ स्तुतियों का उच्चारण करते हैं। अग्नि देवता सब प्राणियों को झुकाते हैं।२। धन की याचना करने वाली देव-कामया स्तुतियाँ अग्नि के अभिमुख होती हैं। वे अग्नि सुन्दर दर्शक, श्रेष्ठ गमन, मनुष्यों के पति और हव्य-वहनकर्त्ता है।३। हे अग्ने ! वसुगण से मिलकर इन्द्र को बुलाओ। रुद्रों से मिलकर रुद्र को आहुत करो। आदित्यों से सुसंगत होकर अदितिका आह्वान करो। अङ्गिराओं से सुसंगत होकर वरणीय वृहस्पतिका आह्वान करों।४। कामना वाले पुरुष स्तुति योग्य अग्नि की स्तुति करते हैं। अग्नि रात्रि में शोभा सम्पन्न होते हैं। देवयान में हवि देने वाले दूत होते हैं।५　　(१३)

सूक्त ११

(ऋषि–वसिष्ठः। देवता–अग्निः। छन्द–पंक्तिः, त्रिष्टुप्)

महाँ अस्यध्वरस्य प्रकेतो न ऋते त्वदमृता मादयन्ते ।
आ विश्वेभिः सरथं याहि देवैर्न्यग्ने होता प्रथमः सदेह ॥१
त्वामीलते अजिरं दूत्याय हविष्मन्तः सदमिन्मानुषासः ।
यस्य देवैरासदो बर्हिरग्नेऽहान्यस्मै सुदिना भवन्ति ॥२

त्रिश्चिदक्तोः प्र चिकितुर्वसूनि त्वे अन्तर्दाशुषे मर्त्याय।
मनुष्वदग्न इह यक्षि देवान् भवा नो दूतो अभिशस्तिपावा ।३
अग्निरीशे बृहतो अध्वरस्याऽग्निर्विश्वस्य हविषः कृतस्य।
क्रतुं ह्यस्य वसवो जुषन्ताऽथ देवा दधिरे हव्यवाहम् ॥४
आग्ने वह हविरद्याय देवानिन्द्रज्येष्ठास इह मादयन्ताम् ।
इमं यज्ञं दिवि देवेषु धेहि यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ।५।१४

हे अग्ने ! तुम महान् हो। यज्ञ का सम्पादन करने वाले और देवताओं को प्रसन्न करने वाले हो। तुम सब देवताओंके साथ रथारूढ़ होकर आगमन करो और मुख्य होता होकर कुश पर विराजमान होओ ।१। हे अग्ने ! तुम गतिमान् हो। हवि देने वाले पुरुष तुम्हें सदा ही दूत बनाते हैं। तुम जिस यजमान के कुशाओं पर देवताओं सहित विराजमान होते हो,वह यजमान शुभ दिन वाला होता है ।२। हे अग्ने! ऋत्विग्गण तीन सवनों में तुम्हारे निमित्त हवि देते हैं। तुम हमारे इस यज्ञ मे दूत होकर हव्य वहन करो और शत्रुओं से हमारी रक्षा करो ।३। महायज्ञ के अधीश्वर अग्नि हवियो के स्वामी हैं। वसुगण इनके कर्मों की प्रशंसा करते हैं। इन अग्निको देवताओं ने हव्यवाहक बनाया है ।४। हे अग्ने ! हव्य सेवनार्थ देवताओं का आह्वान करो। इस यज्ञ में इन्द्रादिको हर्षयुक्त करो। यज्ञ द्रव्य को आकाशमे ले जाते हुए हमारी रक्षा करो ।५।

(१४)

सूक्त १२

(ऋषि–वसिष्ठः। देवता—अग्निः। छन्द–त्रिष्टुप्, पंक्तिः)

अगन्म नमसा यविष्ठं यो दीदाय समिद्धः स्वे दुरोणे।
चित्रभानुं रोदसी अन्तरुर्वी स्वाहुत विश्वतः प्रत्यञ्चम् ॥१
स मह्ना विश्वा दुरितानि साह्वानग्निः ष्टवे दम आ जातवेदाः।
स नो [illegible]षद् दुरितादवद्यादस्मान् गृणत उत नो मघोनः ॥२

त्वं वरुण उत मित्रो अग्ने त्वां वर्धन्ति मतिभिर्वसिष्ठाः ।
त्वे वसु सुषणनानि सन्तु यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ।३।१५

जो अग्नि अपने स्थान में बढ़ते हुए तेज सम्पन्न होते हैं, जो अद्भुत ज्वाला वाले महान् आकाशपृथिवी के मध्य स्थिति, शोभन आह्वान वाले हैं, हम ऐसे अग्नि के पास नमस्कार सहित गमन करतेहैं (१) अपनी महिमा द्वारा वे अग्नि सब पापों को नष्ट करते हैं यज्ञ में उनको स्तुति की जाती है, हम यज्ञकर्ता उनकी स्तुति करते हैं, वे पापों से हमारी रक्षा करें ।२। हे अग्ने ! मित्रावरुण भी तुम्हीं हो । वसिष्ठों ने तुम्हारा स्तोत्र किया । तुम्हारे धन हमारे लिये सरलता से प्राप्त हों । तुम हमारे पालक रहो ।३।   (१५)

सूक्त १३

(ऋषि—वसिष्ठः । देवता । वैश्वानरः । छन्द—पंक्तिः)

प्राग्नये विश्वशुचे धियंधे ऽसुरघ्ने मन्म धीतिं भरध्वम् ।
भरे हविर्न बर्हिषि प्रीणानो वैश्वानराय यतये मतीनाम् ॥१
त्वमग्ने शोचिषा शोशुचान आ रोदसी अपृणा जायमानः ।
त्वं देवाँ अभिशस्तेमुञ्चो वैश्वानर जातवेदो महित्वा ॥२
जातो यदग्ने भुवना व्यख्यः पशून् न गोपा इर्यः परिज्मा ।
वैश्वानर ब्रह्मणे विन्द गातुं यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ।३।१६

राक्षसों का हनन करने वाले कर्मवान् अग्नि के लिए यज्ञानुष्ठाग करते हुए हे स्तोताओं ! उन्हीं की स्तुतिकरो । मैं प्रसन्न हृदय से अभीष्टों की सिद्धि करने वाले अग्निकी स्तुति करता हूँ । । हे अग्ने? तुमने दीप्ति से तजोमयो हुई आकाश-पृथिवी को परिपूर्ण किया है । तुमने अपनी महिमा से देवताओं को शत्रु के हाथ से छुड़ाया थ । ।२। हे अग्ने ! सूर्य रूप से तुम ही उत्पन्न होते हो, तुम सर्वत्रगन्ता हो,

जब तुम प्राणियों का सन्दर्शन करो,उस समय स्तुतियाँ तुम्हें प्राप्त हो। हमारी सदा रक्षा करो।३।　　(१८)

सूक्त १४

(ऋषि—वसिष्ठः । देवता–अग्निः । चन्द-बृहती:, त्रिष्टुप्)

समिधा जातवेदसे देवाय देवहुतिभिः ।
हविर्भिः शुक्रशोचिषे नमस्विनो वयं दाशमाग्नये ।।१
वयं ते अग्ने समिधा विधेम वयं दाशेम सुष्टुती यजत्र ।
वयं घृतेनाध्वरस्य होतर्वयं देव हविषा भद्रशोचे ।।२
आ नो देवेभिरुप देवहूतिमग्ने याहि वषट्कृतिं जुषाणः ।
तुभ्यं देवाय दाशतः स्याम यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ।३।१७

हम हविर्वान यजमान जातवेदा अग्नि की परिचर्या करते हैं। हम देवताओं की स्तुति करते हुए अग्नि को प्रसन्न करेंगे । हे मङ्गलमयी ज्वालाओं से सम्पन्न अग्ने ! हव्य-प्रदान द्वारा हम तुम्हारी सेवामें तत्पर होगे ।१। हे अग्ने ! हम समिधा और स्तुति द्वारा तुम्हें प्रसन्न करें । हे मंगलमय ज्वालायुक्त अग्निदेव ! हम हवि प्रदान द्वारा तुम्हें प्रसन्न करेंगे ।२। हे अग्ने ! तुम देवताओं के सहित हमारे यज्ञ में आगमन करो । हम तुम्हारे तेज के उपासक हों और सदा हमारा पालन करो ।३।

सूक्त १५

(ऋषि–वसिष्ठ । देवता–अग्निः । छन्द–गायत्री, उष्णिक्)

उपसद्याय मीलहुष आस्ये जुहुता हविः । यो नो नेदिष्ठमाप्यम् ।।१
यः पञ्च चर्षणीरभि निषसाद दमेदमे । कविर्गृहपतिर्युवा ।।२
स नो वेदो अमात्यमग्नी रक्षतु विश्वतः । उतास्मान् पात्वंहसः।।३

नवं नु स्तोममग्नये दिवः श्येनाय जीजनम् । वस्वः कुविद्
वनाति नः ॥४

स्पार्हा यस्य श्रियो दृशे रयिर्वीरवतो यथा । अग्ने यज्ञस्य
शोचतः ।५।१८

हे ऋत्विजो ! जो अग्नि हमारे निकटस्थ बन्धु हैं, उनके साथी काम्य-साधक अग्नि के मुख में हवि डालो ।१। घरों का पालन करने वाले युवकतम अग्नि पञ्चजनों के सम्मुख प्रत्येक गृह में निवास करते हैं ।२। जो अग्नि हमें मन्त्र देते हैं वही हमें सब विघ्नों से बचावे । वही हमारे धन की रक्षा करे और हमें पापों से मुक्त करें ।३। हम गरुड़ के समान द्रुतगामी अग्नि के लिए अभिनव, स्तोत्र रचते हैं । वे हमें महान धन प्रदान करें ।४। यज्ञ के अग्रभाग में दमकती हुई अग्नि की ज्वालायें पुत्र वाले यजमान के धन के समान शोभाजनक होती हैं ।५। (१८)

सेमां वेतु वषट्कृतिमग्निर्जुषत नो गिरः । यजिष्ठो हव्यवाहनः॥६
नि त्वा नक्ष्य विश्पते द्युमन्तं देव धीमहि । सुवीरमग्न आहुत॥७
क्षप उस्रश्च दीदिहि स्वग्नयस्त्वया वयम् । सुवीरस्त्वमस्मयुः ॥८
उप त्वा सातये नरो विप्रासो यन्ति धीतिभिः ।
उपाक्षरा सहस्रिणी ॥६

अग्नी रक्षांसि सेधति शुक्रशोचिरमर्त्यः ।
शुचिः पावक ईड्यः ।१०।१६

यज्ञ कर्ताओं के श्रेष्ठ हव्य का हवन करने वाले अग्नि हमारी हवियों की इच्छा करते हुए स्तोत्र से प्रसन्न हों ।६। हे अग्ने ! तुम यजमानों द्वारा आहुत किये जाते हो । तुम वीरकर्मा और तेजस्वी हो । हे संसार के स्वामी ! तुम्हें हमने प्रतिष्ठित किया है । हे अग्ने ! तुम दिन-रात प्रज्वलित रहो । तुम हम पर प्रसन्न होकर श्रेष्ठ कर्म वाले

बनो ।७-८। हे अग्ने ! धन की अभिलाषा वाले यजमान अनुष्ठान द्वारा तुम्हें प्रसन्न करते है ।९। हे स्तुत्य अग्ने ! तुम श्रेष्ठ ज्वाला वाले: पवित्र और शोधक के हिंसाकारी यत्नों को रोको ।१०।   (१९)

स नो राधांस्या भरेशानः सहसो यहो । भगश्च दातु वार्यम् ॥११
त्वमग्ने वीरवद् यशो देवश्च सविता भगः ।
दितिश्च दाति वार्यम् ॥१२
अग्ने रक्षा णो अंहसः प्रति ष्म देव रीषतः ।
तपिष्ठैरजरो दह ॥१३
अधा मही न आयस्यनाधृष्टो नृपीतये । पूर्भवा शतभुजिः ॥१४
त्वं नः पाह्यंहसो दोषावस्तरघायतः । दिवा नक्तमदाभ्य
।१५।२०

हे अग्ने ! तुम संसार के पालक होकर हमें धन प्रदान करो। भग देवता भी हमें धन प्रदान करें ।११। हे अग्ने ! पुत्र पौत्रादि से सम्पन्न धन हमें प्रदान करो । सविता, भग और अदिति भी हमें धन प्रदान करें ।१२। हे अग्ने ! तुम जरा-रहित ही हिंसाकारियों को अपने सन्तापदायक तेज से भस्म करो और पाप से हमारी रक्षा करो ।१३। हे दुर्धर्ष अग्ने ! तुम हमारे मनुष्यों की रक्षा के लिए लौह-नगरी का निर्माण करो ।१४। हे अग्ने! अन्धकार को दूर करो । तुम हमें पाप से-पाप कर्मा दुष्ट में रक्षित करो ।१५।   (२०)

सूक्त १६

(ऋषि—वसिष्ठः । देवता–अग्निः । छन्द–अनुष्टुप, वृहती, पंक्तिः)

एना वो अग्निं नमसोर्जो नपातमा हुवे ।
प्रियं चेतिष्ठमरतिं स्वध्वरं विश्वस्य दूतममृतम् ॥१

स योजते अरुषा विश्वभोजसा स दुद्रवत् स्वाहुतः।
सुब्रह्मा यज्ञः सुशमी वसूनां देवं राधो जनानाम् ॥२
उदस्य शोचिरस्थादाजुह्वनस्य मीलहुषः।
उद् धूमासो अरुषासो दिविस्पृशः समग्निमिन्धते नरः ॥३
तं त्वा दूतं कृण्महे यशस्तमं देवाँ आ वीतये वह।
विश्वा सूनो सहसो मर्तभोजना रास्व तद् यत् त्वेमहे ॥४
त्वमग्ने गृहपतिस्त्व होता नो अध्वरे।
त्वं पोता विश्ववार प्रचेता यक्षि वेषि च वार्यम् ॥५
कृधि रत्नं यजमानाय सुक्रतो त्वं हि रत्नधा असि।
आ न ऋते शिशीहि विश्वमृत्विजं सुशंसो यश्च दक्षते ।६।२१

हे यजमान ! मैं तुम्हारे निमित्त नवोत्पन्न, गतिमान, यज्ञमान देवदूत अग्नि का आह्वान करता हूँ।१। वे अग्नि सबके पालन कर्त्ता हैं। वे दोनों अश्वों को रथ में योजित करते हैं और देवताओं की ओर शीघ्रता से जाते हैं। वे श्रेष्ठ आहूति वाले, यज्ञ-योग्य एवं सुन्दर कर्म वाले हैं। उन अग्नि का धन वसिष्ठ के वंशज ऋषियों को प्राप्त हो।२। इन आह्वानीय अग्नि का कामनाकारी तेज उन्नत हो रहा हैं। इनका धूम अन्तरिक्ष को स्पर्श करने वाला है। सभी मनुष्य अग्नि को प्रदीप्त कर रहे हैं।३। हे अग्ने ! तुम यशस्वी हो। हम तुम्हें दूतरूप से वरण करते हैं। तुम हविवाहन करतेहुए देवाह्वाक होओ। जब हम याचना करें, तभी हमें उपभोग्य धन प्रदान करो।४। हे अग्ने ! सभी प्राणी तुम्हें पूजते हैं। तुम्हारे यज्ञ में गृह स्वामी बनो। तुम होता और पोता भी हो। यज्ञ में हव्य का भक्षण करो।५। हे अग्ने ! तुम श्रेष्ठ कर्म वाले हो यजमान को रत्न धन प्रदान करो। हमारे यज्ञ में सबको तेज दो, होता की वृद्धि करो।६। (२१)

त्वे अग्ने स्वाहुत प्रियासः सन्तु सूरयः।
यन्तारो ये मघवानो जनानामूर्वान् दयन्त गोनाम् ॥७

येषामिला घृतहस्ता दुरोण आँ अपि प्राता निषीदति ।
तांस्त्रायस्व सहस्य द्रुहो निदो यच्छा नः शर्म दीर्घश्रुत् ॥८
स मन्द्रया च जिह्वया वह्निरासा विदुष्टरः ।
अग्ने रयिं मघवद्भ्यो न आ वह हव्यदातिं च सूदय ॥९
ये राधांसि ददत्यश्व्या मघा कामेन श्रवसो महः ।
ताँ अंहसः पिपृहि पर्तृभिष्ट्वं शतं पूर्भिर्यविष्ठ्य ॥१०
देवो वो द्रविणोदाः पूर्णां विवष्ट्यासिचम् ।
उद् वा सिञ्चध्वमुप वा पृणध्वमादिद् वो देव ओहते ॥११
त होतारमध्वरस्य प्रचतस वह्निं देवा अकृण्वत ।
दधाति रत्नं विधते सुवीर्यमग्निर्जनाय दाशुषे ।१२।२२

हे अग्ने ! भले प्रकार तुम्हारा आह्वान किया जाता है। जो धनिकदाता गवादि धन दान करते हैं वे भी देवताओं की प्रीति भाजन हों ।७। जिन घरों में हविरूप वाली देवी पूर्ण होकर निवास करती है । हे बलवान् अग्ने ! उन घरों की दुष्ट निन्दकों से रक्षा करो । हमें सुख प्रदान करो, जिससे हम तुम्हारी स्तुति करते रहें ।८। हे अग्ने ! तुम मेधावी एवं हव्य वाहक हो । तुम हमें सुख में स्थिर मधुर वाणी के द्वारा धन प्राप्त कराओ । हमें हविदान पुरुषों को कर्म में लगाओ ।९। हे अग्ने तुम्हारे यजमान यज्ञ की कामना से हविर्दान में लगते हैं, उन्हें पापसे रक्षित करो ।१०। हे स्तोता ! अग्नि तुम्हारे स्रुत की कामना करते है, तुम अपने पात्र को सोम से भरकर प्रस्तुत करो तब अग्नि हमारे यज्ञ को वहन करेंगे ।११। हे देवगण ! तुमने बुद्धिमान अग्निको होता नियुक्त किया है, अग्नि यजमान को सुन्दर धन प्रदान करने वाले हों ।१२। (२२)

सूक्त १७

(ऋषि–वसिष्ठः । देवता–अग्निः । छन्द–उष्णिक्, त्रिष्टुप, पंक्ति)

अग्ने भव सुषमिधा समिद्ध उत बर्हिरुर्विया वि स्तृणीताम् ॥१

उत द्वार उशतीर्वि श्रयन्तामुत देवाँ उशत आ वहेह ॥२
अग्ने वीहि हविषा यक्षि देवान् त्स्वध्वरा कृणुहि जातवेदः ॥३
स्वध्वरा करति जातवेदा यक्षद् देवाँ अमृतान् पिप्रयच्च ॥४
वंस्व विश्वा वार्याणि प्रचेतः स या भन्त्ववशिषो नो अद्य ॥५
त्वामु ते दधिरे हव्यवाहं देवासो अग्न ऊर्ज आ नपातम् ॥६
ते ते देवाय दाशतः स्याम महो नो रत्ना वि दधइयानः ।७।२३

हे अग्ने ! समिधा द्वारा समृद्धको प्राप्त होओ । इस यज्ञ में अध्वर्यु गण कुश बिछाते हैं । हे अग्ने ! देवताओं की इच्छा करने वाले द्वारों के लिये आश्रम रूप होकर यज्ञ की अभिलाषा वाले देवताओं का आहवान करो ।२। हे अग्ने ! देवताओं के अभिमुख गमन करो । हवि से यज्ञ करो और हमारे यज्ञको देवताओं की प्रसन्नता का कारण बनाओ ।३ हे अग्ने ! अविनाशी देवताओं को यज्ञ से युक्त करो । उनके लिये हवि दो और स्तुतियों से प्रसन्न करो ।४। हे अग्ने ! हमें समस्त धन प्रदान करो । हमें दियेगये आशीर्वचन सत्य हों ।५। हे बलोत्पन्न अग्ने! उन सब देवताओं ने तुम्हें हवि वहन करने वाला नियुक्त किया है ।६। हे अग्ने ! तुम तेजस्वी हो । हम तुम्हें हव्य प्रदान करेंगे । तुम महान हो, हमें रत्न-धन प्रदान करो ।७।

सूक्त १८ [दूसरा अनुवाक]

(ऋषि—वसिष्ठः । देवता—इन्द्रः । छन्द—त्रिष्टुप, पंक्ति)

त्वे ह यत् पितरश्चिन्न इन्द्र विश्वा वामा जरितारो असन्वन् ।
त्वे गावः सुदुघास्त्वे ह्यश्वास्त्वं वसु देवयते वनिष्ठः ॥१
राजेव हि जनिभिः क्षेष्येवाऽव द्युभिरभि विदुष्कविः सन् ।
पिशा गिरो मघवन् गोभिरश्वैस्त्वायतः शिशीहि राये अस्मान् ॥२
इमा उ त्वा पस्पृधानासो अत्र मन्द्रा गिरो देवयन्तीरुप स्थुः ।
अर्वाची ते पथ्या राय एतु स्याम ते सुमताविन्द्र शर्मन् ॥३

धेनुं न त्वा सूयवसे दुदुक्षन्नुप ब्रह्माणि ससृजे वसिष्ठः ।
त्वामिन्मे गोपतिं विश्व आहा ऽऽन इन्द्रः सुमतिं गत्वच्छ ॥४
अर्णांसि चित् पप्रथाना सुदास इन्द्रो गाधान्यकृणोत् सुपारा ।
शर्धन्त शिम्युमुचथस्य नव्यः शाप सिन्धूनामकृणोदशस्तीः ।५।२४

हे इन्द्र ! हमारे पूर्वजों ने तुम्हारी स्तुति द्वारा ही समस्त धनोंको प्राप्त किया है। तुम्हारे कर्म से ही गौयें दोहन कर्म द्वारा दुग्ध देने वाली होती है। देवताओं के उपासकों को तुम श्रेष्ठ धन प्रदान करते हो।१। हे इन्द्र ! तुम अत्यन्त तेजस्वी बने रहते हो। तुम मेधावी और कवि हो, स्तोताओं को गौ, अश्व और रूप दो। हम तुम्हारी उपासना करते हैं। तुम हमें धन के योग्य बनाओ।२। हे इन्द्र ! तुम्हारे पास हमारी रमणीय स्तुतियाँ गमन करती हैं। तुम्हारा धन हमारी ओर आगमन करे। हम तुम्हारे अनुग्रह से सुख पावें।३। ज्ञानी वसिष्ठ श्रेष्ठ तृण वाली, गोष्ठ में वास करने वाली गौ के समान स्तोत्र रूप बछड़े को उत्पन्न करते हैं। सभी प्राणी तुम्हें गौओं का स्वामी मानते हैं। हे इन्द्र ! हमारी स्तुति का सामीप्य प्राप्त करो।४। हे इन्द्र ! विकट धारा वाली परुष्णी नदीसे तुमने सुदास राजा को पार करने योग्य बनाया। नदियों की तरङ्ग से स्तोता के यातायात को रोकने वाले शाप को तुमने ही नष्ट किया।५।

(२४)

पुरोला इत् तुर्वशो यक्षुरासीद् राये मत्स्यासो निशिता अपीव ।
श्रुष्टिं चक्रुर्भृगवो द्रुह्यवश्च सखा सखायमतरद् विषूचोः ॥६
आ पक्थासो भलानसो भनन्ता ऽलिनासो विषाणिनः शिवासः ।
आ योऽनयत् सधमा आर्यस्य गव्या तृत्सुभ्यो अजगन् युधा नॄन्
।७
दुराध्यो अदितिं स्रेवयन्तो ऽचेतसो वि जगृभ्रे परुष्णीम् ।
मह्नाविव्यक् पृथिवी पत्यमानः पशुष्कविरशयच्चायमानः ॥८

ईयुरर्थं न न्यर्थं परुष्णीमाशुश्चनेदाभिपित्वं जगाम ।
सुदास इन्द्रः सुतुकाँ अमित्रानरन्धयन्मानुषे वध्रिवाचः ॥६
ईयुर्गावो न यवसादगोपा यथाकृतमभि मित्रं चितासः ।
पृश्निगावः पृश्निनिप्रेषितासः श्रुष्टिं चक्रुर्नियुतो रन्तयश्च ॥१०।२५

तुर्वश नामक यज्ञकर्ता राजा थे । भृगुओं और द्रुह्युओं ने मत्स्य के समान जाल में बधे रहने पर भी सुदास और तुर्वश से धन के निमित्त भेंट की । इन दोनों में एक को इन्द्र ने मार डाला और सुदास को पार लगा दिया ।६। हव्यों का पाक करने वाले, मङ्गल-सुख वाले दीक्षित पुरुष इन्द्र का स्तोत्र करते हैं । सोम पान से मदयुक्त हुए इन्द्र गौओं को छुड़ा लाये । तब उन्होंने गौओं के छिपाने वाले राक्षसों का वध कर डाला ।७। दुष्ट हृदय वाले शत्रुओं ने पुरुष्वी नदी को खोद कर उसके नगरों को ढा दिया । सुदासने इन्द्र की कृपा प्राप्त की थी । चादमान के पुत्र सुदास ने पालतू के समान धाराशायी किया था ।८। इन्द्र ने परुष्णी के किनारे को ठीक किया, तब उसका जल गन्तव्य दिशा में जाने लगा । अश्व भी अपने गन्तव्य स्थान में गया । तब इन्द्र से सुदास के शत्रुओं को अपने वश में कर लिया ।९। जैसे चराने वाले के बिना गौयें जौ खेत में जाती है, वैसे ही माता द्वारा प्रेरित मरुद-गण अपनी इच्छानुसार इन्द्र के पास गये । तब मरुदगण के अश्व भी प्रसन्नता कों प्राप्त हुये ।१०। (२५)

एकं च यो विंशतिं च श्रवस्या वैकर्णयोर्जनान् राजा न्यस्तः ।
दस्मो न सद्मन् नि शिशाति बर्हिः शूरः सर्गमकृणोदिन्द्र एषाम् ॥११
अध श्रुतं कवषं वृद्धमप्स्वनु द्रुह्युं नि वृणग्वज्रबाहुः ।
वृणाना अत्र सख्याय सख्य त्वायन्तो ये अमदन्ननु त्वा ॥१२
वि सद्यो विश्वा दृंहितान्येषामिन्द्रः पुरः सहसा सप्त दर्दः ।
व्यानवस्य तृत्सवे गयं भाग्जेष्म पूरुं विदथे मृध्रवाचम् ॥१३

नि गव्यवोऽनवो द्रुह्यवश्च षष्टिः शता सुषुपुः षट् सहस्रा ।
षष्टिर्वीरासो अधि षड् दुवोयु विश्वेदिन्द्रस्य वीर्या कृतानि ॥१४
इन्द्रेणैते तृत्सवो वेविषाणा आपो न सृष्टा अधवन्त नीचीः ।
दुर्मित्रासः प्रकलविन्मिमाना जहुर्विश्वानि भोजना सुदासे ॥
॥१५।२६

राजा सुदास ने दो प्रदेशों के इक्कीस पुरुषों को मार कर यश-संचित किया । अध्वर्यु जैसे कुश को काटता है वैसे ही राजा ने शत्रुओं को काट डाला । इन्द्र ने सुदास की सहायता के लिये मरुदगण को प्रकट किया ।१। फिर उन वज्रहस्त इन्द्र ने द्रुह्यु, कवष, श्रुत और वृद्ध नाम के शत्रुओं कों जल मग्न किया । जिस समय जिन पुरुषों ने उनकी स्तुति की वे उनके सखा हो गये ।२। इन्द्र ने अपनी शक्ति से उक्त शत्रुओं के नगरों को भी तोड़ डाला और अनु-पुत्र को तृत्सु को दे दिया । हे इन्द्र ! हम पर ऐसी कृपा करो जिससे हम कठोर वक्ता शत्रुओं पर विजय पा सकें ।१३। अनु और द्रुह्यु की गौओं की कामना करने वाले छियासठ सहस्र छियासठ सम्बन्धियों को सुदास के लिये वध किया । यह सब धर्म इन्द्र को वीरता प्रदर्शित करते हैं ।१४। तब यह तृत्सुवंशज संग्राम भूमि में भागने लगे, परन्तु बाधा उपस्थित होने पर अपना समस्त धन उन्होंने सुदास को दे दिया ।१५।

अर्धं वीरस्य शृतपामनिन्द्रं परा शर्धन्तं नुनुदे अभि क्षाम् ।
इन्द्रो मन्युं मन्युम्यो मिमाय भेजे पथो वर्तनिं पत्यमानः ॥१६
आध्रेण चित् तद्वेकं चकार सिंह्यं चित् पेत्वेना जघान ।
अव स्रक्तीर्वेश्यावृश्चदिन्द्रः प्रायच्छद् विश्वा भोजना सुदासे ॥१७
शश्वन्तो हि शत्रवो रारधुष्टे भेदस्य चिच्छर्धतो विन्द रन्धिम् ।
मर्ताँ एनः स्तुवतो यः कृणोति तिग्मं तस्मिन् नि जहि वज्रमिन्द्र
॥१८

आवदिन्द्रं यमुना तृत्सवश्च प्रात्र भेदं सर्वताता मुषायत् ।
अजासश्च शिग्रवो यक्षवश्च बलिं शीर्षाणि जभ्रुरश्व्यानि ॥१९

न त इन्द्र सुमतयो न रायः संचक्षे पूर्वा उषसो न नूत्नाः ।
देवकं चिन्मान्यमानं जघन्थाऽव त्मना बृहतः शम्बरं भेत् ॥२०॥२७

हिंसाकारी यज्ञशून्य, इन्द्र विरोधी पुरुषों को सुदास के निमित्त इन्द्र ने पृथ्वी पर गिराया । इन्होंने क्रोधित शत्रुओं के क्रोध को व्यर्थ कर दिया । तब सुदास के शत्रु से संग्राम से मुख मोड़ लिया ।१६। सुदास के लिये इन्द्र ने छाग द्वारा सिंह को मरवा दिया ।१७। हे इन्द्र! तुम अपने शत्रुओं को वशीभूत कर लेते हो । इस नास्तिक को वशीभूत करो । यह तुम्हारे स्तोता का अहित करता है । इसके विरुद्ध तीक्ष्ण वीर को प्रेरित कर इसे नष्ट कर डालो ।१८। इस युद्ध में इन्द्र ने नास्तिक को मार डाला । यमुना ने इन्द्र की सन्तुष्टि की तृत्सुओं ने भी उन्हें प्रसन्न किया । शिग्र यक्ष और अज ने भी उपहार प्रस्तुत किये ।१९। हे इन्द्र ! तुम्हारे प्राचीन कर्म उषा के समान वर्णनातीत है। तुम्हारे नवीन कर्मों का वर्णन करना भी कठिन है । तुमने देवक को मारा और शिला से शम्बर का भी संहार किया ।२०। (२७)

प्र ये गृहादममदुस्त्वाया पराशरः शतयातुर्वसिष्ठः ।
न ते भोजस्य सख्यं मृषन्ताऽधा सूरिभ्यः सुदिना व्युच्छान् ॥२१

द्वे नप्तुर्देववतः शते गोर्द्वा रथा वधूमन्ता सुदासः ।
अर्हन्नग्ने पैजवनस्य दानं होतेव सद्म पर्येमि रेभन् ।.२२

चत्वारो मा पैजवनस्य दानाः स्मद्दिष्टयः कृशनिनो निरेके ।
ऋज्रासो मा पृथिविष्ठाः सुदासस्तोकं तोकाय श्रवसे वहन्ति॥२३

यस्य श्रवो रोदसी अन्तरुर्वी शीर्ष्णेशीर्ष्णे विबभाजा विभक्ता ।
सप्तेदिन्द्रं न स्रवतो गृणन्ति नि युध्यामधिमशिशादभीके ॥२४

इमं नरो मरुतः सश्चतानु दिवोदासं न पितरं सुदासः ।
अविष्टना पैजवनस्य केतं दूणामं क्षत्रमजरं दुवोयु ।२५।२८।

हे इन्द्र ! जिनके मारे जाने की कामना राक्षसगण करते हैं, उन वसिष्ठ, पाराशर आदि ऋषियों ने तुम्हारी स्तुति की थी वे तुम्हारी मित्रता को नहीं भूले, क्योंकि तुमने उनकी सदा रक्षा की है ।२१। हे इन्द्र ! तुम देवताओं में श्रेष्ठ हो । मैंने तुम्हारी स्तुति करके सुदास से सौ गौ और दो रथ प्राप्त किये हैं । होताके समानमैं भी यज्ञ स्थान में जाता हूँ ।२२। राजा सुदास के श्रद्धा और दानादि कर्मों वाले, स्वर्णालङ्कारों से विभूषित, सरलगामी चार अश्व, पालन योग वसिष्ठ को पुत्र के समान ले जाते हैं ।२३। आकाश पृथिवी में विस्तृत यश वाले राजा सुदास उत्तम कर्म वाले ब्राह्मणों को धन दान करते हैं। इन्द्र के समान उनके स्तोत्र किये जाते हैं । संग्राम उपस्थित होने पर युध्यामधि नामक शत्रु को नदियों ने विनष्ट किया था ।२४। हे मरुद-गण ! यह राजा सुदास के पिता है । तुम इन्हीं के समान सुदास की भी रक्षा करो इसका बल क्षीण न हो । तुम इनके ग्रह को भी रक्षित करो ।२५।

(२८)

सूक्त १९

(ऋषि—वसिष्ठः । देवता—इन्द्र । छन्द—त्रिष्टुप्, पंक्तिः)

यस्तिग्मशृङ्गो वृषभो न भीम एकः कृष्टीश्च्यावयति प्र विश्वाः ।
यः शश्वतो अदाशुषो गयस्य प्रयन्तासि सुष्वितराय वेदः ।।१
त्वं ह त्यदिन्द्र कुत्सभावः शुश्रूषमाणस्तन्वा समर्ये ।
दासं यच्छुष्णं कुयवं न्यस्मा अरन्धय आर्जुनेयाय शिक्षन् ।।२
त्वं घृष्णो धृषता वीतहव्यं प्रावो विश्वाभिरूतिभिः सुदासम् ।
प्र पौरुकुत्सिं त्रसदस्युमावः क्षेत्रसाता वृत्रहत्येषु पूरुम् ।।३
त्वं नृभिर्नृमणो देववीतौ भूरीणि वृत्रा हर्यश्व हंसि ।
त्वं नि दस्युं चुमुरिं धुनिं चाऽस्वापयो दभीतये सुहन्तु ।।४

तव च्यौत्नानि वज्रहस्त तानि नव यत् पुरो नवतिं च सद्यः ।
निवेशने शततमाविवेषीरहञ्च वृत्रं नमुचिमुताहन् ।५।२६

तीक्ष्ण सींग वाले वृषभ के समान विकराल होकर इन्द्र अपने शत्रुओं को अकेले गिराते हैं और उनके पैरों को छीन लेते हैं। इन्द्र सोमाभिषवकारी यजमान को धन प्रदान करें ।१। हे इन्द्र ! जब तुमने कुत्स को धन दिया और दस्यु शुष्ण और कुयव को जीता। उस समय कुत्स की रक्षा की थी ।२। हे इन्द्र ! हविदाता सुदास की रक्षा करो, संग्राम भूमि में पुरुकुत्स-पुत्र त्रयदस्यु और पुरु के रक्षक होओ ।३। हे इन्द्र ! तुम स्तुत्य हो। तुमने मरुदगण के सहयोग से अनेक वृत्रों का वध किया है। दभीति की रक्षा के लिए तुमने दस्यु, चुमुरि और धुनि को मार डाला ।४। हे वज्रिन् ! तुमने शाम्बर के निन्यानवे पुरों का ध्वंस किया और सौवें पुर को अपने निवास के लिए रखा और वृत्र तथा समुचि को मार दिया ।५।

सना ता त इन्द्र भोजनानि रातहव्याय दाशुषे सुदासे ।
वृष्णे ते हरी वृषणा युनज्मि व्यन्तु ब्रह्माणि पुरुशाक वाजम् ॥६
मा ते अस्यां सहसावन् परिष्टावघाय भूम हरिवः परादै ।
त्रायस्व नोऽवृकेभिर्वरूथैस्तव प्रियासः सूरिषु स्याम ॥७
प्रियास इत् ते मघवन्नभिष्टौ नरो मदेम शरणे सखायः ।
नि तुर्वशं नि याद्वं शिशीह्यतिथिग्वाय शंस्यं करिष्यन् ॥८
सद्यश्चिन्नु ते मघवन्नभिष्टौ नरः शंसन्त्युक्थशास उक्था ।
ये ते हवेभिर्वि पणीँरदाशन्नस्मान् वृणीष्व युज्याय तस्मै ॥९
एतो स्तोमा नरां नृतम तुभ्यमस्मद्र्यञ्चो ददतो मघानि ।
तेषामिन्द्र वृत्रहत्ये शिवो भूः सखा च शूरोऽविता च नृणाम् ॥१०
नू इन्द्र शूर स्तवमान ऊती ब्रह्मजूतस्तन्वा वावृधस्व ।
उप नो वाजान् मिमीह्युप स्तीन् यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः
११।३०

हे इन्द्र ! सुदास को तुम्हारा ऐश्वर्य प्राप्त हुआ । तुम अभीष्टों की वर्षा करने वाले हो । मैं तुम्हारे निमित्त दो अश्वों को योजित करता हूँ, तुम अत्यन्त वल वाले हो । यह स्तुति तुम्हारी ओर गमन करती है ।६। हे शक्तिवन्त ! तुम्हारे इस यज्ञ में हम पाप के भागी न हों । तुम हमारी हर प्रकार मे रक्षा करो । हम स्तोताओं में सर्वप्रिय हों ।७। हे इन्द्र ! तुम्हारे इस यज्ञ में तुम्हारे प्रीति भाजन होते हम सुखी रहें । तुम अतिथि को सेवा करने वाले सुदास को सुखी करो और तुर्वश तथा याद्व को अपने अधीन कर लो ।८। हे इन्द्र ! तुम्हारे यज्ञ में हमने उक्थ का उच्चारण किया है । तुम्हारे हव्य द्वारा प्राप्त धन से हम 'पाणियों' को भी सहायता कर देते हैं । तुम हमें अपना मित्र मानो ।९। हे इन्द्र श्रेष्ठ हविर्दान द्वारा स्तुतियों ने तुम्हें हमारे प्रति प्रसन्न कर दिया है । तुम स्तोताओं की रणभूमि में रक्षा करो और सदा इनके मित्र रहो । ।१०। हे इन्द्र ! तुम स्तूयमान और स्तोत्रमान होकर वृद्धि को प्राप्त होओ । हमें अन्न और गृह प्रदान करो । हमारे सदा रक्षक रहो ।११।

(३०)

सूक्त २०

(ऋषि–वसिष्ठः । देवता–इन्द्रः । छन्द–पंक्ति, त्रिष्टुप्)

उग्रो जज्ञे वीर्याय स्वधावाञ्चक्रिरपो नर्यो यत् करिष्यन् ।
जग्मिर्युवा नृषदनमवोभिस्त्राता न इन्द्र एनसो महश्चित् ॥१
हन्ता वृत्रामिन्द्रः शूशुवानः प्रावीन्नु वीरो जरितारमूती ।
कर्मा सुदासे अह वा उ लोकं दाता वसु मुहुरा दाशुषे भूत् ॥२
युध्मो अनर्वा खजकृत् समद्वा शूरः सत्राषाड् जनुषेमषालहः ।
व्यास इन्द्रः पूतनाः स्वोजा अधा विश्वं शत्रूयन्तं जघान ॥३
उभे चिदिन्द्र रोदसी महित्वा ऽऽपप्राथ तविषीभिस्तुविष्मः ।
नि वज्रमिन्द्रो हरिवान् मिमिक्षन् त्समन्धसा मदेषु वा उवोच ॥४

वृषा जजान वृषणं रणाय तमु चिन्नारी नर्यं ससूव ।
प्र यः सेनानीरध नृभ्वो अस्तोनः सत्वा गवेषणः सः धृष्णुः ।५।१

बल के निमित्त इन्द्र की उत्पत्ति हुई है। मनुष्य के जिस कार्य को करना चाहता है, उसे कोई नहीं रोक सकता। वे इन्द्र यज्ञ स्थान को गमन करने वाले हैं। वे पापों से मुक्त करें।१। वृत्र हनन के लिये हम इन्द्र को प्राप्त होते हैं। वीर इन्द्र स्तोता का आश्रय प्रदान करें उसकी रक्षा करते हैं। उन्होंने सुदासके लिए नव-निर्मित प्रदेश देदिया वह यजमान को बारम्बार धन प्रदान करते हैं।२। संग्राम में दुर्धर्ष इन्द्र महान वीर हैं। वे असंख्य शत्रुओं को अकेले ही हराते हैं। उन्होंने ही शत्रु सेना में विघ्न उपस्थित किया। शत्रुओं को वे मार डालते हैं।३। हे इन्द्र! तुमने अपने बल से आकाश-पृथिवी को परिपूर्ण किया। जब तुम शत्रुओं पर वज्र फैंकते हो तब सोमरस द्वारा तुम्हारी सेवा की जाती है।४। कश्यप ने इन्द्र को संग्राम के निमित्त प्रकट किया वे इन्द्र मनुष्यों के स्वामी और सेना नायक होते हैं। यही शत्रुओं के संहारक गौओं के खोजने वाले और वृत्र का नाश करने वाले हैं।५। (१)

न चित् स भ्रेषते जनो न रेषन् मनो यो अस्य घोरमाविवासात्।
यज्ञैर्य इन्द्रे दधते दुवांसि क्षयत् स राय ऋतपा ऋतेजाः ।।६
यदिन्द्र पूर्वो अपराय शिक्षन्नयज्ज्यायान् कनीयसो देष्णम् ।
अमृत इत् पर्यासीत दूरमा चित्र चित्र्यं भरा रयिं नः ।।७
यस्त इन्द्र प्रियो जनो ददाशदसन्निरेके अद्रिवः सखा ते ।
वयं ते अस्यां सुमतौ चनिष्ठाः स्याम वरूथे अघ्नतो नृपीतौ ।।८
एष स्तोमो अचिक्रदद् वृषा त उत स्तामुर्मघवन्नक्रपिष्ट ।
रायस्कामो जरितारं त आगन् त्वमङ्ग शक्र वस्व आ शको नः।।९
स न इन्द्र त्वयताया इषे धास्त्मना च ये मघवानो जुनन्ति ।
वस्वीं षु तें जरित्रे अस्तु शक्तिर्यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ।।

इन्द्र का मन शत्रु-हनन कर्म में रहता है, जो पुरुष उनके उस मन का ध्यान करता है, वह अपने स्थान से कभी गिरता नहीं। इन्द्र अपने स्तोता को धन प्रदान करें।६। हे इन्द्र ! पूर्वज अपने से लघु को जो धन देता है, छोटे से जो बड़ा धन पाता है और जो धन पिता से पुत्र पाता है इन तीनों प्रकार से धनोंको यहाँ लाओ।७। हे वज्रिन्! तुम्हें जो मित्रभूत व्यक्ति हविदेता है वह सदा तुम्हारे अनुग्रह को प्राप्त करते हुए अन्नवान् हों और रक्षा साधनों से सम्पन्न घर में निवास करे।८। हे इन्द्र ! यह क्षरित सोम तुम्हारी कामना कर रहा है। स्तोता तुम्हारी स्तुति में लगा है। मैं तुम्हारा स्तोत्र धनकी कामना से कर रहा हूँ। तुम शीघ्र ही हमें बसाने वाला धन प्रदान करो। । हे इन्द्र ! अपने दिये धनका उपयोग करने की सामर्थ्य हमें दो। हविदाता का पालन करो। हम स्तुति के कार्य में मन से लगें। तुम मेरी सदा रक्षा करते रहो।१०।   (२)

सूक्त २१

(ऋषि—वसिष्ठः । देवत—इन्द्रः । छन्द—त्रिष्टुप्, पंक्तिः)

असावि देवं गोऋजीकमन्धो न्यस्मिन्निन्द्रो जनुषेमुवोच ।
बोधामसि त्वा हर्यश्व यज्ञैर्बोधा नः स्तोममन्धसो मदेषु ॥१
प्र यन्ति यज्ञं विपयन्ति बर्हिः सोममादो विदथे दुध्रवाचः ।
न्यु भ्रियन्ते यशसो गृभादा दूरउपब्दो वृषणो नृषाचः ॥२
त्वमिन्द्र स्रवितवा अपस्कः परिष्ठिता अहिना शूर पूर्वीः ।
त्वद् वावक्रे रथ्यो न धेना रेजन्ते विश्वा कृत्रिमाणि भीषा ॥३
भीमो विवेषायुधेभिरेषामपांसि विश्वा नर्याणि विद्वान् ।
इन्द्र पुरो जर्हृषाणो वि दूधोन् वि वज्रहस्तो महिना जघान ॥४
न यातव इन्द्र जूजुवुर्नो न वन्दना शाविष्ठ वेद्याभिः ।
स शर्धदर्यो विषुणस्य जन्तोर्मा शिश्नदेवा अपि गुर्ऋतं नः ॥५॥३

यह गव्यमुक्त सोम निष्पन्न होकर तेजोमय हुआ है। इन्द्र इस पर रुचि रखते हैं। हे इन्द्र ! हम तुम्हें यज्ञ द्वारा जगावेंगे। तुम हमारी स्तुति पर ध्यान दो।१। यज्ञ में पहुँचकर यजमान कुश-विस्तृत करते हैं। वहाँ सोमाभिषवकारी पाषाण घोर शब्द करते हैं। अन्न से युक्त ऋत्विजों द्वारा यह पाषाण घर से लाये जाते है।२। हे वीर इन्द्र ! वृत्र तथा रोके गये जल को तुमने प्रेरित किया था। तुमने ही नदियों को रथारूढ़ वीरों के समान प्रवाहित किया। तुम्हारे भयसे भीत संसार कम्पायमान होता है। मनुष्यों का हित जानने वाले इन्द्र ने असुरों के कर्म में विघ्न डाला और उनके सब स्थानों को कम्पित किया। फिर उन्होंने अपने वज्र द्वारा राक्षसो का नाश किया।४। हे इन्द्र ! दैत्यगण हमें हिंसित न करें। वे हमको हमारी प्रजा से पृथक् न करे। हमारे यज्ञ में ब्रह्मचर्य विमुख व्यक्ति बाधक न हो।५।   (३)

अभि क्रत्वेन्द्र भूरध ज्मन् न ते विव्यङ् महिमानं रजांसि।
स्वेना हि वृत्रं शवसा जघन्थ न शत्रुरन्तं विविदद् युधा ते ॥६
देवाश्चित् ते असुर्याय पूर्वे ऽनु क्षत्राय ममिरे सहांसि।
इन्द्रो मघानि दयते विषह्येन्द्रं वाजस्य जोहुवन्त सातौ ॥७
कीरिश्चिद्धि त्वामवसे जुहावेशानमिन्द्र सौभगस्य भूरेः।
अवो बभूथ शतमूते अस्मे अभिक्षत्तुस्त्वावतो वरूता ॥८
सखायस्त इन्द्र विश्वह स्याम नमोवृधासो महिना तरुत्र।
वन्वन्तु स्मा तेऽवसा समीके ऽभीतिमर्यो वनुषां शवांसि ॥९
स न इन्द्र त्वयताया इषे धास्त्मना च ये मघवानो जुनन्ति।
वस्वी षु ते जरित्रे अस्तु शक्तिर्यूय पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥
।१०।४

हे इन्द्र ! तुम अपने कर्म से सब प्राणियों को वशमें रखते हो। तुम्हारी महिमा को संसार व्यर्थ नहीं कर सकता। तुमने अपने बल से

वृत्र को मारा है। वह तुम्हारे बल को पार नहीं पा सका ।६। हे इन्द्र प्राचीन देवता भी तुमसे अपने को निर्बल मानते थे। तुम शत्रुओं को हराकर उपासकों को धन प्रदान करते हो। स्तोतागण जन्म के लिये तुम्हारा आह्वान करते हैं ।७। हे इन्द्र ! तुम ईश्वर हो, स्तोतागण रक्षा के लिए तुम्हें आहूत करते हैं। तुम अनेकों को दुःख से बचाते हो। दुर्धर्ष हिंसक को नष्ट करो ।८। हे इन्द्र ! हम तुम्हें स्तुतियों से बढ़ाने वाले सदा तुम्हारे रहें। तुम अपनी महिमा से सबको पार लगाते हो। तुम्हारे द्वारा रक्षित स्तोता आक्रमणकारियों को जीतें ।९। हे इन्द्र ! हम तुम्हारे अन्न का उपभोग करे ऐसी शक्ति दो। तुम हवि-दाता का पालन करो। हम स्तुति कार्य में मन से लगें। तुम सदा हमारे रक्षक रहो ।१०। (४)

सूक्त २२

(ऋषि–वसिष्ठः। देवता–इन्द्र। छन्द–उष्णिक्, पंक्तिः त्रिष्टुप्ः, अनुष्टुप्)

पिबा सोममिन्द्र मन्दतु त्वा यं ते सुषाव हर्यश्वाद्रिः।
सोतुर्बाहुभ्यां सुयतो नार्वा ॥१
यस्तो मदो युज्यश्चारुरस्ति येन वृत्राणि हर्यश्व हंसि।
स त्वामिन्द्र प्रभूवसो ममत्तु ॥२
बोधा सु मे मघवन् वाचमेमां यां ते वसिष्ठो अर्चति प्रशस्तिम्।
इमा ब्रह्म सधमादे जुषस्व ॥३
श्रुधी हवं विपिपानस्याद्रेर्बोधा विप्रस्यार्चतो मनीषाम्।
कृष्वा दुवांस्यन्तमा सचेमा ॥४
न ते गिरो अपि मृष्ये तुरस्य न सुष्टुतिमसुर्यस्य विद्वान्।
सदा ते नाम स्वयशो विवक्मि ।५।५

हे इन्द्र ! इस हर्षकारी सोमरस का पान करो। दोनो हाथों में पकड़े गये सोमाभिषव प्रस्तर ने इसे निष्पन्न किया।१। हे हर्यश्व ! तुम्हारे प्रिय सोमरस ने शक्ति देकर वृत्रादि शत्रुओं का नाश किया है, वही सोम तुम्हें प्रसन्नता दे।२। हे इन्द्र ! मैं वसिष्ठ तुम्हारी जिस स्तुति को करता हूँ उसे तुम जानो और स्वीकार करो।३। हे इन्द्र ! इस सोमाभिषव प्रस्तर के शब्द को और स्तोता के स्तोत्र पर ध्यान दो। मेरी सेवा से प्रसन्न होकर मुझे श्रेष्ठ बुद्धि में स्थित करो।४। हे शत्रु, जेता इन्द्र ! तुम्हारे बलको मैं जानता हूँ। मैं तुम्हारे स्तोत्र से विमुख नही हो सकता। मैं तुम्हारे नाम का सदा कीर्तन करूँगा।५। (५)

भूरि हि ते सवना मानुषेषु भूरि मवीषी हवते त्वातित् ।
मारे अस्मन्मघवञ्ज्योक् कः ॥६
तुभ्येदिमा सवना शूर विश्वा तुभ्यं ब्रह्माणि वर्धना कृणोमि।
त्वं नृभिर्हव्यो विश्वधासि ॥७
नू चिन्नु ते मन्यमानस्य दस्मोदश्नुवन्ति महिमानमुग्र ।
न वीर्यमिन्द्र ते न राधः ॥८
ये च पूर्व ऋषयो ये च नूत्ना इन्द्र ब्रह्माणि जनयन्त विप्राः ।
अस्मे ते सन्तु सख्या शिवानि यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः।९।६

हे इन्द्र ! तुम अनेक सवन वाले हो। तुम अपने को हमसे दूर मत करो। मैं तुम्हें आहूत करता हूँ।६। हे इन्द्र ! सभी सवन तुम्हारे हैं। यह स्तुति तुम्हें बढ़ाने वाली हो। तुम आह्वान के पात्र हो।७। हे इन्द्र ! कौन-सा स्तोता तुम्हारी कृपा को नहीं पायेगा ? कौन-सा उपासक तुम्हारा धन प्राप्त न करेगा। सभी प्राचीन और नवीन ऋषियों ने तुम्हारे लिये स्तोत्र प्रकट किये हैं। तुम्हारी मैत्री हमारा कल्याण करने वाली हो। तुम सदा हमारा पालन करो।९। (६)

सूक्त २३

(ऋषि—वसिष्ठः। देवता—इन्द्रः। छन्द—पंक्तिः, त्रिष्टुप्ः)

उदु ब्रह्माण्यैरत श्रवस्येन्द्रं समर्ये महया वसिष्ठ ।
आ यो विश्वानि शवसा ततानोपश्रोता म ईवतो वचांसि ॥१
अयामि घोष इन्द्र देवजामिरिरज्यन्त यच्छुरुधो विवाचि ।
नहि स्वमायुश्चिकिते जनेषु तानीदंहांस्यति पर्ष्यस्मान् ॥२
युजे रथं गवेषणं हरिभ्यामुप ब्रह्माणि जुजुषाणमस्थुः ।
वि बाधिष्ट स्य रोदसी महित्वेन्द्रो वृत्राण्यप्रती जघन्वान् ॥३
आपश्चित् पिप्युः स्तर्यो न गावो नक्षन्दृतं जरितारस्त इन्द्र ।
याहि वायुर्न नियुतो नो अच्छा त्वं हि धीभिर्दयसे वि वाजान् ॥४
ते त्वा मदा इन्द्र मादयन्तु शुष्मिणं तुविराधसं जरित्रे ।
एको देवत्रा दयसे हि मर्तानस्मिञ्छूर सवने मादयस्व ॥५
एवेदिन्द्रं वृषणं वज्रबाहुं वसिष्ठासो अभ्यर्चन्त्यर्कैः ।
स नः स्तुतो वीरवद् धातु गोमद् यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥६॥७

अन्न-काम्य स्तोता ने सब स्तोत्र उच्चारित किये हैं। हे वसिष्ठ ! इस यज्ञ में इन्द्र स्तव करो। उन्होंने अपनी महिमा से सब लोकों को व्याप्त कर रखा है। मैं उनकी सेवा में उपस्थित होना चाहता हूँ। वे मेरे आह्वान को सुनें ।१। ओषधियों के वृद्धिकाल में देवताओं की स्तुति की जाती है। हे इन्द्र ! तुम्हारी आयु का ज्ञाता इन मनुष्यों में कोई भी नहीं है। तुम हमें सब पापों से पार करो ।२। इन्द्र के रथ में इन्द्र के दोनों हर्यश्वों को योजित करता हूँ। इन्द्र हमारी स्तुतियाँ ग्रहण करते हैं। उनकी महिमा से आकाश पृथिवी व्याप्य हुई हैं। इन्द्र ने शत्रुओं को नष्ट कर डाला है ।। हे इन्द्र ! जल की वृद्धि हो। वायु जैसे नियुत की ओर गमन करते हैं, वैसे ही तुम मेरी ओर आओ

और कर्म के द्वारा श्रेष्ठ अन्न मुझे दो ।४। हे इन्द्र ! सोम तुम्हारे लिये हर्षकारी हो । तुम स्तोता को पुत्रवान् बनो,तुम मनुष्यों पर कृपा करने वाले हो । इस यज्ञ में हम पर प्रसन्न होओ ।५। वसिष्ठों ने इस स्तोत्र द्वारा इन्द्र की पूजा की है । वे स्तुत होकर श्रेष्ठ यवादि धन दें और हमारा सदा पालन करते रहें ।६। (७)

सूक्त २४

(ऋषि—वसिष्ठः । देवता—इन्द्रः । छन्द—त्रिष्टुप्)

योनिष्ट इन्द्र सदने अकारि तमा नृभिः पुरुहूत प्र याहि ।
असो यथा नोऽविता वृधे च ददो वसूनि ममदश्च सोमैः ॥१
गृभीतं ते मन इन्द्र द्विबर्हाः सुतः सोमः परिषिक्ता मधूनि ।
विसृष्टधेना भरते सुवृक्तिरियमिन्द्रं जोहुवती मनीषा ॥२
आ नो दिव आ पृथिव्या ऋजीषिन्निदं बर्हिः सोमपेयाय याहि ।
वहन्तु त्वा हरयो मद्र्यञ्चमांगूषमच्छा तवसं मदाय ॥३
आ नो विश्वाभिरूतिभिः सजोषा ब्रह्म जुषाणोहर्यश्व याहि ।
वरीवृजत् स्थविरेभिः सुशिप्राऽस्मे दधद् वृषणं शुष्ममिन्द्र ॥४
एष स्तोमो मह उग्राय वाहे धुरीवात्यो न वाजयन्नधायि ।
इन्द्र त्वायमर्क ईट्टे वसूनां दिवीव द्यामधि नः श्रोमतं धाः ॥५
एवा न इन्द्र वार्यस्य पूर्धि प्र ते महीं सुमतिं वेविदाम ।
इषं न्वि मघवद्भ्यः सुवीरां यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ।६।८

तुम्हारे यज्ञ के लिए स्थान बनाया गया है । हे इन्द्र ! मरुद्गण सहित आओ । जैसे तुम हमारे रक्षक हुए हो, वैसे ही हमें धन प्रदान करो । तुम हमारे सोम का आनन्द प्राप्त करो ।८। हे पूजनीय इन्द्र ! हमने तुम्हारे मन को आकर्षित किया और सोमाभिषव किया । हमने मधुर रस को पात्र में सींचा है । यह स्तुति तुम्हें आहूत करती है ।२।

हे इन्द्र ! इस यज्ञ में सोम पीने के लिए आओ । तुम्हारे हर्यश्व हमारे स्तोत्र की ओर तुम्हें लावें ।३। हे इन्द्र ! तुम मरुद्गण के साथ शत्रुओं का वध करो और हमें अभीष्ट-वर्षक पुत्र दो । तुम स्तोताओं की ओर आगमन करो ।४। यह बलकारक स्तोत्र इन्द्र के निमित्त उच्चारित हुआ है । हे इन्द्र ! यह स्तोता धन की याचना करता है । तुम हमें श्री सम्पन्न पुत्र भी दो ।५। हे इन्द्र । तुम हमें धन से सम्पन्न करो । हम तुम्हारी कृपाको प्राप्त करें । हम हविदाता पुत्रसे सम्पन्न ऐश्वर्य पावें । तुम हमारा सदा पालन करो ।६। (८)

सूक्त २५

(ऋषि–वसिष्ठः । देवता–इन्द्रः । छन्द–त्रिष्टुप्, पंक्तिः)

आ ते मह इन्द्रोत्युग्र समन्यवो यत् समरन्त सेनाः ।
पताति दिद्युन्नर्यस्य बाह्वोर्मा ते मनो विष्वद्र्यग्वि चारीत् ।।१
नि दुर्ग इन्द्र श्नथिह्यमित्रानभि ये नो मर्तासो अमन्ति ।
आरे तं शंसं कृणुहि निनित्सोरा नो भर संभरणं वसूनाम् ।।२
शतं ते शिप्रिन्नूतयः सुदासे सहस्रं शंसा उत रातिरस्तु ।
जहि वधर्वनुषो मर्त्यस्याऽस्मे द्युम्नमधि रत्न च धेहि ।।३
त्वावतो हीन्द्र क्रत्वे अस्मि त्वावतोऽवितुः शूर रातौ ।
विश्वेदहानि तविषींव उग्रँ ओकः कृणुष्व हरिवो न मर्धीः ।४
कुत्सा एते हर्यश्वाय शूषमिन्द्रे सहो देवजूतमियानाः ।
सत्रा कृधि सुहना शूर वृत्रा वयं तरुत्राः सनुयाम वाजम् ।।५
एवा न इन्द्र वार्यस्य पूर्धि प्र ते महीं सुमतिं वेविदाम ।
इषं पिन्व मघवद्भ्यः सुवीरां यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः।६।९

हे इन्द्र ! तुम मनुष्यों का हित करने वाले हो । युद्ध के अवसर पर तुम्हारा बज्र हमारी रक्षा के लिए गिरे ।१। हे इन्द्र ! जो मनुष्यों हमें जीतना चाहते हैं और जो हमारे निन्दक हैं, तुम उनके यज्ञ को समाप्त करो और हमें धनवान् बनादो ।२। हे इन्द्र ! मैं सुदास तुम्हारी

सैकड़ों रक्षायें प्राप्त करूँ। तुम्हारे सैकड़ों दान मेरेहों। हिंसक शत्रुओं के आयुधों को नष्ट करो। तुम हमे यश और धन प्रदान करो।३। हे इन्द्र ! तुम्हारी उपासना में रत हूँ। मैं तुम्हारे दान में अवस्थित हूँ। तुम हमें कर्म में लगाओ। हम पर कभी क्रोध मत करना।४। हम इन्द्र का स्तोत्र करके उनसे दिव्य बल माँगते हैं। हे इन्द्र ! हम हवि-सम्पन्न यजमानों को पुत्र युक्त ऐश्वर्य दो और सदा हमारा पालन करो।५।
(६)

सूक्त २६

(ऋषि—वसिष्ठः। देवता—इन्द्रः। छन्द—त्रिष्टुप्:)

न सोम इन्द्रमसुतो ममाद नाब्रह्माणो मघवानं सुतासः।
तस्मा उक्थं जनये यज्जुजोषन्नवीय: शृणवद् यथा नः ॥१
उक्थउक्थे सोम इन्द्रं ममाद नीथेनीथे मघवानं सुतासः।
यदीं सबाधः पितरं न पुत्राः समानदक्षा अवसे हवन्ते ॥२
चकार ता कृणवन्नूनमन्या यानि ब्रुवन्ति वेधसः सुतेषु।
जनीरिव पतिरेकः समानो नि मामृजे पुर इन्द्रः सु सर्वाः ॥३
एवा तमाहुरुत शृण्व इन्द्र एको विभक्ता तरणिर्मघानाम्।
मिथस्तुर ऊतयो यस्य पूर्वीरस्मे भद्राणि सश्चत प्रियाणि ॥४
एवा वसिष्ठ इन्द्रमूतये नॄन् कृष्टीनां वृषभं सुते गृणाति।
सहस्रिण उप नो माहि वाजान् यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥
।५।१०

जो सोमरस इन्द्र के लिए प्रस्तुत नहीं होंगे, उनमें तृप्ति नहीं होगी। स्तोत्रहीन सोम से तृप्ति नहीं होती। हमारा उक्थ इन्द्र का उपासक हैं, हम उसे इन्द्र के लिए हो उच्चारित करते है।१। स्तुति के समय प्रस्तुत सोम इन्द्र को तृप्त करती है। जैसे पिता पुत्र को बुलाता है, वैसे ही ऋत्विग्गण रक्षा के निमित्त इन्द्र को आहूत करते हैं।२। सोमाभिषव के पश्चात् स्तोतागण इन्द्र के जिन कर्मों का वर्णन करते हैं

इन्द्र ने वे कर्म प्राचीन काल में किये थे । इन्द्र ने अकेले शत्रुओं के पुरों को परिमार्जित किया (राक्षसों से विहीन किया) ।३। इन्द्र अनेक रक्षा साधनों से सम्पन्न हैं, इन समस्त ग्रहणीय धनों के दाता हैं । वे सङ्कट से सम्पन्न हैं, इन समस्त ग्रहणीय धनों के दाता हैं । वे सङ्कट से मुक्त करते हैं । हम उनके श्रेष्ठ कल्याण को पावें । सोमाभिषकारी वसिष्ठ इन्द्र का स्तोत्र करते हैं । हे इन्द्र ! हमें विभिन्न के अन्न दो । हमारा सदा पालन करते रहो ।५।

सूक्त २७

(ऋषि—वसिष्ठः । देवता—इन्द्रः । छन्द—त्रिष्टुप)

इन्द्र नरो नेमधिता हवन्ते यत् पार्या युनजते धियस्ताः ।
शूरो नृषाता शवसश्चकान् आ गोमति व्रजे भजा त्वं न ॥१
यं इन्द्र शुष्मो मघवन् ते अस्ति शिक्षा सखिभ्यः पुरुहूत नृभ्यः ।
त्वं हि दृळ्हा मघवन् विचेता अपा वृधि परिवृतं न राधः ॥२
इन्द्रो राजा जगतश्चर्षणीनामधि क्षमि विषुरूप यदस्ति ।
ततो ददाति दाशुषे वसूनि चोदद् राध उपस्तुतश्चिदर्वाक् ॥३
नू चिन्न इन्द्रो मघवा सहूती दानो वाज नि यमते न ऊती ।
अनूना यस्य दक्षिणा पीपाय वामं नृभ्यो अभिवीता सखिभ्यः॥४
नू इन्द्र राये वरिवस्कृधी न आ ते मनो ववृत्याम मघाय ।
गोमदश्वावद् रथवद् व्यन्तो यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः॥५॥११

जब संग्राम सज्जा सजी आती है तब सहायता के लिए इन्द्र का आह्वान किया जाता है । हे इन्द्र ! तुम मनुष्यों को धन देने वाले होकर हमें सम्पन्न गोष्ठ में प्रतिष्ठित करो ।१। हे इन्द्र ! अपने बल से स्तोताको बली करो । तुमने शत्रुओं के दृढ़ नगरों को तोड़ा, अतःबुद्धि दान द्वारा छिपे धन का प्रकाश करो ।२। इन्द्र सभी प्राणियो के ईश्वर हैं। सभी पार्थिव धनों के राजा इन्द्र ही हैं । वे हवि वाले यजमान को धन प्रदान करते हैं । वे हमारी स्तुतियों से प्रसन्न होकर हमें सब धन

प्रदान करावें ।३। हमने उन ज्ञानवान् इन्द्र को मरुद्गण के सहित आहूत किया है। वे हमारे शरीर की रक्षा के लिए अन्न दें। इन्द्र ! जिस मित्र को धन देना चाहते हैं वही श्रेष्ठ धन पाता है।४। हे इन्द्र ! हमें शीघ्र धनवान बनाओ। हम तुम्हारा मन अपनी स्तुति द्वारा आकर्षि करेंगे। तुम सदा हमारी रक्षा करो ।५। (११)

सूक्त २८

(ऋषि–वसिष्ठः । देवता–इन्द्रः । छन्द-त्रिष्टुप्:, पंक्तिः)

ब्रह्मा ण इन्द्रोप याहि विद्वानर्वाञ्चस्ते हरयः सन्तु युक्ताः ।
विश्वे चिद्धि त्वा विहवन्त मर्ता अस्माकमिच्छृणुहि
विश्वमिन्व ॥१
हवं त इन्द्र महिमा व्यानड् ब्रह्म यत् पासि शवसिन्नृषीणाम् ।
आ यद् वज्रं दधिषे हस्त उग्र घोरः सन् क्रत्वा जनिष्ठा
अषाळ्हः ॥२
तव प्रणीतीन्द्र जोहुवानान् त्सं यन्नॄन् न रोदसी निनेथ ।
महे क्षत्राय शवसे हि जज्ञेऽतूतुजिं चित् तूतुजिरशिश्नत् ॥३
एभिर्न इन्द्राहभिर्दशस्य दुर्मित्रासो हि क्षितयः पवन्ते ।
प्रति यच्चष्टे अनृतमनेना अव द्विता वरुणो मायी नः सात् ।४
वोचेमेदिन्द्रं मघवानमेनं महो रायो राधसो यद् ददन्नः
यो अर्चतो ब्रह्मकृतिमविष्ठो यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः
।५।१२

हे इन्द्र ! हमारी स्तुति की ओर आओ। तुम्हारे अश्व हमारे समक्ष योजित हों, सब मनुष्य पृथक्-पृथक् तुम्हें आहूत करते हैं तुम हमारे आह्वान को सुनते हो।१। हे इन्द्र ! जब स्तोत्रों की रक्षा करते हो, तब तुम्हारी महिमा उसका पालन करती है। जब वज्र ग्रहण करते हो, तब अपने कर्म से विकराल होते हो।२। हे इन्द्र जो तुम्हारी बारम्बार स्तुति करते हैं, तुम उन पृथ्वी और स्वर्ग में प्रतिष्ठावान् करते हो। जो तुम्हारे निमित्त यज्ञ करता है, वह अयाज्ञिकों का वध

करने की शक्ति पाता है ।३। हे इन्द्र ! दुष्टों के धन को छीन कर हमें दो । पाप का नाश करने वाले वरुण हमारा जो पाप देखें, उसी से हमें मुक्त करे ।४। जिस इन्द्रने हमें अभीष्ट धन प्रदान किया है, जो स्तुतियों की रक्षा करते हैं, हम उन्हीं इन्द्र का स्तव करते हैं । हे इन्द्र ! हमारा सदा पालन करो ।५। (१२)

सूक्त २६

(ऋषि—वसिष्ठः । देवता—इन्द्र । छन्द—त्रिष्टुप्ः, पंक्तिः)

अय सोम इन्द्र तुभ्यं सुन्व आ तु प्र याहि हरिवस्तदोकाः ।
पिबा त्वास्य सुषुतस्य चारोर्ददो मघानि मघवन्नियानः ॥१
ब्रह्मन् वीर ब्रह्मकृति जुषाणो ऽर्वाचीनो हरिभिर्याहि तूयम् ।
अस्मिन्नू षु सवने मादयस्वोप ब्रह्माणि शृणव इमा नः ॥२
का ते अस्त्यरंकृतिः सूक्तैः कदा नून ते मघवन् दाशेम ।
विश्वा मतीरा ततने त्वाया ऽधा म इन्द्र शृणवो हवेमा ॥३
उतो घा ते पुरुष्या इदासन् येषां पूर्वेषामशृणोर्ऋषीणाम् ।
अधाह त्वा मघवञ्जोहवीमि त्वं न इन्द्रासि प्रमतिः पितेव ।।४
वोचेमेदिन्द्रं मघवानमेनं महो रायो राधसो यद् ददन्नः ।
यो अर्चतो ब्रह्मकृतिमविष्ठो यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ।५।१३

हे इन्द्र ! यह सोम तुम्हारे लिये निष्पीड़ित हुआ है, तुम उसके सेवनार्थ शीघ्र पधारो । हे इन्द्र ! इस सोम को पीकर हमारे धन की याचना पूर्ण करो ।१। हे इन्द्र ! तुम अपने अश्वों द्वारा शीघ्र आओ । हमारे स्तोत्र सुनकर प्रसन्न होओ ।२। हे इन्द्र ! तुम्हारे स्तोताओं की स्तुतियाँ सुशोभित होती हैं । हम तुम्हें प्रसन्न करने का यत्न कब करें? यह स्तुतियां तुम्हारे लिए ही कर रहा हूँ, इन्हें सुनो ।३। हे इन्द्र ! तुमने मनुष्योंका हित करने वाले पूर्वज ऋषियों के स्तोत्र सुने हैं । तुम पिता के समान ही हमारा हित करने वाले हो, अतः मैं तुम्हें बारम्बार आहूत करता हूँ ।४। जिस इन्द्र ने हमें महान् धन प्रदान किया है और

जो स्तुतियों की रक्षा करते हैं, उन्ही इन्द्र की हम स्तुति करते हैं। वे हमारी सदा रक्षा करें ।५। (१३)

सूक्त ३०

(ऋषि—वसिष्ठः । देवता—इन्द्रः । छन्द—त्रिष्टुप् पंक्तिः)

आ नो देव शवसा याहि शुष्मिन् भवा वृध इन्द्र रायो अस्य ।
महे नृम्णाय नृपते सुवज्र महि क्षत्राय पौंस्याय शूर ॥१
हवन्त उ त्वा हव्यं विवाचि तनूषु शूराः सूर्यस्य सातौ ।
त्वं विश्वेषु सेन्यो जनेषु त्वं वृत्राणि रन्धया सुहन्तु ॥२
अहा यदिन्द्र सुदिना व्युच्छान् दधो यत् केतुमुपमं समत्सु ।
न्यग्निः सीददसुरो न होता हुवानो अत्र सुभगाय देवान् ॥३
वयं ते त इन्द्र ये च देव स्तवन्त शूर ददतो मघानि ।
यच्छा सूरिभ्य उपमं वरूथं स्वाभुवो जरणामश्नवन्त ॥४
वोचेमेदिन्द्रं मघवानमेनं महो रायो राधसो यद् ददन्नः ।
यो अर्चतो ब्रह्मकृतिमविष्ठो यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ।५।१४

हे इन्द्र ! तुम बल सहित आगमन करो। हमारे धन को बढ़ाओ। तुम शत्रु-नाश के लिये अपने बल की वृद्धि करो ।१। हे इन्द्र ! शरीर की रक्षा के लिए हम तुम्हें आहूत करते हैं। तुम्हीं सब से श्रेष्ठ सेना-नायक हो। तुम अपने वज्र के द्वारा सब शत्रुओं को जीतो ।२। हे इन्द्र ! शुभ दिनों में होता रूप अग्नि श्रेष्ठधन-दान के लिये इस यज्ञ में विराजमान होकर देवताओं का आह्वान करते हैं ।३। हे इन्द्र ! हम तुम्हारे ही है। हविदाता यजमान भी तुम्हारे ही है। उन्हें श्रेष्ठ घर दो। जरा-रहित और स्वस्थ्य रहें ।४। जिस इन्द्र ने हमें इच्छित धन दिया है और जो स्तुतियों की रक्षा करते हैं उन्हीं इन्द्र की हम स्तुति करते हैं। हे इन्द्र ! तुम हमारा सदा पालन करो ।५। (१४)

सूक्त ३१

(ऋषि—वसिष्ठः। देवता—इन्द्र। छन्द—गायत्री, अनुष्टुप्)

प्र व इन्द्राय मादनं हर्यश्वाय गायत । सखायः सोमपाव्ने ॥१
शंसेदुक्थं सुदानव उत द्युक्षं यथा नरः । चकृमा सत्यराधसे ॥२
त्वं न इन्द्र वाजयुस्त्वं गव्युः शतक्रतो । त्वं हिरण्ययुर्वसो ॥३
वयमिन्द्र त्वायवोऽभि प्र णोनुमो वृषन् । विद्धी त्वस्य नो वसो ॥४
मा नो निदे च वक्तवेऽर्यो रन्धीरराव्णे । त्वे अपि क्रतुर्मम ॥५
त्वं वर्मासि सप्रथः पुरोयोधश्च वृत्रहन् । त्वया प्रति ब्रुवे युजा ॥६॥१७

हे मित्रो ! सोमपान करके बलि इन्द्रकी स्तुति से प्रसन्न करो ।१। जैसे श्रेष्ठ धन वाले इन्द्र की स्तुति की जाती है, हम तुम भी उसी स्तुति का आश्रय लें ।२। हे इन्द्र ! तुम हमारे अन्नदाता होओ। तुम हमें गौ और सुवर्ण देने की इच्छा करो ।३। हे इन्द्र ! हम तुम्हारी विशिष्ट स्तुतियाँ करते हैं, तुम हम पर अनुग्रह करो ।४। हे इन्द्र ! कटु-भाषा, निन्दक, अदानी व्यक्ति के हाथों में हमें मत सौंपना। हमारी स्तुति तुम्हें प्राप्त हो ।५। इन्द्र ! तुम वृत्रहन्ता और प्रख्यात हो। मैं तुम्हारी कृपा से शत्रु का संहार करूँगा ।६।

(१८)

महाँ उतासि यस्य तेऽनु स्वधावरी सहः ।
मम्नाते इन्द्र रोदसी ॥७
तं त्वा मरुत्वती परि भुवद् वाणी सयावरी ।
नक्षमाणा सह द्युभिः ॥८
ऊर्ध्वासस्त्वान्विन्दवो भुवन् दस्ममुप द्यवि । सं ते नमन्त कृष्टयः ॥९
प्र वो महे महिवृधे भरध्वं प्रचेतसे प्र सुमतिं कृणुध्वम् ।
विशः पूर्वीः च चरा चर्षणिप्राः ॥१०
उरुव्यचसे महिने सुवृक्तिमिन्द्राय ब्रह्म जनयन्त विप्राः ।
तस्य व्रतानि न मिनन्ति धीराः ॥११

इन्द्रं वाणीरनुत्तमन्युमेव सत्रा राजानं दधिरे सहध्यै ।
हर्यश्वाय बर्हया समापीन् ।१२ १६

हे इन्द्र ! तुम्हारे बल के सामने आकाश पृथिवी झुकती हैं । तुम महान हो । हे इन्द्र ! तुम सुन्दर दर्शन हो । सोम तुम्हारे निमित्त प्रस्तुत है । सभी प्राणी तुम्हें प्रणाम करते हैं ।९। हे मनुष्यो ! धन लाभ के लिये सोमाभिषव करो और इन्द्र की स्तुति करो । जो तुम्हें हव्य से सन्तुष्ट करते हैं, उनके समक्ष प्रकट होओ ।१०। व्यापक और महान् इन्द्रके लिए हव्य एकत्र किया जाता है और स्तोत्र रखे जाते हैं। उन इन्द्र के अनुष्ठानादि कर्मों की मेधावीजन सदा रक्षा करते हैं ।११। इन्द्रकी समस्त स्तुतियाँ शत्रु का पतन करने वाली हैं । अतः हे स्तोतागण ! इन्द्र की स्तुति करने के लिये सब मित्रों को उत्साहित करो । ।१२। (१६)

सूक्त ३२

(ऋषि—वसिष्ठः । देवता—इन्द्रः । छन्द—बृहतीः, पंक्तिः)

मो षु त्वा वाघतश्चनाऽऽरे अस्मान्नि रीरमन् ।
आरात्ताच्चित् सधमादं न आ गहीह वा सन्नुप श्रुधि ।।१
इमे हि ते ब्रह्मकृतः सुते सचा मधौ न मक्ष आसते ।
इन्द्रे कामं जरितारो वसूयवो रथे न पादमा दधुः ।।२
रायस्कामो वज्रहस्तं सुदक्षिणं पुत्रो न पितरं हुवे ।।३
इम इन्द्राय सुन्विरे सोमासो दध्याशिरः ।
तां आ मदाय वज्रहस्त पीतये हरिभ्यां याह्योक आ ।।४
श्रवच्छ्रुत्कर्ण ईयते वसूनां नू चित्रो मर्धिषद् गिरः ।
सद्यश्चिद् यः सहस्राणि शता ददन्नकिर्दित्सन्तमा मिनत् ।५।१७

हे इन्द्र ! अन्य यजमान भी तुम्हें न रोकें । तुम दूर से भी हमारे यज्ञ में आकर स्तोत्र सुनो ।१। हे इन्द्र ! सोमाभिषव के पश्चात् स्तोता

गण यज्ञ में बैठते हैं और धन की कामना करते हैं ।२। पुत्र द्वारा पिता को बुलाये जाने में समान मैं स्तोता श्रेष्ठ दान वाले इन्द्र को आहूत करता हूँ ।३। दधिमिश्रित सोमरस इन्द्र के लिए रखा है । है वज्रिन् ! इस सोम का पान करने को हमारे यज्ञ में आओ ।४। याचना सुनने वाले इन्द्र से हम धन माँगते हैं । हमारी आशा निष्फल न हो । जो इन्द्र सहस्रों दान करने वाले हैं, उन्हें कोई रोक नहीं सकता ।५। (१७)

स वीरो अप्रतिष्कुत इन्द्रेण शूशुवे नृभिः ।
यस्ते गभीरा सवनानि वृत्रहन् त्सुनोत्या च धावति ॥६
भवः वरूथं मघवन् मघोनां यत् समजासि शर्धतः ।
वि त्वाहतस्य वेदनं भजेमह्या दूणाशो भरा गयम् ॥७
सुनोता सोमपाव्ने सोममिन्द्राय वज्रिणे ।
पचता पक्तीरवसे कृणुध्वमित् पृणन्नित् पृणते मयः ॥८
भा स्रेधत सोमिनो दक्षता महे कृणुध्वं राय आतुजे ।
तरणिरिज्जयति क्षेति पुष्यति न देवासः कवत्नवे ॥९
नकिः सुदासो रथं पर्यास न रीरमत् ।
इन्द्रो यस्याविता यस्य मरुतो गमत् स गोमति व्रजे ।१०।१८

हे इन्द्र ! जो सोमाभिषवकारी तुम्हारा अनुचर होता है, उस वीर का विरोध करने का साहस किसी में नहीं होता ।६। हे इन्द्र ! तुम हविदाताओं के विघ्नों को दूर करो । शत्रुओं को मारो । उन शत्रुओं के धन को हम पावें । तुम हमें धन प्राप्त कराओ ।७। हे मनुष्यो ! सोमपायी, वज्रहस्त इन्द्र के लिए अभिषव करो । उनके निमित्त पुरोडाश को पाक करो । वे इन्द्र यजमान को हर प्रकार सुख देते हैं ।८। हे मनुष्यो ! सोमपान से विमुख मत होओ । इन्द्र की कामना करते हुए धन प्रापक यज्ञ में लगो । शुभ कर्मचारी पुरुष बलवान होकर शत्रुओं को जीतता और अशुभ कर्मा पुरुष देव-विहीन होता है ।९। दानी के

रथ को कोई रोक नहीं सकता न कोई हिंसित कर सकता है। इन्द्र और मरुद्गण जिसकी रक्षा करते हैं, वह गौ पूर्ण गोष्ट प्राप्त करता है ।१ ।

गमद् वाजं वाजयन्निन्द्र मर्त्यो यस्य त्वमविता भुवः ।
अस्माकं बोध्यविता रथानामस्माकं शूर नृणाम् ॥११
उदिन्न्वस्य रिच्यतेऽशो धनं न जिग्युषः ।
य इन्द्रो हरिवान् न दभन्ति तं रिपो दक्षं दधाति सोमिनि ॥१२
मन्त्रमखर्वं सुधितं सुपेशसं दधात यज्ञियेष्वा ।
पूर्वीश्चन प्रसितयस्तरन्ति तं य इन्द्रे कर्मणा भुवत् ॥१३
कस्तमिन्द्र त्वावसुमा मर्त्यो दधर्षति ।
श्रद्धा इत् ते मघवन् पार्ये दिवि वाजी वाज सिषासति ॥१४
मघोनः स्म वृत्रहत्येषु चोदय ये ददति प्रिया वसु ।
तव प्रणीती हर्यश्व सुरिभिर्विश्वा तरेम दुरिता ।१५।१९

हे इन्द्र ! तुम जिस स्तोता की रक्षा करोगे वह तुम्हारी स्तुति कर अन्न पावेगा। तुम हमारे पुत्र आदि की और हमारी रक्षा करो। ।११। हर्यश्व इन्द्र जिस यजमान को बली बनाते है, उसे शत्रु हिंसित नहीं कर सकते। इन्द्र का कार्य सब बलवानों से भी बढ़कर है ।१२। हे स्तोताओं ! इन्द्र के लिए सुन्दर स्तुति अर्पित करो। जो पुरुष इन्द्र के मन को अपनी ओर खींच लेता है, वह किसी बन्धन में नहीं पड़ता ।१३। हे इन्द्र तुम जिस पर कृपा करते हो उसे कौन नष्ट कर सकता है? जो हविदाता श्रद्धा से तुम्हें मानता है वह दिव्य धन पाता है ।१४ हे इन्द्र ! जो तुम्हें हव्य दें तुम्हें रणक्षेत्रमें सहायता दे । हम तुम्हारी स्तुति द्वारा सब पापों से पार होंगे ।१५। (१९)

तवेदिन्द्रावमं वसु त्वं पुष्यसि मध्यमम् ।
सत्रा विश्वस्य परमस्य राजसि नकिष्ट्वा गोषु वृण्वते ॥१६

त्वं विश्वस्य धनदा असि श्रुतो य ईं भवन्त्याजयः ।
तवायं विश्वः पुरुहूत पार्थिवो ऽवस्युर्नाम भिक्षते ॥१७
यदिन्द्र यावतस्त्वमेतावदहमीशीय ।
स्तोतारमिद् दिधिषेय रदावसो न पापत्वाय रासीय ॥१८
शिक्षेयमिन्महयते दिवेदिवे राय आ कुहचिद्विदे ।
नहि त्वदन्यन्मघवन् न आप्यं वस्यो अस्ति पिता चन ॥१९
तरणिरित् सिषासति वाजं पुरंध्या युजा ।
आ वा इन्द्रं पुरुहूतं नमे गिरा नेमिं तष्टेव सुद्रवम् ।२०।२०

हे इन्द्र ! पार्थिव, अन्तरिक्षस्य और दिव्य सब धनों के तुम स्वामी हो । तुम्हें दानादि से कोई रोक नहीं सकता ।१। हे इन्द्र ! तुम धनदाता के नाम से प्रख्यात हो । यह सब मनुष्य अपने जीवन के लिए तुमसे अन्न माँगते है ।१७। हे इन्द्र ! तुम जिस धन के स्वामी हो, वह हमें प्राप्त हो । मैं स्तोता को धन से रक्षा करूँगा और पापी को धन नहीं दूँगा ।१८। मैं श्रेष्ठ पुरुष को धन दूँगा । हे इन्द्र ! तुम ही हमारे बन्धु और पिता हो ।१। शुभ कर्म वाला ही सुख भोगता है । जैसे बढ़ई काष्ठ वाले चक्र को झुकाता है, वैसे ही मैं इन्द्र को स्तुति द्वारा झुकाऊंगा ।२०।

न दुष्टुती मर्त्यो विन्दते वसु न स्रेधन्तं रयिर्नशत् ।
सुशक्तिरिन्मघवन् तुभ्यं मावते देष्णं यत् पार्ये दिवि ॥२१
अभि त्वा शूर नोनुमो ऽदुग्धा इव धेनवः ।
ईशानमस्य जगतः स्वर्दृशमीशानमिन्द्र तस्थुषः ॥२२
न त्वावाँ अन्यो दिव्यो न पार्थिवो न जातो न जनिष्यते ।
अश्वायन्तो मघवन्निन्द्र वाजिनो गव्यन्तस्त्वा हवामहे ॥२३
अभी षतस्तदा भरेन्द्र ज्यायः कनीयसः ।
पुरूवसुर्हि मघवन् त्सनादसि भरेभरे च हव्यः ॥२४

परा णुदस्व मघवन्नमित्रान् त्सुवेदा नो वसू कृधि ।
अस्माकं बोध्यविता महाधने भवा वृधः सखीनाम् ॥२५
इन्द्र क्रतुं न आ भर पिता पुत्रेभ्यो यथा ।
शिक्षा णो अस्मिन् पुरुहूत यामनि जीवा ज्योतिरशीमहि ॥२६
मा नो अज्ञाता वृजना दुराध्यो माशिवासो अव क्रमुः ।
त्वया वयं प्रवतः शश्वतीरपो ऽति शूर तरामसि ।२७।२१

निन्दा में धन-लाभ नहीं होता। हिंसक धनी नहीं होता। हे इन्द्र तुम्हारे पास जो कुछ देने योग्य है, उसे उत्तमकर्त्ता पुरुष ही प्राप्त करता है।२१। हे इन्द्र पृथ्वी पर कोई भी तुम्हारे समान उत्पन्न नहीं हुआ और न होगा। हम गौ, अश्व, अन्न की कामना से तुम्हारा आह्वान करते हैं।२२। हे इन्द्र ! तुम बड़े हो। मैं तुच्छ मनुष्य हूँ। तुम मेरे निमित्त धन लाओ। हम सभी संग्रामों में धन लाभ करें।२३ हे इन्द्र ! शत्रुओं को भगाओ। हमें धन प्राप्त कराओ। तुम हमारे मित्र होकर युद्ध में रक्षा करो।२४। हे इन्द्र हमें बुद्धि दो। पिता द्वारा पुत्र को देने के समान हमें धन दो। हम नित्य-प्रति सूर्य के दर्शन करें। ।२६। शत्रु हम पर आक्रमण न करें। हम तुम्हें नमस्कार करते हुए अनेक कर्मों को सिद्ध करेंगे।२७।

सूक्त ३३

(ऋषि–वसिष्ठः, वसिष्ठपुत्राः। देवता त एवः। छन्द–त्रिष्टुप् पंक्ति)

श्वित्यञ्चो मा दक्षिणतस्कपर्दा धियंजिन्वासो अभि हि प्रमन्दुः ।
उत्तिष्ठन् वोचे परि वर्हिषो नॄन् न मे दूरादवितवे वसिष्ठाः ॥१
दूरादिन्द्रमनयन्ना सुतेन तिरो वैशन्तमति पान्तमुग्रम् ।
पाशद्युम्नस्य वायतस्य सोमात् सुतादिन्द्रोऽवृणीता वसिष्ठान् ॥२
एवेन्नु कं सिन्धुमेभिस्ततारेवेन्नु कं भेदमेभिर्जघान ।
एवेन्नु कं दाशराज्ञे सुदासं प्रावदिन्द्रो ब्रह्मणा वो वसिष्ठाः ॥३

जुष्टी नरो ब्रह्मणा वः पितृ्णामक्षमव्ययं न किला रिषाथ ।
यच्छक्वरीषु बृहता रवेणेन्द्रे शुष्ममदधाता वसिष्ठाः ॥४
उद् द्यामिवेत् तृष्णजो नाथितासो ऽदीधयुर्दाशराज्ञे वृतासः ।
वसिष्ठस्य स्तुवत इन्द्रो अश्रोदुरुं तृत्सुभ्यो अकृणोदु लोकम् ॥
।५।२२

वसिष्ट वशज ऋषि अपने शिर के दक्षिण भाग में चूड़ामणिधारण करते हैं। वे हम पर कृपा रखते हैं। मैं सबके समक्ष उनसे निवेदन करता हूँ कि वे हमसे अन्यत्र कहीं न जावे ।१। पाशद्युम्न को तिरस्कृत कर सोमपान करते हुए इन्द्र को वसिष्ठ गोत्री ऋशि ले आये। इन्द्र ने भी उन ऋषियों का ही वरण किया ।२। वसिष्ठों ने नदी को पार किया और शत्रु को मारा। हे वसिष्ठो ! दाशराज नामक युद्धमें तुम्हारे स्तोत्र की शक्ति से ही इन्द्र ने सुदास को रक्षित किया था ।३। हे स्तोताओं ! तुम्हारे स्तोत्र पितरों को तृप्त करने वाले हैं। तुम क्षीणता को प्राप्त न होओ। हे वसिष्ठो ! तुमने श्रेष्ठ ऋचाओं के द्वारा इन्द्र से बल प्राप्त किया ।४। वर्षा की कामना करते हुए वसिष्ठों ने राजाओं से युद्ध करते हुए इन्द्र को सूर्य के समान ऊपर उठाया। वसिष्टों की स्तुति इन्द्र ने सुनी और तृत्व वंशी राजाओं को श्रेष्ठ स्थान दिया ।५।
(२२)

दण्डा इवेद् गोअजनास आसन् परिच्छिन्ना भरता अर्भकासः ।
अभवच्च पुरएता वसिष्ठ आदित् तृत्सूनां विशो अप्रथन्त ॥६
त्रयः कृण्वन्ति भुवनेषु रेतस्तिस्रः प्रजा आर्या ज्तोतिरग्राः ।
त्रयो घर्मास उपसं सचन्ते सर्वाँ इत् ताँ अनु विदुर्वसिष्ठा ॥७
सूर्यस्येव वक्षथो ज्योतिरेषां समुद्रस्येव महिमा गभीरः ।
वातस्येव प्रजवो नान्येन स्योमो वसिष्ठा अन्वतवे वः ॥८
त इन्निण्यं हृदयस्य प्रकेचैः सहस्त्रवल्शमभि स चरन्ति ।
यमेन ततं परिधिं वयन्तो ऽप्सरस उप सेदुर्वसिष्ठाः ॥९

विद्युतो ज्योतिः परि संजिहानं मित्रावरुणा यदपश्यतां त्वा ।
तत् ते जन्मोतैकं वसिष्ठाऽगस्त्यो यत् त्वा विश आजभार ।
।१०।२३

भरतगण (तस्तु) शत्रुओं से घिरे हुए और अल्प संख्यक थे। जब वसिष्ठ उ के पुरोहित हुए तब उनकी संसति वृद्धि को प्राप्त हुई।६। सूर्य, अग्नि, वायु जगत् को जल प्रदान करते हैं। उन्हें आदित्य आदि श्रेष्ठ प्रजायें हैं, वे तीन उषाओं को प्रकट करते हैं। उन सबके ज्ञाता वसिष्ठगण हैं। हे वसिष्ठो! तुम्हारा तेज सूर्य के समान प्रकाशित है। वह समुद्र के समान गम्भीर भी है। तुम्हारे स्तोत्र का अनुगामी अन्य कोई नहीं हो सकता।८। उन वसिष्ठोंने सहस्रों स्थान वाले जगत् में भ्रमण किया। उन्होंने यम द्वारा चौड़े वस्त्रको बुनते हुए मातृ रूप अप्सरा के पास गमन किया।९। हे वसिष्ठ! जब तुम देह धारणार्थ अपनी ज्योति को छोड़ रहे थे, तब तुम्हें मित्रावरुण ने देखा। उस समय तुम एक जन्म वाले हुए। अगस्त्य भी तुम्हें यहाँ ले आये।१०। (२३)

उतासि मैत्रावरुणो वसिष्ठोर्वश्या ब्रह्मन् मनसोऽधि जातः।
द्रप्सं स्कन्नं ब्रह्मणा दैव्येन विश्वे देवाः पुष्करे त्वाददन्त ॥११
स प्रकेत उभयस्य प्रविद्वान् त्सहस्रदान उत वा सदानः।
यमेन ततं परिधिं वयिष्यन्नप्सरसः परि जज्ञे वसिष्ठः ॥१२
सत्रे ह जातांविषिता नमोभिः कुम्भे रेतः सिषिचतुः समानम्।
ततो ह मान उदियाय मध्यात् ततो जातमृषिमाहुर्वसिष्ठम्। १३
उक्थभृतं सामभृतं बिभर्ति ग्रावाणं बिभ्रत् प्र वदात्यग्रे।
उपैनमाध्वं सुमनस्यमाना आ वो गच्छाति प्रतृदो वसिष्ठः ॥
।१४।२४

हे वसिष्ठ! तुम उर्वशी के मानस-तत्र पुत्र मित्रावरुण की सन्तान हो। विश्वेदेवों ने तुम्हें पुष्कर में स्तोत्र द्वारा धारण किया था।११।

ज्ञानी वसिष्ठ दोनों लोकों के ज्ञाता सर्वज्ञानी हुए । यम द्वारा विस्तृत वस्त्र बुनने के लिए उर्वशी द्वारा उत्पन्न हुए ।१२। यज्ञ में स्तुत्य मित्रा-वरुण ने कुम्भ में बीज डाला । उसी से वसिष्ठ की उत्पत्ति कही जाती है ।१३। हे प्रतृ सुओ ? वसिष्ठ तुम्हारे समीप आते हैं । तुम इन का पूजन करो, यह वसिष्ठ सब कर्मों का उपदेश करने वाले हैं ।१४।

सूक्त ३४

(ऋषि–वसिष्ठः । देवता—विश्वेदेवाः, अहिः अहिर्बुध्न्यः
छन्द–गायत्री, त्रिष्टुप्)

प्र शुक्रैतु देवी मनीषा अस्मत् सुतष्टो रथो न बाजी ।।१
विदुः पृथिव्या दिवो जनित्रं शृण्वन्त्यापो अध क्षरन्तीः ।।२
आपश्चिदस्मै पिन्वन्त पृथ्वीर्वृत्रेषु शूरा मंसन्त उग्राः ।।३
आ घूर्ष्वस्मै दधाताश्वानिन्द्रो न वज्री हिरण्यवाहुः ।।४
अभि प्र स्थाताहेव यज्ञं यातेव पत्मन् त्मना हिनोत ।।५
त्मना समत्सु हिनोत यज्ञं दधात केतुं जनाय वीरम् ।।६
उदस्य शुष्माद् भानुर्नार्त बिभर्ति भारं पृथिवी न भूम ।।७
ह्वयामि देवाँ अयातुरग्ने साधन्नृतेन धियं दधामि ।।८
अभि वो देवीं धियं दधिध्वं प्र वो देवत्रा वाचं कृणुध्वम् ।।९
आ चष्ट आसां पाथो नदीनां वरुण उग्रः सहस्रचक्षाः ।१०।२५

हमारी श्रेष्ठ स्तुति वेगवान् रथके समान देवताओं की ओर गमन करे ।१। वृष्टि-जल स्वर्ग और पृथिवी के प्राकट्य का ज्ञाता है । जल स्तुतियों को श्रवण करता है ।२। जल इन्द्रको तृप्त करता है स्तोताओ! इन्द्र के आने के लिये अश्वों को योजित करो । वे इन्द्र स्वर्ण हस्त और वज्रधारी हैं ।४। हे मनुष्यो ! यज्ञ के अभिमुख जाओ ।

श्रेष्ठ यात्रा-मार्ग पर पथिक के समान चलो ।५। हे मनुष्यो ! रणभूमि में जाओ। फिर पापों का नाश करने के लिए यज्ञानुष्ठान करो ।६। सूर्य इस यज्ञ के बल से उत्पन्न होते हैं। पृथिवी जैसे प्राणियोंकी धारण करती है, वैसे ही यज्ञ भी धारण करता है ।७। हे अग्ने ! अहिंसा वाले इस यज्ञ में अभीष्ट पूर्वक देवताओं का मैं आह्वान करता हूँ ।८। हे स्तोताओ ! देवताओं के लिये इस श्रेष्ठ कर्म वाली स्तुति को करो ।९। अनेक नेत्रों वाले वरुण नदियों के जल का निरीक्षण करते हैं ।१०।

राजा राष्ट्रानां पेशो नदीनामनुत्तमस्मै क्षत्रं विश्वायु ।।११
अविष्टो अस्मान् विश्वासु विक्ष्वद्यु ं कृणोत शंसं निनित्सोः ।।१२
व्येतु दिद्यु द् द्विषामशेवा युयोत विष्वग्रपस्तनूनाम् ।।१३
अवीन्नो अग्निर्हव्यान्नमोभिः प्रेष्ठो अस्मा अधायि स्तोमः ।।१४
सजूर्देवेभिरपां नपातं सखायं कृध्वं शिवो नो अस्तु ।।१५
अब्जामुक्थैरहिं गृणीषे बुध्ने नदीनां रजःसु षीदन् ।।१६
मा नोऽहिर्बु ध्न्यो रिषे धान्मा यज्ञो अस्य स्रिधदृतायोः ।।१७
उत न एषु नृषु श्रवो धुः प्र राये यन्तु शर्धन्तो अर्यः ।।१८
तपन्ति शत्रु ं स्वर्ण भूमा महासेनासो अमेभिरेषाम् ।।१९
आ यन्नः पत्नीर्गमन्त्यच्छा त्वष्टा सुपाणिर्दधातु वीरान् ।२०।२६

वे वरुण, प्रदेशों के स्वामी और नदियों के रूप वाले है। वे अपने बल से सर्वगन्ता हैं ।११। हे देवगण। हमारे रक्षक होओ। निन्दकों को तेजहीन करो ।१२। शत्रुओं के विघ्न कारी आयुध दूर रहें। हे देवगण ! हमें पाप से मुक्त करो ।१४। हे स्तोताओं ! देवताओं के साथी अग्नि से हम मित्रता स्थापित करें। वे हमारा कल्याण करेंगे। ।१५। मेघों को तोड़ने वाले, जल में स्थित अग्नि की हम स्तुति करते हैं ।१६। हे अग्ने हम हिंसक को मत सौंपना। यज्ञकर्ता का यज्ञ व्यर्थ न हो ।१७। देवगण हमारे लिए अन्न धारण करते हैं, । हमारे शत्रु नाश

को प्राप्त हों ।१८। जैसे सूर्य सब लोकों को तपाते हैं वैसे देवताओं के कृपापात्र राजा सेनाओं से शत्रु को तपाते हैं ।१९। जब देव नारियाँ हमारे समक्ष पधारें, तब त्वष्टादेव हमें अपत्यवान् करें ।२०।
(२६)

प्रति नः स्तोमं त्वष्टा जुषेत स्यादस्मे अरमतिर्वसूयुः ।।२१
ता नो रासन् रातिषाचो वसून्या रोदसी वरुणानी शृणोतु ।
वरूत्रीभिः सुशरणो नो अस्तु त्वष्टा सुदत्रो वि दधातु रायः । २२
तन्नो रायः पर्वतास्तन्न आपस्तद् रातिषाच ओषधीरुत द्यौः ।
वनस्पतिभिः पृथिवी सजोषा उभे रोदसीं परि पासतो नः ।।२३
अनु तदुर्वी रोदसी जिहातामनु द्युक्षो वरुण इन्द्रसखा ।
अनु विश्वे मरुतो ये सहासो रायः स्याम धरुणं धियध्यै ।२४
तन्न इन्द्र वरुणो मित्रो अग्निराय ओषधीर्वनिनो जुषन्त ।
शर्मन् त्स्याम मरुतामुपस्थे यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ।२५।२७

त्वष्टादेव हमारे स्तोत्र को सुनते हैं, वे हमारे लिये धन देने की कृपा करें ।२१। देवनारियाँ हमारा अभीष्ट पूर्ण करें । आकाश-पृथिवी और वरुण भी हमारा निवेदन सुनें । त्वष्टादेव हमें अपना आश्रय दें ।२। पर्वत हमारे धन की रक्षा करें जल हमारे धन का पालन करें । देव-पत्नियाँ, आकाश-पृथिवी, अन्तरिक्ष, वनस्पति आदि भी हमारी रक्षा करें ।२३। हम धारण करने योग्य धन के धारक हों । आकाश पृथिवी हमारी सहायता करें । इन्द्र वरुद्र और मरुद्गण हमारे धन के समर्थक हों ।२४। मित्रावरुण, इन्द्र, अग्नि, जल, औषधि, वृक्ष आदि हमारी स्तुति सुनें । हम मरुद्गण के आश्रय में सुख पूर्वक रहें । तुम सदा हमारा पालन करो ।२५।
(७)

सूक्त ३५

(ऋषि–वसिष्ठः । देवता–विश्वेदेवाः । छन्द–त्रिष्टुप् पंक्तिः)

शं न इन्द्राग्नी भवतामवोभिः शं न इन्द्रावरुणा रातहव्या ।

शमिन्द्रासोमा सुविताय शं न इन्द्रापूषणा वाजसातौ ॥१
शं नो भगः शमु नः शंसो अस्तु शं नः पुरंधिः शमु सन्तु
रायः ।
शं नः सत्यस्य सुयमस्य शं नो अर्यमा पुरुजातो अस्तु ॥२
शं नो धाता शमु धर्ता नो अस्तु शं न उरूची भवतु स्वधाभिः ।
शं रोदसी बृहती शं नो अद्रिः शं नो देवानां सुहवानि सन्तु ॥३
शं नो अग्निर्ज्योतिरनीको अस्तु शं नो मित्रावरुणावश्विना
शम् ।
शं नः सुकृतां सुकृतानि सन्तु शं न इषिरो अभि वातु वातः ॥४
शं नो द्यावापृथिवी पूर्वहूतौ शमन्तरिक्षं दृशये नो अस्तु ।
शं नो ओषधीर्वनिनो भवन्तु शं नो रजसस्पतिरस्तु जिष्णुः॥५॥२८

हे इन्द्राग्ने ! हमारी रक्षा के लिए शान्ति देने वाले बनो । हे इन्द्रावरुण ! यजमान ने हवि दी है,तुम मङ्गलकारी होओ । इन्द्र और सोम कल्याणप्रद हों । इन्द्र और पूजा हमें सुखी करे ।१। भग देवता सुखी करें । सत्य वचन द्वारा भी हम सुख पावें । अर्यमा हमारा मगल करें ।२। धाता वरुण, पृथिवी, पर्वत और देवाह्वान हमें सुख देने वालेहो ।३। ज्वालासुखी हमारे लिए शीतल हो । मित्रावरुण, अश्विद्वय, वायु और पुण्यकर्म सभी हमारे लिए शान्तिप्रद हों ।४। द्यावापृथिवी अन्तरिक्ष, औषधियाँ, वृक्ष और लोक-स्वामी इन्द्र हमें शान्ति प्रदान करे ।५। (२८)

शं नो इन्द्रो वसुभिर्देवो अस्तु शमादित्योभिर्वरुणः सुशंसः ।
शं नो रुद्रो रुद्रोभिर्जलाषः शं नस्त्वष्टा ग्नाभिरिह शृणोतु ।६
शं न सोमो भवतु ब्रह्म शं नः शं नो ग्रावाणः शमु सन्तु यज्ञाः ।
शं नः स्वरूणां मितयो भवन्तु शं नः प्रस्वः शम्वस्तु वेदिः ॥७
शं नः सूर्य उरुचक्षा उदेतु शं नश्चतस्रः प्रदिशो भवन्तु ।
शं नः पर्वता ध्रुवयो भवन्तु शं नः सिन्धयः शमु सन्त्वापः ॥८

शं नो अदितिर्भवतु व्रतेभिः शं नो भवन्तु मरुतः स्वर्काः ।
शं नो विष्णुः शमु पूषा नो अस्तु शं भवित्रं शम्वस्तु वायुः ॥९
शं नो देवः सविता त्रायमाणः शं नो भवन्तूषसो विभातीः ।
शं नः पर्जन्यो भवतु प्रजाभ्यः शं नः क्षेत्रस्य पतिरस्तु शंभुः
।१०।२९

वसुओं सहित प्रधान रुद्रदेव नारियों के सहित त्वष्टा हमें शांति देने वाले हों, ।६। सोम सोमाभिषव प्रस्तर, यज्ञ, स्तोत्र, यूप, औषधियाँ, वेदी आदि हमें शान्ति दें ।७। महान् तेज वाले सूर्य, दिशायें, पर्वत-नदियाँ और जल हमें शान्तिप्रद हों ।८। अदिति, मरुद्गण, विष्णु पूषा, अन्तरिक्ष और वायु हमारे लिए शांतिप्रद हों ।९। सविता, उषा, पर्जन्य और क्षेत्रपति हमें शान्ति प्रदान करें । ०। (२९)

शं नो देवा विश्वेदेवा भवन्तु शं सरस्वती सह धीभिरस्तु ।
शमभिषाचः शमु रातिषाचः शं नो दिव्याः पार्थिवाः शं नो
अप्याः ॥११
शं नः सत्यस्य पतयो भवन्तु शं नो अर्वन्तः शमु सन्तु गावः ।
शं न ऋभवः सुकृतः सुहस्ताः शं नो भवन्तु पितरो हवेषु ॥१२
शं नो अज एकपाद् देवो अस्तु शं नोऽहिर्बुध्न्यः शं समुद्रः ।
शं नो अपां नपात् पेरुरस्तु शं नः पृश्निर्भवतु देवगोपा॥१३
आदित्या रुद्रा वसवो जुषन्तेदं ब्रह्म क्रियमाणं नवीयः ।
शृण्वन्तु नो दिव्याः पार्थिवासो गोजाता उत ये यज्ञियासः ।१४
ये देवानां यज्ञिया यज्ञियानां मनोर्यजत्रा अमृता ऋतज्ञाः ।
ते नो रासन्तामुरुगायमद्य यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ।१५।३०

विश्वेदेवा, सरस्वती, यज्ञानुष्ठान, दान, पृथिवी, आकाश, अन्तरिक्ष, देवता, अश्वगण, गौयें ऋभुगण हमें शान्ति देने वाले हों । हमारे पितर भी हमें शान्ति दें ।१२। अज एकपाद, अहिर्बुध्न्यदेव, समुद्र,

अपान्नपात्त् और पृश्नि हमें शांति प्रदान करे ।१३। इस नवीन स्तोत्र को हमने रचाहै । आदित्यगण मरुद्गण और वसूगण इसे सुनें । आकाश पृथिवी तथा समस्त यज्ञीय देवता हमारे आह्वान पर ध्यान दें ।१४। हे देवताओ ! मनु प्रजापति, अविनाशी और प्रत्यक्ष देवता हमें पुत्र दें और तुम हमारी सुन्दर कल्याण से रक्षा करो ।१५। (३०)

सूक्त ३६

(ऋषि–वसिठः । देवता–विश्वेदेवाः । छन्द–पंक्तिः, त्रिष्टुप्)

प्र ब्रह्मै तु सदनादृतस्य वि रश्मिभिः ससृजे सूर्यो गाः ।
वि सानुना पृथिवी सस्र उर्वी पृथु प्रतीकमध्येधे अग्निः ॥१
इमां वां मित्रावरुणा सुवृक्तिमिषं न कृण्वे असुरा नवीयः ।
इनो वामन्यः पदवीरदब्धो जनं च मित्रो यतति ब्रुवाणः ॥२
आ वातस्य ध्रजतो रन्त इत्या अपीपयन्त धेनवो न सूदाः ।
महो दिवः सदने जायमानो ऽचिक्रदद् वृषभः सस्मिन्नूधन् ॥३
गिरा य एता युनजद्धरी त इन्द्र प्रिया सुरथा शूर धायू ।
प्र यो मन्युं रिरिक्षतो मिनात्या सुक्रतुमर्यमणं ववृत्याम् ॥४
यजन्ते अस्य सख्यं वयश्च नमस्विनः स्व ऋतस्य धामन् !
वि पृक्षो बाबधे नृभिः स्तवान इदं नमो रुद्राय प्रेष्ठम् ।५।१

यज्ञ में उच्चारित स्तोत्र सूर्य की ओर गमन करें । रश्मियों के द्वारा सूर्य ने वृष्टि जलकी उत्पत्ति की है । विस्तार मयी पृथिवीके ऊपर अग्नि प्रदीप्त होते हैं ।१। हे मित्रावरुण ! तुम्हारे निमित्त अभिनव स्तुति का उच्चारण करता हूँ । तुममें से वरुण एक स्थान को प्रकट करने वाले हैं और मित्र, स्तोता को कर्म में लगाते हैं ।२। वायु की गति सब और शोभित है । पयस्विनी गौ वृद्धि को प्राप्त होती है । सूर्य के स्थान में उत्पन्न मेघ अन्तरिक्ष में घोर शब्द करता है । हे इन्द्र !

जो तुम्हारे इन अश्वों को योजित करता है, उसके यज्ञ में आगमन करो। हिंसक पापियों के क्रोध को अर्यमा व्यर्थ कर देते हैं। उन श्रेष्ठ कर्मा अर्यमाकी स्तुति करता हूँ।३-४। अन्नवान् यजमान रुद्रकी मित्रता की कामना करते हैं। स्तुतियों से प्रसन्न रुद्र अन्नदान प्रदान करते हैं। मैं उन्हीं रुद्र को प्रणाम करता हूँ।५। (१)

आ यत् साकं यशसो वावशानाः सरस्वती सप्तथी सिन्धुमाता।
याः सुष्वयन्त सुदुघाः सुधारा अभि स्वेन पयसा पीप्यानाः ॥६
उत त्ये नो मरुतो मन्दसाना धियं तोकं च वाजिनोऽवन्तु।
मा नः परि ख्यदक्षरा चरन्त्यवीवृधन् युज्यं ते रयिं नः ॥७
प्र वो महीमरमतिं कृणुध्वं प्र पूषणं विदथ्यं न वीरम्।
भगं धियोऽवितारं नो अस्याः सातौ वाजं रातिषाचं पुरंधिम् ॥८
अच्छायं वो मरुतः श्लोक एत्वच्छा विष्णुं निषिक्तपामवोभिः।
उत प्रजायै गृणते वयो धुर्यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ।९।२

सिन्धु नदियों की माता है। सरस्वती सप्तमा हैं वे सुन्दर धारा वाली नदियाँ अभीष्ट सिद्ध करने वाली हैं। वे अपने जल द्वारा वृद्धिको प्राप्त हुई नदियाँ एक साथ ही अन्न देने वाली हो।६। वेगवान् मरुद्-गण हमारे अनुष्ठान और अपत्य के रक्षक हों। वाणी देवता हमें त्याग कर अन्य पर कृपा दृष्टि न करें। यह हमारे धनों की वृद्धि करें।७। हे स्तोता! विस्तीर्ण पृथिवी, यज्ञीय पूषा, भग, बाजदेव का इस यज्ञ में आह्वान करो।८। हे मरुद्गण! यह स्तोत्र तुम्हारे अभिमुख हो। विष्णु के समक्ष भी उपस्थित हो। वे स्तोता को पुत्र-युक्त अन्न प्रदान करें। तुम अपनी रक्षाओं से हमें रक्षित करो।९। (२)

——

सूक्त ३७

(ऋषि–वसिष्ठः। देवता–विश्वेदेवाः। छन्द–त्रिष्टुप्ः, पंक्तिः)

आ वो बाहिष्ठो वहतु स्तवध्यै रथो वाजा ऋभुक्षणो अमृक्तः।
अभि त्रिपृष्ठैः सवनेषु सोमैर्मदे सुशिप्रा महभिः पृणध्वम् ॥१
यूयं ह रत्नं मघवत्सु धत्थ स्वर्दृश ऋभुक्षणो अमृक्तम्।
सं यज्ञेषु स्वधावन्तः पिबध्वं वि नो राधांसि मतिभिर्दयध्वम् ॥२
उवोचिथ हि मघवन् देष्णं महो अर्भस्य वसुनो विभागे।
उभा ते पूर्णा वसुना गभस्ती न सुनृता नि यमते वसव्या ॥ ३
त्वमिन्द्र स्वयशा ऋभुक्षा वाजो न साधुरस्तमेष्यृक्वा।
वयं नु ते दाश्वांसः स्याम ब्रह्म कृण्वन्तो हरिवो वसिष्ठाः ॥४
सनितासि प्रवतो दाशुषे चिद् याभिर्विवेषो हर्यश्व धीभिः।
ववन्मा नु ते युज्याभिरूती कदा न इन्द्र राय आ दशस्येः।५।३

हे ऋभुगण! तुम तेजस्वी हो। तुम बहनशील रथ द्वारा आगमन करो। तुम मिश्रित सोमरस से अपना पेट भरो।१। ऋभुओ! तुम हविदाताओं के लिये धारण करो। फिर बली होकर सोम-पान करो और हमे धन दो।२। हे इन्द्र! तुम धन-दान के समय अन्न सेवन करते हो। तुम्हारे दोनों हाथों में धन है। तुम्हारे दान को कोई रोक नहीं सकता।३। हे इन्द्र! तुम ऋभुओं के स्वामी हो। तुम स्तुति करने वाले के घर पर आगमन करो। आज हम हवि देकर तुम्हारी स्तुति करेंगे।४। हे इन्द्र! तुम हमारी स्तुतियो से प्रसन्न होंकर यजमान को धन देते हो। तुम हमें कब धन प्रदान करोगे? हम तुम्हारी स्तुतियों से रक्षित होंगे।४। (४)

वासयसीव वेधसस्त्वं नः कदा न इन्द्र वचसो बुबोधः।
अस्तं तात्या धिया रयिं सुवीरं पृक्षो नो अर्वा न्युहीत वाजी ॥६
अभि यं देवी निर्ऋतिश्चिदीशे नक्षन्त इन्द्रं शरदः सुपृक्षः।

उप त्रिवन्धुर्जरदष्टिमेत्यस्ववेशं यं कृणवन्त मर्ताः ॥७
आनो राधांसि सवितः स्तवध्या आ रायो यन्तु पर्वतस्य रातौ ।
सदा नो दिव्यः पायुः सिषक्तु यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥८॥४

हे इन्द्र ! हमारी स्तुतियों पर कब ध्यान दोगे ? तुमने हमें निवास प्रदान किया हैं । तुम्हारे अश्व हमारे घर में अत्यन्त युक्त धन लेकर आवें ।६- पृथिवी जिन इन्द्र को ईश्वर बनाने का यत्न करती हैं, अन्न-मय वर्ष जिन्हें स्वामी रूपसे स्वीकार करते हैं और स्तोता जिन्हें अपने घर में आहूत करते हैं, वे इन्द्र अन्न-भक्षण वाला बल पाते हैं ।७। हे सवितादेव ! तुम्हारा प्रशंसनीय धन हमें मिले । पर्वत प्रदत्त धन हमें प्राप्त हो । इन्द्र हमारी सेवा को स्वीकार करें । हे देवगण ! तुम सदा हमारी रक्षा करो ।८। ( )

सूक्त ३८

(ऋषि—वसिष्ठः । देवता—सविताः । छन्द—त्रिष्टुप्, पंक्तिः)

उदु ष्य देवः सविता ययाम हिरण्ययीममतिं यामशिश्रेत् ।
नूनं भगो हव्यो मानुषेभिर्वि यो रत्ना पुरूवसुर्दधाति ॥१
उदु तिष्ठ सवितः श्रुध्यस्य हिरण्यपाणे प्रभृतावृतस्य ।
व्युर्वीं पृथ्वीममतिं सृजान आ नृभ्यो मर्तभोजनं सुवानः ॥२
अपि ष्टुतः सविता देवो अस्तु यमा चिद् विश्वे वसवो गृणन्ति ।
स नः स्तोमान् नमस्यश्चनो धाद् विश्वेभिः पातु पायुभिर्नि सूरीन् ॥३
अभि यं देव्यदितिर्गृणाति सवं देवस्य सवितुर्जुषाणा ।
अभि सम्राजो वरुणो गृणन्त्यभि मित्रासो अर्यमा सजोषाः ॥४
अभि ये मिथो वनुषः सपन्ते रातिं दिवो रातिषाचः पृथिव्याः ।
अहिर्बुध्न्य उत नः शृणोतु वरूत्र्येकधेनुभिर्नि पातु ॥५
अनु तन्नो जास्पतिर्मंसीष्ट रत्नं देवस्य सवितुरियानः ।
भगमुग्रोऽवसे जोहवीति भगमनुग्रो अध याति रत्नम् ॥६

शं नो भवन्तु वाजिनो हवेषु देवताता मितद्रवः स्वर्काः ।
जम्भयन्तोऽहिं वृकं रक्षांसि सनेम्यस्मद् युयवन्नमीवाः ॥७

वाजेवाजेऽवत वाजिनो नो धनेषु विप्रा अमृता ऋतज्ञाः ।
अस्य मध्वः पिबत मादयध्वं तृप्ता यात पथिभिर्देवयानैः ॥८॥५

अपनी प्रभा से दमकते हुए सूर्य उदय को प्राप्त होते हैं। वे मनुष्यों द्वारा स्तुतियों के योग हैं। वे स्तोता को श्रेष्ठधन प्रदान करते हैं।१। हे सविता ! उदय को प्राप्त होओ। नेताओं के उपभोग का धन देते हुए इस यज्ञानुष्ठानका आरम्भ हुआ है। तुम हमारी स्तुतिको सुनो।२। सविता हमारे द्वारा पूजित हो। जिनकी सभी स्तुति करते हैं, वे पूज्य सविता हमारे स्तुति को बढ़ावें और स्तोता की सब प्रकार रक्षा करें।३। सविता की स्तुति अदिति वरुण, मित्र, अर्यमा आदि देवता करते हैं।४। वे दानशील यजमान सविताकी उपासना करते हैं। अहि-र्बुध्न्य हमारी स्तुति सुनें और वाणी देवी हमारी सब प्रकार रक्षा करें।५। वाजी नामक देवगण हमें सुख दें। अदानशील और राक्षसोंको नष्ट करें और सब रोगों को हमसे दूर कर दें।७। हे देवगण ! तुम सत्य के जानने वाले होकर सब संग्रामों में रक्षा करो। तुम इस सोम से हर्ष प्राप्त करो, फिर देवयान मार्ग से गमन करो।८। (५)

सूक्त ३९

(ऋषि—वसिष्ठः। देवता—विश्वेदेवाः। छन्द—त्रिष्टुप्)

ऊर्ध्वो अग्निः सुमतिं वस्वो अश्रेत् प्रतीची जूर्णिर्देववातिमेति ।
भेजाते अद्री रथ्येव पन्थामृतं होता न इषितो यजाति ॥१

प्र वावृजे सुप्रया बर्हिरेषमामा विश्पतीव बीरिट इयाते ।
विशामक्तोरुषसः पूर्वहूतौ वायुः पूषा स्वस्तये नियुत्वान् ॥२

ज्मया अत्र वसवो रन्त देवा उरावन्तरिक्षे मर्जयन्त शुभ्राः ।
अर्वाक् पथ उरुज्रयः कृणुध्वं श्रोता दूतस्य जग्मुषो नो अस्य । ३
ते हि यज्ञेषु यज्ञियास ऊमाः सधस्थं विश्वे अभि सन्ति देवाः ।
तां अध्वर उशतो यक्ष्यग्ने श्रुष्टी भगं नासत्या पुरन्धिम् ॥४
आग्ने गिरो दिव आ पृथिव्या मित्रं वह वरुणमिन्द्रमग्निम् ।
आर्यमणमदितिं विष्णुमेषां सरस्वती मरुतो माशयन्ताम् । ५
ररे हव्यं मतिभिर्यज्ञियानां नक्षत् कामं मर्त्यानामसिन्वन् ।
धाता रयिमविदस्यं सदासां सक्षीमहि युज्येभिर्नु देवैः ॥६
नू रोदसी अभिष्टुते वसिष्ठैर्ऋतावानो वरुणो मित्रो अग्निः ।
यच्छन्तु चन्द्रा उपमं नो अर्कं यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ।७। ६

•

अग्निदेव स्तोता की स्तुति से ऊंचे उठें । उषा देवी यज्ञ में आवें । पत्नीयुक्त यजमान यश मार्ग पर चलता है और यज्ञ करता है ।१। यह यजमान कुश को हव्य से पूर्ण करते हैं । वायु और पूषा सबका कल्याण करने के लिये उषा से पूर्व ही आगमन करे ।२। वसुगण इस यज्ञ में बिहार करें । अन्तरिक्षस्थ मरुद्गण की भी यहाँ सेवा होती है । हे वसुओ और मरुतो ! अपने मार्ग को हमारी ओर करो । जो हमारा दूत तुम्हारी सेवा में पहुँचा हैं उसके निवेदन पर ध्यान दो ।३। विश्वेदेवा हमारे यज्ञ में आते हैं । हे अग्ने ! उनवे निमित्त यज्ञ करो । भग, अश्विद्वय और इन्द्र का पूजन करो ।४। हे अग्ने ! इन्द्र, मित्र, वरुण, अर्यमा, अग्नि, अदिति और विष्णु का हमारे यज्ञ में आह्वान करो । सरस्वती और मरुद्गण की भी कृपा-याचना करो ।५। यज्ञ योग्य देवताओं को हम हवि देते हैं । अग्नि हमारी कामनाओंमें बाधक नहीं होते । हे देवगण ! तुम हमें ग्रहणीय धन प्रदान करो । हम अपने सहायक देवताओं के आज दर्शन करेंगे ।६। आज आकाश-पृथिवी की भले प्रकार स्तुति की गई । इन्द्र, वरुण और अग्नि की भी स्तुति की

गई है। कल्याण देवता हमें श्रेष्ठ अन्न दें और सदा हमारा पालन करें।७।

सूक्त ४०

(ऋषि—वसिष्ठः। देवता—विश्वेदेवाः,। छन्द—पंक्ति, त्रिष्टुप)

ओ श्रुष्टिर्विदथ्या समेतु प्रति स्तोमं दधीमहि तुराणाम्।
यदद्य देवः सविता सुवाति स्यामास्य रत्निनो विभागे ॥१
मित्रास्तन्नो वरुणो रोदसी च द्युभक्तमिन्द्रो अर्यमा ददातु।
दिदेष्टु देव्यदिती रेक्णो वायुश्च यन्नियुवैते भगश्च ॥२
सेदुग्रो अस्तु मरुतः स शुष्मीं यं मर्त्यं पृषदश्वा अवाथ।
उतेमग्नि सरस्वती जुनन्ति न तस्य रायः पर्यतास्ति ॥३
अयं हि नेता वरुण ऋतस्य मित्रो राजानो अर्यमापो धुः।
सुहवा देव्यादितिरनर्वा ते नो अहो अति पर्षन्नरिष्टान् ॥४
अस्य देवस्य मीलहुषो वया विष्णोरेषस्य पभृथे हर्विभिः।
विदे हि रुद्रो रुद्रियं महित्वं यसिष्टं वर्तिरश्विनाविरावत्।५
मात्र पूषान्नाघृण इरस्यों वरूत्री यद् रातिषाचश्च रासन्।
मयोभुवो नो अर्वन्तो नि पान्तु वृष्टिं परिज्मा वातो ददातु।६
नू रोदसी अभिष्टुते वसिष्ठैर्ऋतावानो वरुणो मित्रो अग्निः।
यच्छन्तु चन्द्रा उपमं नो अर्कं यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः।७।७

हे देवगण ? तुम्हारा श्रेष्ठ सुख हमें प्राप्त हो। हम देवताओं की स्तुति करते हैं। जो धन सवितादेव हमारे लिए प्रेरित करेंगे उसी धन से हम सन्तुष्ट होंगे।१। मित्रावरुण और द्यावापृथिवी उसी प्रशंसनीय धन को हमें दें। इन्द्र और अर्यमा भी हमें धन प्रदान करें वायु और भग हमें जिस धन को देना चाहें अदिति उस धन को हमें दे डालें।२। पृषत् अश्व वाले मरुत्गण ! तुम जिसके रक्षक होते हो, वह उपासक बल और तेज प्राप्त करके अग्नि और सरस्वती आदि देवता

यजमान को कर्म में लगावें इसके पास जो धन है, उसे कोई नष्ट न कर सके ।३। मित्र, वरुण, अर्यमा सर्वशक्ति सम्पन्न हैं, वे हमारे यज्ञानुष्टान के धारक हैं, । प्रकाशयी अदिति सुन्दर आह्वान से सम्पन्न हैं, यह सब देवता हमें पापों से मुक्त करें । । अन्य सब देवता विष्णु के अंश रूप हैं । रुद्र अपनी कृपा हमें दें । हे अश्विद्वय ! तुम हमारे हव्य-सम्पन्न घर में आगमन करो ।४। हे पूषन् ! सरस्वती और देवनारियाँ हमें जो धन दें उसमें तुम बाधक नहीं होना । कल्याण दाता देवगण हमारी रक्षा करें । वायु हमे जलवृष्टि दें ।६। आज देवताओं ने द्यावा-पृथिवी की भले प्रकार स्तुति की । वरुण, इन्द्र और अग्नि की भी स्तुति की गई । देवगण हमें ग्रहणीय धन दें और हमारा सदा पालन करें ।७।   (७)

सूक्त ४१

(ऋषि—वसिष्ठः । देवता—लिङ्गोक्तः भयः उषाः
छन्द, त्रिष्टुप्, जगती, पंक्ति)

प्रातरग्निं प्रातरिन्द्रं हवामहे प्रातर्मित्रावरुणा प्रातरश्विना ।
प्रातर्भगं पूषणं ब्रह्मणस्पतिं प्रातः सोममुत रुद्रं हुवेम ॥१
प्रातर्जितं भगमुग्रं हुवेम वयं पुत्रमदितेर्यो विधर्ता ।
आध्रश्चिद् यं मन्यमानस्तुरश्चिद् राजा चिद् यं भगं भक्षीत्याह ।२
भग प्रणेतर्भग सत्यराधो भगेमां धियमुदवा ददन्नः ।
भग प्र णो जनय गोभिरश्वैर्भग प्र नृभिर्नृवन्तः स्याम ॥३
उतेदानीं भगवन्तः स्यामोत प्रपित्व उत मध्ये अह्वाम् ।
उतोदिता मघवन् त्सूर्यस्य वयं तेवानां सुमतौ स्याम ॥४
भग एव भगवाँ अस्तु देवास्तेन वयं भगवन्तः स्याम ।
तं त्वा भग सर्व इज्जोहवीति स नो भग पुरएता भवेह ॥५
समध्वरायोषसो नमन्त दधिक्रावेव शुचये पदाय ।

अर्वाचीनं वसुविदं भगं नो रथमिवाश्वा वाजिन आ वहन्तु ॥६
अश्वावतीर्गोमतीर्न उषासो वीरवतीः सदमुच्छन्तु भद्राः ।
घृतं दुहाना विश्वतः प्रपीता यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः।७।८

हम अपने प्रातः सवन में इन्द्र, मित्र और वरुण का आह्वान करते हैं। अश्विद्वय, भग, पूषा, ब्रह्मणस्पति, सोम और रुद्र की भी स्तुति करते हैं ।१। अदिति के विजयशील पुत्र भग का हम अपने प्रातः समय में आह्वान करते हैं। दरिद्र और धनवान् राजा दोनों ही उनसे उपभोग्य धन मांगते हैं।२ हे भग ! तुम श्रेष्ठ नेता और सत्य धन वाले हो। तुम हमें इच्छित वस्तु दो। हमारे गवादि पशुओं की वृद्धि करो। हमें पुत्रादि से सम्पन्न सौभाग्यशाली हों।३। हम तुम्हारे कृपा पात्र हो। दिन के प्रारम्भ में और मध्य में भी तुम्हारी कृपा को पाते रहें। हे भग ! हम सूर्योदय काल में इन्द्राग्नि देवताओं की कृपा पाते रहें।४। हे देवगण ! हम भग की कृपा से सम्पन्न हों। हे भग ! हमारे इस यज्ञमें सर्वप्रथम आओ। हम बारम्बार आह्वान करते हैं।५। उषा हमारे यज्ञ में आगमन करें। वेगवान् अश्वों से युक्त रथ के समान उषा भग, देवता को हमारे अभिमुख करें।६। सर्वगुण सम्पन्न उषा, अश्व, गौ, असत्यादि से युक्त होकर रात्रि के अन्धेरे को दूर करें और हमारा पालन करें।७

सूक्त ४२

(ऋषि—वसिष्ठः । देवता—विश्वेदेवाः । छन्द—त्रिष्टुप्, पंक्तिः)

प्र ब्रह्माणो अङ्गिरसो नक्षन्त प्र क्रन्दनुर्नभन्यस्य वेतु ।
प्र धेनव उदप्रुतो नवन्त युज्यातामद्री अध्वरस्य पेशः ॥१
सुगस्ते अग्ने सनवित्तो अध्वा युक्ष्वा सुते हरितो रोहितश्च ।
ये वा सद्मन्नरुषा वीरवाहो हुवे देवानां जनिमानि सत्तः ॥२
समु वो यज्ञं महयन् नमोभिः प्र होता मन्द्रो रिरिच उपाके ।
यजस्व पुर्वणीक देवाना यज्ञियामरमतिं ववृत्याः ॥३

यदा वीरस्य रेवतो दुरोणे स्योनशीरतिथिचिकेतत् ।
सुप्रीतो अग्निः सुधितौ दम आ स विशे दाति वार्यमियत्यै ॥४
इमं नो अग्ने अध्वरं जुषस्व मरुत्स्विन्द्रे यशसं कृधी नः ।
आ नक्ता बर्हिः सदतामुषासोशन्ता मित्रावरुणा यजेह ॥६
एवाग्निं सहस्यं वसिष्ठो रायस्कामो विश्वप्स्न्यस्य स्तौत् ।
इषं रयिं पप्रथद् वाजमस्मे यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ।६।६

अङ्गिरागण सर्वत्र व्याप्त हों। पर्जन्य हमारी स्तुति को चाहें। नदियाँ जल सींचती हुई बहे। यजमान दम्पत्ति यज्ञ का आयोजन करें ।१। हे अग्ने ! तुम्हारा सनातन मार्ग सुगम हो। कृष्ण वर्गके और लाल रङ्ग के जो अश्व तुम्हारे समान महान देवता को यज्ञ गृह में पहुँचाते हैं उन्हें रथ में जोड़ो। मैं यज्ञ मण्डप में अवस्थित होकर देवताओं का आहवान करता हूँ।२। हे देवगण ! यज्ञ में स्तोतागण तुम्हारी पूजा करते हैं। हमारा निकटस्थ होता सर्वोत्तम हैं। देवताओंका भले प्रकार यज्ञ करो। तुम तेज को धारण करो, भूमि को प्राप्त करो। । अतिथि रूप अग्नि जिस धनवान् के घर में शयन करते हैं तथा जिस समय चैतन्य और प्रसन्न होते हैं, उस समय ग्रहणीक धन प्रदान करते हैं।४। हे अग्ने ! हमारे यज्ञ का सेवन करो। इन्द्र और मरुद्गण के मध्य हमारे यज्ञ को विस्तृत करो। तुम रात्रिमें और उषाकाल में भी यज्ञीय कुशों पर विराजमान होओ। यज्ञ की कामना वाले मित्रावरुण का पूजन करो।५। धन की कामना से वसिष्ठ ने अग्नि की स्तुति की। अग्नि हमें बल अन्न और धन प्रदान करें। हमारा सदा पालन करते रहें।६। (६)

सूक्त ४३

(ऋषि–वसिष्ठः। देवता–विश्वेदेवाः। छन्द–त्रिष्टुप, पंक्तिः)

प्र वो यज्ञेषु देवयन्तो अर्चन् द्यावा नमोभिः पृथिवी इषध्यै ।

येषां ब्रह्माण्यसमानि विप्रा विष्वग्वियन्ति वनिनो न शाखाः। १
प्र यज्ञ एतु हेत्वो न सप्तिरुद्यच्छध्वं समनसो घृताचीः।
स्तृणीत बर्हिरध्वराय साधूर्ध्वा शोचींषि देवयून्यस्थुः ॥२
आ पुत्रासो न मातरं विभृत्राः सानौ देवासो बर्हिषः सदन्तु।
आ विश्वाची विदथ्यामनक्त्वग्ने मा नो देवताता मृधस्कः ॥३
ते सीषपन्त जोषमा यजत्रा ऋतस्य धाराः सुदुधा दुहानाः।
ज्येष्ठं वो अद्य मह आ वसूनामा गन्तन समनसो यति ष्ठ ॥४
एवा नो अग्ने विक्ष्वा दशस्य त्वया वयं सहसावन्नास्क्राः।
राया युजा सधमादो अरिष्टा यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः
।५।१०

जिन विद्वानों की स्तुतियाँ सब ओर फैली हैं, वे विद्वान् तुम्हारी प्राप्ति के लिए स्तुति करते हैं और आकाश पृथिवी की भी स्तुति करते हैं।१। हे ऋत्विजो ! द्रुतगामी अश्व के समान आगमन करो। एक मन वाले होकर स्रुक् को ग्रहण करने वाली तुम्हारी रश्मियाँ ऊपर प्रकार देवतागण यज्ञ के श्रेष्ठ स्थानों में विराजमान हों। हे अग्ने ! तुम्हारी यज्ञ-योग्य ज्वालाओं को जुहू भले प्रकार सिंचन करे तुम हमारे शत्रुओं के संहारक मत होना।३। जल की दोहनशील धारा को सीचते हुए देवगण हमारे पूजन को स्वीकार करें। हे देवगण ! सर्वश्रेष्ठ धन हमें मिले। तुम समान मन से आगमन करो।४। हे अग्ने तुम हमें धन प्रदान करो। तुम हमारा त्याग न करो। हम सदा सुखी रहें। तुम हमारा सदा पालन करो।५। (१०)

सूक्त ४४

(ऋषि–वसिष्ठः। देवता–लिङ्गोक्ताः। छन्द–जगती, त्रिष्टुप् पंक्ति)

दधिक्रां वः प्रथममश्विनोषसमग्निं समिद्धं भगमूतये हुवे।
इन्द्रं विष्णुं पूषणं ब्रह्मणस्पतिमादित्यान् द्यावापृथिवी अपः
स्वः ॥१

दधिक्रामु नमसा बोधयन्त उदीराणा यज्ञमुपप्रयन्तः ।
इलां देवीं बर्हिषि सादयन्तो ऽश्विना विप्रा सुहवा हुवेम ॥२
दधिक्रावाण बुबुधानो अग्निमुप ब्रुव उषसं सूर्यं गाम् ।
ब्रध्नं मंश्चतोर्वरुणस्य बभ्रुं ते विश्वास्मद् दुरिता यावयन्तु ॥३
दधिक्रावा प्रथमो वाज्यर्वा ऽग्ने रथानां भवति प्रजानन् ।
संविदान उषसा सूर्येणाऽऽदित्येभिर्वसुभिरङ्गिरोभिः ॥४
आ नो दधिक्राः पथ्यामनक्त्वृतस्य पन्थामन्वेतवा उ ।
शृणोतु नो दैव्यं शर्धो अग्निः शृण्वन्तु महिषा अमूराः ॥५॥११

रक्षार्थ मैं दधिका का आह्वान करता हूँ । अश्विद्वय, उषा, अग्नि, भग, इन्द्र, विष्णु, पूषा, ब्रह्मणस्पति आदित्यगण, आकाश, पृथिवी, जल और सूर्य का आह्वान करता हूँ ।१। यज्ञारम्भ में हम दधिका की स्तुति करते हैं और इलाकी स्थापना कर शोभामय अश्विनीकुमारों का आह्वान करते है ।२। दधिका का आह्वान कर अग्नि, उषा, सूर्य और वाणी की स्तुति करता हूँ । वरुण के अश्व का भी स्तव करता हूँ । सभी देवता मुझे पापों से छुड़ावे ।३। अश्वों में प्रमुख दधिका जानने योग्य बातों को जानकर उषा सूर्य, आदित्यगण, वसुगण और अङ्गिराओं का साथ लाते हुए रथ के अग्रभाग में चलते हैं ।४। दधिक्रा सत्य और न्याय पर चलते हुए हमको धर्म और लोक हितकारी मार्ग पर अग्रसर करें । वे अग्नि के समान प्रकाशक होकर हमको भी शक्ति प्रदान करें ।५। (११)

सूक्त ४५

(ऋषि—वसिष्ठः । देवता—इन्द्रः । छन्द—त्रिष्टुप्)

आ देवो यातु सविता सुरत्नो ऽन्तरिक्षप्रा वहमानो अश्वैः ।
हस्ते दधानो नर्या पुरूणि निवेशयच्च प्रसुवच्च भूम ॥१

उदस्य बाहू शिथिरा बृहन्ता हिरण्यया दिवो अन्तां अनष्टाम् ।
नूनं सो अस्य महिमा पनिष्ट सूरश्चिदस्मा अनु दादपस्याम् ॥२
स घा नो देवः सविता सहावा ऽऽसाविषद् वसुपतिर्वसूनि ।
विश्रयमाणो अमतिमुरूचीं मर्तभोजनमध रासते नः ॥३
इमा गिरः सवितारं सुजिह्वं पूर्णगभस्तिमीलते सुपाणिम् ।
चित्रं वयो बृहदस्मे दधातु यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ।४।१२

सविता देवता मनुष्यों के लिए कल्याणकारी धन धारण करते हुए सब जीवों को कर्मकी प्रेरणा करते हूए उदित हों।१। सवितादेव अन्तरिक्ष की सीमा को व्याण करे। हम उनकी महिमा को आज कहेंगे। सूर्य हमें कर्म करने की ओर झुकावे।२। सविता देव धन प्रेरणा करे। वे विशाल रूप वाले होकर उपभोग्य धन हमें प्रदान करें।३। वह श्रेष्ठ अन्न दे और हमारा पालन करें।४। (१२)

सूक्त ४६

(ऋषि–वसिष्ठः। देवता—रुद्रः। छन्दः—त्रिष्टुप्, पंक्तिः)

इमा रुद्राय स्थिरधन्वने गिरः क्षिप्रेषवे देवाय स्वधाव्ने ।
अषालहाय सहमानाय वेधसे तिग्मायुधाय भरता शृणोतु नः ॥१
स हि क्षयेण क्षम्यस्य जन्मनः साम्राज्येन दिव्यस्य चेतति ।
अवन्नवन्तीरुप नो दुरश्चराऽनमीवो रुद्र जासु नो भव ॥२
या ते दिद्युदवसृष्टा दिवस्परि क्ष्मया चरति परि सा वृणक्तु नः।
सहस्रं ते स्वपिवात भेषजा मा नस्तोकेषु तनयेषु रीरिषः ॥३
मानो वधी रुद्र मा परा दा मा ते भूम प्रसितौ हीलितस्य ।
आ नो भज बर्हिषि जीवशंसे यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ।४।१३

हे स्तोता ! धनुर्धारी, अजेय, सर्वजेता रुद्र का स्तव करो। वे हमारी प्रार्थना सुनें।१। पार्थिव और दिव्य ऐश्वर्य से उनको अनुभूति होती है। हे रुद्र ! तुम्हारे स्तोत्र करने वाले हमारे पुरुषों की रक्षा करते हुए आगमन करो। तुम हमें रोग व्याधि से ग्रस्त मत करना

।२। हे रुद्र । जो अन्तरिक्ष विद्युत् पृथिवी पर घूमती हैं, हमें नष्ट न करे । तुम सहस्रों औषधियों वाले हो, हमारे पुत्र-पौत्रादि को नष्ट मत करना ।३। हे रुद्र ! हमारी हिंसा मत करना । हम तुम्हारे क्रोधके पाश में न पड़ें । तुम हमें यज्ञ-भागी बनाओ और सदा हमारा पालन करो ।४।　　(१३)

सूक्त ४७

(ऋषि---वसिष्ठः । देवता—इन्द्र । छन्द—जगती, त्रिष्टुप्, पंक्तिः)

आपो यं वः प्रथमं देवयन्त इन्द्रपानभूर्मिमकृण्वतेलः ।
तं वो वयं शुचिमरिप्रमद्य घृतप्रुषं मधुमन्तं वनेम ॥१
तमूर्मिमापो मधुमत्तमं वो ऽपां नपादवत्वाशुहेमा ।
यस्मिन्निन्द्रो वसुभिर्मादयाते तमश्याम देवयन्तो वो अद्य ॥२
शतपवित्राः स्वधया मदन्तीर्देवीर्देवानामपि यन्ति पाथः ।
ता इन्द्रस्य न मिनन्ति व्रतानि सिन्धुभ्यो हव्यं घृतवज्जुहोत ॥३
याः सूर्यो रश्मिभिराततान याभ्य इन्द्रो अरदद् गातुमूर्मिम् ।
ते सिन्धवो वरिवो धातना नो यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः॥४।१४

हे जल देवता ! अध्वर्युओं द्वारा इन्द्र के पान-योग्य जो सोम रस निष्पन्न किया गया है, उसका हम भी सेवन करेंगे ।१। अपान-पात् देव तुम्हारे रस युक्त सोम को बढ़ावें । वसुगण सहित इन्द्र जिससे हर्ष प्राप्त करते हैं, उसे सोमरस को देवताओं की कामना करते हुए हम पावेंगे ।२। जल देव-स्थानों में जाते हैं वे इन्द्र के यज्ञानुष्ठान में बाधक नहीं होते । हे अध्वर्युओ ! तुम सिन्धु आदि के निमित्त हवि-र्दान करो ।३ः अपनी रश्मियों से सूर्य जिन जलों को बढ़ाते हैं, जिनके बहने को इन्द्र ने मार्ग बनाया है, हे सिन्धुगण ! ऐसे तुम हमारे लिए धन धारण करो और सदा हमारा पालन करो ।४।

सूक्त ४८

(ऋषि-वसिष्ठः । देवता-ऋभवः,ऋभवो विश्वेदेवा । छन्द-पंक्तिः त्रिष्टुप्)

ऋभुक्षणो वाजा मादयध्वमस्मे नरो मघवानः सुतस्य ।
आ वोऽर्वाचः क्रतवो न यातां विभ्वो रथं नर्यं वर्तयन्तु ॥१

ऋभुर्ऋभुभिरभि वः स्याम विभ्वो विभुभिः शवसा शवांसि।
वाजो अस्माँ अवतु वाजसाताविन्द्रेण युजा तरुषेम वृत्रम् ॥२
ते चिद्धि पूर्वीरभि सन्ति शासा विश्वाँ अर्य उपरताति वन्वन्।
इन्द्रो विभ्वाँ ऋभुक्षा वाजो अर्यः शत्रोर्मिथत्या कृणवन् वि
नृम्णम् ॥३
नू देवासो वरिवः कर्तना नो भूत नो विश्वेऽवसे सजोषाः।
समस्मे इषं वसवो ददीरन् यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः।४।१५

हे ऋभुगण! हमारे सोम को पीकर प्रसन्न होओ। तुम्हारे कर्मवान् अश्व हमारे सामने आकर मनुष्यों का हित करें।१। हम तुम्हारे ही द्वारा सम्पन्न हुए हैं। तुम सामर्थ्यवान् हो। हम तुम्हारी सहायता पाकर ही शत्रुओं को हरावेंगे। वे ऋभुगण हमारे रक्षक हों। इन्द्र की कृपा से हम वृत्र द्वारा हिंसित न हों।२। हमारे शत्रुओं की सेनाओं को इन्द्र और ऋभुगण हराते हैं। वे रणक्षेत्र में सब शत्रुओं का वध करते हैं। विभ्व, ऋभुक्षा और वाज नामक ऋभु त्रय और इन्द्र शत्रुओं का नाश करेंगे।३। हे ऋभुओ! धनदाता होओ। हमारी रक्षा करो। हमें अन्न दो हमारा कल्याण करो।४। (५)

सूक्त ४९

(ऋषि—वसिष्ठः। देवता—आपः। छन्द—त्रिष्टुप्)

समुद्रज्येष्ठाः सलिलस्य मध्यात् पुनाना यन्त्यनिविशमानाः।
इन्द्रो या वज्री वृषभो रराद ता आपो देवीरिह मामवन्तु ॥१
या आपो दिव्या उत वा स्रवन्ति खनित्रिमा उत वा याः
स्वयंजाः।
समुद्रार्था याः शुचयः पावकास्ता आपो देवीरिह मामवन्तु ॥२
यासां राजा वरुणो याति मध्ये सत्यानृते अवपश्यञ्जनानाम्।
मधुश्चुतः शुचयो याः पावकास्ता आपो देवीरिह मामवन्तु ॥३
यासु राजा वरुणो यासु सोमो विश्वे देवा यासूर्जं मदन्ति।
वैश्वनरो यास्वग्निः प्रविष्टस्ता आपो देवीरिह मामवन्तु।४।१६

जिन जलों में समुद्र बड़ा है, वे जल प्रवाह युक्त हैं । जल देवता अन्तरिक्ष से आते हैं । इन्द्र ने जिन्हें मुक्त किया, वे जल हमारे रक्षक हों ।१। अन्तरिक्ष में उत्पन्न होने वाले जल नदी प्रवाहित या कूप रूप में खोदकर निकाले गये जल और समुद्र की ओर जाते हुए जल यह सब हमारे रक्षक हो ।२। जिन जलों के स्वामी वरुण मध्यलोक में गमन करते हैं, वे प्रकाशयुक्त रस-सम्पन्न जल हमारे रक्षकहों ।३। जिन जलों में वरुण और सोम निवास करते हैं जिनके अन्न से विश्वेदेवा प्रसन्न होते हैं और जिनमें वैश्वानर अग्नि का निवास है, वे जल देवता हमारे रक्षक हों । । (१-)

सूक्त ५०

(ऋषि–वसिष्ठः । देवता–मित्रावरुणौ अग्निः, विश्वेदेवाः नद्यः
छन्द–जगती त्रिष्टुप्)

आ मां मित्रावरुणेह रक्षतं कुलाययद् विश्वयन्मा न आ गन् ।
अजकावं दुर्दृशीकं तिरो दधे मा मां पद्येन रपसा विदत् त्सरुः ।१
यद् विजामन् परुषि वन्दनं भुवदष्ठीवन्तौ परि कुल्फौ च देहत् ।
अग्निष्टच्छोचन्नप बाधतामितो मा मां पद्येन रपसा विदत्
त्सरुः ।।२
यच्छल्मलौ भवति यन्नदीषु यदोषधीभ्यः परि जायते विषम् ।
विश्वे देवा निरितस्तत् सुवन्तु मा मां पद्येन रपसा विदत्
त्सरुः ।।३
याः प्रवतो निवत उद्वत उदन्वतीरनुदकाश्च याः ।
ता अस्मभ्यं पयसा पिन्वमानाः शिवा देवीरशिपदा भवन्तु सर्वा
नद्यो अशिमिदा भवन्तु ।४।१७

हे मित्र और वरुण ! तुम हमारे रक्षक बनकर घातक विषों में हमारी रक्षा करो । छिपकर चलने वाले सर्प भी हम पर आक्रमण न कर सकें ।१। हे अग्निदेव ! वृक्षादि की ग्रन्थिणी में जों विष उत्पन्न होता है और जो पैरों के सन्धिस्थानों में सूजन उत्पन्नकर देता है, उस विषके प्रभाव को इस व्यक्ति पर से दूर कर दो । छिपकर चलने वाले सर्प हमको जानने न पावें ।२। जो विष शाल्मली के वृक्ष में होता

और जो नदियों में उत्पन्न होने वाली गुल्म लता आदि में पैदा होताहै उससे विश्वेदेवगण हमारी रक्षा करे। छिपकर चलने वाले सर्प हमको हानि न पहुँचा सकें।३। प्रवत देश, निम्न देश तथा उन्नत देश में जो नदियाँ बहती हैं और जिनके जलके द्वारा लोगों की आवश्यकतायें पूरी होती है, वे संसार की उपकारी नदियाँ हमके शिपद रोग को दूर करने की कृपा करें। वे नदियाँ हमें हानि न पहुँचायें।४। (७)

सूक्त ५१

(ऋषि—वसिष्ठः। देवता—आदित्याः। छन्द—त्रिष्टुप्)

आदित्यानामवसा नूतनेन सक्षीमहि शर्मणा शंतमेन।
अनागास्त्वे अदितित्वे तुरास इमं यज्ञं दधत् श्रोषमाणाः ॥१
आदित्यासो अदितिर्मादयन्तां मित्रो अर्यमा वरुणो रजिष्ठाः।
अस्माकं सन्तु भुवनस्य गोपाः पिबन्तु सोममवसे नो अद्य ॥२
आदित्या विश्वे मरुतश्च विश्वे देवाश्च विश्व ऋभवश्च विश्वे।
इन्द्रो अग्निरश्विना तुष्टवाना यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः।३।१८

आदित्यों की कृपा से हम सुखकारी घर पावें। वे हमारी स्तुतियों से प्रसन्न होकर यज्ञकर्त्ता यजमानको निर्दोष और दारिद्र्य-रहित करें।१। आदित्य,अदिति,मित्र,वरुण और अर्यमा हर्षयुक्त हों। देवगणहमारी रक्षा करें और सोमपान करे।२। द्वादश आदित्य, उनचास मरुदगण तेतीस सौ तेतीस देवता तीनों ऋभु, दोनों अश्विनीकुमार, इन्द्र और अग्नि की हमने स्तुति की है। वे हमारा पालन करें।३। (१८)

सूक्त ५२

आदित्यासो अदितयः स्याम पूर्देवत्रा वसवो मर्त्यत्रा।
सनेम मित्रावरुणा सनन्तो भवेम द्यावापृथिवी भवन्तः ॥१
मित्रस्तन्नो वरुणो मामहन्त शर्म तोकाय तनयाय गोपाः।
मा वो भुजेमान्यजातमेनो मा तत् कर्म वसवो यच्चयध्वे ॥२
तुरण्यवोऽङ्गिरसो नक्षन्त रत्नं देवस्य सवितुरियानाः।
पिता च तन्नो महान् यजत्रो विश्वे देवाः समनसो जुषन्त।३।१९

आदित्यों के हम प्रिय हैं, हम अहिंसित रहें। हे वसुगण ! तुम रक्षक होओ। हे मित्रावरुण! हम उपासना द्वारा धन पावेंगे। हे द्यावा-पृथिवी ! हम शक्तिशाली बनें ।१। मित्रावरुण आदि आदित्य हमारे पुत्र-पौत्रादि को सुखजनक हों। अन्य कृत पाप का फल हमें न मिले। हे वसुगण ! जिस कर्म से तुम हमें नष्ट करते हो, हम यह कर्म न करें ।२। सविता की प्रार्थना कर अङ्गिराओं ने जिस धन को प्राप्त किया था उस धन को प्रजापति और समस्त देवगण हमें प्रदान करें ।। (१)

सूक्त ५३

(ऋषि–वसिष्ठः । देवता–द्यावापथिव्योः । छन्द–त्रिष्टुप्)

प्र द्यावा यज्ञैः पृथिवी नमोभिः सबाध ईले बृहती यजत्रे ।
ते चिद्धि पूर्वे कवयो गृणन्तः पुरो मही दधिरे देवपुत्रे ॥१
प्र पूर्वजे पितरा नव्यसीभिर्गीर्भिः कृणुध्वं सदने ऋतस्य ।
आ नो द्यावापृथिवी दैव्येन जनेन यातं महि वां वरूथम् ॥२
उतो हि वां रत्नधेयानि सन्ति पुरूणि द्यावापृथिवी सुदासे ।
अस्मे धत्तं यदसदस्कृधोयु यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ।३।२०

जिन विस्तीर्ण आकाश-पृथिवी की स्तुति करते हुए स्तोताओं ने आगे प्रतिष्ठित किया, उन्हीं की मैं स्तुति करता हूँ ।१। हे स्तोताओं ! मातृपितृभूता आकाश-पृथिवी की यज्ञ के अग्रभाग में स्थापना करो। हे द्यावा-पृथिवीं ! तुम्हारे पास हविदाता को देने को प्रचुर धन है। अतः हमको भी अक्षय धन प्रदान करो और सदा हमारा पालन करती रहो ।३। (२०)

सूक्त ५४

(ऋषि–वसिष्ठः । देवता–वास्तष्पति । छन्द—त्रिष्टुपः)

वास्तोष्पते प्रति जानीह्यस्मान् त्स्ववेशो अनमीवो भवा नः ।
यत् त्वेमहे प्रति तन्नो जुषस्व शं नो भव द्विपदे शं चतुष्पदे ॥१
वास्तोष्पते प्रतरणो न एधि गयस्फानो गोभिरश्वेभिरिन्दो ।
अजरासस्ते सख्ये स्याम पितेव पुत्रान् प्रति नो जुषस्व ।।२

वास्तोष्पते शग्मया संसदा ते सक्षीमहि रण्वया गातुमत्या ।
पाहि क्षेम उत योगे वरं नो यूयं पात स्वस्तिभि: सदा न: ।।३१

हे वास्तोष्पति ! हमें जागृत करो । हमारे धन में रोग न रहे । योचित धन हमें दो । हमारे पशु और मनुष्यों को सुख प्रदान करो । । हे वास्तोष्पति ! हमारे धन के बढ़ाने वाले होओ । तुम्हारी मित्रता को पाकर हम अजर होंगे और गवादि पशुओंसे सम्पन्न होंगे । पिता द्वारा पुत्रका पालन करनेके समान ही तुम हमारा पालन करो ।२। हे वास्तोष्पति! हम तुमसे सुखकारी एवं ऐश्वर्य-सम्पन्न स्थान पावें । तुम हमारे धन की रक्षा करो और सदा हमारा पालन करो । ।

सूक्त ५५

(ऋषि-वसिष्ठ: । देवता-वास्तोष्पति: इन्द्र: । छन्द-त्रिष्टुप् गायत्री बृहती, अनुष्टुप्)

अमीवहा वास्तोष्पते विश्वा रूपाण्याविशन् सखा सुशेव एधि न: ।।१

यदर्जुन सारमेय दत: पिशङ्ग यच्छसे ।
वीव भ्राजन्त ऋष्टय उप स्रक्वेषु बप्सतो नि षु स्वप ।।२
स्तेनं राय सारमेय तस्करं वा पुन:सर ।
स्तोतॄनिन्द्रस्य रायसि किमस्मान् दुच्छुनायसे नि षु स्वप ।।३
त्वं सूकरस्य दर्दृहि तव दर्दर्तु सूकर: ।
स्तोतॄनिन्द्रस्य रायसि किमस्मान् दुच्छुनायसे नि षु स्वप ।।४
सस्तु माता सस्तु पिता सस्तु श्वा सस्तु विश्पति: ।
ससस्तु सर्वे ज्ञातय: सस्त्वयमभितो जन: ।।५
य आस्ते यश्च चरति यश्च पश्यति नो जन: ।
तेषां सं हन्मो अक्षाणि यथेदं हर्म्यं तथा ।।६
सहस्रशृङ्गो वृषभो य: समुद्रादुदाचरत् ।
तेना सहस्येना वयं नि जनान् त्स्वापयामसि ।।७

प्रोष्ठेशया वह्येशया नारीर्यास्तल्पशीवरीः ।
स्त्रियो याः पुण्यगन्धास्ताः सर्वाः स्वापयामसि ।८।२२

हे वास्तोष्पते ! तुम रोगों के नष्ट करने वाले हो । तुम हम हितैषी मित्र होओ ।१। हे वास्तोष्पते ! जब दाँत निकलते हो तो तुम्हारे दाँत आयुध के समान सुशोभित होते हैं । इस समय तुम सुख-पूर्वक शयन करो ।२। हे सारमेय ! तुम जहाँ जाते हो वहाँ फिर पहुँ-चते हो । तुम चोर और दस्यु के पास गमन करो । इन्द्र की स्तुति करने वाले के पास क्यों जाते हो ? उनके कर्म में बाधक क्यों होते हो? तुम मुख से शयन करो । तुम शुकर आदि को विदीर्ण करो । इन्द्र के उपासक के पास जाकर बाधक क्यों बनते हो ? तुम सुखसे शयनकरो ।४। तुम्हारे माता-पिता शयन करें । तुम भी शयन करो । गृह, स्वामी बांधव और सबओर के मनुष्यभी शयन करे ।५। जो यहाँ है जो घूमता है,जो हमें देखताहै। हम उनकी आँखोको फोड़ेंगे । वे इस कोष्ठके समान निश्चल हो जायेंगे ।६। सहस्राशु सूर्य समुद्रसे ऊपर उठे हैं, उनकी सहा-यतों से हम सब मनुष्यों को निद्रा ग्रस्त करें ।७। आंगन में शयन करने वाली, वाहन पर शयन करने बाली बिछोने पर शयन करने वाली और पुष्पगन्ध वाली, ऐसे जो स्त्रियाँ हैं, उन सबका शयन करावेंगे ।८। (२२)

सूक्त ५६ [चौथा अनुवाक]

(ऋषि-वसिष्ठः । देवता-मरुतः । छन्द गायत्री, बृहती, उष्णिक् त्रिष्टुप्, पंक्तिः)

क ईं व्यक्ता नरः सनीला रुद्रस्य मर्या अधा स्वश्वाः ॥१
नकिर्ह्येषां जनूंषि वेद ते अङ्ग विद्रे मिथो जनित्रम् ॥२
अभि स्वपूभिर्मिथो वपन्त वातस्वनसः श्येना अस्पृध्रन् ॥३
एतानि धीरो निण्या चिकेत पृश्निर्यदूधो मही जभारे ॥४
सा विट् सुवीरा मरुद्भिरस्तु सनात् सहन्ती पुष्यन्ती नृम्णत् ॥५

यामं येष्ठाः शुभा शोभिष्ठाः श्रिया संमिश्ला ओजोभिरुग्राः ॥६
उग्रं व ओजः स्थिरा शवांस्यधा मरुद्भिर्गणस्तुविष्मान् ॥७
शुभ्रो वः शुष्मः क्रुध्मीं मनांसि धुनिर्मुनिरिव सर्धस्य धृष्णोः ॥८
सनेम्यस्मद् युयोत दिद्युं मा वो दुर्मतिरिह प्रणङ्नः ॥९
प्रिया वो नाम हुवे तुराणामा यत् तृपन्मरुतो वावशानाः॥१०॥२३

समान गृहवासी अश्व वाले रुद्र के यह पुत्र कौन हैं ? ।१। इनके जन्म को यह स्वयं जानते है, अन्य कोई नहीं जानता ।२। यह स्वयं विचरण करते हैं और श्येनके समान परस्पर स्पर्द्धी होते हैं ।३। शास्त्रों के ज्ञाता विज्ञ इन्हें जानते हैं । पृश्नि ने इन्हें अन्तरिक्ष में धारण किया है ।४। वह मरुद्गण की सहायता से शत्रुओं की पराभवकारिणी, धन-दात्री और पुत्रवती है ।५। यह मरुद्गण गमन करने योग्य स्थान में अधिक जाते हैं । वे अलंकृत, तेजस्वी और ओजस्वी हैं ।६। हे मरुत-गण ! तुम स्थिर बल वाले और श्रेष्ठबुद्धि वाले और उग्र तेज वाले हो ।७। हे मरुतों ! तुम बल से सुशोभित हो । तुम क्रोधयुक्त मन वाले हो । तुम्हारा वेग स्तोता के समान शब्द करने वाला है ।८। हे मरुद्-गण ! हमारे जीर्ण आयुधो को हमारे पास से दूर करो । हम तुम्हारो क्रूरता के लक्ष्य न बनें ।९। हे प्रिय कर्मा मरुतो ! हम तुम्हारा नामो-च्चारण करते हैं । तुम इससे सन्तुष्ट होते हो ।१०। (२०)

स्वायुधास इष्मिणः सुनिष्का उत स्वयं तन्वः शुम्भमानाः ॥११
शुची वो हव्या मरुतः शुचीनां शुचिं हिनोम्यध्वरं शुचिभ्यः ।
ऋतेन सत्यमृतसाप आयञ्छुचिजन्मानः शुचयः पावकाः ॥१२
अंसेष्वा मरुतः खादयो वो वक्षःसु रुक्मा उपशिश्रियाणाः ।
वि विद्युतो न वृष्टिभी रुचाना अनु स्वधामायुधैर्यच्छमानाः॥१३
प्र बुध्न्या व ईरते महांसि प्र नामानि प्रयज्यवस्तिरध्वम् ।
सहास्रियं दम्यं भागमेतं गृहमेधीयं मरुतो जुषध्वम् ॥१४
यदि स्तुतस्य मरुतो अधीथेत्था विप्रस्य वाजिनो हवीमन् ।
मक्षू रायः सुवीर्यस्य दात नू चिद् यमन्य आदभदरावा ।१५।२४

श्रेष्ठ आयुध वाले मरुदगण सुशोभित हैं वे हमें अलंकारों से सजाते हैं।११। हे मरुदगण ! तुम्हारे लिए यह हव्य है। तुम पवित्र हो, हम भी यह पवित्र यज्ञ कर रहे हैं। तुम सत्य से सत्य को प्राप्त हु हो। तुम शुद्ध जन्म वाले हो तथा अन्यों को भी शुद्ध करते हो ।१२। हे मरुदगण ! तुम्हारे स्कन्धों पर खादि नामक अलंकार और हृदय पर श्रेष्ठ रुक्म (हार) स्थित है। वर्षा से विद्युत की जैसे शोभा होती है, वैसे ही तुम जल प्रदान करते हुए शोभा पाते हो।१३। हे मरुदगण! तुम्हारा उग्र तेज गमनशील है। तुम यज्ञ के योग्य हो। जल की वृद्धि करो। तुम इस यज्ञमें दिये ये भाग को ग्रहण करो।१४। हे मरुदगण! तुम हवि सम्पन्न स्तुतियों के ज्ञाता हो हमें पुत्रयुक्त धन प्रदान करो। तुम्हारे उस धन को शत्रु नष्ट नहीं कर सकते ।१५। (२४)

अत्यासो न ये मरुतः स्वञ्चो यक्षदृशो न शुभयन्त मर्याः।
ते हर्म्येष्ठाः शिशवो न शुभ्रा वत्सासो न प्रक्रीलिनः पयोधाः॥१६
दशस्यन्तो नो मरुतो मृलन्तु वरिवस्यन्तो रोदसी सुमेके।
आरे गोहा नृहा वधो वो अस्तु सुम्नेभिरस्मे वसवो नमध्वम्॥१७
आ वो होता जोहवीति सत्तः सत्राचीं रातिं मरुतो गृणानः।
य ईवतो वृषणो अस्ति गोपाः सो अद्वयावी हवते व उक्थैः॥१८
इमे तुरं मरुतो रामयन्तीमे सहः सहस आ नमन्ति।
इमे शंसं वनुष्यतो नि पान्ति गुरु द्वेषो अररुषे दधन्ति॥१९
इमे रध्रं चिन्मरुतो जुनन्ति भृमिं चिद् यथा वसवो जुषन्त।
अप बाधध्वं वृषणस्तमांसि धत्त विश्वं तनयं तोकमस्मे।२० २५

मरुदगण अश्व के समान सदा गमनशील हैं वे मनुष्यों और शिशुओं से समान सुन्दर हैं। वे खेलने वाले बालक के समान जल को धारण करते हैं ।१६। मरुदगण अपनी महिमा से आकाश-पृथिवी को नष्ट करने वाले तुम्हारे आयुध हमसे दूर रहें। तुम हमारे सामने सुख

प्रद रूप से आओ ।१७। हे मरुतो ! होता तुम्हें बारम्बार आहूत करता है। वह यजमान रक्षक होता माया से विरक्त होकर तुम्हारी स्तुति में रत है ।१८। यज्ञकर्म वाले यजमान को मरुदगण सुखी करते हैं। यह पराक्रमी दुष्टों का पतन करते और स्तोता की रक्षा करते हैं, जो हवि नहीं देता उसका अनिष्ट करने वाले हैं। १८। धनिक और निर्धन दोनों को ही प्रेरणा देते हैं। हे मरुतो ! अन्धकारको दूरकर हमें पुत्र-पौत्रादि दो ।२०। (२४)

मा वो दात्रान्मरुतो निरराम मा पश्चाद दघ्म रथ्यो विभागे।
आ नः स्पार्हे भजतना वसव्ये यदी सुजातं वृषणो वो अस्ति ॥२१
सं यद्धनन्त मन्युभिर्जनासः शूरा यह्वीष्वोषधीषु विक्षु।
अध स्मा नो मरुतो रुद्रियासस्त्रातारो भूत पृतनास्वर्यः ॥२२
भूरि चक्र मरुतः पित्र्याण्युक्थानि या वः शस्यन्ते पुरा चित्।
मरुद्भिरुग्रः पृतनासु सालहा मरुद्भिरित् सनिता वाजमर्वा ॥२३
अस्मे वीरो मरुतः शुष्म्यस्तु जनानां यो असुरो विधर्ता।
अपो येन सुक्षितये तरेमाऽध स्वमोको अभि वः स्याम ॥२४
तन्न इन्द्रो वरुणो मित्रो अग्निराप ओषधीर्वनिनो जुषन्त।
शर्मन् त्स्याम मरुतामुपस्थे यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥५।२५

हम हमारी दान दृष्टि से न बचें। हमें धनसे विमुख मत करना। तुम अपने धन का श्रेष्ठ भाग हमें दो ।२ । हे मरुद्गण ! जब बलवान पुरुष क्रोध करके संग्राम के लिये तत्पर होते हैं जब तुम शत्रु से हमारी रक्षा करना ।२२। हे मरुद्गण ! हमारे पूर्व पुरुषों के हित में तुमने अनेक कर्म किए थे। पूर्व प्रशंसित सभी कर्म तुम्हारे द्वारा हुए हैं। तुम्हारी सहायता से ही संग्राम में शत्रुओं को हराया जाता है और तुम्हारे कृपा प्राप्त कर स्तोता अन्न का उपभोग करता है ।२३। हे मरुद्गण ! हमारा पुत्र बलवान् हों। वह शत्रुओं को हराने वाला हो उसकी रक्षा के लिए हम शत्रुओं का वध करेंगे और तुम्हारे आश्रय में रहेंगे ।२ । मित्रावरुण, इन्द्र, अग्नि, जल, औषधि, वृक्ष

यह सब हमारे स्तोत्र को पावें । मरुद्गण के आश्रयमें हम सुख मे रहें । तुम सदा हमारा पालन करो ।२५।

सूक्त ५७

(ऋषि-वसिष्ठः । देवता-मरुतः । छन्द-त्रिष्टुप्)

मध्वो वो नाम मारुत यजत्राः प्र यज्ञेषु शवसा मदन्ति ।
ये रेजयन्ति रोदसी चिदुर्वी पिन्वन्त्युत्सं यदयासुरुग्राः ॥१
निचेतारो हि मरुतो गृणन्तं प्रणेतारो यजमानस्य मन्म ।
अस्माकमद्य विदथेषु बर्हिरा वीतये सदत पिप्रियाणाः ॥२
नैतावदन्ये मरुतो यथेमे भ्राजन्ते रुक्मैरायुधैस्तनूभिः ।
आ रोदसी विश्वपिशः पिशानाः समानमञ्ज्यञ्जते शुभे कम् ॥३
ऋधक् सा वो मरुतो दिद्युदस्तु यद् व आगः पुरुषता कराम ।
मा वस्तस्यामपि भूमा यजत्रा अस्मे वो अस्तु सुमतिश्चनिष्ठा ।४
कृते चिदत्र मरुतो रणान्ताऽनवद्यासः सुचयः पावकाः ।
प्र णोऽवत सुमतिभिर्यजत्राः प्र वाजेभिस्तिरत पुष्यसे नः ॥५
उत स्ततासो मरुतो व्यन्तु विश्वेभिर्नामभिर्नरो हवींषि ।
ददात नो अमृतस्य प्रजायै जिगृत रायः सूनृता मघानि ॥६
आ स्तुतासो मरुतो विश्व ऊती अच्छा सूरीन् त्सर्वताता
जिगात ।
ये नस्त्मना शतिनो वर्धयन्ति यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ।७।२७

हे मरुद्गण ! स्तोतागण तुम्हारा स्तोत्र करते हैं । तुम आकाश पृथिवी को कम्पित करते हो और मेंघों से वृष्टि करते हुए सर्वत्र गमन करते हों ।१। मरुद्गण स्तोता की कामना करते हैं । वे यजमान की अभीष्ट सिद्धि करते हैं । हे मरुतो ! हमारे यज्ञ के बिछे हुए कुश पर प्रसन्नता पूर्वक बैठकर सोमपान करो ।२। मरुद्गण के समान दानी अन्य कोई नही है । यह अलंकार आयुध तथा अपने तेज को सुशोभित

हैं। यह आकाश पृथिवी को तेज से पूर्ण करते हैं।२। हे मरुद्गण ! तुम्हारा विनाशक आयुध हमारे पास न आवे हम मनुष्य अपराध करके भी तुम्हारे कोप-भाजन न हों। तुम्हारी अन्नदात्री सुमति हमारी ओर हो।३। मरुद्गण हमारे यज्ञ स्थान में बिहार करें। वे पवित्र करने वाले और निन्दारहित हैं। मरुद्गण हमारी स्तुतियों से प्रसन्न होकर पालक बनो और पोषण के लिये हमारी वृद्धि करो।५। मरुद्गण हमारे द्वारा प्रस्तुत हव्य का सेवन करें वे समस्त जलों से सम्पन्न हैं। हे मरुद्गण ! हमारी सन्तति के लिए जल प्रदान करो और हविदाता को श्रेष्ठ धन प्रदान करो।६। स्तुतियों से प्रसन्न हुए मरुद्गण सब रक्षाओं सहित स्तोता के अभिमुख हों। यह स्तोता को सैकड़ों पुत्रादि देते हैं। तुम हमारा सदा पालन करो।७।   (२७)

सूक्त ५८

प्र साकमुक्षे अर्चता गणाय यो दैव्यस्य धाम्नस्तुविष्मान् ।
उत क्षोदन्ति रोदसी महित्वा नक्षन्ते नाकं निर्ऋतेरवशात् ॥१
जनूश्चिद् वो मरुतस्त्वेष्येण भीमासस्तुविमन्यवोऽयासः ।
प्र ये महोभिरोजसोत सन्ति विश्वो वो यामन् भयते स्वर्दृक्॥२
वृहद् वयो मघवद्भ्यो दधात जुजोषन्निन्मरुतः सुष्टुतिं नः ।
गतो नाध्वा वि तिराति जन्तुं प्र णः स्पार्हाभिरूतिभिस्तिरेत ॥३
युष्मोतो विप्रो मरुतः शतस्वी युष्मोतो अर्वा सहुरिः सहस्री ।
युष्मोतः सम्राळुत हन्ति वृत्रं प्र तद् वो अस्तु धूतयो देष्णम् ॥४
तां आ रुद्रस्य मीलहुषो विवासे कुविन्नंसन्ते मरुतः पुनर्नः ।
यत् सस्वर्ता जिहीळिरे यदाविरव तदेन ईमहे तुराणाम् ॥५
प्र सा वाचि सुष्टुतिर्मघोनामिदं सूक्तं मरुतो जुषन्त ।
आतच्चिद्द्वेषो वृषणो युयोत यूयं पाय स्वस्तिभिः सदा नः।६।२८

हे स्तोताओं ! मरुद्गण का पुजन करो। यह सब मेधावी हैं। यह अपनी महिमा से आकाश पृथिवी को व्याप्त करते हैं।१। हे मरुद्-

गण ! तुम रुद्र द्वारा उत्पन्न हुए हो । यह मरुद्गण प्रभावशाली है । हे मरुतो ! सूर्य दर्शक सब जगत तुम्हारे गमन वेग में भीत होता है ।१। तुम हविदाता को अन्न प्रदान करो । हमारी स्तुतियों से प्रवृद्ध होओ । मरुद्गण के मार्गका अवरोध कोई नहीं करता । वे हमें इच्छित ऐश्वर्य दें ।३। हे मरुद्गण ! तुम्हारी कृपा से स्तोता सहस्रों धन से युक्त होता है । वह शत्रुओंको वशमें करने वाला और ऐश्वर्यवान होता है । तुम्हारे द्वारा प्रदत्त वृद्धि धन को प्राप्त हो ।४। मैं मरुदगण का उपासक हूँ । वे हमारे सामने आवे । जिस अपराध पर वे क्रोध करते हैं, उसे हम स्तुति द्वारा दूर करेंगे ।५। इस सूक्त में वैभव युक्त मरुतों की सुन्दर स्तुति की गई है । वे ऐसे सूक्त को ग्रहण करे । हे मरुद्गण! शत्रुओं को दूर ही पृथक करो । तुम हमारा पालन करो ।६। (२८)

सूक्त ५९

(ऋषि-वसिष्ठः । देवता-मरुतः रुद्रः । छन्द-बृहती पंक्तिः, अनुष्टुप, त्रिष्टुप् गायत्री)

यं त्रायध्व इदमिदं देवासो यं च नयथ ।
तस्मा अग्ने वरुण मित्रार्यमन् मरुतः शर्म यच्छतः ।।१
युष्माकं देवा अवसाहनि प्रिय ईजानस्तरति द्विषः ।
प्र स क्षयं तिरते वि महीरिषो यो वो वराय दाशति ।।२
नहि वश्चरमं चन वसिष्ठः परिमंसते ।
अस्माकमद्य मरुतः सुते सचा विश्वे पिबत कामिनः ।।३
नहि व ऊतिः पृतनासु मर्धति यस्मा अराध्वं नरः ।
अभि व आवर्त् सुमतिर्नवीयसी तूयं यात पिपीषवः ।।४
ओं षु घृष्विराधसो यातनान्धांसि पीतये ।
इमा वो हव्या मरुतो ररे हि कं मो ष्व न्यत्र गन्तन ।।५
आ च नो बर्हिः सदताविता च नः स्पार्हाणि दातवे वसु ।
अस्रेधन्तो मरुतः सोम्ये मधौ स्वाहेह मादयाध्वै ।६।२९

हे देवताओ ! स्तोता को भय मुक्त करो । हे अग्नि, वरुण, मित्र, अर्यमा और मरुदगण ! तुम जिस यजमान को श्रेष्ठ मार्ग पर चलाओ, उसे सुखी करो ।१। हे देवगण ! तुम्हारी कृपा से जो यज्ञ करता है, शत्रु को मारता है, तुम्हें हव्य देता है, वह मनुष्य अपने आवास की वृद्धि करता है ।२। हे मरुदगण ! सोम की अभिलाषा करके तुम हमारे यज्ञ से आओ और सोम पान करो ।३। हे मरुतो ! तुम इच्छित फल देते हो । तुम्हारे रक्षा साधन हमारी रक्षा करते हैं । तुम्हारी अभिनव कृपा हमें प्राप्त हो । तुम शीघ्र यहाँ आओ ।४। हे मरुदगण ! तुम्हारा धन सुसंगत है । तुम हव्य सेवनार्थ आगमन करो में तुम्हें हव्य देता हूँ, तुम और कहीं मत आओ ।५। हे मरुदगण ! हमारे कुश पर बैठो । तुम धन-दान के लिए यहाँ आओ और हर्षकारी सोम पान करो ।६।

सस्वश्चिद्धि तन्वः शुम्भमाना आ हंसासो नीलपृष्ठा अपप्तन् ।
विश्वं शर्धो अभितो मा नि षेद नरो न रण्वाः सवने मदन्तः ॥७
यो नो मरुतो अभि दुर्हृणायुस्तिरश्चित्तानि वसवो जिघांसति ।
द्रुहः पाशान् प्रति स मुचीष्ट तपिष्ठेन हन्तमा हन्तना तम् ॥८
सांतपना इदं हविर्मरुतस्तज्जुजुष्टन । युष्माकोती रिशादसः ॥९
गृहमेधास आ गत मरुतो माप भूतन । युष्माकोती सुदानवः॥१०
इहेह वः स्वतवसः कवयः सूर्यत्वचः । यज्ञं मरुत आ वृणे ॥११
त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम् ।
उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय मामृतात् ।१२।३०

हे मरुदगण ! अपने शरीर को अलंकृत कर आगमन करो । मरुद-गण इस यज्ञ में विराजमान हों ।७। हे मरुदगण ! जो हमारे मन को नष्ट करना चाहे अथवा जो हमें है वरुण-पाश में बाँधने का यत्न करे एसे पापियों को तुम अपने शस्त्र से मार डालो ।८। हे शत्रु को संताप देने वालो ! यह तुम्हारा हव्य है । तुम शत्रुओं का भक्षण करने वाले हो । तुम हमारे हव्य को ग्रहण करो ।९। हे मरुदगण तुम सुन्दर

दान वाले हो। तुम अपने रक्षा साधनों सहित आओ।१०। हे मरुद्-
गण ! तुम अपनी महिमा से बढ़ने वाले हो। मैं यज्ञ का आयोजन
करता हूँ।११। हम सुरभित, पुष्टिवर्द्धक, त्र्यम्बक का पूजन करते हैं।
रुद्र ! हमें मृत्यु के पाश से छुड़ाओ और अमृत से दूर मत रखो
।१२।

सूक्त ६०

यदद्य सूर्य ब्रवोऽनागा उद्यन् मित्राय वरुणाय सत्यम् ।
वयं देवत्रादिते स्याम तव प्रियासो अर्यमन् गृणन्तः ॥१
एष स्य मित्रावरुणा नृचक्षा उभे उदेति सूर्यो अभि ज्मन् ।
विश्वस्य स्थातुर्जगतश्च गोपा ऋजु मर्तेषु वृजिना च पश्यन् ॥२
अयुक्त सप्त हरितः सधस्थाद्या ईं वहन्ति सूर्यं घृताचीः ।
धामानि मित्रावरुणा युवाकुः सं यो यूथेव जनिमानि चष्टे ॥३
उद् वां पृक्षासो मधुमन्तो अस्थुरा सूर्यो अरुहच्छुक्रमर्णः ।
यस्मा आदित्या अध्वनो रदन्ति मित्रो अर्यमा वरुणः सजोषाः॥४
इमे चेतारो अनृतस्य भूरेर्मित्रो अर्यमा वरुणो हि सन्ति ।
इम ऋतस्य वावृधुर्दुरोण शग्मासः पुत्रा अदितेरदब्धाः ॥५
इमे मित्रो वरुणो दूलभासोऽचेतसं चिच्चितयन्ति दक्षैः ।
अपि क्रतुं सुचेतसं वतन्तस्तिरश्चिदंहः सुपथा नयन्ति ।६।१

हे सूर्य ! अनुष्ठान के अवसर पर उदित होकर पाप से हमें
छुड़ाओ। हे अदिति ! देवताओं में मित्रावरुण के हम प्रिय हों। हे
अर्यमा ! हम तुम्हारी स्तुति द्वारा तुम्हें प्रसन्न करें ।१। हे मित्रा-
वरुण ! आकाश पृथिवी को देखते हुए सूर्य उदय को प्राप्त होकर सब
प्राणियों का पोषण करते हैं वे मनुष्यों के पाप पुण्य को देखते हैं
।२। हे मित्रावरुण ? सूर्य ने अपने सात अश्वों को अयोजित किया। वे
सूर्य को वहन करते हुए जल प्रदान करते हैं। सूर्य संसार के सब

प्राणियों को देखते हुए तुम दोनों को भजते हैं।३। हे मित्रावरुण ! अन्न और पुरोडाश आदि तुम्हारे निमित्त हैं। सूर्य अन्तरिक्ष पर चढ़ते हैं। मित्र, अर्यमा वरुण आदि देवता सूर्य के लिये मार्ग देते हैं ।४। मित्रा-वरुण और अर्यमा पाप नाशक हैं। यह अदितिके पुत्र मंगल करने वाले हैं। यज्ञ स्थान में वे वृद्धि को प्राप्त होते हैं।५। मित्र, वरुध और आदित्य किसी के वश में नहीं पड़ते। यह अज्ञानीको ज्ञान देते हैं। यह दुष्कर्मो को नष्ट कर कर्मवान पुरुष को सन्मार्ग पर चलाते हैं।.।

(२)

इमे दिवो अनिमिषा पृथिव्याश्चिकित्वांसो अचेतसं नयन्ति।
प्रमाजे चिन्नद्यो गाधमस्ति पारं नो अस्य विष्पतस्य पर्षन् ॥७
यद् गोपावददितिः शर्म भद्रं मित्रो यच्छन्ति वरुणः सुदासे।
तस्मिन्ना तोक तनयं दधाना मा कर्म देवहेलनं तुरासः ॥८
अव वेदिं होत्राभिर्यजेत रिपः काश्चिद् वरुणध्रुतः सः।
परि द्वेषोभिरर्यमा वृणक्तूरुं सुदासे वृषणा उ लोकम् ॥९
सस्वश्चिद्धि समृतिस्त्वेष्येषामपीच्येन सहसा सहन्ते।
युष्मद् भिया वृषणो रेजमाना दक्षस्य चिन्महिना मृलता नः ॥१०
यो ब्रह्मणे सुमतिमायजाते वाजस्य सातौ परमस्य रायः।
सीक्षन्त मन्युं मघवानो अर्य उरु क्षयाय चक्रिरे सुधातु ॥११
इयं देव पुरोहितिर्युवभ्यां यज्ञेषु मित्रावरुणावकारि।
विश्वानि दुर्गा पिपृतं तिरो नो यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः

यह आकाश और पृथिवी के सब ज्ञान-रहित को कर्म में लगाते हैं। इनके बल से नदी के नीचे के भागमें भी भूतल होता है। यह हमें कर्मों पर लगावें।७। अर्यमा, मित्र और वरुण जो सुख हविदाता को प्रदान करते हैं,वही सुख प्राप्त करते हुए हम ऐसा कार्य न करें जिससे देवगण क्रोध करे।७। हमारा जों बैरी देवताओं की स्तुति नहीं करता उसे वरुण नष्ट कर दें। अर्यमा हमें राक्षसों से बचावें। मित्रावरुण हमें श्रेष्ट स्थान दें ।६। यह मित्रादि देवता श्रेष्ट सङ्गति वाले हैं। यह

वैरियों को हराते हैं। हे मित्रादि देवताओं ! विरोधी तुम्हारे भय से कम्पित होते हैं। तुम हमें अपनी कृपा से सुखी करो ।१०। जो यजमान श्रेष्ठदान के लिए तुम्हारी स्तुति करता है, उसके स्तोत्र से प्रसन्न हुए उसे सुन्दर घर देते हैं ।११। मित्रावरुण ! तुम्हारी स्तुति की गई, तुम हमारे दुःख दूर करो। तुम हमारा पालन करो ।१२। (२)

सूक्त ६१

(ऋषि-वसिष्ठ: । देवता-मित्रावरुणौ: । छन्द-पंक्तिः, त्रिष्टुप्)

उद् वां चक्षुर्वरुण सुप्रतीकं देवयोरेति सूर्यस्ततन्वान् ।
अभि यो विश्वा भुवनानि चष्टे स मन्युं मर्त्येष्वा चिकेत ॥१
प्र वां स मित्रावरुणावृतावा विप्रो मन्मानि दीर्घश्रुदियर्ति ।
यस्य ब्रह्माणि सुक्रतू अवाथ आ यत् क्रत्वा न शरदः पृणेथे ॥२
प्रोरोर्मित्रावरुणा पृथिव्याः प्र दिव ऋष्वाद् बृहतः सुदानू ।
स्पशो दधाथे ओषधीषु विक्ष्वृधग्यतो अनिमिषं रक्षमाणा ॥३
शंसा मित्रस्य वरुणस्य धाम शुष्मो रोदसी बद्बधे महित्वा ।
अयन् मासा अयज्वनामवीराः प्र यज्ञमन्मा वृजनं तिराते ॥४
अमूरा विश्वा वृषणाविमा वां न यासु चित्रं ददृशे न यक्षम् ।
द्रुहः सचन्ते अनृता जनानां न वां निण्यान्यचिते अभूवन् ॥५
समु वां यज्ञं महयं नमोभिर्हुवे वां मित्रावरुणा सबाधः ।
प्र वां मन्मान्यृचसे नवानि कृतानि ब्रह्म जुजुषन्निमानि ॥६
इयं देव पुरोहितिर्युवभ्यां यज्ञेषु मित्रावरुणावकारि ।
विश्वानि दुर्गा पिपृतं तिरो नो यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ।७।३

हे मित्रावरुण ! तुम तेजस्वी हो। तुम्हारे नेत्र-रूप सूर्य तेज की वृद्धि करते हुए अन्तरिक्ष में चढ़ते और सब प्राणियों को देखते हैं। वे मनुष्यों में प्रवृत्त स्तोत्र के ज्ञाता हैं ।१। हे मित्रावरुण ! यज्ञकर्त्ता और वसिष्ठ तुम्हारे स्तोत्र को करते हैं। तुम श्रेष्ठकर्मा हो, तुमने सदा वसिष्ठ

के कर्मों को सुफल किया है।२। हे मित्रावरुण ! तुमने पृथिवी और आकाश की प्रदक्षिणा की है। तुम ओषधियों और प्राणियों के लिए रूप धारण करते हो। श्रेष्ठ मार्ग पर चलने वालों के तुम रक्षक हो।२। हे ऋषि ! मित्रावरुण के तेज की स्तुति करो। इन्होंने-आकाश-पृथिवी को अपनी महिमा से पृथक् पृथक् किया है। अयाज्ञिक-पुत्रहीन हों और यज्ञ वाले व्यक्ति पुरुषादिसे सम्पन्न हों।४। हे मित्रावरुण ! तुम्हारी स्तुतिमें विशेषता कुछभी नहीं है। विरोधी व्यक्ति व्यर्थ स्तुतियाँ ग्रहण करते हैं। तुम्हारी स्तुति अज्ञान प्राप्त कराने वाली न हो।५। हे मित्रावरुण ! मैं इस यज्ञ में नमस्कार सहित तुम्हारी पूजा करता हूँ। मैं तुम्हारा आह्वान करता हूँ। तुम्हारे लिए नवीन स्तोत्र रचेजातेहैं। मेरे द्वारा एकत्रित स्तोत्र तुम्हें आनन्दित करें।६। हे मित्रावरुण ! इस यज्ञमें तुम्हारी स्तुति की गई है। तुम हमें विपत्तियों से पार करो और सदा पालन करो।७। (३)

सूक्त ६२

(ऋषि-वसिष्ठः। देवता-सूर्यः, मित्रावरुणौ। छन्द-त्रिष्टुप्)

उत् सूर्यो बृहदर्चींष्यश्रेत् पुरु विश्वा जनिम मानुषाणाम्।
समो दिवा ददृशे रोचमानः क्रत्वा कृतः सुकृतः कर्तृभिर्भूत् ।।१
स सूर्य प्रति पुरो न उद् गा एभिः स्तोमेभिरेतशेभिरेवैः।
प्र नो मित्राय वरुणाय वोचोऽनागसो अर्यम्णे अग्नये च ।।२
वि नः सहस्रं शुरुधो रदन्त्वृतावानो वरुणो मित्रो अग्निः।
यच्छन्तु चन्द्रा उपमं नो अर्कमा नः कामं पूपुरन्तु स्तवानाः ।।३
द्यावाभूमी अदिते त्रासीथां नो ये वां जज्ञुः सुजनिमान ऋष्वे।
मा हेले भूम वरुणस्य वायोर्मा मित्रस्य प्रियतमस्य नृणाम् ।।४
प्र बाहवा सिसृतं जीवसे न आ नो गव्यूतिमुक्षतं घृतेन।
आ नो जने श्रवयतं युवाना श्रुतं मे मित्रावरुणा हवेमा ।।५
नू मित्रो वरुणो अर्यमा नस्त्मने तोकाय वरिवो दधन्तु।
सुगा नो विश्वा सुपथानि सन्तु यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ६।४

सूर्य अत्यन्त तेजस्वी हों। वे मनुष्योंके प्रिय हों। वे दिन में अत्यन्त प्रकाश वाले होते हैं। वे सबके उत्पत्ति कर्त्ता और प्रजापति के तेज से तेजस्वी हैं।१। हे सूर्य ! तुम गमनशील अश्वों द्वारा स्तोताओं के सम्मुख होओ। मित्र, वरुण, अर्यमा, अग्नि हमें सहस्रों धन प्रदान करें। वे प्रसन्नता देने वालेहों। ये हमें वरणीय धन दें। हमारी स्तुतियों से प्रसंन होकर वे हमारी कामना सिद्ध करें।३। हे आकाश पृथिवी और अदिति! तुम हमारी रक्षा करो। हम श्रेष्ठ जन्म वाले हैं हम वरुण, वायु और मित्र के कोपभाजन न हों।४। हे मित्रावरुण ! अपनी भुजायें फैलाओ। हमारे भुभग को जल से सींचो। तुम हमें यशस्वी करो। आह्वान को सुनो।५। हे मित्र, वरुण और अर्यमा तुम हमारे पुत्रको धनवान् करो। सब मार्ग सरल हों। तुम हमारा सदा पालन करो।६।

सूक्त ६३

(ऋषि-वसिष्ठः। देवता-सूर्यः, मित्रावरुणौः। छन्द-त्रिष्टुप्)

उद्वेति सुभगो विश्वचक्षाः साधारणः सूर्यो मानुषाणाम्।
चक्षुर्मित्रस्य वरुणस्य देवश्चर्मेव यः समविव्यक् तमांसि ॥१
उद्वेति प्रसवीता जनानां महान् केतुरर्णवः सूर्यस्य।
समानं चक्रं पर्याविवृत्सन् यदेतशो वहति धूर्षु युक्तः ॥२
विभ्राजमान उषसामुपस्थाद् रेभैरुदेत्यनुमद्यमानः।
एष मे देवः सविता चच्छन्द यः समानं न प्रमिनाति धाम ॥३
दिवो रुक्म उरुचक्षा उदेति दूरेअर्थस्तरणिर्भ्राजमानः।
नूनं जनाः सूर्येण प्रसूता अयन्नर्थानि कृणवन्नपांसि ॥४
यत्रा चक्रुरमृता गातुमस्मै श्येनो न दीयन्नन्वेति पाथः।
प्रति वां सूर उदिते विधेम नमोभिर्मित्रावरुणोत हव्यैः ॥५
नू मित्रो वरुणो अर्यमा नस्त्मने तोकाय वरिवो दधन्तु।
सुगा नो विश्वा सुपथानि सन्तु यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः।६।५

मित्रावरुण के नेत्र रूप सूर्य उदि हो रहे हैं। वह अन्धकार

को ढक देते हैं ।१। यह सूर्य मनुष्य के उत्पन्नकर्त्ता, सबके प्रेरक और बलदाता हैं । हरे रङ्ग के अश्व इनका वहन करते हैं ।१। स्तोताओं की स्तुतियों को सुनते हुए यह सूर्य उषाओं के मध्य उदित होते हैं । यह इच्छित पदार्थ के देने वाले हैं । यह अपने तेज को न्यून नहीं करते ।३। वह तेजस्वी सूर्य अन्तरिक्ष में उदय को प्राप्त होते हैं । प्राणी इन्हें सूर्य से प्रकट होकर कर्म में लगते हैं ।४। देवताओं ने सूर्य का गमन मार्ग बनाया । यह मार्ग अन्तरिक्षके साथ जाता है । हे मित्रावरुण ! सूर्योदय कालमें, नमस्कार युक्त हवि देकर हम तुम्हारा यज्ञ करेंगे ।५। मित्राव-रुण और अर्यमा हमारे पुत्र को क्रोध न प्रदान करें ।६।हमारे मार्ग सरल हों, तुम सदा हमारा पालन करते रहो ।७। (५)

सूक्त ६४

(ऋषि-वसिष्ठः । देवता-मित्रावरुणौ । छन्द-त्रिष्टुप्)

दिवि क्षयन्ता रजसः पृथिव्यां प्र वां घृतस्यं निर्णिजो ददीरन् ।
हव्यं नो मित्रो अर्यमा सुजातो राजा सुक्षत्रो वरूणो जुषन्त ॥१
आ राजाना मह ऋतस्य गोपा सिन्धुपती क्षत्रिया यातमर्वाक् ।
इलां नो मित्रावरुणोत वृष्टिमव दिव इन्वतं जीरदानू । २
मित्रस्तन्नो वरुणो देवो अर्यः प्र साधिष्ठेभिः पथिभिर्नयन्तु ।
ब्रवद् यथा न आदरिः सुदास इषा मदेम सह देवगोपाः ॥३
यो वां गर्तं मनसा तक्षदेतमूर्ध्वां धीतिं कृणवद् धारयच्च ।
उक्षेथां मित्रावरूणा घृतेन ता राजाना सुक्षितीस्तर्पयेथाम् ॥४
एष स्तोमो वरूण मित्र तुभ्यं सोमः शुक्रो न वायवेऽयामि ।
अविष्टं धियो जिगृतं पुरंधीर्यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ।५।६

हे मित्रावरुण ! तुम पार्थिक और दिव्य जलों के स्वामी हो, मेघ तुम्हारी प्रेरणा से ही जल को रचाता है । मित्र अर्यमा और वरुण हमारे हव्य को ग्रहण करें ।१। तुम यज्ञ की रक्षा करने वाले, नदी के स्वामी, वीरकर्मा हो । हे वेगवान् मित्रावरुण ! तुम अन्तरिक्षसे अन्नरूप वृष्टि का प्रेरण करो ।२। मित्रा वरुण, अर्यमा हमें श्रेष्ठ मार्ग पर

गमन करावें । अर्यमा, दाताका उपदेश दे । तुम्हारी रक्षा में रहकर हम पुत्रादि के साथ आनन्द उपभोग करें ।३। हे मित्रावरुण ! जिसने मानसिक रथ की तुम्हारे लिए रचना की, जो श्रेष्ठकर्म वाला तुम्हारे यज्ञ का धारक है, तुम उसे जल से सींचो और श्रेष्ठ आवाज देकर सन्तुष्ट करो ।४। हे मित्रावरुण ! तुम्हारे और वायु के लिए यह सोम अभिषुत हुआ है । तुम हमारे कर्ममें आकर हमारे स्तोत्रको सुनो और सदा पालन करो ।५। (६)

सूक्त ६५

(ऋषि-वसिष्ठः । देवता-मित्रावरुणौ । छन्द-त्रिष्टुप्)

प्रति वां सूर उदिते सूक्तैर्मित्रं हुवे वरुणं पूतदक्षम् ।
ययोरसुर्यमक्षितं ज्येष्ठं विश्वस्य यामन्नाचिता जिगत्नु ॥१
ता हि देवानामसुरा तावर्या ता नः क्षितीः करतमूर्जयन्तीः ।
अश्याम मित्रावरुणा वयं वां द्यावा च यत्र पीपयन्नहा च ॥२
ता भूरिपाशावनृतस्य सेतू दुरत्येतू रिपवे मर्त्याय ।
ऋतस्य मित्रावरुणा पथा वमपो न नावा दुरिता तरेम । ३
आ नो मित्रावरुणा हव्यजुष्टिं घृतैर्गव्यूतिमुक्षतमिलाभिः ।
प्रति वामत्र वरमा जनाय पृणीतमुद्नो दिव्यस्य चारोः ॥४
एष स्तोमो वरुण मित्र तुभ्यं सोमः शुक्रो न वायवेऽयामि ।
अविष्टं धियो जिगृतं पुरंधीर्यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ।५।७

हे मित्रावरुण ! सूर्योदय काल में तुम्हें आहूत करता हूँ । तुम महान् बल वाले रणभूमि में सदा जीतते हो ।१। वे दोनों अत्यन्त बली है । वे हमारी प्रजा-वृद्धि करें । हे मित्रावरुण ! हम तुम दोनों की सेवा करेंगे । आकाश-पृथिवी तुम्हारी महिमा से हमें पूर्ण करेंगे ।२। मित्रावरुण के पास सुदृढ़ पाश है । वे यज्ञ रहित मनुष्य को बन्धन में डालते हैं । शत्रुओं के लिए वे विकराल कर्म वाले हैं । हे मित्रावरुण ! जैसे नौका जल से पार करती है वैसे ही हम तुम्हारे यज्ञ रूप नौका द्वारा पार होंगे ।३। मित्रावरुण हमारे हव्य-भक्षणार्थ आगमन करें । वे

हमारी गोचर भूमि को जलसे सींचे। मित्रावरुण ! हमारे सिवाय अन्य कौन तुम्हें श्रेष्ठ हव्य प्रदान करेगा ? तुम श्रेष्ठ जलकी वृष्टि करो।४। हे मित्रावरुण तुम्हारे और वायु के लिए सोमाभिषव किया है। तुम हमारे यज्ञ में आकर स्तोत्र सुनो और सदा हमारा पालन करो।५।
(७)

सूक्त ६६

(ऋषि-वसिष्ठः। देवता-मित्रावरुण, आदित्यः सूर्यः।
छन्द-गायत्री, बृहति, उष्णिक्)

प्र मित्रयोर्वरूणयोः स्तोमो न एतु शूष्यः।
नमस्वान् तुविजातयोः ॥१
या धारयन्त देवाः सुदक्षा दक्षपितरा। असुर्याय प्रमहसा।।२
ता नः स्तिपा तनूपा वरुण जरितॄणाम्। मित्र साधयत धियः।३
यदद्य सूर उदिते ऽनागा मित्रो अर्यमा। सुवाति सविता भगः।।४
सुप्रावीरस्तु स क्षयः प्र नु यामन् त्सुदानवः।
ये नो अंहोऽतिपिप्रति।५।८

मित्रावरुण बारम्बार प्रकट होते हैं। उनकी स्तुति उन्हें प्राप्त है ।१। मित्रावरुण श्रेष्ठबल से और तेजसे युक्त हैं। इन्हें देवताओं ने बल के निमित्त धारण किया।२। मित्रावरुण घर और शरीर के रक्षक हैं। तुम दोनों स्तोता के कर्म को बलयुक्त करो।३। सूर्योदय काल में मित्र, भग अर्यमा सविता देव हमारे लिए धन भेजें।४। हे मित्रावरुण ! तुम दानी हों, हमारे पाप नष्ट करो तुम आओ तो हमारे घर की रक्षा हो ।५।
(८)

उत स्वराजो अदितिरदब्धस्य व्रतस्य ये। महो राजान ईशते।।६
प्रति वां सूर उदिते मित्रं गृणीषे वरुणम्। अर्यमणं रिशादसम्।।७
राया हिरण्यया मतिरियमवृकाय शवसे। इयं विप्रा मेधसातये।।८
ते स्याम देव वरुण ते मित्र सूरिभिः सह। इषुं स्वश्च धीमहि।।९
बहवः सूरचक्षसो ऽग्निजिह्वा ऋतावृधः।
त्रीणि ते येमुर्विदथानि धीतिभिर्विश्वानि परिभूतिभिः।१०।९

मित्रादि देवता कर्मों के पालक हैं। वे श्रेष्ठधनों के स्वामी हैं।६। सूर्योदयकाल में, मैं मित्रावरुण और अर्यमा की स्तुति करूँगा।७। यह स्तुति हमें हिंसित होने से बचाने वाला बल प्राप्त करावे।८। हे मित्रा-वरुण ! हम ऋत्विजों के साथ तुम्हारी स्तुति करेंगे और अन्न जल प वेंगे।६। यह देवता सूर्य के समान तेजस्वी और यश के बढ़ाने वाले हैं वे कर्मों के द्वारा व्याप्त करने और स्थानों के दाता है।१०। (६)

वि ये दधुः शरदं मासमादहर्यज्ञमक्तुं चाष्ट चम् ।
अनाप्यं वरुणो मित्रो अर्यमा क्षत्रं राजान आशत ॥११
तद् वो अद्य मनामहे सूक्तैः सूर उदिते ।
यदोहते वरुणो मित्रो अर्यमा यूयमृतस्य रथ्यः ॥१२
ऋतावान ऋतजाता ऋतावृधो घोरासो अनृताद्विषः ।
तेषां वः सुम्ने सुच्छर्दिष्टमे नरः स्याम ये च सूरयः ॥१३
उदु त्यद् दर्शतं वपुर्दिव एति प्रतिह्वरे ।
यदीमाशुर्वहति देव एतशो विश्वस्मै चक्षसे अरम् ॥१४
शीर्ष्णः शीर्ष्णो जगतस्तस्थुषस्पतिं समया विश्वमा रजः ।
सप्त स्वसारः सुविताय सूर्यं वहन्ति हरितो रथे ।१५।१०

वर्ष, मास, दिवस, रात्रि, यज्ञ और मन्त्र को जिन्होंने बनाया, वे मित्र, वरुण और अर्यमा श्रेष्ठ बल प्राप्त कर चुके हैं।११। आज सूर्योदय काल में हम तुमसे धन मागेंगे। उस धन को मित्र, वरुण, अर्यमा धारण करते हैं।१२। तुम यज्ञादि श्रेष्ठ कर्मों के लिए उत्पन्न हुए हो यज्ञ विमुख मनुष्यों से बैर करते हो। तुम्हारे कल्याणकारी धन को अन्य ऋत्विज् और हम भी प्राप्त करेंगे।१३। अन्तरिक्ष के निकट यह मंगलकारी मण्डल प्रकट होता है। सबके दर्शन के लिये हरित अश्व उसे धारण करते हैं।१४। सबके शीर्ष रूप सबके स्वामी, रथी सूर्यको उनके साथ घोड़े निश्च कल्याण के लिए वहन करते हैं।१५। (१०)

तच्चक्षुर्देवहितं शुक्रमुच्चरत् । पश्येम शरदः शतं जीवेम शरदः शतम् ॥१६

काव्येभिरदाभ्या ऽऽयातं वरुण द्युमत् । मित्रश्च सोमपीतये॥१७
दिवो धामभिर्वरूण मित्रश्चा यातमद्रुहा । पिवतं सोम ग्रातुजी।१८
आ यातं मित्रावरुणा जूषाणावाहुतिं नरा । पातं सोममृतावृधा
।१६।११

वह प्रकाशयुक्त श्रेष्ठ सूर्यमंडल प्रगट होता हैं । हम उसके सौ वर्ष तक दर्शन करते हैं ।१६। हे वरुण ! तुम और मित्र तेजस्वी हो । तुम हमारे स्तोता के पास आकर सोमपान करो ।१७। हे मित्रावरुण ! तुम द्वेष हीन हो । तुम आकाश से आकर शत्रुओं का वध करने के लिये सोमपान करो।१८। मित्रावरुण यज्ञका नेतृत्व करने वाले हैं । तुम आहुतियों की ओर आओ और सोम-पान करो ।१६। (११)

सूक्त ६७

(ऋषि-वशिष्ठः । देवता-अश्विनौ । छन्द-त्रिष्टुप)

प्रति वां रथं नृपती जरध्यै हविष्मता मनसा यज्ञियेन ।
यो वां दूतो न धिष्ण्यावजीगरच्छा सूनुर्न पितरा विवक्मि ॥१
अशोच्यग्निः समिधानो अस्मे उपो अदृश्रन् तमसश्चिदन्ताः ।
अचेदि केतुरूषसः पुरस्ताच्छ्रिये दिवो दुहितुर्जायमानः ॥२
अभि वां नूनमश्विना सुहोता स्तोमैः सिषक्ति नासत्या
विवक्वान् ।
पूर्वीभिर्यातं पथ्याभिरर्वाक् स्वर्विदा वसुमता रथेन ॥३
अवोर्वां नूनमश्विना युवाकुर्हुवे यद् वां सुते माध्वी वसूयुः ।
आ वां वहन्तु स्थविरासो अश्वाः पिवाथो अस्मे सुषुता मधूनि॥४
प्राचीमु देवाश्विना धियं से ऽमृध्रां सातये कृतं वसुयुम् ।
विश्वा अविष्टं वाज आ पुरंधीस्ता नः शक्तं शचीपती शचीभिः
।५।१२

हे अश्विद्वय ! हम तुम्हारे रथ की स्तुति करते हैं । पुत्र जैसे पिता को जगाता है, वैसे ही रथ सबको चैतन्य करता है । मैं उसी रथ

का आह्वा करताहूँ ।१। अग्नि हमारे लिये दीप्ति धारण करते हैं । तब अँधेरे के सब धू-भाग दिखाई देते हैं । सूर्य उषाकी पूर्व दिशामें उत्पन्न होकर उठते हैं ।२। हे अश्विद्वय ! हम तुम्हारी सेवा करते हैं । तुम पूर्व में रथारूढ़ होकर हमारे अभिमुख होओ ।३। हे अश्विद्वय ! मैं धन की कामना वाला स्तोता सोमाभिषव होने पर तुम्हारी स्तुति करता हूँ । तुम्हारे अश्व तुम्हें यहाँ लावें । तुम हमारे सोम का पान करो ।४। हे अश्विद्वय ! धन को अभिलाषा वाली हमारी बुद्धि को तुम तीक्षण करो रणभूमि में भी हमारी बुद्धि की रक्षा करो । तुम कर्म द्वारा हमें न दो ।५।   (१२)

अविष्टं धीष्वश्विना न आसु प्रजावद् रेतो अह्वयं नो अस्तु ।
आ वां तोके तनये तूतुजानाः सुरत्नासो देववीतिं गमेम ।।६
एष स्य वां पूर्वगत्वेव सख्ये निधिर्हितो माध्वी रातो अस्मे ।
अहेलता मनसा यातमर्वागश्नतो हव्यं मानुषीषु विक्षु ।।७
एकस्मिन् योगे भुरणा समाने परि वां सप्त स्रवतो रथो गात् ।
न वायन्ति सुभ्वो देवयुक्ता ये वां धूर्षु तरणयो वहन्ति ।।८
असश्चता मघवद्भ्यो हि भूत ये राया मघदेयं जुनन्ति ।
प्र ये बन्धुं सूनृताभिस्तिरन्ते गव्या पृञ्चन्तो अश्व्या मघानि ।।९
नू मे हवमा शृणुतं युवाना यासिष्टं वर्तिरश्विनाविरावत् ।
धत्तं रत्नानि जरतं च सूरीन् यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः
                                                                    ।१०।१३

हे अश्विद्वय ! हमारे रक्षक होओ । हम पुत्रोत्पत्ति में समर्थ हों । हम श्रेष्ठ धन वाले, पुत्र-पौत्रादि को धन देकर देवताओं के यज्ञ में उपस्थित हों ।६। हे अश्विद्वय ! हमारे द्वारा अभिषुत यह सोम निधि रूप में प्रस्तुत है, तुम क्रोध रहित भाव से हमारे अभिमुख होओ और हव्य भक्षण करो ।७। हे अश्विद्वय ! तुम्हारा रथ सात नदियों को पार करता हुआ आता है । तुम्हारे श्रेष्ठजन्म वाले अश्व तुम्हारा वहन करने में कभी थकते नहीं ।८। हे अश्विद्वय तुम निर्लेप हो । जो

हविर्दान करता है, जो सखाओं की यथार्थ वचन द्वारा वृद्धि करता है और गवादि युक्त धन देता है, ऐसे श्रेष्ठ कर्म वालों के तुम हितैषी हो ।८। हे अश्विद्वय ! तुम हमारा आह्वान सुनकर आगे आओ और रत्नादि धन दो। स्तोता की वृद्धि करो और सदा हमारा पालन करो ।९ ।   (१३)

सूक्त ६८

(ऋषि-वासिष्ठः । देवता-अश्विनौ । छन्द-त्रिष्टुप्)

आ शुभ्रा यातमश्विना स्वश्वा गिरो दस्रा जुजुषाणा युवाकोः
हव्यानि च प्रतिभृता वीतं नः ॥१
प्र वामन्धांसि मद्यान्यस्थुररं गन्तं हविषो वीतये मे ।
तिरो अर्यो हवनानि श्रुतं न ॥२
प्र वां रथो मनोजवा इयर्ति तिरो रजांस्यश्विना शतोतिः ।
अस्मभ्यं सूर्यावसू इयानः ॥३
अयं ह यद् वां देवया उ अद्रिरूर्ध्वो विवक्ति सोमसुद् युवभ्याम् ।
आ वल्गू विप्रो ववृतीत हव्यैः ॥४
चित्रं ह यद् वां भोजनं न्वस्ति न्यत्रये महिष्वन्तं युयोतम् ।
यो वामोमानं दधते प्रियः सन् ।५।१४

हे अश्विद्वय ! तुम शत्रु का वध करने वाले हो। तुम आकर स्तुति सुनो। हमारे हव्य का सेवन करो ।१। हे अश्विद्वय ! यह सोम प्रस्तुत है। हव्य-सेवनार्थ आओ। तुम हमारे शत्रु के आह्वान पर न जाकर हमारे आह्वान को सुनो ।२। हे अश्विद्वय ! तुम सूर्यसे रथ पर आरूढ़ होते हो। हमारी प्रार्थना पर तुम्हारा रथ सब लोकों को छोड़कर यज्ञ में आता है ।३। हे अश्विद्वय ! अब मैं यज्ञ में तुम्हें देवता मानता हुआ सोमाभिषव करता हूँ, तब यह प्रस्तर घोर शब्द करता है और मेधावी स्तोता तुम्हारे लिये हव्य देता है ।४। तुम अपने धन को हमें दो। जो अत्रि तुम्हारे प्रदत्त सुख से सुखी है, उनसे महिष्वद् को पृथक् करो ।५।   (१४)

उत त्यद् वां जुरते अश्विना भूच्च्यवानाय प्रतीत्यं हविर्दे ।
अधि यद् वर्प इतऊति धत्थः ॥६
उत त्यं भुज्युमश्विना सखायो मध्ये जहुर्दु रेवासः समुद्रे ।
निरी पर्षदरावा यो युवाकुः ॥७
वृकाय चिज्जसमानाय शक्तमुत श्रुतं शयवे हुयमाना ।
यावघ्न्यामपिन्वनमपो न स्तुर्यं चिच्छक्त्यश्विना शचीभिः ॥८
एष स्य कारुर्जरते सूक्तैरग्रे बुधान उषसां सुमन्मा ।
इषा तं वर्धदघ्न्या पयोभिर्यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ।९।१५

हे अश्विद्वय ! हविदेने वाले वृद्ध च्यवन ऋषिको रूप तुमने लाकर दिया, उससे वे युवा हो गये ।६। दुष्टों ने भुज्य को समुद्र में छोड़ दिया तो, तुम्हींने पार लगाया । भुज्यने कभी कोई निन्द्यकर्म नही किया वह सदा तुम्हारी सेवा करता रहा ।७। हे अश्विद्वय! क्षीण होते वृक ऋषि को तुमने धन दिया । शयु ऋषि की पुकार तुमने सुनी । जैसे नदी खेतों को जल से भरती है, वैसे ही वृद्ध गौ को तुमने जल से परिपूर्ण किया ।८। सुन्दर मति वाला स्तोता (वसिष्ठ) उषासे पूर्व जाग्रत होकर स्तुति करता है । उसे अन्न दुग्ध आदि द्वारा प्रवृद्ध करो । उसकी गो को पुष्ट करो सदा हमारा पालन करते रहो ।९। (१५)

सूक्त ६९

(ऋषि-वसिष्ठः । देवता-अश्विनौ । छन्द-त्रिष्टुप्)

आ वां रथो रोदसी बद्बधानो हिरण्ययो वृषभिर्यात्वश्वैः ।
घृतवर्तनिः पविभी रूचान इषां वोलहा नृपतिर्वाजिनीवान् ।१
स पप्रथानो अभि पञ्च भूमा त्रिवन्धुरो मनसा यातु युक्तः ।
विशो येन गच्छथो देवयन्तीः कुत्रा चिद् याममश्विना दधाना ।२
स्वश्वा यशसा यातमर्वाग् दस्रा निधिं मधुमन्तं पिबाथः ।
वि वां रथो वध्वा यादमानो ऽन्तान् दिवो बाधते वर्तनिभ्याम् ॥३
युवोः श्रियं परि योषावृणीत भूरो दुहिता परितक्म्यायाम् ।
यद् देवयन्तमवथः शचीभिः परि घ्रंससोभना वां वयो गात्॥४

यो ह स्य वां रथिरा वस्त उस्रा रथो युजानः परियाति वर्तिः ।
तेन नः शं योरूषसो व्युष्टौ न्यश्विना वहतं यज्ञे अस्मिन् ॥५
नरा गौरेव विद्युतं तृषाणा ऽस्माकमद्य सवनोप यातम् ।
पुरुत्रा हि वां मतिभिर्हवन्ते मा वामन्ये नि यमन् देवयन्तः ॥६
युवं भुज्युमवविद्धं समुद्र उदूहथुरर्णसो अस्रिधानैः ।
पतत्रिभिरश्रमैरव्यथिभिर्दंसनाभिराश्विना पारयन्ता ॥७
नू मे हवमा शृणुतं युवाना यासिष्टं वर्तिरश्विनाविरावत् ।
धत्तं रत्नानि जरतं च सूरीन् यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः
।८।१६

तुम्हारा अश्वयुक्त रथ आगमन करे । वह सुवर्णिम रथ आकाश-पृथिवी को व्याप्त करता हैं । उसका चक्र जलमय है । वह चक्र, दण्डों द्वारा तेजस्वी अन्न वहन करने वाला और यजमानों का अधीश्वर है ।१। यह रथ सब जीवों को प्रकट करने वाला बन्धुओं और स्तोत्रों वाला है । हे अश्विद्वय ! तुम इच्छा होने पर इसके द्वारा सर्वत्र गमन करते हो । इस देव-काम्य यज्ञ में भी आगमन करो ।१। तुम अपने अश्व और अन्न के सहित आओ । तुम यहाँ सोमपान करो । सूर्या सहित गमन करता हुआ तुम्हारा रथ आकाश तक गमन करता हुआ सब स्थानों को व्याप्त करता है ।३। सुर्य पुत्री तुहारे रथ को घेरती है । जब तुम यजमान की रक्षा करते हो, तब तेजस्वी अन्न तुम्हारी ओर गमन करता है ।४। हे अश्विद्वय! अश्वयुक्त तुम्हारा रथ सब तेजों को ढकता है । उषा काल में उस रथ द्वारा हमारे यज्ञ में शल्याण के लिए आगमन करो ।१। हे अश्विद्वय ! आज हमारे सदनों में सोमपानार्थ आगमन करो । यजमान तुम्हारा आह्वान करते हैं । देवताओंकी कामना करने वाले अन्य व्यक्ति तुम्हें हवि न देने पावें ।२। हे अश्विनीकुमारो ! तुमने निमग्न भुज्यु को अपने शीघ्रगामी अश्वों की सहायता न निकाल कर पार किया ।७। हे अश्विद्वय ! हमारें स्तोत्र को

सुनो । हमारें घर में आकर रत्न आदि धन दो । स्तोता की वृद्धि करो । हमारा सदा पालन करो ।८।

सूक्त ७०

(ऋषि-वसिष्ठः । देवता-अश्विनौ । छन्द-त्रिष्टुप्)

आ विश्ववाराश्विना गतं नः प्र तत् स्थानमवाचि वां पृथिव्याम्।
अश्वो न वाजी शुनपृष्ठो अस्थादा यत् सेदथुर्ध्रुवसे न योनिम् ॥१
सिषक्ति सा वां सुमतिश्चनिष्ठाऽतापि घर्मो मनुषो दुरोणे ।
यो वां समुद्रान् त्सरितः पिपर्त्येतग्वा चिन्न सुयुजा युजानः ॥२
यानि स्थानान्यश्विना दधाथे दिवो यह्वीष्वोषधीषु विक्षु ।
नि पर्वतस्य मूर्धनि सदन्तेषं जनाय दाशुषे वहन्ता ॥३
चनिष्ट देवा ओषधीष्वप्सु यद् योग्या अश्नवैथे ऋषीणाम् ।
पुरूणि रत्ना दधतौ न्यस्मे अनु पूर्वाणि चख्यथुर्युगानि ॥४
शुश्रुवांसा चिदश्विना पुरुण्यभि ब्रह्माणि चक्षाथे ऋषीणाम् ।
प्रति प्र यातं वरमा जनायाऽस्मे वामस्तु सुमतिश्चनिष्ठा । ५
यो वां यज्ञो नासत्या हविष्मान् कृतब्रह्मा समर्यो भवाति ।
उप प्र यातं वरमा वसिष्ठमिमा ब्रह्माण्यृच्यन्ते युवभ्याम् ॥६
इयं मनीषा इयमश्विना गीरिमां सुवृक्तिं वृषणा जुषेथाम् ।
इमा ब्रह्माणि युवयून्यग्मन् यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ।७।१७

हे अश्विद्वय ! हमारे यज्ञ में आओ । पृथिवी पर तुम्हारा यही आश्रय स्थान है । तुम जिस अश्व पर चढ़ो वह तुम्हारे पास ही रहे ।१। हे अश्विद्वय! यह स्तुति तुम्हारी प्रशंसा करती हैं । मनुष्योंके यज्ञ मण्डप में धर्म तप रहा हैं, वह धर्म नदियों और समुद्रों को वृष्टि जलसे पूर्ण करता है । जैसे अश्वों को रथ से योजित किया जाता है वैसे ही तुम यज्ञ में योजित किये जाते हो ।२। हे अश्विद्वय ! तुम स्वर्ग में आकर औषधियों और प्राणियों में जिस स्थान पर बैठते हो, वही स्थान अन्न देने वाले यजमान को प्राप्त कराओ ।३। हे अश्विद्वय !

तुम ऋषि प्रदत्त औषधि और जलको वशमें करते हो। हमारी औषधि और जलकी भी इच्छा करो। तुमने पूर्वकालीन यजमानोंको भी रत्नादि देकर अपनाया था।४। हे अश्विद्वय ! तुमने अनेक ऋषि कर्मोंको प्रकट किया है। तुम यजमान के यज्ञ में आगमन करो। तुम हम पर अन्न वाली अनुग्रह दृष्टि करो।५। हे अश्विद्वय ! कृतस्तोत्र, हव्ययुक्त और वरणीय वशिष्ठ की ओर गमन करो। यह स्तुति तुम्हारी ही है।२! हे अश्विद्वय ! यह स्तोत्र तुम्हारे लिये हुआ हैं। तुम इस स्तुतिसे प्रसंन होओ यह सभी कर्म से मिले। तुम हमारा पालन करो।७। (१७)

सूक्त ७१

(ऋषि-वसिष्ठः। देवता-अश्विनौ। छन्द-त्रिष्टुप्)

अप स्वसुरुषसो नग्जिहीते रिणक्ति कृष्णीररुषाय पन्थाम्।
अश्वमघा गोमघा वां हुवेम दिवा नक्तं शरुमस्मद् युयोतम् ॥१
उपायातं दाशुषे मर्त्याय रथेन वाममश्विना वहन्ता।
युयुतमस्मदनिराममीवां दिवा नक्तं माध्वी त्रासीथां नः ॥२
आ वां रथमवमस्यां व्युष्टौ सुम्नायवो वृषणो वर्तयन्तु।
स्यूमगभस्तिमृतयुग्भिरश्वैराश्विना वसुमन्तं वहेथाम् ॥३
यो वां रथो नृपती अस्ति वोलहा त्रिवन्धुरो वसुमाँ उस्रयामा।
आ न एना नासत्योप यातमभि यद् वां विश्वप्स्न्यो जिगाति॥४
युवं च्यवानं जरसोऽमुमुक्तं नि पेदव ऊहथुराशुमश्वम्।
निरंहसस्तमसः स्पर्तमत्रिं नि जाहुषं शिथिरे धातमन्तः ॥५
इयं मनीषा इयमश्विना गीरिमां सुवृक्तिं वृषणा जुषेथाम्।
इमा ब्रह्माणि युवयून्यग्मन् यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ।६।१८

रात्रि अपनी बहिन उषा के आगमन के साथ ही चली जाती है। काली रात्रि सूर्य को मार्ग देती है। हे अश्विद्वय ! हम तुम्हारा आह्वान करते हैं, तुम दिन में और रात्रिमें भी हिंसक पशुओं को दूर

रखो ।१। हे अश्विद्वय ! तुम हवि देने वाले के लिये श्रेष्ठ पदार्थ लेकर आओ । हमसे रोग और दारिद्रय को दूर करो । तुम हमारी दिन रात रक्षा करो ।२। तुम्हारे रथ में योजित अश्व तुम्हें यहाँ लावें । तुम धन से लदे रथ को अश्वों द्वारा वहन कराओ ।३। हे अश्विद्वय ! तुम्हें वहन करने वाला रथ तीन स्थानों वाला है । वह व्यापक रूपसे दिवस की ओर बढ़ता है । तुम उसी रथ द्वारा आगमनकरो ।४। तुमने च्यवन ऋषि की वृद्धावस्था दूर की, रणक्षेत्र में पेदु राजा के लिए द्रुतगामी अश्व प्रेषित किया, अत्रि को अंधेरे से निकाला और पदच्युत जाहुषको उसका राज्य दिलाया ।५। हे अश्विद्वय ! यह स्तुति तुम्हारी ही है । तुम इससे प्रसन्न होओ । यह सब कर्म तुम में मिले । तुम सदा हमारा पालन करो ।६।　　(१८)

सूक्त ७२

(ऋषि-वासिष्ठः । देवता-अश्विनौ । छन्द-त्रिष्टुप्)

आ गोमता नासत्या रथेनाऽश्वावता पुरुश्चन्द्रेण यातम् ।
अभि वां विश्वा नियुतः सचन्ते स्पार्हया श्रिया तन्वा शुभाना ॥१
आ नो देवेभिरुप यातमर्वाक् सजोषसा नासत्या रथेन ।
युवोर्हि नः सख्या पित्र्याणि समानो बन्धुरुत तस्य वित्तम् ॥२
उदु स्तोमासो अश्विनोरबुध्रञ्जामि ब्रह्माण्युषसश्च देवीः ।
आविवासन् रोदसी धिष्ण्येमे अच्छा विप्रो नासत्या विवक्ति ॥३
वि चेदुच्छन्त्यश्विना उषासः प्र वां ब्रह्माणि कारवो भरन्ते ।
ऊर्ध्वं भानुं सविता देवो अश्रेद् बृहदग्नयः समिधा जरन्ते ॥४
आ पश्चातान्नासत्या पुरस्तादाश्विना यातमधरादुदक्तात् ।
आ विश्वतः पाञ्चजन्येन राया यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥५॥१९

हे अश्विनीकुमारो ! तुम गवादि धन से भरे रथ पर आगमन करो । अनेक स्तुतियाँ तुम्हारी कामना कर रही हैं । तुम श्रेष्ठ तेज से सुशोभित होओ ।१। हे अश्विद्वय ! तुम समान प्रीति वाले होकर

रथारूढ़ हो हमारे पास आगमन करो। हमारे पूर्वजोंसे भी तुम्हारा बन्धुत्व स्थापित था। हमारे तुम्हारे एकही पुर्वज, एक ही धन वाले थे।२। यह स्तुतियाँ अश्विनी कुमारों को जगाती हैं। सब कर्म उषाको चेतन्य करते हैं। वसिष्ठ आकाश-पृथिवी की सेवा करतेहुए अश्विद्वय की स्तुति करते हैं।३। हे अश्विद्वय ! उषाओं द्वारा अन्धकार हटाने पर स्तोतागण तुम्हारी स्तुति करेंगे'। सविता देवता तेज के आश्रित होते हैं और अग्नि देवता भले प्रकार पूजा को प्राप्त करते हैं।४। हे अश्विद्वय ! तुम सर्व दिशाओं से आगमन करो। पाँचों वर्णों का कल्याण करने वाले धन के सहित आकर हमारा सदा पालन करो।५। (१६)

सूक्त ७३

(ऋषि–वसिष्ठः। देवता–अश्विनौ। छन्द–त्रिष्टुप्)

अतारिष्म तमसस्पारमस्य प्रति स्तोमं देवयन्तो दधानाः।
पुरुदंसा पुरुतमा पुराजा ऽमर्त्या हवते अश्विना गीः॥१
न्यु प्रियो मनुषः सादि होता नासत्या यो यजते वन्दते च।
अश्नीतं मध्वो अश्विना उपाक आ वां वोचे विदथेषु प्रयस्वान्॥२
अहेम यज्ञं पथामुराणा इमां सुवृक्तिं वृषणा जुषेथाम्।
श्रुष्टीवेव प्रेषितो वामबोधि प्रति स्तोमैर्जरमाणो वसिष्ठः॥३
उप त्या वह्नी गमतो विशं नो रक्षोहणा संभृता वीलुपाणी।
समन्धांस्यग्मत मत्सराणि मा नो मर्धिष्टमा गतं शिवेन॥४
आ पश्चातान्नासत्या पुरस्तादाश्विना यातमधरादुदक्तात्।
आ विश्वतः पाञ्चजन्येन राया यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः॥५।२०

हम देवताओं की कामना से स्तुति करते हुए अज्ञान को दूर करेंगे। हे अश्विद्वय ! स्तोता तुम्हारा आह्वान करता है।१। हे अश्विद्वय ! तुम्हारा प्रीतिपात्र उपासक यहाँ कर्म कर रहा है। तुम उसके मधुर सोम का पान करो। मैं हवियुक्त होकर तुम्हारा आह्वान करता हूँ।२। हे अश्विद्वय ! हम स्तोता देव-योग की वृद्धि करते हैं। तुम इन स्तुतियों से प्रसन्न होओ। मैं वसिष्ठ तुम्हारे पास दूत के समान आकर

स्तुति करता हूँ ।३। अश्विद्वय दृढ़ अङ्ग दृढ़ भुज वाले राक्षसों के संहारक हैं। वे हमारे पुत्रादिके सामने आवें। हे अश्विद्वय ! तुम इस हर्ष-दायक अन्न को ग्रहण करो। तुम कल्याण सहित आगमन करो। तुम हमें हिंसित मत करना ।४। अश्विद्वय ! तुम जिस दिशा में हो, वहीं से आओ। साथ में पाँच वर्णों का कल्याण करने वाले धनों को लाओ और हमारा सदा पालन करो ।५।   (२०)

सूक्त ७४

(ऋषि—वसिष्ठः। देवता—अश्विनौ। छन्द-बृहती)

इमा उ वां दिविष्टय उस्रा हवन्ते अश्विना।
अयं वामह्वेऽवसे शचीवसू विशंविशं हि गच्छथः ॥१
युवं चित्रं ददथुर्भोजनं नरा चोदेथां सूनृतावते।
अर्वाग्रथं समनसा नि यच्छतं पिबतं सोम्यं मधु ॥२
आ यातमुप भूषतं मध्वः पिबतमश्विना।
दुग्धं पयो वृषणा जेन्यावसू मा नो मर्धिष्टमा गतम् ॥३
अश्वासो ये वामुप दाशुषो गृहं युवां दीयन्ति बिभ्रतः।
मक्षूयुभिर्नरा हयेभिरश्विना ऽऽदेवा यातमस्मयू ॥४
अधा ह यन्तो अश्विना पृक्षः सचन्त सूरयः।
ता यंसतो मघवद्भ्यो ध्रुवं यशश्छर्दिरस्मभ्यं नासत्या ॥५
प्र ये ययुरवृकासो रथा इव नृपातारो जनानाम्।
उत स्वेन शवसा शूशुवुर्नर उत क्षियन्ति सुक्षितिम् ।६।२१

हे अश्विद्वय ! स्वर्ग की इच्छा करने वाले व्यक्ति तुम्हारा आह्वान करते हैं,। मैं वसिष्ठ भी तुम्हें रक्षा के लिए आहूत करता हूँ तुम सबके पास गमन करने वाले हो ।१। हे अश्विद्वय ! तुम जिस धन को धारण करते हो, वह धन स्तोता को प्राप्त कराओ। तुम अपने रथ को यहा ल कर समान मन से सोम-पान करो ।२। अश्विद्वय ! हमारे पास आकर सोम-पान करो। तुम जलका दोहन करते हुए आओ। हमें हिंसित मत करना ।३। हविदाता यजमान के यहाँ तुम्हारे जो अश्व

जाते हैं उनके द्वारा हमारे यहाँ आओ ।४। हे अश्विद्वय ! स्तोतागण प्रभुत अन्न पाते हैं । तुम हमें स्थिर गृह और यश प्रदान करो । हम तुम्हारी कृपा से धन सम्पन्न हुए ।५। जो अन्य का धन न लेकर मनुष्य में रक्षाकारी होते हुए तुम्हारे पास गमन करते हैं, वे अपने बल द्वारा वृद्धि पाते हुए श्रेष्ठ निवास प्राप्त करते हैं ।६। (२१)

सूक्त ७५

(ऋषि–वसिष्ठः । देवता–उषाः । छन्द–त्रिष्टुप्)

व्युषा आवो दिविजा ऋतेनाऽऽविष्कृण्वाना महिमानमागात् ।
अप द्रुहस्तम आवरजुष्टमङ्गिरस्तमा पथ्या अजीगः ॥१
महे नो अद्य सुविताय बोध्युषो महे सौभगाय प्र यन्धि ।
चित्रं रयिं यशसं धेह्यस्मे देवि मर्तेषु मानुषि श्रवस्युम् ।२
एते त्ये भानवो दर्शतायाश्चित्रा उषसो अमृतास आगुः ।
जनयन्तो दैव्यानि व्रतान्या पृणन्तो अन्तरिक्षा व्यस्थुः ॥३
एषा स्या युजाना पराकात् पञ्च क्षितीः परि सद्यो जिगाति ।
अभिपश्यन्ती वयुना जनानां दिवो दुहिता भुवनस्य पत्नी ॥४
वाजिनीवती सूर्यस्य योषा चित्रामघा राय ईशे वसूनाम् ।
ऋषिष्टुता जरयन्ती मघोन्युषा उच्छति वह्निभिर्गृणाना ॥५
प्रति द्युतानामरुषासो अश्वाश्चित्रा अदृश्रन्नुषसं वहन्तः ।
याति शुभ्रा विश्वपिशा रथेन दधाति रत्नं विधते जनाय ॥६
सत्या सत्येभिर्महती महद्भिर्देवी देवेभिर्यजता यजत्रैः ।
रुजद् दृलहानि दददुस्रियाणां प्रति गाव उषसं वावशन्त ॥७
नू नो गोमद् वीरवद् धेहि रत्नमुषो अश्वावत् पुरुभोजो अस्मे ।
मा नो बर्हिः पुरुषता निदे कर्यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥८.२२

अन्तरिक्ष में प्रकट हुई उषा ने प्रकाश को उत्पन्न किया । वह महिमा को प्रकट करती हुए आई । उसने शत्रु को और अन्धकार को नष्ट किया तथा प्राणियों के कम मार्ग को दिखाया ।१। हे उषा ! हमारे कल्याण के लिए चैतन्य होओ तुम हमें सौभाग्य दो । हमारे

लिये धन धारण करो। तुम मनुष्यों को अन्न युक्त पुत्र प्रदान करो।२। उषा की किरणें देवों के कर्म प्रकट करती हैं। वे अन्तरिक्ष को पूर्ण कर सब ओर फैल जाती हैं।३। स्वर्ग की पुत्री का पालन करने वाली उषा पाँचों वर्षों को देखती हुई उनके पास पहुँचती है।४। अद्भुत धन वाली उषा दिव्य धन की अधीश्वरी है। वह ऋषियों द्वारा स्तुत और पूज्य उषा प्रातःकाल के करने वाली हैं।६। तेजस्वी उषा को लाने वाले श्रेष्ठ अश्व दिखाई पड़ रहे हैं। वह उषा अनेक रूपों वाले रथ द्वारा सर्वत्र आगमन करती हुई सेवकों को रत्न धन प्रदान करती है।६। वह उषा यज्ञ योग्य देवताओं के साथ आकर अन्धकार को चीरती और गौओं को चराने के लिए प्रकाश देती है। गौयें उसी उषा की कामना करती हैं।८। हे उषे! हमें गवादि से सम्पन्न धन प्रदान करो। तुम हमें प्रचुर अन्न भी दो। तुम हमारे यज्ञकी निन्दा न करती हुई सदा हमारा पालन करो।८। (२२)

सूक्त ७६

(ऋषि–वसिष्ठः। देवता–उषाः। छन्द–त्रिष्टुप)

उदु ज्योतिरमृतं विश्वजन्यं विश्वानरः सविता देवो अश्रेत्।
क्रत्वा देवानामजनिष्ट चक्षुराविरकर्भुवनं विश्वमुषाः ॥१
प्र मे पन्था देवयाना अदृश्रन्नमर्धन्तो वसुभिरिष्कृतासः।
अभूदु केतुरुषसः पुरस्तात् प्रतीच्यागादधि हर्म्येभ्यः ॥२
तानीदहानि बहुलान्यासन् या प्राचीनमुदिता सूर्यस्य।
यतः परि जार इवाचरन्त्युषो ददृक्षे न पुनर्यतीव ॥३
त इद् देवानां सधमाद आसन्नृतावानः कवयः पूर्व्यासः।
गूलहं ज्योतिः पितरो अन्वविन्दन् त्स यमन्त्रा अजनयन्नुषासम्॥४
समान ऊर्वे अधि संगतासः सं जानते न यतन्ते मिथस्ते।
ते देवानां न मिनन्ति व्रतान्यमर्धन्तो वसुभिर्यादमानाः ॥५
प्रति त्वा स्तोमैरीलते वसिष्ठा उषर्बुधः सुभगे तुष्टुवांसः।
गवां नेत्री वाजपत्नी न उच्छोषः सुजाते प्रथमा जरस्व ॥६

एषा नेत्री राधसः सूनृतानामुषा उच्छन्ती रिभ्यते वसिष्ठैः ।
दीर्घश्रुतं रयिमस्मे दधाना यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ।७।२३

सविता देवता सबका कल्याण करने वाली ज्योति का धारण करते हैं। वह देवताओं के कर्म के लिए उदित होते हैं उषा ने लोकों को प्रकाशित किया है ।१। मैंने श्रेष्ठ तेज से सम्पन्न देवयान मार्ग को देखा है उषा का तेज पूर्व दिशा में था । हमारे सामने आती हुई उषा उन्नत लोक से चलती है ।२। हे । उषे ! तुम्हारा तेज सूर्योदय से पूर्व प्रकट होता है । तुम श्रेष्ठ कामनी के समान प्रभूत तेज वाली हो ।३। अङ्गिराओं ने गूढ़ तेज को पाकर मन्त्रों द्वारा उषा को प्रकट किया, वे अङ्गिरा ही देवताओंसे सुसङ्गत हुए ।४। वे सुसंगत होकर गौओंके लिये समान मति वाले हुए । क्या वे परस्पर यत्नवान् नहीं हुए ? वे देव-कर्मों बाधक नहीं हुए । वे अपने वास दाता तेज सहित गमन करते हैं ।५। स्तोता वसिष्ठ वंशज ऋषि, हे उषे ! तुम्हारी स्तुति करते हैं, तुम गौओं और अन्न की रक्षा करने वाली हो । तुम हमारे लिए प्रातःकाल को प्रकट करो । तुम्हारी प्रथम स्तुति की जाती है ।५। स्तोताके स्तोत्रों का उषा नेतृत्व करती है यह अन्धकार को मिटाती और वसिष्ठों द्वारा स्तुत होती है । तुम सदा हमारा पालन करो ।७। (२३)

सूक्त ७७

(ऋषि—वसिष्ठः । देवता—उषाः । छन्द—त्रिष्टुप्)

उपो रुरुचे युवतिर्न योषा विश्वं जीवं प्रसुवन्ती चरायै ।
अभूदग्निः समिधे मानुषाणा मकर्ज्योतिर्बाधमाना तमांसि ॥ १
विश्वं प्रतीची सप्रथा उदस्थाद् रुशद् वासो बिभ्रती शुक्रमश्वैत्।
हिरण्यवर्णा सुदृशीकसंदृग् गवां माता नेत्र्यह्नामरोचि ॥२
देवानां चक्षुः सुभगा वहन्ती श्वेतं नयन्ती सुदृशीकमश्वम् ।
उषा अदर्शि रश्मिभिर्व्यक्ता चित्रामघा विश्वमनु प्रभूता ॥३

अन्तिवामा दूरे अमित्रमुच्छोर्वीं गव्यूतिमभयं कृधी: नः ।
यावय द्वेष आ भरा वसूनि चोदय राधो गृणते मघोनि ॥४
अस्मे श्रेष्ठेभिर्भानुभिर्वि भाह्युषों देवि प्रतिरन्ती न आयु: ।
इषं च नो दधती विश्ववारे गोमदश्वावद् रथवच्च राधः ॥५
यां त्वा दिवो दुहितर्वर्धयन्त्युषः सुजाते मतिभिर्वसिष्ठाः ।
सास्मासु धा रयिमृष्वं बृहन्तं यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः६।२४

उषा सब प्राणियों को प्रेरित करते हुए सूर्य के पास तेज प्राप्त करती है। अग्नि देवता मनुष्यों की समिधाओंके योग्य हैं। वही अन्धकार का नाश करने वाले तेज को उत्पन्न करते हैं ।१। सर्व प्रसिद्ध उषा प्रकट हुई। वह अपने तेजोमय वस्त्र सहित बढ़ी। यह शोभामयी उषा दिनों की नेत्री और सब प्राणियों की माता है ।२। तेज का वहन करने वाली, रश्मियों द्वारा प्रकाशमयी उषा सुन्दर दिखाई पड़ने वाले अश्व को उज्ज्वल करती है ।३। हे उषे! शत्रु को दूर करती हुई तुम अद्भुत धन वाली होकर हमाने पास आओ। तुम हमारी गोचर भूमि को भय रहित करनेके लिए वैरियों को दूर करो। तुम शत्रुओं का धन लाकर स्तोता की ओर प्रेरित करो ।४। हे उषे ! तुम श्रेष्ठ रश्मियों सहित प्रकाशित होती हुई हमारी आयु-वृद्धि करो और गौ अश्वादि से युक्त होकर हमारी ओर देखो ।५। हे उषे! वसिष्ठगण तुम्हें स्तुतियों से बढ़ाते हैं। तुम हमें श्रेष्ठ धन दो और सदा हमारा पालन करो ।६। (२४)

सूक्त ७८

(ऋषि—वसिष्ठः । देवता—उषाः । छन्द—त्रिष्टुप)

प्रति केतवः प्रथमा अदृश्रन्नूर्ध्वा अस्या अञ्जयो वि श्रयन्ते ।
उषो अर्वाचा बृहता रथेन ज्योतिष्मता वाममस्मभ्यं वक्षि ॥१
प्रति षीमग्निर्जरते समिद्धः प्रति विप्रासो मतिभिर्गृणन्तः ।
उषा याति ज्योतिषा बाधमाना विश्वा तमांसि दुरिताप देवी॥२
एता उ त्याः प्रत्यदृश्रन् पुरस्ताज्ज्योतिर्यच्छन्तीरुषसो विभातीः।
अजीजनन् त्सूर्यं यज्ञमग्निमपाचीनं तमो अगादजुष्टम् ॥३

अचेति दिवो दुहिता मघोनी विश्वे पश्यन्त्युषसं विभातीम् ।
आस्थाद् रथं स्वधया युज्यमानमा यमश्वासः सुयुजो वहन्ति॥४
प्रति त्वाद्य सुमनसो बुधन्ताऽस्माकासो मघवानो वयं च ।
तिल्विलायध्वमुषसो विभातीर्यूय पात स्वस्तिभिः सदा नः।५।२५

केतु रूपी उषा प्रथम देखी जाती है। इसकी किरणें ऊपर मुख करती हुई सब ओर जाती हैं। हे उषे ! तुम अपने दैदीप्यमान रथ पर हमारे लिए श्रेष्ठ धन वहन करो। अग्नि सर्वत्र वृद्धि पाते हैं, वे स्तुतियों से बढ़ते हैं। उषा भी सब पापों और अन्धकारों को दूर करती है ।२। यह उषायें प्रभात की कारण रूपा है पूर्वमें दिखाई देती हैं। इन्होंने सूर्य अग्नि और यज्ञ को प्रकट किया है। इन्हीं के द्वारा अन्धकार दूर हुआ है।३। स्वर्ग की पुत्री उषा धन से युक्त एवं प्रभात के करने वाली है। वह अन्न युक्त रथ पर चढ़कर अश्वों द्वारा आती है ।४। हे उषे ! श्रेष्ठ पुरुषों सहित हम तुम्हें जगाते हैं। तुम प्रभाव करने वाली होकर सध्या को स्निग्धता से युक्त करो। हमारा सदा पालन करती रहो ।५। (२५)

सूक्त ७९

(ऋषि—वसिष्ठः। देवता—उषाः। छन्द—त्रिष्टुप्)

व्युषा आवः पथ्या जनानां पञ्च क्षितीर्मानुषीर्बोधयन्ती ।
सुसंदृग्भिरुक्षभिर्भानुमश्रेद् वि सूर्वो रोदसी चक्षसावः ॥१
व्यञ्चते दिवो अन्तेष्वक्तून् विशो न युक्ता उषसो यतन्ते ।
सं ते गावस्तम आ वर्तयन्ति ज्योतिर्यच्छन्ति सवितेव बाहू ॥२
अभूदुषा इन्द्रतमा मघोन्यजीनत् सुविताय श्रवांसि ॥
वि दिवो देवी दुहिता दधात्यङ्गिरस्तमा सुकृते वसूनि ॥३
तावदुषो राधो अस्मभ्यं रास्व यावत् स्तोतृभ्यो अरदो गृणाना ।
यां त्वा जज्ञुर्वृषभस्या रवेण वि दृलहस्य दुरो अद्रेरौर्णोः ॥४
देवंदेवं राधसे चोदयन्त्यस्मद्र्यक् सुनृता ईरयन्ती ।
व्युच्छन्ती नः सनये धियो धा यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ।५।२६

यह उषा अन्धकार को नष्ट कर मनुष्यों का हित करती है। यह सब मनुष्यों को जगाती और सूर्य की आश्रिता होती है। सूर्य अपने तेज मे पृथिवी को ढकते हैं।१। अन्तरिक्ष में तेज प्रकाश करने वाली उषायें सुसंग होकर अन्धकार को नष्ट करने में यत्नबती होती हैं। हे इषे ! तुम्हारी किरणें तमोनाशिका हैं। वे सूर्य के तेज के समान ही प्रकाश फैलाती है।२। यह धन वाली उषा उत्पन्न हुई। उसने सबके हितकारी अन्न को उत्पन्न किया। स्वर्ग की पुत्री और अङ्गिरोत्पन्न उषा श्रेष्ठ कर्मों के लिए धन धारण करने वाली है।३। हे उषे ! पूर्व कालीन स्तोता को तुमने जितना धन प्रदान किया, उतना ही हमें दो। तुम्हें सब लोग स्तोत्र की ध्वनि द्वारा जान लेते हैं। तुमने ही गौओं के अपहरण काल में पर्वत का द्वार दिखाया था।४। हे उषे ! स्तोताओं के और हमारे समक्ष सत्यवाणी को प्रेरित करो और अन्धकार का नाश कर हमें देनेकी बुद्धि बताओ। तुम सदा हमारा मंगल करो।५। (२६)

सूक्त ८०

(ऋषि—वसिष्ठः । देवता—मित्रावरुणौ: । छन्द—त्रिष्टुप)

प्रति स्तोमेभिरुषसं वशिष्ठा गीर्भिर्विप्रासः प्रथमा अबुध्रन् ।
विवर्तयन्तीं रजसी समन्ते आविष्कृण्वतीं भुवनानि विश्वा ॥१
एषा स्या नव्यमायुर्दधाना गूढ्वी तमो ज्योतिषोषा अबोधि ।
अग्र एति युवतिरह्रयाणा प्राचिकितत् सूर्यं यज्ञमग्निम् ॥२
अश्वावतीर्गोमतीर्न उषासो वीरवतीः सदमुच्छन्तु भद्राः ।
घृतं दुहाना विश्वतः प्रपीता यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः। ३।२७

वसिष्ठों ने स्तुतियों के द्वारा उषा को सर्वप्रथम जगाया। वह उषा आकाश-पृथिवी को ढकती और सब प्राणियों को प्रकाश देती है।१। यह उषा अपने तेजसे अन्धकार को नष्ट करती हुई जागती है। वह सूर्य के सामने आकर सूर्य अग्नि और यज्ञको प्रकट करती है।२। गौओं और अश्वों से सम्पन्न उषायें अन्धकार को मिटाती हैं। वे जल का दोहन करती हुई वृद्धि को प्राप्त होती हैं। तुम हमारा मंगल करो।३। (२७)

सूक्त ८१

(ऋषि–वसिष्ट: । देवता–उषा: । छन्द–बृहती)

प्रत्यु अदर्श्यायत्यु च्छन्ती दुहिता दिव: ।
अपो म हि व्ययति चक्षसे तमो ज्योतिष्कृणोति सूनरी ।।१
उदुस्त्रियां: सृजते सूर्य: सचाँ उद्यन्नक्षत्रमर्चिवत् ।
तवेदुषो व्यु षि सूर्यस्य च सं भक्तेन गमेमहि ।।२
प्रति त्वा युहितर्दिव उषो जीरा अभुत्स्महि ।
या वहसि पुरु स्पार्हं वनन्वति रत्नं न दाशुषे मय: ।।३
उच्छन्ती या कृणोषि मंहना महि प्रख्यै देवि स्वर्दृशे ।
तस्यास्ते रत्नभाज ईमहे वयं स्याम मातुर्न सूनव: ।।४
तच्चित्रं राध आ भरोषो यद् दीर्घश्रुत्तमम् ।
यत् ते दिवो दुहितर्मर्तभोजनं तद् रास्व भुनजामहै ।।५
श्रव: सूरिभ्यो अमृतं वसुत्वनं वाजाँ अस्मभ्यं गोमत: ।
चोदयित्री मघोन: सूनृतावत्यु षा उच्छदप स्रिध: ।६।१

आकाश की पुत्री उषा अन्धकार नष्ट करती है । वह सबको दर्शन शक्ति देती और तेज को बढ़ाती है ।१। रश्मियों को सूर्य तक साथ गिराते हैं । यह ग्रह नक्षत्र आदि को भी प्रकाश देती है । हे उषे ! तुम्हारे और सूर्य के प्रकाश को पाकर हम अन्न से युक्त हों ।३। हे उषा! हम तुम्हें जाग्रत करेंगे । तुम इच्छित धनको लाती हो । यजमान के लिए रत्नादि का वहन करती हो ।३। हे उषे ! तुम महिमामयी और अन्धकार नाशिनी हो । तुम विश्व को चैतन्यकर उसे दर्शन शक्ति देती हो । रत्नावली उषे ! हम तुमसे याचना करते हैं । जैसे माता के लिए पुत्र प्रिय होता है, वैसे ही हम तुम्हारे लिए होगे । ।४। हे उषे ! तुम्हारा जो धन दूर तक प्रसिद्ध है, उसी को यहाँ लाओ । तुम्हारे पास जो अब है, वह हमें प्रदान करो । हम भी उसका उपभोग करेंगे ।५। हे उषे ! स्तोताओं को अविनाशी यज्ञ दो उन्हें घर अन्न

और गवादि धन दो । यथार्थवादिनी उषा हमारे शत्रुओं को दूर भगावें ।६। (१)

सूक्त ८२

(ऋषि–वसिष्ठः । देवता–इन्द्रावरुणौ । छन्द–जगती)

इन्द्रावरुणा युवमध्वराय नो विशे जनाय महि शर्म यच्छतम् ।
दीर्घप्रयज्युमति यो वनुष्यति वयं जयेम पृतनासु दूढ्यः ॥१
सम्राळन्यः स्वराळन्य उच्यते वां महान्ताविन्द्रावरुणा महावसू ।
विश्वे देवासः परमे व्योमनि सं वामोजो वृषणा सं बलं दधुः । २
अन्वपां खान्यतृन्तमोजसा सूर्यमैरयतं दिवि प्रभुम् ।
इन्द्रावरुणा मदे अस्य मायिनोऽपिन्वतमपितः पिन्वतं धियः ॥३
युवामिद् युत्सु पृतनासु वह्नयो युवां क्षेमस्य प्रसवे मितज्ञवः ।
ईशाना वस्व उभयस्य कारव इन्द्रावरुणा सुहवा हवामहे ॥४
इन्द्रावरुणा यदिमानि चक्रथुर्विश्वा जातानि भुवनस्य मज्मना ।
क्षेमेण मित्रो वरुणं दुवस्यति मरुद्भिरुग्रः शुभमन्य ईयते ।५।२

हे इन्द्र और वरुण ! इस उपासक को श्रेष्ठ घर दो । यज्ञकर्त्ता के हिंसक शत्रु को संग्राम मे जीतेंगे ।१। हे इन्द्रावरुण ! तुम श्रेष्ठ धन वाले हो । तुम में एक स्वयं सुशोभित और दूसरे राजा है । तुम दोनों को विश्वेदेवो ने तेजस्वी बनाया है ।२। हे इन्द्र और वरुण! तुमने अपने बल से जल के द्वार को खोला और सूर्यको आकाश में भेजा । सोमपान जनित हर्ष के प्राप्त होने पर तुम शुष्क नदियाँ जल से भरते हो ।३। हे इन्द्र और वरुण ! शत्रु सेना के मध्य स्तोतागण और अङ्गिरागण आह्वान करते हैं । तुम दिव्य और पार्थिव धनों के स्वामी और आह्वानके योग्य हो । हम तुम्हें आहूत करते हैं ।४। हे इन्द्र वरुण ! तुमने सब प्राणियों की रचना की है । तुममें से इन्द्र मरुद्गण के साथ तेजोमय अलंकार धारण करते हैं और वरुण की सब सेवा करते हैं ।५। (२)

महे शुल्काय वरुणस्य नु त्विष ओजो मिमाते ध्रुवमस्य यत स्वम्
अजामिमन्यः श्नथयन्तमातिरद् दभ्रेभिरन्यः प्र वृणोति भूयस.।६
न तमंहो न दुरितानि मर्त्यमिन्द्रावरुणा न तपः कुतश्चन ।
यस्य देवा गच्छयो वीथो अध्वरं न तं मर्तस्य नशते परिह्वृतिः.७
अर्वाङ् नरा दैव्येनावसा गतं शृणुतं हवं यदि मे जुजोषथः ।
युवोर्हि सख्यमुत वा यदाप्यं मार्डीकमिन्द्रावरुणा नि यच्छतम्॥८
अस्माकमिन्द्रावरुणा भरेभरे पुरोयोधा भवत कृष्ट्योजसा ।
यद् वां हवन्त उभये अध स्पृधि नरस्तोकस्य तनयस्य सातिषु।९
अस्मे इन्द्रो वरुणो मित्रो अर्यमा द्युम्न यच्छन्तु महि शर्म सप्रथः
अवध्रं ज्योतिरदितेर्ऋतावृधो देवस्य श्लोकं सवितुर्मनामहे।१०।३

धन की प्राप्ति के लिए इन्द्र और वरुण को बुलाते हैं। यह विशिष्ट बल वाले हैं इनमें से एक अनेक शत्रुओं को वश में करते और दूसरे हिंसक को मारते हैं।६। हे इन्द्र, हे वरुण ! तुम जिसके यज्ञ में जाते हो, उसके पास विघ्न नहीं जाते। पाप और दुष्कर्म और सन्ताप भी उसके पास नही पहुँचते।७। हे इन्द्र और वरुण ! मेरी रक्षाके लिए अभिमुख होओ। मेरी स्तुति सुनो। तुम्हारी मित्रता सुख प्राप्त कराती है। तुम हमारे मित्र और बन्धु होओ।८। हे इन्द्र और वरुण! तुम सब युद्धों में हमारे आगे रहो। तुम्हें प्राचीनकालीन और नवीन स्तोता रण क्षेत्र में अथवा अपत्य प्राप्ति के लिए आहूत करते हैं।९। इन्द्र मित्र, वरुण, अर्यमा हमें धन और घर दें। अदिति का तेज हमारी हिंसा न करे। हम सवितादेव की स्तुति करेंगे।१०।

सूक्त ८३

(ऋषि—वसिष्ठः । देवता—इन्द्रावरुणौ । छन्द-तर्जती)

युवां नरा षश्यमानास आप्यं प्राचा गव्यन्तः पृथुपर्शवो ययुः ।
दासा च वृत्रा हतमार्याणि च सुदासमिन्द्रावरुणावसावतम् ॥१

यत्रा नरः समयन्ते कृतध्वजो यस्मिन्नाजा भवति किंचन प्रियम्
यत्रा भयन्ते भुवना स्वर्दृशस्तत्रा न इन्द्रावरुणाधि वोचतम् ॥२
सं भूम्या अन्ता ध्वसिरा अदृक्षतेन्द्रावरुणा दिवि घोष आरुहत्।
अस्थुर्जनानामुप मामरातयोऽर्वागवसा हवनश्रुता गतम् ॥३
इन्द्रावरुणा वधनाभिरप्रति भेदं वन्वन्ता प्र सुदासमावत् ।
ब्रह्माण्येषां शृणुतं हवीमनि सत्या तृत्सूनामभवत् पुरोहितिः ॥४
इन्द्रावरुणावभ्या तपन्ति माघान्यर्यो वनुषामरातयः ।
युवं हि वस्व उभयस्य राजथोऽध स्मा नोऽवतं पार्ये दिवि।५।४

हे इन्द्र और वरुण ! तुम्हारी मित्रता पाकर गौओं की कामना वाले यजमान पूर्व दिशा में गये । तुम वृत्रादि का वध करो और सुदास के लिए रक्षक होकर आओ ।१। हे इन्द्र हे इन्द्र हे वरुण ! जहाँ दोनों पक्ष संग्राम के लिए हाथ बढ़ाते हैं जिस युद्ध में स्वर्ग-दर्शन आदि प्राप्त होता हैं, रस संग्राम में तुम हमारा पक्ष ग्रहण करना ।२। हे इन्द्र हे वरुण ! सैनिकों द्वारा अन्न नष्ठकिये जाते हैं । उनको कोलाहल आकाश तक फैलाता है । मेरे शत्रु मेरी ओर बढ़ रहे हैं। तुम अपने रक्षा-साधनों सहित आगमन करो ।३। हे इन्द्र और वरुण ! तुमने सुदास को बचाया था और तृत्सुओं के स्तोत्र सुने थे । उनका पौरोहित्व संग्रामके उपस्थित होने पर सफल हो गया ।४। हे इन्द्र और वरुण ! मैं शत्रुओं के आयुधों से घिरा हूँ । शत्रु मुझे हर प्रकार बाधित कर रहे हैं । तुम सब धनों के स्वामी हो । युद्ध के अवसर यह हमारे रक्षक होओ ।५।

युवां हवन्त उभयास आजिष्विन्द्रं च वस्वो वरुणं च सातये ।
यत्र राजभिर्दशभिर्निबाधितं प्र सुदासमावतं तृत्सुभिः सह ॥६
दश राजानः समिता अयज्यवः सुदासमिन्द्रावरुणा न युयुधुः ।
सत्या नृणामद्मसदामुपस्तुतिर्देवा एषामभवन् देवहूतिषु ॥७
दाशराज्ञे परियत्ताय विश्वतः सुदास इन्द्रावरुणावशिक्षतम् ।
श्वित्यञ्चो यत्र नमसा कपर्दिनो धिया धीवन्तो असपन्त तृत्सवः८

वृत्राण्यन्यः समिथेषु जिघ्नते व्रतान्ययो अभि रक्षते सदा ।
हवामहे वां वृषणा सुवृक्तिभिरस्मे इन्द्रावरुणा शर्म यच्छतम् ॥९
अस्मे इन्द्रो वरुणो मित्रो अर्यमा द्युम्नं यच्छन्तु महि शर्म सप्रथः ।
अवध्रं ज्योतिरदितेर्ऋतावृधो देवस्य श्लोकं सवितुर्मनामहे।१०।५

युद्ध के अवसर पर इन्द्र और वरुण का आह्वान करते हैं, तुमने दस राजाओं द्वारा त्रस्त सुदास की तृत्सुओं सहित रक्षा की थी ।६। हे इन्द्र और वरुण ! यज्ञ-विमुख दस राजा भी सुदास को न जीत सके। यज्ञ में नेताओं को स्तुति फलवती हुई । सब देवता इस यज्ञ में आये थे ।७। जहाँ कर्मवान तृत्सुगण उपासना करते है वही दस राजाओं द्वारा घिरे हुए राजा सुदास को तुमने बल दिया ।८। हे इन्द्र और वरुण ! तुम में से इन्द्र वृत्रहन्ता और वरुण कर्म-पालक है । तुम हमें कल्याण प्रदान करो । हम श्रेष्ठ स्तोत्रों द्वारा तुम्हारा आह्वान करते है ।९। इन्द्र, मित्र, वरुण,अर्यमा हमें धन और घर दें । अदिति का तेज हमारी हिंसा न करे । हम सविता देवी को नमस्कार करते है ।१०। (५)

सूक्त ८४

(ऋषि—वसिष्ठः । देवता—इन्द्रावरुणौ । छन्द—त्रिष्टुप)

आ वां राजानावध्वरे ववृत्यां हव्येभिरिन्द्रावरुणा नमोभिः ।
प्र वां घृताची बाह्वोर्दधाना परि त्मनो विषुरूपा जिगाति ॥१
युवो राष्ट्रं बृहदिन्वति द्यौर्यौ सेतृभिररज्जुभिः सिनीथः ।
परि नो हेलो वरुणस्य वृज्या उरुं न इन्द्रः कृणवदु लोकम् ॥२
कृतं नो यज्ञं विदथेषु चारुं कृतं ब्रह्माणि सूरिषु प्रशस्ता ।
उपो रयिर्देवजूतो न एतु प्र णः स्पार्हाभिरूतिभिस्तिरेतम् ॥३
अस्मे इन्द्रावरुणा विश्ववारं रयिं धत्तं वसुमन्तं पुरुक्षुम् ।
प्र य आदित्यो अनृता मिनात्यमिता शूरो दयते वसूनि ॥४
इयमिन्द्रं वरुणमष्ट मे गीः प्रावत् तोके तनये तूतुजाना ।
सुरत्नासो देववीतिं गमेम यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ।५।६

हे इन्द्र और वरुण ! मैं तुम्हें इस यज्ञ में बुलाता हूँ। हाथों में ग्रहण की हुई जुहू तुम्हारी ओर गमन करती है।१। हे इन्द्र और वरुण! तुम्हारा स्वर्ग वृष्टि जल से सबको सुख देता है। तुम पापी को बन्धन में डालो। इन्द्र हमारे स्थान की वृद्धि करें और वरुण का क्रोध हमारी रक्षा के लिए हो।२। हे इन्द्र और वरुण ! हमारे गृह-यज्ञ को सुन्दर करो, स्तोत्राओं की स्तुतियों उत्कृष्टता को प्राप्त हों। देव प्रेरित धन हमें मिले। वे हमें कामनाओं से रक्षित करें।३। हे इन्द्र और वरुण ! हमें वरणीय घर और अन्न-सम्पन्न धन दो। असत्य के नाशक आदित्य वीरों को प्रचुर धन प्रदान करते हैं।४। मेरी स्तुति इन्द्र और वरुण की सेवा में करे। मेरे स्तोत्र मेरे पुत्रादि के रक्षक हों। हम श्रेष्ठ रत्नादि प्राप्त करें। तुम सदा हमारा पालन करो। ।

सूक्त ८५

(ऋषि—वसिष्ठ। देवता—इन्द्रावरुणो। छन्द—त्रिष्टुप्)

पुनीषे वामरक्षसं मनीषां सोममिन्द्राय वरुणाय जुह्वत्।
घृतप्रतीकामुषसं न देवीं ता नो यामन्नुरुष्यतामभीके ॥१
स्पर्धन्ते वा उ देवहूये अत्र येषु ध्वजेषु दिद्यवः पतन्ति।
युवं तां इन्द्रावरुणावमित्रान् हतं पराचः शर्वा विषूचः ॥२
आपश्चिद्धि स्वयशसः सदःसु देवीरिन्द्रं वरुणं देवता धुः।
कृष्टीरन्यो धारयति प्रविक्ता वृत्राण्यन्यो अप्रतीनि हन्ति ॥३
स सुक्रतुर्ऋतचिदस्तु होता य आदित्य शवसा वां नमस्वान्।
आववर्तदवसे वां हविष्मानसदित् स सुविताय प्रयस्वान् ॥४
इयमिन्द्रं वरुणमष्ट मे गीः प्रावत् तोके तनये तूतुजाना।
सुरत्नासो देववीतिं गमेम यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ।५।७

हे इन्द्र और वरुण ! मैं तुम्हारे लिए सोमरस की आहुति देता हूँ। राक्षसों से हीन स्तुति को उषा के तेज के समान परिष्कृत करता हूँ। वे युद्ध और यात्रा में हमारी रक्षा करे।१। युद्ध में शत्रुगण हमारे

प्रतिद्वन्दी होते हैं । इन्द्र और वरुण ! जिस संग्राम में ध्वजा पर शस्त्र गिरें उस संग्राम मे पीछे हटते हुए शत्रुको भी तुम नष्ट करो ।२। सभी सोम तेजस्वी होकर इन्द्र और वरुण को धारण करते हैं । उनमें इन्द्र शत्रुओं का संहार करते हैं और वरुण प्रजाओं को पृथक रूप से धारण करते हैं ।३। हे बली आदित्यो ! जो तुम्हारी सेवा करता है, वह श्रेष्ठ कर्मा और यज्ञ का जानने वाला हो । जो हवियुक्त यजमान तुम्हें तृप्त करनेकी इच्छासे बुलाया है, वह अन्नवान् होता हुआ फलकी प्राप्ति करे । । मेरा स्तोत्र इन्द्र और वरुणको व्याप्त करे । इससे मेरे पुत्र-पौत्रादि की रक्षा हो । हम श्रेष्ठ घर और यज्ञसे सम्पन्न हों । तुम सदा हमारा पालन करो ।५। (७)

सूक्त ८६

(ऋषि—वसिष्ठ । देवता—वरुण: । छन्द—त्रिष्टुप्)

धीरा त्वस्य महिना जनूंषि वि यस्तस्तम्भ रोदसी चिदुर्वी ।
प्र नाकवृष्वं नुनुदे बृहन्तं द्विता नक्षत्रं पप्रथच्च भूम ॥१
उत स्वया तन्वा सं वदे तत् कदा न्वन्तर्वरुणे भुवानि ।
किं मे हव्यमहृणानो जुषेत कदा मृलीकं सुमना अभि ख्यम् ।२
पृच्छे तदेनो वरुण दिदृक्षूपो एमि चिकितुषो विपृच्छम् ।
समानमिन्मे कवयश्चिदाहुरयं ह तुभ्यं वरुणो हृणीते ॥३
किमाग आस वरुण ज्येष्ठं यत् स्तोतारं जिघांससि सखायम् ।
प्र तन्मे वोचो दूलभ स्वधावो ऽव त्वानेना नमसा तुर इयाम्॥४
अव द्रुग्धानि पित्र्या सृजा नो ऽव या वयं चकृमा तनूभिः ।
अव राजन् पशुतृपं न तायुं सृजा वत्सं न दाम्नो वसिष्ठम् ॥५
न स स्वो दक्षो वरुण ध्रुतिः सा सुरा मन्युर्विभीदको अचित्तिः ।
अस्ति ज्यायान् कनीयस उपारे स्वप्नश्चनेदनृतस्य प्रयोता ।६
अरं दासो न मीलहुषे कराण्यहं देवाय भूर्णयेऽनागाः ।
अचेतयदचितो देवो अर्यो गृत्सं राये कवितरो जुनाति ॥७

अयं सु तुभ्यं वरुण स्वधावो हृदि स्तोम उपश्रितश्चिदस्तु।
शं नः क्षेमे शमु योगे नो अस्तु यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः।८ ८

वरुण का जन्म महिमा से युक्त हुआ। जिन्होंने विस्तीण द्यावा पृथिवी की स्थापना की। इन्हीं ने आकाश को और नक्षत्रों को प्रेरित कर पृथिवी को प्रशस्त किया।१। मैं वरुण के साथ कब रहूँगा! वे मेरे हव्य को कब ग्रहण करेंगे? मैं उसके दर्शन कब कर सकूँगा!।२। हे वरुण! मैं तुमसे उस पाप निवारण की बात पूछूँगा। मैंने विद्वानों से प्रश्न किये हैं। सभी कहते हैं कि तुमसे वरुण रुष्ट है।३। हे वरुण! मुझसे कौन सा अपराध हुआ है जिससे कारण तुम मेरे मित्र स्तोता का वध करना चाहते हो। मुझे वह बतादो जिससे मैं शुभ कर्म वाला होकर नमस्कार करता हुआ तुम्हारे समक्ष पहुँचूँ।४। हे बरुण! हमारे पैतृक द्रोह को दूर करो। हमने देह से जो अपराध किया है उससे भी मुक्त करो। जैसे पशु-चोर पशु को तृणादि, खिलाकर तृप्त करताहै और जैसे बछड़ा रस्सी से खुल कर मुक्त होता है, वैसे ही मुझे पाप से मुक्त करो।५। पाप अपने दोष के कारण ही प्राप्त नहीं होता, अपितु वह क्रोध भ्रम जुआ खेलना अज्ञान अथवा दैव-गति से प्राप्त होता है। कभी-कभी बड़े भी छोटों को कुमार्ग पर चलाते हैं तथा स्वप्न में भी कभी पाप की उत्पत्ति हो जाती है।६। मैं वरुण की पवित्र होकर सेवा करूँगा। वे हम ज्ञान-हीनों को ज्ञान दे, स्तोता के लिए धन प्रेरित करें।७। हे वरुण! यह स्तुति तुम्हारे लिए हैं। लाभ और क्षेम हमारे लिये कल्याणकारी हो। तुम सदा हमारा पालन करो।८। (६)

सूक्त ८७

(ऋषि—वसिष्ठः। देवता—वरुणः। छन्द—त्रिष्टुप्)

रदत् पथो वरुणः सूर्याय प्राणस समुद्रिया नदीनाम्।
सर्गो न सृष्टो अर्वतीर्ऋतायश्चकार महीरवनीरहभ्यः।।१

आत्मा ते वातो रज आ नवीनोत् पशुर्न भूर्णिर्यवसे ससवान्।
अन्तर्मही बृहती रोदसीमे विश्वा ते धाम वरुण प्रियाणि ॥२
परि स्पशो वरुणस्य स्वदिष्टा उभे पश्यन्ति रोदसी सुमेके।
ऋतावानः कवयो यज्ञधीराः प्रचेतसो य इषयन्त मन्त ॥३
उवाच मे वरुणो मेधिराय त्रिः सप्त नामाघ्न्या बिभर्ति।
विद्वान् पदस्य गुह्या न वोचद् युगाय विप्र उपराय शिक्षन् ॥४
तिस्रो द्यावो निहिता अन्तरस्मिन् तिस्रो भूमीरुपराः षड्विधानाः।
गृत्सो राजा वरुणश्चक्र एतं दिवि प्रेङ्खं हिरण्ययं शुभे कम् ॥५
अव सिन्धु वरुणो द्यौरिव स्थाद् द्रप्सो न श्वेतो मृगस्तुविष्मान्।
गम्भीरशंसो रजसो विमानः सुपारक्षत्रः सतो अस्य राजा ॥६
यो मृलयाति चक्रुषे चिदागो वयं स्याम वरुणो अनागाः।
अनु व्रतान्यदितेर्ऋधन्तो यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥७॥८

वरुण ने ही सूर्य को अन्तरिक्ष में मार्ग दिया था। इन्होंने नदियों को जल दिया वरुण ने शीघ्र गमन की इच्छा से रात्रियों को दिन से पृथक् कर दिया।१। हे वरुण! संसार की आत्मा रूप वायु जल को सब ओर भेजता है। जैसे तृण खाकर पशु अन्न ढोता है, वैसे ही वायु भी अन्न वहन करता है। विस्तीर्ण द्यावा-पृथिवी में तुम्हारे सब स्थान सब को प्रिय लगते हैं।२। वरुण के सब अनुचर प्रशंसा के पात्र हैं वे आकाश-पृथिवी के श्रेष्ठ रूपों को देखते हैं। मेधावियोंके स्तोत्रको भी देखते हैं ।३। मेधावी ऋत्विज हूँ। वरुण ने कहा था कि पृथिवी इक्कीस नाम वाली है। मेधावी वरुण ने योग्य छात्र को उपदेश देकर सब बातें बताई हैं।४। इन वरुण के भीतर तीन स्वर्ग है इसमें तीन प्रकार की भूमियाँ और छः प्रकार की दिशायें हैं। वरुणने सूर्यके समान ही समुद्र की रचना की। वे मृग समान बलवान जल के रचना वाले, दुःख से पार जाने वाले और सभी उत्पन्न पदार्थों के स्वामी हैं।६।

अपराधी पर भी दया करने वाले हैं। हम उनके कर्मो को बढ़ाकर अपराधों से मुक्त हों। तुम सदा हमारा पालन करो ।७।   (९)

सूक्त ८८

(ऋषि–वसिष्ठः। देवता–वरुणः । छंद–त्रिष्टुप्)

प्र सन्ध्युवं वरुणात प्रेष्ठां मतिं वसिष्ठ मीलहुषे भरस्व ।
य ईमर्वाञ्चं करते यजत्रं सहस्रामघं वृषण बृहन्तम् ॥१
अधा न्वस्य सदृशं जगन्वानग्नेरनीकं वरुणस्य मंसि ।
स्वर्यदश्मन्नधिपा उ अन्धो ऽभि मा वपुर्दृशये नीयात् ॥२
आ यद् रुहाव वरुणश्च नावं प्र यत् समुद्रमीरयाव मध्यम् ।
अधि यदपां स्नुभिश्चराव प्र प्रेंख ईंखयावहे शुभे कम् ॥३
वसिष्ठं ह वरुणो नाव्याधादृषि चकार स्वपा महोभिः ।
स्तोतारं विप्रः सुदिनत्वे अह्नां यान्नु द्यावस्ततनन् यादुषासः॥४
क्व त्यानि नौ सख्या बभूवुः सचावहे यदवृकं पुरा चित् ।
बृहन्तं मानं वरुण स्वधावः सहस्रद्वारं जगमा गृहं ते ॥५
य आपिर्नित्यो वरुण प्रियः सन् त्वामागांसि कृणवत् सखा ते ।
मा त एनस्वन्तो यक्षिन् भुजेम यन्धि ष्मा विप्रः स्तुवते वरूथम्६
ध्रुवासु त्वासु क्षितिषु क्षियन्तो व्यस्मत् पाश वरुणो मुमोचत् ।
अवो वन्वाना अदितेरुपस्थाद् यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः॥७॥१०

हे वसिष्ठ ! वरुण कामनाओं के वर्षक हैं। तुम उनकी स्तुति करो। वे यज्ञके योग्य और धनोंके स्वामी हैं तथा सूर्य को सबके सामने लाते हैं।१। वरुण का दर्शन करता हुआ मैं अग्नि की ज्वालाओं को नमस्कार करता हूँ। सुखकारी पाषाण के कर्म में रत इस सोम रस का बरुण अधिकाधिक पान करते हैं, तब दर्शन के निमित्त मेरी शरीर-वृद्धि करते हैं।२। जब मैं और वरुण नौका पर आरूढ़ हुए और जब समुद्र में नौका भले प्रकार चलाई गई, तब हमने उस नौका रूपी झूला पर सुख-पूर्वक क्रीड़ा की थी।३। विद्वान वरुण ने दिन-रात्रि को बढ़ाया और मुझे नौकापर चढ़ा दिया। अपने रक्षण-कर्मों द्वारा उन्होंने वसिष्ठ

को श्रेष्ठ कर्म वाला किया। हे वरुण ! हम प्राचीन काल में मित्र कब हुए थे। हम में जो पहले से हिंसा रहित मित्रता थी, उसका हम निरन्तर निर्वाह करते चले आ रहे हैं। वरुण ! तुम अन्नों के स्वामी हो। मैं तुम्हारे सहस्त्र द्वार वाले गृह में प्रविष्ट होऊंगा।५। हे वरुण ! जिन नित्य बन्धुओं ने प्राचीन समय में तुम्हारा अपराध किया था, वह अब तुम्हारे मित्र बनें। हम तुम्हारे आत्मीय पापपूर्ण भोग को न भोगें। तुम स्तुति करने वाले को घर दो। हे वरुण ! हम तुम्हारे स्तोता है। हमे बन्धन मुक्त करो। हम तुम्हारी रक्षा का उपभोग करें। तुम सदा हमारा पालन करो।७। (१०)

सूक्त ८९

(वसिष्ठः । देवता—वरुणः। छंद—गायत्री, जगती)

मो षु वरुण मृन्मयं गृहं राजन्नहं गमम्। मृला सुक्षत्र मृलय ॥१
यदेभि प्रस्फुरन्निव दृतिर्न ध्मातो अद्रिवः। मृला सुक्षत्र मृलय।२
क्रत्वः समह दीनता प्रतीपं जगमा शुचे। मृला सुक्षत्र मृलय ॥३
अपां मध्ये तस्थिवांसं तृष्णाविदज्जरितारम्।
मृला सुक्षत्र मृलय ॥४
यत् किं चेदं वरुण दैव्ये जनेऽभिद्रोहं मनुष्याश्चरामसि।
अचित्ती यत् तव धर्मा युयोपिम मा नस्तस्मादेनसो देव रीरिषः५

हे वरुण ! मैं मिट्टी का घर प्राप्त न करूं। तुम मुझ पर दया करो और सुख दो।१। वरुण ! मैं वायु से धकेले जाते हुए मेघ के समान कम्पित होता हुआ जाता हूँ, तुम मुझ पर दया करो और सुख दो।२। हे वरुण ! दरिद्रता और असमर्थता के कारण अनुष्ठान को मैं नहीं कर सका। तुम मुझ पर कृपा करो और कल्याण करो।३। समुद्र में रहकर भी मुझे प्यास लगी है। तुम मुझे कृपा पूर्वक सुखी करो।५। हे वरुण ! हम मनुष्यों से जो देवताओं का अपराध हुआ है या अज्ञानवश तुम्हारे कर्म में जो त्रुटि रह गई, उन पापो के कारण हमारी हिंसा न करना।५। (११)

सूक्त ९०

(ऋषि–वसिष्ठः । देवता–वायुः, इन्द्रावायु । छंद–त्रिष्टुप्)

प्र वीरया शुचयो दद्रिरे वामध्वर्युभिर्मधुमन्तः सुतासः ।
वह वायो नियुतो याह्यच्छा पिबा सुतस्यान्धसो मदाय ॥१
ईशानाय प्रहुतिं यस्त आनट् शुचिं सोमं शुचिपास्तुभ्यं वायो ।
कृणोषि तं मर्त्येषु प्रशस्तं जातोजातो जायते वाज्यस्य ॥२
राये नु यं जज्ञतू रोदसीमे राये देवी धिषणा धाति देवम् ।
अध वायुं नियुतः सश्चत स्वा उत श्वेतं वसुधितिं निरेके ॥३
उच्छन्नुषसः सुदिना अरिप्रा उरु ज्योतिर्विविदुर्दीध्यानाः ।
गव्यं चिदूर्वमुशिजो वि वव्रुस्तेषामनु प्रदिवः सस्रुरापः ॥४
ते सत्येन मनसा दीध्यानाः स्वेन युक्तासः क्रतुना वहन्ति ।
इन्द्रवायू वीरवाहं रथं वामीशानयोरभि पृक्षः सचन्ते ॥५
ईशानासो ये दधते स्वर्णो गोभिरश्वेभिर्वसुभिर्हिरण्यैः ।
इन्द्रवायू सूरयो विश्वमायुरर्वद्भिर्वीरैः पृतनासु सह्युः ॥६
अर्वन्तो न श्रवसो भिक्षमाणा इन्द्रवायू सुष्टुतिभिर्वसिष्ठाः ।
वाजयन्तः स्ववसे हुवेम यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ।७।१२

हे वीरकर्मा वायो ! इस मधुर रस वाले सोम को अध्वर्युगण प्रस्तुत करते हैं । तुम अपने अश्वों को योजितकर यहाँ आओ और सोम पान करो ।१। हे वायो जो यजमान तुम्हें ईश्वर मानकर आहुति देता हैं हे वरुण ! जो तुम्हें सोम अर्पित करता है, उसे मनुष्योंमें प्रमुख करो वह सर्वश्रेष्ठ होकर धन पाता है ।२। जिन वायु को आकाश-पृथिवी ने धन के लिए प्रकट किया और इसलिए स्तुति जिन वायु का धारण करती है, वायु अपने अश्वों द्वारा सेवा प्राप्त करते हैं ।३। पाप-रहित उषायें अन्धकार को मिटाती हैं, वे विशिष्ट दीप्ति वाली हुई हैं । अङ्गिराओं ने गौ रूप धन पाया और प्राचीन जल अङ्गिराओं का अनुगामी हुआ था ।४। हे इन्द्र और वायु ! तुम ईश्वर हो । यजमान अपनी हार्दिक स्तुतियों द्वारा तुम्हारे रथ को अपने यज्ञ में वहन करते हैं और

सभी अन्न तुम्हारी सेवा करते हैं ।५। हे इन्द्र और वायो ! जो समर्थ-जन हमें गौ, अश्व धन और स्वर्ण आदि देते हैं वे दाता व्याप्त जीवन पर विजय पाते हैं ।३। अश्व के समान हवि वहन करने वाले वसिष्ठोंने श्रेष्ठ स्तुति द्वारा इन्द्र और वायु को आहूत किया। तुम हमारा सदा पालन करो ।७।

सूक्त ६१

(ऋषि–वसिष्ठः । देवता–वायुः इन्द्रवायु । छंद–त्रिष्टुप्)

कुविदङ्ग नमसा ये वृधासः पुरा देवा अनवद्यास आसन् ।
ते वायवे मनवे बाधितायाऽवासयन्नुषसं सूर्येण । १
उशन्ता दूता न दभाय गोपा मासश्च पाथः शरदश्च पूर्वीः ।
इन्द्रवायू सुष्टुतिर्वामियाना मार्डीकमीट्टे सुवितं च नव्यम् ।२
पीवोअन्नाँ रयिवृधः सुमेधाः श्वेतः सिषक्ति नियुतामभिश्रीः ।
ते वायवे समनसो वि तस्थुर्विश्वेन्नरः स्वपत्यानि चक्रुः ।।३
यावत् तरस्तन्वो यावदोजो यावन्नरश्चक्षसा दीध्यानाः ।
शुचि सोमं शुचिपा पातमस्मे इन्द्रवायू सदतं बर्हिरेदम् ।।४
नियुवाना नियुतः स्पार्हवीरा इन्द्रवायू सरथं यातमर्वाक् ।
इदं हि वां प्रभृतं मध्वो अग्रमध प्रीणाना वि मुमुक्तमस्मे ।।५
या वां शतं नियुतो याः सहस्रमिन्द्रवायू विश्ववाराः सचन्ते ।
आभिर्यातं सुविदत्राभिरर्वाक् पातं नरा प्रतिभृतस्य मध्वः ।।६
अर्वन्तो न श्रवसो भिक्षमाणा इन्द्रवायू सुष्टुतिभिर्वसिष्ठाः ।
वाजयन्तः स्ववसे हुवेम यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ।७।१३

जो स्तोता वायु के स्तोत्र को करते हुए समृद्ध हुए, उन्होंने संकट-ग्रस्तों का उद्धार करने के लिए वायु को हवि प्रदान करने के अभिप्राय से सूर्य और उषा को एकत्र रोका था ।१। हे इन्द्र और वायु तुम हमारे रक्षक हो। हमारी हिंसा मत करना। श्रेष्ट स्तुति तुम्हारी ओर गमन करके श्रेष्ठ धन माँगती है ।२। उज्ज्वल वर्ण वाले वायु जिन पुरुषों को आश्रय देते हैं वे पुरुष एक से मन वाले होकर वायु का यज्ञ करते

हैं । उन्होंने श्रेष्ठ अपत्य प्राप्ति के लिए यज्ञ रूप कार्यों को किया ।३। हे इन्द्र और वायो ! जब तक तुम्हारे देह में बल है तथा वेग है, जब तक ज्ञान के बल कर्मवान् प्रकाशमान रहते हैं तब तक तुम इन कुशों पर बैठकर सोमपान करो ।४। हे इन्द्र और वायो ! तुम्हारा स्तोता कामना वाला है । तुम अपने अश्वोंको आयोजित कर आओ, यह सोम तुम्हारे निमित्त हैं तुम इसे पीकर हमें पाप से मुक्त करो ।५। हे इन्द्र और वायो ! तुम्हारे सैकड़ों अश्व तुम्हारी सेवा में रत है वे अश्व वाले अन्न-याचक वसिष्ठगण श्रेष्ठ स्तोत्र द्वारा इन्द्र और वायु का आह्वान करते हैं तुम हमारा सदा पालन करो ।७। (१३)

सूक्त ९२

(ऋषि—वसिष्ठ । देवता—वायु: इन्द्रवायू । छंद—त्रिष्टुप्)

आ वायो भूष शुचिपा उप नः सहस्रं ते नियुतो विश्ववार ।
उपो ते अन्धो मद्यमयामि यस्य देव दधिषे पूर्वपेयम् ॥१
प्र सोता जीरो अध्वरेष्वस्थात् सोममिन्द्राय वायवे पिबध्यै ।
प्र यद् वां मध्वो अग्रियं भरन्त्यध्वर्यवो देवयन्तः शचीभिः ॥२
प्र याभिर्यासि दाश्वांसमच्छा नियुद्भिर्वायविष्टये दुरोणे ।
नि नो रयिं सुभोजसं युवस्व वि वीरं गव्यमश्व्यं च राधः ॥३
ये वायव इन्द्रमादनास आदेवासो नितोशनासो अर्यः ।
घ्नन्तो वृत्राणि सूरिभिः ष्याम सासह्वांसो युधा नृभिरमित्रान् ॥४
आ नो नियुद्भिः शतिनीभिरध्वरं सहस्रिणीभिरुप याहि यज्ञम् ।
वायो अस्मिन् त्सवने मादयस्व यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥५।१४

हे सोमपायी वायो ! तुम हमारे अभिमुख होओ । तुम सहस्र अश्व वाले हो । तुम जिस सोम को प्रथम पीतेहो वह सोम तुम्हारे लिये पात्र में स्थित हैं ।१। श्रेष्ठकर्मा अध्वर्यु ने इन्द्र और वायु के लिये सोम प्रस्तुत किया है । हे इन्द्र और वायो ! जिस यज्ञ से अध्वर्युओं ने सोम

का अग्र भाग तुम्हारे लिए अर्पित किया ।२। हे वायो ! तुम हविदाता यजमान के घर में अपने जिन अश्वों से पहुँचते हो, उसके सहित यहाँ आओ और हमें श्रेष्ठ अन्न-युक्त धन प्रदान करो । । जो देवोपासक इन्द्र और वायु को सन्तुष्ट करते हैं, वे शत्रुओं का हनन करने वाले हैं, हम उनकी सहायतासे शत्रु-नाश करें ।४। हे वायो ! तुत सैकड़ों हजारों अश्वों के सहित यज्ञ में आओ और सोम-पान द्वारा हर्षित होओ । तुम सदा हमारा पालन करो ।५।　(१९)

सूक्त ६३

(ऋषि—वसिष्ठः । देवता—इन्द्राग्निः । छंद—त्रिष्टुप्)

शुचिं नु स्तोमं नवजातमद्येन्द्राग्नी वृत्रहणा जुषेथाम् ।
उभा हि वां सुहवा जोहवीमि ता वाजं सद्य उन्नते धेष्ठा ॥१
ता सानसी शवसाना हि भूतं सोकंवृधा शवसा शूशुवांसा ।
क्षयन्तौ रायो यवसस्य भूरेः पृङ्क्तं वाजस्य स्थविरस्य घृष्वेः ॥२
उपो ह यद् विदथं वाजिनो गुर्धीभिर्विप्राः प्रमतिमिच्छमानाः ।
अर्वन्तो न काष्ठां नक्षमाणा इन्द्राग्नी जोहुवतो नरस्ते ॥३
गीर्भिर्विप्रः प्रमतिमिच्छमान ईट्टे रयिं यशसं पूर्वभाजम् ।
इन्द्राग्नी वृत्रहणा सुवज्रा प्र नो नव्येभिस्तिरतं देष्णैः ॥४
सं यन्मही मिथती स्पर्धमाने तनूरुचा शूरसाता यतैते ।
अदेवयुं विदथे देवयुभिः सत्रा हतं सोमसुता जनेन ।४।१५

हे इन्द्राग्ने! मेरे अभिनवस्तोत्र को सुनो । तुम सुख-पूर्वक आह्वान योग्य हो । मैं तुम्हें बारम्बार आहूत करता हूँ । तुम कामना वाले यजमान को अन्न प्रदान करो ।१। हे इन्द्राग्ने ! तुम यजनीय हो । तुम शत्रुओंका नाश करने वाले होओ । तुम प्रचुर धन और अन्न के स्वामी हो हमें शत्रु-नाशक अन्न प्रदान करो ।२। जो हविदाता यज्ञ कर्म में लगते हैं, वे अश्वके समान इन्द्राग्नि के कर्मों को प्राप्त करते हुए उनका बारम्बार आह्वान करते हैं ।३। हे इन्द्राग्ने ! उपभोग्य धन के निमित्त

विप्र स्तोता तुम्हारी स्तुति करता हैं तुम वृत्र हन्ता और श्रेष्ठ हो, तुम हमें दान योग्य धन द्वारा बढ़ाओ ।१४। रक्षक्षेत्रमें उपस्थित शत्रु सेनाओं को अपने तेज से नष्ट करो और देवताओं की कामना करने वाले यजमान के लिए देव द्वेषी अयाज्ञिकों को भी नष्ट करो ।१६।

इमामु षु सोमसुतिमुप न एन्द्राग्नी सौमनसाय यातम् ।
नू चिद्धि परिमम्नाथे अस्माना वां शश्वद्भिर्ववृतीय वाजैः ॥६
सो अग्न एना नमसा समिद्धो ऽच्छा मित्रं वरुणमिन्द्रं वोचेः ।
यत् सीमागश्चकृमा तत् सुमृल तदर्यमादितिः शिश्रथन्तु ॥७
एता अग्न आशुषाणास इष्टीर्युवोः सचाभ्यश्याम वाजान् ।
मेन्द्रो नो विष्णुर्मरुतः परि ख्यन् यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः
८।१६

हे इन्द्राग्ने ! हमारे सोमाभिषव कर्ममें पधारो । तुम हमारे सिवाय अन्य किसी को नहीं जानते हो, इसलिए मैं तुम्हारा आह्वान करता हूँ ।६। हे अग्ने ! समिधाओं द्वारा बढ़कर तुम इन्द्र और मित्र से कहो कि यह हमारी रक्षा के योग्य है । तुम हमारे द्वारा हुए अपराधों को दूर कर हमारी रक्षा करो । अर्यमा और अदिति भी हमें दोष मुक्त करें ।७। हे अग्ने ! हम इस यज्ञ के द्वारा तुम्हारा अन्न शीघ्र पावें । इन्द्र, विष्णु, मरुदगण विरोधियों पर कृपा न करें । तुम सदा हमारा पालन करो ।८।　　(१६)

सूक्त ९४

(ऋषि–वसिष्ठः । देवता–इन्द्राग्निः । छन्द–त्रिष्टुप्)

इयं वामस्य मन्मन इन्द्राग्नी पूर्व्यस्तुतिः। अभ्राद् वृष्टिरिवाजनि१
शृणुतं जरितुर्हवमिन्द्राग्नी वनतं गिरः। ईशाना पिप्यतं धियः ।२
मा पापत्वाय नो नरेन्द्राग्नी माभिशस्तये। मा नो रीरधतं निदे३
इन्द्रे अग्ना नमो बृहत् सुवृक्तिमेरयामहे। धिया धना अवस्यवः४
ता हि शश्वन्त ईलत इत्था विप्रास उतये। सबाधो वाजसातये५

ता वां गीर्भिर्विपन्यवः प्रयस्वन्तो हवामहे । मेधसाता सनिष्यवः ।६।१७

हे इन्द्राग्ने ! मेघ से वृष्टि जल के उत्पन्न होने के समान इस स्तोता ने स्तुति उत्पन्न की है ।१। इन्द्राग्ने ! आह्वान सुनो । तुम ईश्वर हो । इस अनुष्ठान को सम्पूर्ण करो ।२। हे इन्द्राग्ने ! हमें पराजय, निन्द्रा और हीनता में मत डाल देना ।३। हम रक्षा की कामना करते हुए इन्द्र और अग्नि की श्रेष्ठ स्तुति करते हैं ।४। इन्द्राग्नि की मेधावी स्तोता स्तुति करते हैं और समान सङ्कट में पड़े अन्य स्तोता भी अन्न के लिए उनकी स्तुति करते हैं ।५। अन्न-धन की कामना वाले हम उन इन्द्राग्नि का स्तुतियों द्वारा आह्वान करें ।६। (७)

इन्द्राग्नी अवसा गतमस्मभ्यं चर्षणीसहा । मा नो दुःशंस ईशत।७

मा कस्य नो अररुषो धूर्तिः प्रणङ् मर्त्यस्य । इन्द्राग्नी शर्म यच्छतम् ॥८

गोमद्धिरण्यवद् वसु यद् वामश्वावदीमहे । इन्द्राग्नी तद् वनेमहि ॥९

यत् सोम आ सुते नर इन्द्राग्नी अजोहवुः। सप्तीवन्ता सपर्यवः१०

उक्थेभिर्वृत्रहन्तमा या मन्दाना चिदा गिरा ।
आंगूषैराविवासतः ॥११

ताविद्दुःशंसं मर्त्यं दुर्विद्वांसं रक्षस्विनम् ।
आभोगं हन्मना हतमुदधिं हन्मना हतम् ।१२।१८

हे इन्द्राग्ने । तुम मनुष्यों को प्रकट करते हो । तुम अन्न सहित आगमन करो। कटु-भाषीं पुरुष हम पर शासन न करें ।७। हे इन्द्राग्ने हम शत्रु द्वारा हिंसित न हों । हमारा मङ्गल करो ।८। हे इन्द्राग्ने ! हम तुमसे जिस विविध प्रकार के धन मांगते हैं । वह उपभोग्य हों ।९। सोमाभिषव के पश्चात् कर्म करने वाले पुरुप इन्द्राग्नि को बारम्बार आहूत करते हैं ।१०। हम वृत्रहन्ता इन्द्र और अग्नि की स्तुतियों से सेवा करते हैं ।११। हे इन्द्राग्ने ! तुम अपहारक दुष्ट को घड़े के समान अपने आयुध में तोड़ डालो ।१२। (१८)

सूक्त ६५

(ऋषि–वसिष्ठः । देवता–सरस्वती, सरस्वान् । छन्द–त्रिष्टुप्)

प्र क्षोदसा धायसा सस्र एषा सरस्वती धरुणमायसी पूः ।
प्रबाबधाना रथ्येव याति विश्वा अपो महिना सिन्धुरन्याः ॥१
एकाचेतत् सरस्वतीं नदीनां शुचिर्यती गिरिभ्य आ समुद्रात् ।
रायश्चेतन्ती भुवनस्य भूरेर्घृतं पयो दुदुहे नाहुषाय ॥२
स वावृधे नर्यो योषणासु वृषा शिशुर्वृषभो यज्ञियासु ।
स वाजिनं मघवद्भ्यो दधाति वि सातये तन्वं मामृजीत ॥३
उत स्या नः सरस्वती जुषाणोप श्रवत् सुभगा यज्ञे अस्मिन् ।
मितज्ञुभिर्नमस्यैरियाना राया युजा चिदुत्तरा सखिभ्यः ॥४
इमा जुह्वाना युष्मदा नमोभिः प्रति स्तोमं सरस्वति जुषस्व ।
तव शर्मन् प्रियतमे दधाना उप स्थेयाम शरणं न वृक्षम् ॥५
अयमु ते सरस्वति वसिष्ठो द्वारावृतस्य सुभगे व्यावः ।
वर्ध शुभ्रे स्तुवते रासि वाजान् यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः
।६।१६

लौह निर्मित नगरी के समान धारण करने वाली होकर यह सरस्वती धारण जल के सहित नमन करती है। वह अपनी महिमा से बहने वाली सब नदियों को बोध देने वाले सारथि के समान गमन करती है।१। नदियों में श्रेष्ठ जो सरस्वती पर्वत से चलकर समुद्र तक जाती है, उसने राजा नहुष की याचना को सुना और नहुष के लिए घृत दुग्ध का दोहन किया।२। वर्षा करने में समर्थ सरस्वान् (वायु) मनुष्यों के हित के लिये यज्ञीय योषित के मध्य प्रवृद्ध हुए। हवि वाले यजमानों को बलवान् पुत्र प्रधान करते हैं और उनके शरीर को शुद्ध करते हैं।३। सुन्दर धन वाली सरस्वती हमारी स्तुति सुनें पूज्य देवता भी उनके समक्ष झुकते हैं। वह धनवती देवी अपने उपासकों पर दया करती हैं।४। हे सरस्वति ! हम हवि वहन करते हुए और नमस्कार करते हुए यजमान तुमसे धन पावेंगे। तुम हमारी स्तुति का सेवन करो। तब हम तुम्हारे श्रय को प्राप्त करेंगे।५। हे सरस्वती !

तुम श्रेष्ठ धन वाली हो, यह वसिष्ठ यज्ञ-द्वार का उद्घाटन करता है। तुम स्तोता को अन्न प्रदान करो और सदा हमारा पालन करो।६।
(१६)

सूक्त ९६

(ऋषि-वसिष्टः । देवता-सरस्वतीं सरस्वान् । छन्द-बृहती, पंक्ति,गायत्री)

बृहदु गायिषे वचो ऽसुर्या नदीनाम् ।
सरस्वतीमिन्महया सुवृक्तिभिः स्तोमैर्वसिष्ठ रोदसी ॥१
उभे यत् ते महिना शुभ्रे अन्धसी अधिक्षियन्ति पूरवः ।
सा नो बोध्यवित्री मरुत्सखा चोद राधो मघोनाम् ॥२
भद्रमिद् भद्रा कृणवत् सरस्वत्यकवारी चेतति वाजिनीवती ।
गृणाना जमदग्निवत् स्तुवाना च वसिष्ठवत् ॥३
जनीयन्तो न्वग्रवः पुत्रीयन्तः अदानवः । सरस्वन्तं हवामहे ॥४
ये ते सरस्व ऊर्मयो मधुमन्तो घृतश्चुतः । तेभिर्नोऽविता भव ॥५
पीपिवांसं सरस्वतः स्तनं यो विश्वदर्शतः ।
भक्षीमहि प्रजामिषम् ।६।२०

हे वसिष्ठ ! नदियों में अत्यन्त वेग वाली सरस्वती की स्तुति करो। उन्हीं की पूजा करो।१। उज्जवल वर्णवाली सरस्वती ! तुम्हारी कृपा से दिव्य और पार्थिव अन्न प्राप्त होते है। तुम हमारी रक्षा करो और हवि देने वाले यजमानों के पास धन भेजो।२। सरस्वती कल्याण करें। वे हमें बुद्धि दें जमदग्नि के समान मेरे द्वारा स्तुति होने पर वसिष्ठ की स्तुति को ग्रहण करों।३। हम स्तोता स्त्री-पुत्रकी कामना वाले हैं। हम सरस्वान् देवो की स्तुति करते हैं।४। हे सरस्वान् ! तुम्हारी जो जल-राशि वृष्टि देती हैं, उसके द्वारा हमारा कल्याण करो।५। हम सरस्वान देवता के जलाधार को प्राप्त करें, वह देवता सबके दर्शन-योग्य है। उनसे हम वृद्धि और अन्न पावें।६। (२०)

सूक्त ९७

[ऋषि-वसिष्ठः । देवता-इन्द्रः, बृहस्पति,इन्द्रा ब्रह्मणस्पति । छन्द-त्रिष्टुप्)

यज्ञे दिवो नृषदने पृथिव्या नरो यत्र देवयवो मदन्ति ।
इन्द्राय यत्र सवनानि सुन्वे गमन्मदाय प्रथमं वयश्च ॥१
आ दैव्या वृणीमहेऽवांसि बृहस्पतिर्नो मह आ सखायः ।
यथा भवेम मीलहुषे अनागा यो नो दाता परावतः पितेव ॥२
तमु ज्येष्ठं नमसा हविर्भिः सुशेवं ब्रह्मणस्पतिं गृणीषे ।
इन्द्रं श्लोको महि दैव्यः सिषक्तु यो ब्रह्मणो देवकृतस्य राजा ।३
स आ नो योनिं सदतु प्रेष्ठो बृहस्पतिर्विश्ववारो यो अस्ति ।
कामो रायः सुवीर्यस्य तं दात् पर्षन्नो अति सश्चतो अरिष्टान्॥४
तमा नो अर्कममृताय जुष्टमिमे धासुरमृतासः पुराजाः ।
शुचिक्रन्दं यजतं पस्त्यानां बृहस्पतिमनर्वाणं हुवेम ।५।११

जिस यज्ञ में देवताओं की कामना वाले मेधावीजन हर्षित होते हैं और जहाँ सब सवनों में इन्द्र के लिए सोमाभिषव होता है, उस यज्ञ में सर्वप्रथम इन्द्र अपने अश्वों सहित आवे ।१। हम देवताओं से रक्षा याचना करते हैं । बृहस्पति हमारी हवि को ग्रहण करें । जैसे दूर से आकर पिता पुत्र को धन देता है, वैसे बृहस्पति हमें धन दें। हम उनके प्रति किसी प्रकार अपराधी न हों ।२। मैं उन ब्रह्मणस्पति को नमस्कार और हव्य अर्पित करता हूँ । जो स्तोत्र मन्त्रों से श्रेष्ठ है वही स्तोत्र इन्द्र की सेवा करे ।३। ब्रह्मणस्पति हमारी वेदी पर विराजमान हों । वे तुम्हारी धन और जल कामनाओं को पूर्ण करें । हम जिन विघ्नोंमें ग्रस्त है वे उनसे पार लगावें ।४। अविनाशी देवता अन्न दें । हम यज्ञ योग्य बृहस्पति का आह्वान करते हैं ।५। (२१)

तं शग्मासो अरुषासो अश्वा बृहस्पतिं सहवाहो वहन्ति ।
सहश्चिद् यस्य नीलवत् सधस्थं नभो न रूपमरुषं वसानाः ॥६
स हि शुचिः शतपत्रः स शुन्ध्युर्हिरण्यवाशीरिषिरः स्वर्षाः ।
बृहस्पतिः स स्वावेश ऋष्वः पुरू सखिभ्य आसुतिं करिष्ठः ॥७

देवी देवस्य रोदसी जनित्री बृहस्पतिं वावृधतुर्महित्वा ।
दक्षाय्याय दक्षता सखायः करद् ब्रह्मणे सुतरा सुगाधा ॥८
इयं वां ब्रह्मणस्पते सुवृक्तिर्ब्रह्मेन्द्राय वज्रिणे अकारि ।
अविष्टं धियो जिगृतं पुरंधीर्जजस्तमर्यो वनुषामरातीः ॥९
बृहस्पते युवमिन्द्रश्च वस्वो दिव्यस्येशाथे उत पार्थिवस्य ।
धत्तं रयिं स्तुवते कीरये चिद् यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ।
।१०।२२

आदित्य के समान तेजस्वी अश्व उन बृहस्पति को लावें । उन बृहस्पतिके पास गृह और श्रेष्ठ बल है ।६। बृहस्पति के अनेक वाहन हैं। वे शोधक और रमणीय वाद्यों से सजे हैं । वे गमनशील और दर्शनीय है । स्तोत्र को वे वाहन प्रचुर अन्न प्राप्त कराते हैं ।७। जननी रूपी द्यावा-पृथिवी बृहस्पति का अपनी महिमा से बढ़ावे । मित्रावरुण भी उन्हें बढ़ावें । वे जलों को अन्न के निमित्त द्रव रूप में करते हैं ।८। हे बृह्मणस्पते ? मैंने तुम्हारी और वज्रधर इन्द्र की श्रेष्ठ स्तुति की है। तुम हमारे यज्ञ की रक्षा करो । हम पर आक्रमण करने वाली शत्रु सेना का संहार करो ।९। हे बृहस्पति और इन्द्र ! तुम पार्थिव और दिव्य धनों के स्वामी हो । स्तोता को धन देने वाले हो । तुम सदा हमारा पालन करो ।१०। (२२)

सूक्त ९८

(ऋषि—वसिष्ठः । देवता—इन्द्रः । इन्द्राबृहस्पती । छन्द—त्रिष्टुप्)

अध्वर्यवोऽरुणं दुग्धमंशुं जुहोतन वृषभाय क्षितीनाम ।
गौराद् वेदीयाँ अवपानमिन्द्रो विश्वाहेद् याति सुतसोममिच्छन् १
यद् दधिषे प्रदिवि चार्वन्नं दिवेदिवे पीतिमिदस्य वक्षि ।
उत हृदोत मनजा जुषाण उशन्निन्द्र प्रस्थितान् पाहि सोमान्॥२
जज्ञानः सोमं सहसे पपाथ प्र ते माता महिमानमुवाच ।
एन्द्र पप्राथोर्वन्तरिक्षं युधा देवेभ्यो वरिवश्चकर्थ ॥३
यद् योधया महतो मन्यमानान् त्साक्षाम तान् बाहुभिः शाशदानान् ।
यद् वा नृभिर्वृत इन्द्राभिपुध्यास्तं त्वयाजिं सौश्रवसं जयेम ॥४

प्रेन्द्रस्य वोचं प्रथमा कृतानि प्र नूतना मघवा या चकार ।
यदेददेवीरसहिष्ट माया अथाभवत् केवलः सोमो अस्य ॥५
तवेदं विश्वमभितः पशव्यं यत् पश्यसि चक्षसा सूर्यस्य ।
गवामसि गोपतिरेक इन्द्र भक्षीमहि ते प्रयतस्य वस्वः ॥६
बृहस्पते युवमिन्द्रश्च वस्वो दिव्यस्येशाथे उत पार्थिवस्य ।
धत्तं रयिं स्तुवते कीरये चिद् यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥७॥२२

हे अध्वर्युओं ! इन्द्र के लिए सोमाहुति दो । इन्द्र सोम का अभिषव करने वाले यजमान को ढूँढ़ते हुए सदा आते हैं ।१। हे इन्द्र ! प्राचीन काल मैं तुमने किस सोम को धारण किया था, उसी सोम के पीने की अब भी इच्छा करो । अब तुम इस अहित सोम का पान करो ।२। हे इन्द्र ! तुमने उत्पन्न होते ही सोम पिया था । अदिति ने तुम्हारी महिमा बताई थी कि तुमने विशाल अन्तरिक्ष को अपने तेज से परिपूर्ण किया । तुमने सग्राम द्वारा देवताओं को धन प्राप्त कराया ।३। हे इन्द्र! जब तुम अहंकारी शत्रुओं से हमारा संग्राम करोओगे तब हम उन्हें हरावेंगे । तुम मरुदगण को साथ लेकर संग्राम करोगे, तब हम विजय प्राप्त करेंगे ।४। मैं इन्द्र के प्राचीन कर्मों का वर्णन करता हूँ । इन्द के नवीन कर्मों को भी कहूँगा । उन्होंने राक्षसी माया को नष्ट किया है, अतः यह सोम केवल इन्द्र के लिये हैं ।५। हे इन्द्र! जिस विश्व को तुम सूर्य के प्रकाश से देखते हो, वह सब तुम्हारा ही है । तुम्हीं सब गौओं के अधिपति हो । हम तुम्हारे दान का ही उपभोग करते हैं ।६। हे बृहस्पति और इन्द्र तुम दिव्य और पार्थिव धनों के अधिपति हो । तुम स्तोता को धन दान करते हो । तुम सदा हमारा पालन करो ।७। (२२)

सूक्त ९९

(ऋषि–वसिष्ठः । देवता–विष्णुः इन्द्राविष्णु । छन्द–त्रिष्टुप्)

परो मात्रया तन्वा वृधान न ते महित्वमन्वश्नुवन्ति ।
उभे ते विद्म रजसी पृथिव्या विष्णो देव त्वं परमस्य वित्से । १
न ते विष्णो जायमानो न जातो देव महिम्नः परमन्तमाप ।
उदस्तभ्ना नाकमृष्वं बृहन्तं दाधर्थ प्राचीं ककुभं पृथिव्याः ॥२

इरावती धेनुमती हि भूतं सूयवसिनी मनुषे दशस्या ।
व्यस्तभ्ना रोदसी विष्णवेते दाधर्थ पृथिवीमभितो मयूखैः ॥३
उरुं यज्ञाय चक्रथुरु लोकं जनयन्ता सूर्यमुषासमग्निम् ।
दासस्य चिद् वृषशिप्रस्य माया जघ्नथुर्नरा पृतनाज्येषु ॥४
इन्द्राविष्णू दृंहिताः शम्बरस्य नव पुरो नवतिं च श्नथिष्टम् ।
शतं वर्चिनः सहस्रं च साकं हथो अप्रत्यसुरस्य वीरान् ॥५
इयं मनीषा बृहती बृहन्तोरुक्रमा तवसा वर्धयन्ती ।
ररे वां स्तोमं विदथेषु विष्णो पिन्वतमिषो वृजनेष्विन्द्र ॥६
वषट् ते विष्णवास आ कृणोमि तन्मे जुषस्व शिपिविष्ट हव्यम् ।
वर्धन्तु त्वा सुष्टुतयो गिरो मे यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः॥७॥२४

हे विष्णु ! तुम्हारी महिमा को कोई नहीं जानता । हम तुम्हारे दोनों लोकों के ज्ञाता हैं परन्तु अपने परलोक को केवल तुम्हीं जानते हो ।१। हे विष्णु पृथिवी पर जो उत्पन्न हुए हैं और जो होंगे उनमें भी तुम्हारी महिमा का ज्ञाता कोई नहीं है । तुमने विराट स्वर्गको धारण किया है ।२। हे द्यावापृथिवी ! तुम स्तोता को देने की इच्छा से अन्न वती और गौ सम्पन्न हुई हो । हे विष्णो ! तुमने आकाश-पृथिवी को विविध रूप से धारण किया है ।३। हे इन्द्र और विष्णो ! तुमने सूर्य, अग्नि और उषा को प्रकट कर यजमान के लिए स्वर्ग की रचना की है । तुमने रणक्षेत्र में दस्यु की माया का नाश किया है ।४। हे इन्द्र और विष्णो ! तुमने शम्बर के निन्यानवे पुरों को तोड़ा और वर्चि के शत सहस्र वीरों का संहार किया ।५। यह स्तुति इन्द्र और विष्णु की बल-वृद्धि करेगी । हे इन्द्र और विष्णों ! संग्राम भूमि में तुमको स्तोत्र अर्पित किया है, तुम हमारे अन्न की वृद्धि करो ।६। हे विष्णो ! मैंने यज्ञ में स्तुति की है । तुम हमारे हव्य को स्वीकार करो । हमारी स्तुति तुम्हारी वृद्धि करे और तुम सदा हमारा पालन करो ।७। (२)

सूक्त १००

(ऋषि–वसिष्ठः । देवता–विष्णुः । छन्द–त्रिष्टुप्)

नू मर्तो दयते सनिष्यन् यो विष्णव उरुगायाय दाशत् ।
प्र यः सत्राचा मनसा यजात एतावन्तं नर्यमाविवासात् ॥१
त्वं विष्णो सुमतिं विश्वजन्यामप्रयुतामेवयावो मतिं दाः ।
पर्चो यथा नः सुवितस्य भूरेरश्वावतः पुरुश्चन्द्रस्य रायः ॥२
त्रिर्देवः पृथिवीमेष एतां वि चक्रमे शतर्चसं महित्वा ।
प्र विष्णुरस्तु तवसस्तवीयान् त्वेषं ह्यस्य स्थविरस्य नाम ॥३
वि चक्रमे पृथिवीमेष एतां क्षेत्राय विष्णुर्मनुषे दशस्यन् ।
ध्रुवासो अस्य कीरयो जनास उरुक्षितिं सुजनिमा चकार ॥४
प्र तत् ते अद्य शिपिविष्ट नामार्यः शंसामि वयुनानि विद्वान् ।
तं त्वा गृणामि तवसमतव्यान् क्षयन्तमस्य रजसः पराके ॥५
किमित् ते विष्णो परिचक्ष्यं भूत् प्र यद् ववक्षे शिपिविष्टो अस्मि।
मा वर्पो अस्मदप गूह एतद् यदन्यरूपः समिथे वभूथ ॥६
वषट् ते विष्णवास आ कृणोमि तन्मे जुषस्व शिपिविष्ट हव्यम् ।
वर्धन्तु त्वा सुष्टुतयो गिरो मे यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः॥७॥२५

जो विष्णुके विमित्त हवि देता है और मन्त्रों द्वारा पूजन करता है, वह धनेच्छु मनुष्य शीघ्र ही धन पाता है ।१। हे विष्णो ! तुम हम पर अनुग्रह करो । जिस प्रकार हमें प्राप्तव्य धन पा सके ऐसी कृपा करो।२। विष्णु ने पृथिवी पर तीन बार जरण निक्षेप किया, प्रवृद्ध विष्णु हमारे ईश्वर हैं वे अत्यन्त तेजस्वी है ।२। विष्णु ने पृथिवी को निवास के लिये देने की इच्छा से पाद-प्रक्षेप किया और विस्तृत स्थान की रचना की ।५। हे विष्णो ? हम तुम्हारे प्रसिद्ध नामों का कीर्तन करेंगे । तुम प्रवृद्ध को हम अप्रवृद्ध मनुष्य स्तुति करेंगे ।६। हे विष्णो ! मैंने जो तुम्हारा शिपिविष्ट नाम लिया है । वह क्या उचित नहीं है ! संग्रामों में तुमने अनेक रूप धारण किये हैं । तुम अपने रूप को हमसे मत छिपाओ।७।

हे विष्णो ! मैं तुम्हारे निमित्तका वषट्कार हूँ तुम हमारे हव्यको स्वीकार करो। हमारी स्तुति तुम्हें प्रवृद्ध करे और तुम सदा हमारा पालन ।७। (२५)

सूक्त १०१

(ऋषि—वसिष्ठः। कुमारो वाग्नेयः। देवता—पर्जन्यः। छन्द—त्रिष्टुप्)

तिस्रो वाचः प्र वद ज्योतिरग्रा या एतद् दुह्रे मधुदोघमूधः।
स वत्सं कृण्वन् गर्भमोषधीनां सद्यो जातो वृषभो रोरवीति ॥१
यो वर्धन ओषधीनां यो अपां यो विश्वस्य जगतो देव ईशे।
स त्रिधातु शरणं शर्म यंसत् त्रिवर्तु ज्योतिः स्वभिष्टयस्मे ॥२
स्तरीरु त्वद् भवति सूत उ त्वद् यथावशं तन्वं चक्र एषः।
पितुः पयः प्रति गृभ्णाति माता तेन पिता वर्धते तेन पुत्रः ॥३
यस्मिन् विश्वानि भुवनानि तस्थुस्तिस्रो द्यावस्त्रेधा सस्रुरापः।
त्रयः कोशास उपसेचनासो मध्वः श्चोतन्त्यभितो विरप्शम् ॥४
इदं वचः पर्जन्याय स्वराजे हृदो अस्त्वन्तरं तज्जुजोषत्।
मयोभुवो वृष्टयः सन्त्वस्मे सुपिप्पला ओषधीर्देवगोपाः ॥५
स रेतोधा वृषभः शश्वतीनां तस्मिन्नात्मा जगतस्तस्थुषश्च।
तन्म ऋतं पातु शतशारदाय यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ।६।१

अग्रभाग में ओंकारयुक्त जो ऋक्, यजुः और साम नामक तीन वाक्य जल का दोहन करते हैं, इनको कहो। सहवासी विद्युत रूप अग्नि को उत्पन्न करते हुए पर्जन्य वृषभ के समान शब्द करते हैं।१। जो पर्जन्य औषधियों और जलोंको बढ़ाने वाले हैं वे हमें भूमि युक्त घर देकर सुखी करें। वे तीन ऋतुओं में विद्यमान तेज को हमें प्रदान करें ।२। पर्जन्य का रूप वन्ध्या गो के समान और दूसरा वृष्टिकारक है। यह इच्छानुसार रूप धारण करते हैं। मातृभूता पृथ्वी स्वर्ग रूप पिता से रस प्राप्त करती है, तब स्वर्ग सब प्राणियों को बढ़ाते हैं।३। जिनमें सब प्राणी और सब लोक निवास करते है और जिनसे तीन प्रकार से जल निकलता हैं, जिनके सब ओर तीन प्रकार से जल-वृष्टि करते हैं, वे देवता पर्जन्य ही है ।४। पर्जन्य की यह स्तुति की गई, वे

इसे स्वीकार करें। हमारे लिए कल्याणमयी वर्षा हो और औषधियों उत्तम फल वाली हों।५। पर्जन्य अनेक औषधियों के लिए जल-धारण करते हैं। सब प्राणियों की आत्मा उन्हीं में निवास करती है। उनका जल मेरी सौ वर्ष तक रक्षा करे। तुम सदा हमारा पालन करो।८। (६)

सूक्त १०२

(ऋषि—वसिष्ठः। कुमारी वाग्नेयः। देवता—पर्जन्यः। छन्द—त्रिष्टुप्)

पर्जन्याय प्र गायत दिवस्पुत्राय मीलहुषे। स नो यवसमिच्छतु॥१
यो गर्भमोषधीनां गवां कृणोत्यर्वताम्। पर्जन्यः पुरुषीणाम्। २
तस्मा इदास्ये हविर्जुहोता मधुमत्तमम्। इलां नः संयतं करत्॥३।२

हे स्तोताओं! पर्जन्य की स्तुति का गान करते हैं।१। जो पर्जन्यके औषधियों गौओं अश्वों आदि को उत्पन्न करते है।२। उन्हीं पर्जन्य के लिए अग्नि में आहुति दो। वे हमें अन्न प्रदान करें।३। (२)

सूक्त १०३

(ऋषि—वसिष्ठः। देवता—मण्डुकाः। छन्द—त्रिष्टुप्, अनुष्टुप्)

संवत्सरं शशयाना ब्राह्मणा व्रतचारिणः।
वाचं पर्जन्यजिन्वितां प्र मण्डूका अवादिषुः॥१
दिव्या आपो अभि यदेनमायन् दृतिं न शुष्कं सरसी शयानम्।
गवामह न मायुर्वत्सिनीनां मण्डूकानां वग्नुरत्रा समेति॥२
यदीमेनाँ उशतो अभ्यवर्षीत् तृष्यावतः प्रावृष्यागतायाम्।
अक्खलीकृत्या पितरं न पुत्रो अन्यो अन्यमुप वदन्तमेति॥३
अन्यो अन्यमनु गृभ्णात्येनोरपां प्रसर्गे यदमन्दिषाताम्।
मण्डूको यदभिवृष्टः कनिष्कन् पृश्निः संपृङ्क्ते हरितेन वाचम्॥४
यदेषामन्यो अन्यस्य वाचं शाक्तस्येव वदति शिक्षमाणः।
सर्वं तदेषां समृधेव पर्व यत् सुवाचो वदथनाध्यप्सु।५।३

व्रती स्तोता के समान एकवर्ष सोकर जागने वालेहो मेढक पर्जन्या के लिये स्तुति वाक्य उच्चारित करते हैं।१। जब सरोवरमें सुप्त मेंढकों के पास दिव्य पहुँचता है तब सवत्सा धेनु के समान मेंढक शब्द करते हैं

।२। वर्षा काल में जब पर्जन्य प्यासे मेंढकों को जल सींचते हैं,तब मेंढक एक दूसरे के पास गमन करते हैं ।३। जल वृष्टि से दो जातियों के मेंढक हर्षित होते हैं और लम्बी उछल कूद करते हैं, तब परस्पर अनुग्रह करते हैं ।४। जैसे शिष्य गुरु का अनुकरण करता है, वैसेही परस्पर एक दूसरे के शब्द का यह अनुकरण करते हैं। हे मेंढकों ! तुम सुन्दर शब्द करते हुए जल पर उछलते-कूदते हो, उस समय तुम्हारे शरीर के सब अवयव पुष्ठ हो जाते हैं ।५। (३)

गोमायुरेको अजमायुरेकः पृश्निरेको हरित एक एषाम् ।
समानं नाम बिभ्रतो विरूपाः पुरुत्रा वाचं पिपिशुर्वदन्तः ।।६
ब्राह्मणासो अतिरात्रे न सोमे सरो न पूर्णमभितो वदन्तः ।
संवत्सरस्य तदहः परि ष्ठ यन्मण्डूकाः प्रावृषीणं बभूव ।।७
ब्राह्मणासः सोमिनो वाचमक्रत ब्रह्म कृण्वन्तः परिवत्सरीणम् ।
अध्वर्यवो घर्मिणः सिष्विदाना आविर्भवन्ति गुह्या न के चित् ।।८
देवहितिं जुगुपुर्द्वादशस्य ऋतुं नरो न प्र मिनन्त्येते ।
संवत्सरे प्रावृष्यागतायां तप्ता घर्मा अश्नुवते विसर्गम् ।।९
गोमायुरदादजमायुरदात् पृश्निरदाद्धरितो नो वसूनि ।
गवां मण्डूका ददतः शतानि सहस्रसावे प्र तिरन्त आयुः ।१०।४

कोई मेंढक गौ का-सा और बकरे जैसा शब्द करता । कोई धूम्रवर्ण का कोई हरित वर्ण वाला है। वह विभिन्न जल वाले मेंढक अनेक स्थानों पर शब्द करते हुए प्रकट हो जाते हैं ।६। हे मेंढकों ! अन्तरात्र नामक साम योग में स्तोता जैसे शब्द करते हैं, वैसे ही भरे हुए सरोवर में शब्द करते हुए चारों ओर निवास करो ।७। यह मेंढक सोम वाले स्तोता के समान शब्द करते हैं । धूप के कारण बिल में छिपे मेंढक वर्षा-काल में बाहर निकल आते हैं ।८। मेंढक दैव नियमों के संरक्षक हैं । वे ऋतुओं को नष्ट नहीं करते । वर्ष के पूर्ण होने पर आगत वर्षा से प्रसन्न मेंढक गर्त के बन्धन से मुक्त होते हैं ।९। गौ के समान शब्द

करते हुए मेंढक हमें धन प्रदान करें। बकरे के समान शब्द वाले मेंढ़क भीं हमें दें। भूरे और हरे रङ्ग के मेंढ़क भी धनदाता हों सहस्रों वनस्पतियों को उत्पन्न करने वाली वर्षा ऋतु में यह मेंढ़कगण हमें गौयें दें और हमारी आयु की वृद्धि करें।१। (८)

सूक्त १०४

(ऋषि-वसिष्ठः। देवता-इन्द्रसोमौ, अग्नि, देवाः ग्रावणाः मरुतः, वसिष्ठः, पृथिव्यन्तरिक्षे। छन्द-जगती, त्रिष्टुप्, अनुष्टुप्)

इन्द्रासोमा तपत रक्ष उब्जतं न्यर्पयतं वृषणा तमोवृधः ।
परा शृणीतमचितो न्योषतं हतं नुदेथां नि शिशीतमत्रिणः ॥१
इन्द्रासोमा समघशंसमभ्यघं तपुर्ययस्तु चरुरग्निवाँ इव ।
ब्रह्मद्विषे क्रव्यादे घोरचक्षसे द्वेषो धत्तमनवायं किमीदिने ॥२
इन्द्रासोमा दुष्कृतो वव्रे अन्तरनारम्भणे तमसि प्र विध्यतम् ।
यथा नातः पुनरेकश्चनोदयत् तद् वामस्तु सहसे मन्युमच्छवः ॥३
इन्द्रासोमा वर्तयतं दिवो वधं सं पृथिव्या अघशंसाय तर्हणम् ।
उत् तक्षतं स्वर्यं पर्वतेभ्यो येन रक्षो वावृधानं निजूर्वथः ॥४
इन्द्रासोमा वर्तयतं दिवस्पर्यग्नितप्तेभिर्युवमश्महन्मभिः ।
तपुर्वधेभिरजरेभिरत्रिणो नि पर्शाने विध्यतं यन्तु निस्वरम् ।५।५

हे इन्द्र और सोम ! तुम राक्षसों को सन्तप्त और नष्ट करो। अन्धकार में प्रवृद्ध राक्षसों का पतन करो। इन्हें मार कर भगाओ अथवा फेंकदो।१। हे इन्द्र और सोम ! इस राक्षस को वशीभूत करो। इसे अग्नि में फेंके गये चरु के समान अदृश्य कर दो। ब्राह्मणों के बैरी मांसाहारी, कटुभाषी, वक्र दृष्टि वाले राक्षसोंके प्रति सदा शत्रुता रहे। ऐसा करो।२। हे इन्द्र और सोम ! दुष्कर्म करने वाले राक्षस को मार कर फेंक दो। एक भी राक्षस शेष न रहे। तुम्हारा क्रोधयुक्त बल उन्हें अपने वश में करें।३। हे इन्द्र और सोम ! अन्तरिक्ष से हिंसक आयुध को प्रकट करो। इस पृथिवी से भी शत्रु-हिंसक आयुध प्रकट करो, मेघ से राक्षसों को नष्ट करने वाले वज्र को उत्पन्न करो।४। हे इन्द्र और

सोम ! प्रत्येक दिशा में आयुधों को प्रेरित करो। अग्नि और पत्थरों के अस्त्रों द्वारा राक्षसों की बगलों को फाड़ दो वे राक्षस भयभीत होकर भाग जाँय ।५।   (५)

इन्द्रासोमा परि वां भूतु विश्वत इयं मति: कक्ष्याश्वेव वाजिना।
यां वां होत्रां परिहिनोमि मेधयेमा ब्रह्माणि नृपतीव जिन्वतम्॥६
प्रति स्मरेथां तुजयद्भिरेवैर्हतं द्रुहो रक्षसो भगुरावत: ।
इन्द्रासोमा दुष्कृते मा सुगं भूद् यो न: कदा चिदभिदासति द्रुहा ॥७
यो मा पाकेन मनसा चरन्तमभिचष्टे अनृतेभिर्वचोभि: ।
आप इव काशिना संगृभीता असन्नस्त्वासत इन्द्र वक्ता ॥८
ये पाकशंसं विहरन्त एवैर्ये वा भद्रं दूषयन्ति स्वधाभि: ।
अहये वा तान् प्रददातु सोम आ वा दधातु निर्ऋतेरुपस्थे ॥९
यो नो रसं दिप्सति पित्वो अग्ने यो अश्वानां यो गवां यस्तुनूनाम्
रिपु: स्तेन: स्तेयकृद् दभ्रमेतु नि ष हीयतां तन्वा तना च ।१०।६

हे इन्द्र और सोम ! जैसे रस्सी अश्व को बांधती है वैसे ही यह स्तुति तुम्हारे पास पहुँचे । मैं इस स्तोत्र को तुम्हारी ओर भेजता हूँ, तुम इसे राजा के समान फल में परिपूर्ण करो ।६। अश्वों पर आओ ! हिंसक राक्षसों को नष्ट करो । पापी कभी सुख न पावे जिससे वह कभी हमें मारने का अवसर न पा सके ।७। हे इन्द्र ! मिथ्याभाषी राक्षस, मुट्ठी में बँधा जल जैसे निकल आता है, वैसे ही अस्तित्वहीन होवे ।८। जो सत्य प्रिय होकर भी मुझे स्वार्थवश लांछित करे और जो कल्याण की भावना वाले पुरुष मुझे व्यर्थ दोष दें उन्हें सर्प के ऊपर फेंक दो ।९। हे अग्ने! जो दुष्ट हमारे अन्न को नष्ट करे अथवा गो, अश्व, संतानादि को नष्ट करे वह हिंसित हो और सन्तान सहित निर्मूल हो जाय ।१०।   (६)

पर: सो अस्तु तन्वा तना च तिस्र: पृथिवीरधो अस्तु विश्वा: ।
प्रति शुष्यतु यशो अस्य देवा यो नो दिवा दिप्सति यश्च नक्तम् ।११

सुविज्ञानं चिकितुषे जनाय सच्चासच्च वचसी पस्पृधाते।
तयोर्यत् सत्यं यतरदृजीयस्तदित् सोमोऽवति हन्त्यासत् ।।१२
न वा उ सोमो वृजिनं हिनोति न क्षत्रियं मिथुया धारयन्तम्।
हन्ति रक्षो हन्त्यासद् वदन्तमुभाविन्द्रस्य प्रसितौ शयाते ।।१३
यदि वाहमनृतदेव आस मोघं वा देवाँ अप्यूहे अग्ने।
किमस्मभ्यं जातवेदो हृणीषे द्रोघवाचस्ते निर्ऋथं सचन्ताम् ।।१४
अद्या मुरीय यदि यातुधानो अस्मि यदि वायुस्ततप पूरुषस्य।
अधा स वीरैर्दशभिर्वि यूया यो मा मोघं यातुधानेत्याह ।१५।७

वह राक्षस देह रहित हो, सन्तान हीन हो। तीनों लोकों के नीचे गिरे। हे देवगण ! हमारी हिंसा-कामना वाले राक्षस की कीर्ति शुष्क हो जाय ।११। मिथ्या और यथार्थ बचन परस्पर प्रतिस्पर्धी होते हैं बह मेधावी जन जानते है। सोम सत्य का पालन करते और असत्य का नाश करते हैं ।१२। पापी मिथ्या को सोम हिंसित करते हैं। वह असत्याचरण वाले को नष्ट करते हैं। असत्याभावी दुष्ट पाश में पड़ते हैं ।१३। यदि मैं सत्य देवताओं की उपासना करू तो हे अग्ने ! तुम क्रोध क्यों करते हो। मिथ्याभाषी तुम्हारी हिंसा के लक्ष्य हों ।१४। यदि मैं राक्षस हूँ और किसी के आत-नाश का कारण हूँ तो अभी मृत्यु को प्राप्त होजाऊं मुझे जो राक्षस बतावे उसकी सन्तति नष्ट हो जाय।।१५।

यो मायातुं यातुधानेत्याह यो वा रक्षाः शुचिरस्मीत्याह।
इन्द्रस्तं हन्तु महता वधेन विश्वस्य जन्तोरधमस्पदीष्ट ।।१६
प्र या जिगाति खर्गलेव नक्तमप द्रुहा तन्वं गूहमाना।
वव्राँ अनन्ताँ अव सा पदीष्ट ग्रावाणो घ्नन्तु रक्षस उपब्दैः।
वि तिष्ठध्वं मरुतो विक्ष्विच्छत गृभायत रक्षसः सं पिनष्टन ।।१७
वयो ये भूत्वी पतयन्ति नक्तभिर्ये वा रिपो दधिरे देवे अध्वरे।।१८
प्र वर्तय दिवो अश्मानमिन्द्र सोमशितं मघवन् त्सं शिशाधि।
प्राक्तादपाक्तादधरादुदक्तादभि जहि रक्षसः पर्वतेन ।।१९
एत उ त्ये पतयन्ति श्वयातव इन्द्रं दिप्सन्ति दिप्सवोऽदाभ्यम्।
शिशीते शक्रः पिशुनेभ्यो वधं नूनं सृजदशनिं यातुमद्भ्यः ।२०।८

जो दुष्ट मुझे साधु को 'राक्षस' बतावें और अपनेको साधु कहें, इन्द्र उन्हें अपने वज्र से मार दें। वह सब प्राणियों से भी निकृष्ट गति को प्राप्त करे।१६। रात्रि के समय जो राक्षसी अपने शरीर को उलूक के समान छिपाकर चले, वह नीचे मुख कर घोर गर्तमें गिरे, अभिषवण प्रस्तर भी अपने शब्द से राक्षसों का नाश करे।१७। हे मरुद्गण! तुम विभिन्न प्रकार के प्रजाओं में रहो। रात्रिके समय पक्षी के रूप में आने वाले यज्ञ-हिंसक राक्षसों को पकड़ कर चूर्णित कर दो।१८। हे इन्द्र! अन्तरिक्ष से वज्र को चलाओं। सब दिशाओं से रक्षा करो।१९। यह राक्षस कुत्तों के सहित वहाँ आये हैं। जो राक्षस इन्द्र की हिंसा करना चाहें उन्हें मारने को इन्द्र अपने वज्र तीक्ष्ण करते हैं। इन्द्र राक्षसों पर अपने वज्र को चलावें।२०। (२)

इन्द्रो यातूनामभवत् पराशरो हविर्मथीनामभ्याविवासताम्।
अभीदु शक्रः परशुर्यथा वनं पात्रेव भिन्दन्त्सत एति रक्षसः॥२१
उलूकयातुं शुशुलूकयातुं जहि श्वयातुमुत कोकयातुम्।
सुपर्णयातुमुत गृध्रयातुं दृषदेव मृण रक्ष इन्द्र ॥२२
मा नो रक्षो अभि नड्यातुमावतामपोच्छतु मिथुना या किमीदिना।
पृथिवी नः पार्थिवात् पात्वंहसोऽन्तरिक्षं दिव्यात् पात्वस्मान्॥२३
इन्द्र जहि पुमांसं यातुधानमुत स्त्रियं मायया शाशदानाम्।
विग्रीवासो मूरदेवा ऋदन्तु मा ते दृशन् त्सूर्यमुच्चरन्तम्।।२४
प्रति चक्ष्व वि चक्ष्वेन्द्रश्च सोम जागृतम्।
रक्षोभ्यो वधमस्यतमशनिं यातुमद्भ्यः।२५।६

हिंसकारी की इन्द्र हिंसा करते हैं। जैसे कुल्हाड़ा काष्ठ को काटता और गदा पर्वतों को तोड़ता है, वैसे ही इन्द्र अपने उपासकों की रक्षा के लिए राक्षसों को चूर्णित करते हुए आ रहे हैं।२१। हे इन्द्र! जो राक्षस उलूको साथ लेकर हिंसा-कर्म करते हैं, उन्हें मारो। जो

उलूक रूप से हिंसा कर्म में प्रवृत्त हों, उन्हें भी मारो। जो कुक्कुट, चक्रवाक, श्येन और गृध्र का रूप धारण कर हिंसा करते हैं, उन्हें भी अपने प्रस्तर-निर्मित्त वज्र से नष्ट कर दो।२२। राक्षस हमें घेर न सकें! राक्षस पृथक् पृथक् हों 'यह क्या है' कहते घूमने वाले राक्षस भाग जायें। पृथिवी हमें अन्तरिक्ष से प्राप्त पाप से रक्षित करे और दिव्य पाप से अन्तरिक्ष हमारी रक्षा करे।२३। हे इन्द्र ! राक्षस को मारो। राक्षसों को भी नष्ट करो। जो राक्षस हिंसा-क्रीड़ा में रत हैं वे छिन्न मस्तक हों। वे उदय होने वाले सूर्य के दर्शन न कर सकें।२४। सोम और इन्द्र ! तुम सबको भले प्रकार देखो। राक्षसों पर अपने वज्र रूप आयुध को चलाओ।२५। (९)

॥ इति सप्तम मण्डल समाप्तम् ॥

॥ अथाष्टमं मण्डलम् ॥

सूक्त १ [प्रथम अनुवाक]

(ऋषि-प्रगाथी घौरः, काण्वी वा मेधातिथि मेध्यातिथि काण्वौ काब्वौ।
देवता-इन्द्रः। छन्द-बृहती, त्रिष्टुप्)

मा चिदन्यद् वि शंसत सखायो मा रिषण्यत।
इन्द्रमित् स्तोता वृषण सचा सुते मुहुरुक्था च शंसत॥१
अवक्रक्षिणं वृषभं यथाजुरं गां न चर्षणीसहम्।
विद्वेषण संवननोभयंकरं मंहिष्ठमुभयाविनम्॥२
यच्चिद्धि त्वा जना इमे नाना हवन्त ऊतये।
अस्माकं ब्रह्मेदमिन्द्र भूतु तेऽहा विश्वा च वर्धनम्॥३
वि तर्तूर्यन्ते मघवन् विपश्चितोऽर्यो विपो जनानाम्।
उप क्रमस्व पुरुरूपमा भर वाजं नेदिष्ठमूतये॥४
महे चन त्वामद्रिवः परा शुल्काय देयाम्।
न सहस्राय नायुताय वज्रिवो न शताय शतामघ॥५।१०

हे मित्रो ! इन्द्र के सिवाय अन्य की स्तुति न करो। अन्यथा दण्ड-नीय होओगे। सोम सिद्ध होने पर कामनाओं की वर्षा करने वाले इन्द्र का स्तवन करने के लिए बारम्बार स्तोत्र उच्चारित करो।१। बलीवर्द के समान शत्रुओं को मारने वाले, सबके विजेता स्तोता द्वारा स्तुत्य, दिव्य एवं पार्थिव धनों के स्वामी तथा दाताओं में मुख्य इन्द्रका स्तवन करो।२। हे इन्द्र ! तुम्हारी रक्षा के लिए मनुष्य पृथक्-पृथक् स्तुति करते हैं। फिर भी वह स्तोत्र तुम्हें बढ़ाने वाला हो।३। हे ऐश्वर्यशाली इन्द्र! तुम्हारे स्तोता शत्रुओंको कम्पायमान करते हुए विपत्तियों से बचे रहते हैं। तुम हमारे पास आओ। हमारे पालन के लिए बहुत प्रकारका अन्न हमको दो।४। हे वज्रिन् ! तुम्हारी भक्ति का महान् मूल्य प्राप्त होने पर भी मैं विक्रय नहीं कर सकता। असीम धन के बदले भी उसे नहीं बेच सकता।५। (१०)

वस्यां इन्द्रासि मे पितुरुत भ्रातुरभुञ्जतः।
माता च मे छदयथः समा वसो वसुत्वनाय राधसे ॥६
क्वेयथ क्वेदसि पुरुत्रा चिद्धि ते मनः।
अलर्षि युध्म खजकृत् पुरन्दर प्र गायत्रा अगासिषुः ॥७
प्रास्मै गायत्रमर्चत वावातुर्यः पुरंदरः।
याभिः काण्वस्योप बर्हिरासदं यासद् वज्री भिनत् पुरः ॥८
ये ते सन्ति दशग्विनः शतिनो ये सहस्रिणः।
अश्वासो ये ते वृषणो रघुद्रुव स्तेभिर्नस्तूयमा गहि ॥९
आ त्वद्य सवर्दुघां हुवे गायत्रवेपसम्।
इन्द्रं धेनुं सुदुघामन्यामिषमुरुधारामरंकृतम् ॥१०॥११

हे इन्द्र ! तुम मेरे पिता से अधिक वैभव वाले हो। तुम मेरे रण से न भागने वाले भाई से भी अधिक बली हो। मेरी माता और तुम समान होकर मुझे व्यापक धनों के योग्य बनाओ।६। हे इन्द्र तुम कहाँ हो ? तुम्हारा मन सब ओर रहता है। तुम रण-कुशल एवं नगरों के विजेता हो। गायक तुम्हारी स्तुति करते हैं।७। इन्द्र के लिए प्रश-

सनीय गायन करो । शत्रुओं के नगरों के तोड़ने वाले इन्द्र सबके लिए स्तुत्य हैं । जिन ऋचाओं द्वारा वे कण्वपुत्रों के यज्ञ में गये थे और जिन ऋचाओं से उनकी स्तुति करो ।८। हे इन्द्र ! तुम्हारे जो अश्व दस योजन चलते हैं,वे शीघ्र गमन करने वाले है । तुम उन्हीं अश्वोंके द्वारा शीघ्र आओ ।९। दुग्ध देने वाली, वेगवती गाय के समान इन्द्र की मैं स्तुति करता हूँ । वांछनीय वृष्टि के भले प्रकार करने वाले इन्द्र का मैं स्तवन करता हूँ ।१०।

(११)

यत् तुदत् सूर एतशं वङ्कू वातस्य पर्णिना ।
वहत् कुत्समार्जुनेयं शतक्रतुः त्सरद् गन्धर्वमस्तृतम् ॥११
य ऋते चिदभिश्रिषः पुरा जत्रुभ्य आतृदः ।
संधाता सन्धिं मघवा पुरूवसुरिष्कर्ता विह्रुतं पुनः ॥१२
मा भूम निष्ट्या इवेन्द्र त्वदरणा इव ।
वनानि न प्रजहितान्यद्रिवो दुरोषासो अमन्महि ॥१३
अमन्महीदनाशवो ऽनुग्रासश्च वृत्रहन् ।
सकृत् सु ते महता शूर राधसा ऽनु स्तोमं मुदीमहि ॥१४
यदि स्तोमं मम श्रवदस्माकमिन्द्रमिन्दवः ।
तिरः पवित्रं ससृवांस आशवो मन्दन्तु तुग्र्यावृधः ।१५।१२

जब सूर्य ने 'एतश' को पीड़ित किया था, तब टेढ़ी चाल वाले द्रुतगामी घोड़ों ने 'कुत्स' का वहन किया और इन्द्र ने अहिंसित सूर्यपर छद्मवेश से आक्रमण किया ।११। जो इन्द्र कण्ठ से रुधिर निकलने के पूर्व ही कटे हुए जोड़ों को जोड़ देते हैं, वही इन्द्र छिन्न-भिन्न हुओं को ठीक कर देते हैं ।१२। वे इन्द्र ! हम तुम्हारे अनुग्रह से पतित न हों, दुःख न पावें । हम पतझड़ में क्षीण वनों के समान सन्तान-शून्य न हों । हे वज्रिन् ! हमको अन्य व्यक्ति पीड़ित न करे । हम तुम्हारा स्तवन करते हैं ।१३। हम उग्रता को त्यागकर, शीघ्रता न करते हुए धीरे धीरे तुम्हारी स्तुति करते हैं ।१४। वे इन्द्र हमारी स्तुति श्रवण करें

तो हम सोमरस द्वारा उन्हें प्रसन्न करते हैं। सोम दशा पवित्र द्वारा निष्पन्न किये गये जलों द्वारा शोधे गये हैं। सभी सोम हृष्टि वर्द्धक है ।१५। (१२)

आ त्वद्य सधस्तुतिं वावातुः सख्युरा गहि।
उपस्तुतिर्मघोनां प्र त्वावत्वधा ते वश्मि सुष्टुतिम् ।।१६
सोता हि सोममद्रिभिरेमेनमप्सु धावत।
गव्या वस्त्रेव वासयन्त इन्नरो निर्धुक्षन् वक्षणाभ्यः ।।१७
अध ज्मो अध वा दिवो बृहतो रोचनादधि।
अया वर्धस्व तन्वा गिरा ममा ऽऽजाता सुक्रतो पृण ।।१८
इन्द्राय सु मदिन्तम सोमं सोता वरेण्यम्।
शक्र एण पीपयद् विश्वया धिया हिन्वानं न वाजयुम् ।।१९
मा त्वा सोमस्य गल्दया सदा याचन्नहं गिरा।
भूर्णि मृगं न सवनेषु चुक्रुधं क ईशानं न याचिषत् ।२०।१३

वे अपनी स्तुति करने वाले की स्तुति की ओर शीघ्रता से आवें। हवियों से युक्त स्तोत्र तुम्हें प्राप्त हो। मैं तुम्हारे सर्वश्रेष्ठ स्तोत्र की इच्छा कर रहा हूँ।१६। हे अध्वर्युओं! पत्थरों द्वारा सोम को कूटो और जल में शुद्ध करो। मेघों के द्वारा मरुद्गण जलको दुह कर नदियों को परिपूर्ण करते हैं।१७। पृथिवी और अन्तरिक्ष तथा द्युलोक से आकर इन्द्र मेरी स्तुतियों द्वारा बढ़ें। वे हमारे मनुष्यों को इच्छित फल प्रदान करें।१८। हे अध्वर्युओ! तुम इन्द्र के निमित्त अत्यन्त पुष्टि-कर सोम भेंट करो। वे इन्द्र अपने समस्त कर्मों द्वारा प्रसन्नताप्रद और अन्न की कामना वाले यज्ञ को बढ़ावे।१९। हे इन्द्र! यज्ञों में मैं सोम अर्पित करता हुआ तथा स्तुतियाँ करता हुआ तुम्हें कभी भी रुष्ट न करूं। तुम पालक भी हो तथा विकराल भी हो। संसार में ऐसा कोई भी नहीं जो तुम्हारी प्रार्थना न करता हो।२०। (१३)

मदेनेषित मदमुग्रमुग्रेण शवसा।
विश्वेषां तरुतारं मदच्युतं मदे हि ष्मा ददाति नः ।।२१

शेवारे वार्या पुरु देवो मर्तीय दाशुषे ।
स सुन्वते च स्तुवते च रासते विश्वगूर्तो अरिष्टुतः ॥२२
एन्द्र याहि मत्स्व चित्रेण देव राधसा ।
सरो न प्रास्युदरं सपीतिभिरा सोमेभिरुरु स्फिरम् ॥२३
आ त्वा सहस्रमा शतं युक्ता रथे हिरण्यये ।
ब्रह्मयुजो हरय इन्द्र केशिनो वहन्तु सोमपीतये ॥२४
आ त्वा रथे हिरण्यये हरी मयूरशेप्या ।
शितिपृष्ठा वहतां मध्वो अन्धसो विवक्षणस्य पीतये ।२५।१४

हे इन्द्र ! तुम अत्यन्त पराक्रमी हो हर्षाभिलाषी स्तोता द्वारा अर्पित हर्षकारी सोम को पीओ । सोम के हर्ष से प्रसन्न इन्द्र हमको शत्रुओं को जीतने वाला पुत्र प्रदान करते हैं ।२१। सुखदायक यज्ञ में इन्द्र हविदाता यजमान को वरुण करने योग्य धन प्रदान करते हैं। वे सभी कार्यों के करने वाले हैं ।२२। हे इन्द्र ! आओ । तुम दर्शनीय ऐश्वर्यशाली बनो । हम एकत्र हुए पीले वर्ण के सोम से अपना उदर पूर्ण रूपेण भर लो ।२३। हे इन्द्र ! सैकड़ों और हजारों घोड़े तुमको सोमपान के लिए रथ पर लावें ।२४ मयूर वर्ण के श्वेत पीठ वाले घोड़े मधुर स्तुति के योग्य, सोमपान के लिए इन्द्र को यहाँ लावें ।२५। (१४)

पिबा त्वस्य गिर्वणः सुतस्य पूर्वपा इव ।
परिष्कृतस्य रसिन इयमासुतिश्चारुर्मदाय पत्यते ॥२६
य एको अस्ति दंसना महाँ उग्रो अभि व्रतैः ।
गमत् स शिप्री न स योषदा गमद्धवं न परि वर्जति ॥२७
त्वं पुरं चरिष्णवं वधैः शुष्णस्य सं पिणक् ।
त्वं भा अनु चरो अध द्विता यदिन्द्र हव्यो भुवः ॥२८
मम त्वा सूर उदिते मम मध्यन्दिने दिवः ।
मम प्रपित्वे अपिशर्वरे वसवा स्तोमासो अवृत्सत ॥२९
स्तुहि स्तुहीदेते घा ते मंहिष्ठासो मघोनाम् ।
निन्दिताश्वः प्रपथी परमज्या मघस्य मेध्यातिथे ।३०।१५

हे स्तुत्य इन्द्र ! तुम पहले सोम पीने वाले के समान इस सोम को पीओ । यह शुद्ध रस से युक्त है। यह हर्षकारी और सुन्दर है। प्रसन्नता के लिए ही यह तैयार किया जाता है।२६। जो इन्द्र अकेले ही अपने बलसे सबको हराते हैं और जो विकाल कर्म वाले हैं,वे इन्द्र यहाँ आगमन करें। वह हमसे दूर न हों। हमारे स्तोत्रोंके सामने आवें २७ हे इन्द्र ! तुमने 'शुष्ण' के निवास को वज्र से चूर्ण कर दिया। तुम यज्ञ करने वाले स्तोता आहूत करने योग्य हो। तुमने तेजस्वी होकर 'शुष्ण' का पीछा किया।२८। तुम सूर्य के उदित होने पर मेरे सब स्तोत्रों को पुनः चैतन्य करो। दिन के मध्य में, अन्त में, रात में भीं मेरे स्तोत्र को आवर्तित करो ।२९। हे मेधातिथि ! तुम मेरी बारम्बार स्तुति करो। हम सबसे अधिक धन देते हैं, मेंरी शक्ति से ही दूसरों से अश्व नियोंजित हुए हैं। मेरे आयुध और मार्ग श्रेष्ठ हैं।३०। (१५)

आ यदश्वान् वनन्वतः श्रद्धयाह रथे रुहम् ।
उत वामस्य वसुनश्चिकेतति यो अस्ति याद्वः पशुः ॥३१
य ऋज्रा मह्यं मामहे सह त्वचा हिरण्यया ।
एष विश्वान्यभ्यस्तु सौभगा ऽऽसगस्य स्वनद्रथा ॥३२
अध प्लायोगिरति दासदन्यानासंगो अग्ने दशभिः सहस्रैः ।
अधोक्षणो दश मह्यं रुशन्तो नला इव सरसो निरतिष्ठन् ॥३३
अन्वस्य स्थूर ददृशे पुरस्तादनस्थ ऊरुवरम्बमाणः ।
शश्वती नार्यभिचक्ष्याह सुभद्रमर्य भोजनं विभर्षि ।३४ १६

मैंने श्रद्धा सहित तुम्हारे रथ को योजित किया। मैं सुन्दर दान करने वाला हूँ। मैं यदुवंश में उत्पन्न हुआ हूँ ।३१। जिन्होंने सुवर्णमय चर्मास्तरण सहित मुझे सुन्दर धन किया था, वे (आसङ्ग) शब्द वाले रथ से युक्त होकर शत्रुओंके धन पर विजय प्राप्त करें।३१। हे अग्ने ! प्लयोग के पुत्र आसङ्ग ने दस हजार गौओंका दान किया, इससे वे सब दानियोंमें श्रेष्ठ हुए,तब सभी सेंचन समर्थ पशु उनके पास चले गये।३२।

आसङ्ग खूब हृष्टपुष्ट है । उनकी शक्तिशाली देह विशाल और यथेष्ट दीर्घ है । उनकी स्त्री शाश्वती ने कहा था—हे स्वामिन ! आप परम सोभाग्यवान् और सभी से बढ़कर है । ३४ । (१६)

सूक्त २

(ऋषि-मेधातिथि काण्वः प्रियमेधश्चाङ्गिरसः । देवता-इन्द्रः । छन्द-गायत्री, अनुष्टुप्)

इदं वसो सुतमन्धः पिबा सुपूर्णमुदरम् । अनाभयिन् ररिमा ते ॥१

नृभिर्धूतः सुतो अश्नैरव्यो वारैः परिपूतः ।
अश्वो न निक्तो नदीषु ॥२

तं ते यवं यथा गोभिः स्वादुमकर्म श्रीणन्तः ।
इन्द्र त्वास्मिन् त्सधमादे ॥३

इन्द्र इत् सोमपा एक इन्द्रः सुतपा विश्वायुः ।
अन्तर्देवान् मर्त्यां श्च ॥४

न यं शुक्रो न दुराशीर्न तृप्रा उरुव्यचसम ।
अपस्पृण्वते सुहार्दम् ।५।१७

हे इन्द्र ! इस अभिषुत सोम को पीओ । तुम्हारा इससे उदर परिपूर्ण हो । हे इन्द्र! हम तुम्हारे निमित्त सोम प्रदान करेंगे । १। ज्ञानीजन ने जिसे धोकर स्वच्छ किया और वस्त्र से छाना गया वह सोमरस, नदी मे स्नान करके निकले हुए घोड़े के समान सुशोभित हो रहा है।२। हे इन्द्र ! हमने अन्न के समान उक्त सोम को तुम्हारे निमित्त गोदुग्ध आदि से मिश्रित कर सुस्वाद किया है । है इन्द्र ! उस सोम के पान के निमित्त मैं तुम्हें इस यज्ञ में आहूत करता हूँ ।३। देवता और मनुष्यों में इन्द्र ही सम्पूर्ण सोम को पीनेके अधिकारी हैं । वे सोमपायी इन्द्र सब प्रकार अन्नों में सम्पन्न हैं ।४। जिन इन्द्र को सोम रुष्ट नहीं करता, वह क्षीरादिसे युक्त सोम भी जिन्हें अप्रसन्न नहीं करता, अन्य पुरोडाश आदि भी जिन्हें रुष्ट नहीं करते, उन इन्द्र का स्तवन करते हैं ।५-१७।

गोभिर्यदीमन्ये अस्मन् मृगं न व्रा मृगयन्ते। अभित्सरन्ति धेनुभिः६

त्रय इन्द्रस्य सोमाः सुतासः सन्तु देवस्य । स्वे क्षये सुतपाव्नः ॥७

त्रयः कोशासः श्चोतन्ति तिस्रश्चम्वः सुपूर्णाः । समाने अधिभामन्८

शुचिरसि पुरुनिःष्ठाः क्षीरैर्मतध्य आशीर्तः। दध्नामन्दिष्ठः शूरस्य९

इमे त इन्द्र सोमास्तीव्रा अस्मे सुतासः ।
शुक्रा आशिरं याचन्ते ।१०।१८

जैसे जाल के द्वारा घेरे गये मृग को शिकारी ढूंढता हैं, वैसे ही ऋत्विक् आदि सोम द्वारा इन्द्रको खोजते है। जो व्यक्ति अस्वच्छ हृदय से इन्द्र के पास पहुँचते हैं, वे उन इन्द्र को पा नही सकते ।६। छाने हुए सोमरस के पीने वाले इन्द्र के निमित्त तीनों सवन में, यज्ञ-गृह में सोम सिद्ध किया जाता है ।७। ऋत्विजों का पालन करने वाले यज्ञ में तीन प्रकार के कलश सोमरस को प्राप्त करते और पूर्ण होतेहैं ।८। हे सोम! तुम पवित्र पात्रों में स्थित हो तथा दूध या दही से मिश्रित होते ही तुम अपने आनन्ददायक प्रभाव से उन वीर इन्द्र को हृष्ट करो ।९। हे इन्द्र ! तुम्हारे यह सोम अत्यन्त हर्षकारी है। हमारे अभिषुत एवं मिश्रण युक्त सोम तुम्हें चाहते हैं ।१०। (७८)

तां आशिरं पुरोलाशमिन्द्रेमं सोमं श्रोणीहि ।
रेवन्तं हि त्वा शृणोमि ॥११
हृत्सु पीतासो युध्यन्ते दुर्मदासो न सुरायाम् ।
ऊधर्न नग्ना जरन्ते ॥१२
रेवाँ इद् रेवतः स्तोता स्यात् त्वावतो मघोनः ।
प्रेदु हरिवः श्रुतस्य ॥१३
उक्थं चन शस्यमानमगोररिरा चिकेत । न गायत्रं गीयमानं॥१४
मा न इन्द्र पीयत्नवे मा शर्धते परा दाः ।
शिक्षा शचीवः शचीभिः ।१५।१९

हे इन्द्र ! उन सोमों की ओर मिश्रण पदार्थ को एकत्र करो। पुरोडाश और सोमरस को भी एकत्र करो । उससे मैं धनवान् बनूं ।११। जैसे सुरापन करने के पश्चात् उसका मद सुरा पीने वाले के हृदय में मत्त बनाने के लिए युद्ध करता है, वेंसे ही पिये हुए सोम भी हृदयों में युद्ध करते हैं। हे इन्द्र ! तुम सोम से पूर्ण हो। जैसे गाय के दूध से युक्त स्तन की रक्षा की जाती हैं, वैसे हो स्तुति करने वाले तुम्हारी रक्षा करते हैं।१२। हे इन्द्र ! तुम ऐश्वर्यशाली हो। तुम्हारी स्तुति करने वालेभी धन प्राप्त करें। तुम्हारे समान धनिक और प्रसिद्ध

देव की स्तुति करने वाला वैभववन्त होता है ।१३। स्तुतियों से हीन मनुष्य के इन्द्र पूरी तरह शत्रु हैं । वह गाये जाने वाले स्तोत्रको जानते हैं । इस समय योग्य स्तोत्र गाया जाता है ।१४। हे इन्द्र ! मुझे शत्रु के हाथ में न सौंपों । छीनने वाले के हाथ में भी मत छोड़ो । हे इन्द्र ! अपने कर्म और बल से हमको धन प्रदान करना ।१५। (१६)

वयमु त्वा तदिदर्था इन्द्र त्वायन्तः सखायः ।
कण्वा उक्थेभिर्जरन्ते ॥१६

न घेमन्यदा पपन वज्रिन्नपसो नविष्टौ । तवेदु स्तोमं चिकेत॥१७

इच्छन्ति देवाः सुन्वन्तं न स्वप्नाय स्पृहयन्ति ।
यन्ति प्रमादमतन्द्राः ॥१८

ओ षु प्र याहि वाजेभिर्मा हृणीथा अभ्यस्मान् ।
महाँ इव युवजानिः ॥१९

मो ष्वद्य दुर्हणावान् त्सायं करदारे अस्मत् ।
अश्रीर इव जमाता ।२०।२०

हे इन्द्र हम तुम्हारे मित्र है । तुम्हारी ही कामना किया करते हैं । तुम्हारा स्तोत्र उच्चारित करना ही हमारा उद्देश्य है,हम तुम्हारेस्तोता है । कण्व वंशी ऋषि तुम्हारा स्तवन स्तोत्र से करते हैं ।१६। हे वज्रिन् तुम कर्म करने वाले हो । तुम्हारे यज्ञ में मैं अन्य का स्तोत्र नहीं करता मैं केवल तुम्हारे स्तोत्रका ज्ञाता हूँ ।१७। देवगण सोम छानने वाले यजमान की सदा कामना करने हैं । वे सुषुप्त मनुष्य को नहीं चाहते । वे आलस्य से रहित देवता हर्षकारी सोम-लाभ करते हैं ।१८। हे इन्द्र ! अन्न सहित हमारे समक्ष पधारो । जैसे गुणवती स्त्री पाने पर विचारवान् पुरुष उस पर क्रोध नहीं करते वैसे ही तुम भी हम पर क्रोध नहीं करते ।१६। हे इन्द्र ! हमारे पास आओ । बुलाये हुए घमण्डीं जमाई के समान सायकाल मत करे देना ।२०। (२०)

विद्मा ह्यस्य वीरस्य भूरिदावरी सुमतिम्। त्रिषुजातस्य मनांसि२१

आ तू षिञ्च कण्वमन्तं न घा विद्म शवसानात् ।
यशस्तरं शतमूतेः ॥२२

ज्येष्ठेन सोतरिन्द्राय सोमं वीराय शक्राय । भरा पिबन्नर्याय ।२३
यो वेदिष्ठो अव्यथिष्वश्वावन्तं जरितृभ्यः ।
वाजं स्तोतृभ्यो गोमन्तम् ।।२४
पन्यंपन्यमित् सोतार आ धावत मद्याय । सोमं वीराय शूराय ।२५।२

हम इन वीर इन्द्र की प्रचुर धन दान करने वाली मङ्गलकारिणी कृपा-बुद्धि को जानते है । हम उन तीनों लोकों में प्रकट होने वाले इन्द्र को जानते हैं ।२१। हे अध्वर्यु ! कण्व वंशी स्तोता ऋषि इन्द्र के लिए शीघ्र ही सोम याग करें । अत्यन्त पराक्रमी एवं रक्षक इन्द्र से अधिक यश वाले किसी देवता को हम नहीं जानते ।२२। सोम छानने वाले अध्वर्यु, मनुष्योंका हित करने वाले, पराक्रमी इन्द्रके लिए सोम प्रदाता हों । वे इन्द्र सोम को पीवें ।२३। जो सुख देने वाले स्तोताओं के ज्ञाता हैं, वह इन्द्र होताओं और स्तोताओं को बहुत अश्व गवादि युक्त धन देते हैं ।२४। हे सोमसिद्ध करने वालो ! तुम हृष्ट करने के योग्य वीर इन्द्र । निमित्त के प्रशंसा के योग्य सोम प्रदान करो ।२५। (२१)

पाता वृत्रहा सुतमा घा गमन्नारे अस्मत् । नि यमते शतमूतिः।२६
एह हरी ब्रह्मयुजा शग्मा वक्षतः सखायम् ।
गीर्भिः श्रुतं गिर्वणसम् ।।२७
स्वादवः सोमा आ याहि श्रीताः सोमा आ याहि ।
शिप्रिन्नृषीवः शचीवो नायमच्छा सधमादम् ।।२८
स्तुतश्च यास्त्वा वर्धन्ति महे राधसे नृम्णाय ।
इन्द्र कारिणं वृधन्तः ।।२९
गिरश्च यास्ते गिर्वाह उक्था च तुभ्यं तानि ।
सत्रा दधिरे शवांसि ।३०।३२

सोम पान में लगे हुए तथा वृत्र के मारने वाले इन्द्र यहाँ आगमन करें । वे हमसे दूर न जावें । वे बहुत रक्षाओं से युक्त इन्द्र हमारे

शत्रुओं का मान खण्डन करें ।२६। सुख से युक्त स्तोत्र-सम्पन्न दोनों घोड़े स्तुतियों से नियुक्त होकर आश्रयदाता, मित्र रूप इन्द्र को यहाँ लावें ।२७। हे सशक्त इन्द्र ! यह सोम अत्यन्त सुस्वादु है। तुम यहाँ आगमन करो। सभी सोम दुग्धादि से मिश्रित हुए रखे है। तुम हवि को चाहते हो। अतः यहाँ आओ। स्तुति करने वाला साधक तुम्हारा स्तवन करता है ।२८। हे इन्द्र ! स्तुति करने वाले सभी स्तोत्र, महान ऐश्वर्य और पराक्रम के निमित्त तुम्हें वर्द्धमान करते है।२९। हे इन्द्र ! जो स्तोत्र तुम्हारे लिये हैं, वे सब एकत्र होकर तुम्हारे ही पराक्रम को प्राप्त हो ।३०। (२२)

एवेदेष तुविकूर्मिर्वाजां एको वज्रहस्तः । सनादमृक्तो दयते ।।३१
हन्ता वृत्रं दक्षिणेनेन्द्रः पुरू पुरुहूतः : महान् महीभिः शचीभिः ३२
यस्मिन् विश्वाश्चर्षणय उत च्यात्ना ज्रयांसि च ।
अनु घेन्मन्दी मघोनः ।।३३
एष एतानि चकारेन्द्रो विश्वा योऽति शृण्वे ।
वाजदावा मघोनाम् । ३४
प्रभर्ता रथं गव्यन्तमपाकाच्चिद् यमवति ।
इनो वसु स हि वोलहा ।३५।२३

हे इन्द्र ! तुम विविध कर्म वाले एवं वज्रधारी हो। तुम किसी के द्वारा कभी जीते नहीं जा सकते। तुम स्तुति करते वाले यजमान को बल प्रदान करते हो ।३१। इन्द्र ने दक्षिण हाथ से वृत्र को मारा। वे अनेक स्थानोसे बहुत बार आहूत हुए हैं। वे विविध कर्मों द्वारा अत्यन्त महान हैं।३२। जिन इन्द्र के आश्रित समस्त प्रजा हैं और जो इन्द्र महा पराक्रमी तथा अभिनय है, वह इन्द्र यजमानो की बात रखने वाले हों ।३३। इन्द्र ने यह सभी कार्य किये हैं। वे सब जगत में कहे जाते हैं वे हवि देने वालों को अन्न प्रदान करते है ।३४। हे इन्द्र ! तुम गौ की कामना वाले जिस यजमान की दुर्बुद्धि वाले शत्रु से रक्षा करते हो, वह यजमान धन वहन करने वाला होकर उसका स्वामी होता है ।३५। (२३)

सनिता विप्रो अर्वद्भिर्हन्ता वृत्रं नृभिः शूरः।
सत्योऽविता विधन्तम्। ३६

यजध्वैनं प्रियमेधा इन्द्रं सत्राचा मनसा।
यो भूत् सोमैः सत्यमद्वा॥३७

गाथश्रवसं सत्पतिं श्रवस्काम पुरुत्मानम्।
कण्वासो गात वाजिनम् ॥३८

य ऋते चिद् गास्पदेभ्यो दात् सखा नृभ्यः शचीवान्।
ये अस्मिन् काममश्रियन् ॥३९

इत्था धीवन्तमद्रिवः काण्वं मेध्यातिथितम्।
मेषो भूतोऽस्मि यन्नयः ॥४०

सिक्षा विभिन्दो अस्मै चत्वार्ययुता ददत्। अष्टा परः सहस्रा॥४१

उत सु त्ये पयोवृधा माकी रणस्य नप्त्या। जनित्वनाय मामहे ।४२।२४

ऐश्वर्यशाली इन्द्र सभी गमन योग्य स्थानों पर अश्व की सहायता से गमन करते हैं। हे मरुद्गण के सहयोग से वृत्र का हनन करते हैं। दे सत्यरूप वाले एवं अपने उपासक के रक्षक हैं।३६। हे प्रियमेध! इन्द्र में मन लगाकर उनके लिए यज्ञ करो। सोमपान करने पर वे हर्षित होते हैं तब उनका हर्ष व्यर्थ नहीं होता।३६। हे कण्व-पुत्रों! तुम सज्जनों की रक्षा करने बाले, अन्नकी कामना वाले विभिन्न स्थानों में जाने वाले, वेगवान् एवं यश गाने योग्य इन्द्र का स्तवन करो।३८। पदचिह्न न मिलने पर भी उत्तम कर्म वाले मित्ररूप इन्द्र ने स्तोताओ को गौयें फिर ढूंढ कर दीं। देवताओं ने इन्द्रसे इच्छित धन प्राप्तकिया था।३९। हे वज्रिन ! स्तुति करते हुए, सामने से जाते हुए मेष रूप बाले कण्वपुत्र मेधातिथि को तुमने पाया।४०। हे 'विभिन्दु' राजन्! तुम अत्यन्त दानी हो। तुमने मुझे ४० सहस्र संख्या वाला धन प्रदान किया। इसके पश्चात् आठ सहस्र संख्यक धन दिया। मैंने सुप्रसिद्ध जल की वृष्टि करने वाले, प्राणियों को जीवन देने वाले और स्तोता पर कृपा करने वाले आकाश-पृथिवी की धन उत्पन्न करने के लिए स्तुति की।४१-४२। (२४)

सूक्त ३

(ऋषि-मेधातिथिः काण्वः । देवता-इन्द्रः । छन्द बृहती, पंक्तिः गायत्री, अनुष्टुप्)

पिबा सुतस्य रसिनो मत्स्वा इन्द्र गोमतः ।
आपिर्नो वोधि सधमाद्यो वृधे ऽस्माँ अवन्तु ते धियः ॥१
भूयाम ते सुमतौ वाजिनो वयं मा नः स्तरभिमातये ।
अस्माञ्चित्राभिरवतादभिष्टिभिरा नः सुम्नेषु यामय ॥२
इमा उ त्वा पुरूवसो गिरो वर्धन्तु या मम ।
पावकवर्णाः शुचयो विपश्चितो ऽभि स्तोमैरनूषत ॥३
अयं सहस्रमृषिभिः सहस्कृतः समुद्र इव पप्रथे ।
सत्यः सो अस्य महिमा गृणे शवो यज्ञेषु विप्रराज्ये ॥४
इन्द्रमिद् देवतातय इन्द्रं प्रयत्यध्वरे ।
इन्द्रं समीके वनिनो हवामह इन्द्रं धनस्य सातये ॥५॥२५

हे इन्द्र ! हमारे छाने हुए गोम रस से तृप्त होओ । तुम तृप्त होने के योग्य हो । तुम मित्र होकर हमें बढ़ने के लिए स्वयं बढ़ो । तुम्हारी बुद्धि हमारी पालक हो ।१। हे इन्द्र ! हम तुम्हारे अनुग्रह से हवियो से युक्त हों । हमको शत्रु के लिए दण्डित मत करना । हमारी रक्षा करते हुए तुम हमको सदा सुखी बनाओ ।२। हे ऐश्वर्यशाली इन्द्र! मेरी स्तुति रूप वाणी तुम्हें बढ़ावे । अग्निके समान तेजस्वी और ज्ञानी पुरुष तुम्हारा स्तवन करते हैं ।३। सहस्रों ऋषियों के द्वारा बल पाकर इन्द्र बढ़े है । इनकी प्रसिद्ध महिमा और पराक्रम की सदा प्रशंसा की जाती है ।४। यज्ञारम्भ में हम इन्द्र का आह्वान करते हैं । यज्ञ की समाप्ति पर भी इन्द्रका आह्वान करते हैं । हम धन प्राप्तिकी कामना करते हुए, भी इन्द्र का आह्वान करते हैं ।५।

(२५)

इन्द्रो मह्ना रोदसी पप्रथच्छव इन्द्रः सूर्यमरोचयत् ।
इन्द्रे ह विश्वा भुवनानि येमिर इन्द्रे सुवानास इन्दवः ॥६

अभि त्वा पूर्वपीतय इन्द्र स्तोमेभिरायवः ।
समीचीनास ऋभवः समस्वरन् रुद्रा गृणन्त पूर्व्यम् ॥७
अस्येदिन्द्रो वावृधे वृष्ण्यं शवो मदे सुतस्य विष्णवि ।
अद्या तमस्य महिमानमायवोऽनु ष्टुवन्ति पूर्वथा ॥८
तत् त्वा यामि सुवीर्यं तद् ब्रह्म पूर्वचित्तये ।
येना यतिभ्यो भृगवे धने हिते येन प्रस्कण्वमाविथ ॥९
येना समुद्रमसृजो महीरपस्तदिन्द्र वृष्णि ते शवः ।
सद्यः सो अस्य महिमा न संनशे यं क्षोणीरनुचक्रदे ।१०।२६

अपनी महत्ता से ही इन्द्र ने आकाश-पृथिवी को बढ़ाया। इन्द्र ने ही सुर्य को प्रकाशमान किया। इन्द्र के द्वारा ही समस्त लोक नियमित हैं। सोम तो इन्द्र द्वारा ही नियत हैं।६। हे इन्द्र ! स्तुति करने वाले लोग सोम-पान के निमित्त तुम्हें सब देवताओं से पहले बुलाने के लिए स्तुति करते हैं। ऋभुगण भी तुम्हारी स्तुति कहते है। हे इन्द्र ! तुम प्राचीन हो। रुद्रों ने भी तुम्हारा स्तवन किया था।७। छने हुए सोम को पीकर आनन्दित होने पर इन्द्र यजमान के बलवीर्य की वृद्धि करते हैं। प्राचीनकाल के समान ही आज भी स्तोतागण उन्हीं का गुणगान करते हैं। हे इन्द्र ! तुम सुन्दर वीर्य वाले हों। मैं तुमसे उत्तम अन्न की याचना करता हूँ। कर्म रहित मनुष्योंसे हितकारी धन लेकर तुमने भृगु को प्रदान किया और 'प्रस्कणव' की तुमने रक्षा की। में तुमसे उसी वीर्य और अन्न की याचना करता हूँ।९। हे इन्द्र ! जिस बल से तम समुद्र को उत्तम एवं प्रचुर जल प्रदान किया तुम्हारा वह बल अभीष्ट पुर्ण करने वाला हैं। तुम्हारी महिमाका पृथिवी अनुगमन करती हैं।११। (२६)

शग्धी न इन्द्र यत् त्वा रयिं यामि सुवीर्यम् ।
शग्धि वाजाय प्रथमं सिषासते शग्धि स्तोमाय पूर्व्य ॥११
शग्धी नो अस्य यद्ध पौरमाविथ धिय इन्द्र सिषासतः ।
शग्धि यथा रुशमं श्यावकं कृपमिन्द्र प्रावः स्वर्णरम् ॥१२
कन्नव्यो अतसीनां तुरो गृणीत मर्त्यः ।

नही न्वस्य महिमानमिन्द्रियं स्वर्गृणन्त आनशुः ॥१३
कदु स्तुवन्त ऋतयन्त देवत ऋषिः को विप्र ओहते ।
कदा हवं मघवन्निन्द्र सुन्वतः कदु स्तुवत आ गमः ॥१४
उदु त्ये मधुसत्तमा गिरः स्तोमास ईरते ।
सत्राजितो धनसा अक्षितोतयो वाजयन्तो रथा इव ।१५।२७

हे इन्द्र ! जिस सुन्दर वीर्ययुक्त धन की मैं तुमसे याचना करता हूँ, मुझे वह धन दो । हविर्युत यजमान को सबसे पहले धन दो । फिर स्तुति करने वाले को भी दो ।११। हे इन्द्र ! जिस बलसे तुमने पुरुके पुत्र की रक्षा की, वही बल यजमानों को प्रदान करो । जैसे 'रुषम' 'श्यावक' 'कृपग' की तुमने रक्षा की वैंसी ही रक्षा सब हवि वालों की करो ।१२। कौन सा मनुष्य सदा गमनशील स्तुतियों को करने वाला, इन्द्र का स्तोता है ? इन्द्र के स्तोता इन्द्र की महिमा को नहीं पा सकते ।१। हे इन्द्र ! तुम देवता हो । कौन सा स्तोता तुम्हारे लिए यज्ञ संपादन की शक्ति रखता है ? कौन ऋषि तुम्हारी स्तुतियों का वाहक है । हे इन्द्र स्तोता के आह्वान पर तुम जब आते हो ? ।१। प्रसिद्ध और अत्यन्त मधुर वाणी स्तोत्र शत्रु के जीतने वाले अक्षय रक्षासे युक्त और अन्न की अभिलाषा करने वाले रथ के समान कही जाती है ।१५। (२७)

कण्वा इव भृगवः सूर्या इव विश्वमिद् धीतमानशुः ।
इन्द्रं स्तोमेभिर्महयन्त आयवः प्रियमेधासो अस्वरन् ॥१६
युक्ष्वा हि वृत्रहन्तम हरी इन्द्र परावतः ।
अर्वाचीनो मघवन् त्सोमपीतय उग्र ऋष्वेभिरा गहि ॥१७
इमे हि ते कारवो वावशुर्धिया विप्रासो मेधसातये ।
स त्वं नो मघवन्निन्द्र गिर्वणो वेनो न शृणुधी हवम् ॥१८
निरिन्द्र बृहतीभ्यो वृत्रं धनुभ्यो अस्फुरः ।
निरर्बुदस्य मृगयस्य मायिनो निः पर्वतस्य गा आजः ॥१९
निरग्नयो रुरुचुर्निरु सूर्यो निः सोम इन्द्रियो रसः ।
निरन्तरिक्षादधमो महामहिं कृषे तदिन्द्र पौंस्यम् ।२०।२८

कण्वों के समान ही भृगुओं ने सूर्य किरणों के समान इन्द्र को व्याप्त किया। प्रियमेव ने स्तोत्र द्वारा इन्द्रका ही पूजन किया था।१६। हे इन्द्र ! तुम वृत्रका भले प्रकार वध करते हो अपने दोनों घोड़ों को रथ में युक्त करो ! इन्द्र ! तुम उग्रकर्मा एवं धनीहो। दर्शनीय मरुद्गण के साथ सोम पीने के लिये यहाँ आगमन करो।१८। हे इन्द्र ! यजमान यज्ञ के निमित्त तुम्हारा स्तवन करते हैं। हे धनी इन्द्र! तुम स्तुत्य हो। पुरुष जैसे पत्नी का आह्वान सुनता है वैसे ही हमारा आह्वान सुनो।१८। हे इन्द्र ! तुमने वृत्र का हनन किया। मायावी 'अर्बुद' और 'मृगय' को मारा। पर्वत से गौओं का मुक्त किया।१९। हे इन्द्र ! जब तुमने अन्तरिक्ष से वृत्र को हटाया, तब बलको प्रकट किया। उस समय अग्नि सूर्य और इन्द्र के सेवन योग्य सोमरस भी उज्ज्वल हो गये।२०। (२८)

यं मे दुरिन्द्रो मरुतः पाकस्थामा कौरयाणः।
विश्वेषां त्मना शोभिष्ठमुपेव दिवि धावमानम् ॥२१
रोहितं मे पाकस्थामा सुधुरं कक्ष्यप्राम्।
अदाद् रायो विबोधनम् ॥२२
यस्मा अन्ये दश प्रति धुरं वहन्ति वह्नयः।
अस्तं वयो न तुग्र्यम् ॥२३
आत्मा पितुस्तनूर्वास ओजोदा अभ्यञ्जनम्।
तुरीयमिद् रोहितस्य पाकस्थामानं भोजं दातारमब्रवम्।२४।२९

इन्द्र और मरुद्गण ने मुझे जो दिया, वही 'कुरया' के पुत्र 'पाकस्थामा' ने दिया। वह धन सभी धनों में प्रकाशमान सूर्य के समान सुशोभित होता है।२१। पाकस्थामा ने मुझे लाल रङ्ग का सुन्दर, विविध प्रकार के श्रेष्ठ धनों को प्राप्त कराने वाला अश्व प्रदान किया।२२। उस अश्व के दश प्रतिनिधि अश्व हैं। वे मुझे वहन करते हैं। इस प्रकार अश्वों ने 'तुग्र-पुत्र भुज्यु' का वहन किया।२३। पाकस्थाना अपने पिता के श्रेष्ठ पुत्र हैं। वे निवास तथा देने वाले हैं। वे शत्रुओं की हिंसा करने वाले हैं। लाल रङ्ग का अश्व प्रदान करने वाले पाकस्थामा का मैं स्तवन करता हूँ।२४। (२९)

सूक्त ४

(ऋषि-देवातिथि: काण्वः । दैवता-इन्द्रः पूषा वा । छन्द-अनुष्टुप् पंक्तिः, बृहती उष्णिक)

यदिन्द्र प्रागपागुदङ् न्यग्वा हुयसे नृभिः ।
समा पुरू नृयूतो अस्यानवे ऽसि प्रशर्ध तुर्वशे ॥१
यद् वा रुमे रुशमे श्यावके कृप इन्द्र मादयसे सचा ।
कण्वासस्त्वा ब्रह्मभिः स्तोमवाहस इन्द्रा यच्छन्त्या गहि ॥२
यथा गौरो अपा कृतं तृष्यन्नेत्यवेरिणम् ।
आपित्वे नः प्रपित्वे तूयमा गहि कण्वेषु सु सचा पिब ॥३
मन्दन्तु त्वा मघवन्निन्देन्दवो राधोदेयाय सुन्वते ।
आमुष्या सोममपिबश्चमू सुतं ज्येष्ठं तद् दधिषे सहः ॥४
प्र चक्रे सहसा सहो बभञ्ज मन्युमोजसा ।
विश्वे त इन्द्र पृतनायवो यहो नि वृक्षा इव येमिरे ।५।३०

हे इन्द्र ! तुम सभी दिशाओं में रहने वाले स्तोताओं द्वारा आहूत होते हो, तो भी 'आनुक' राजा के पुत्र के लिए स्तोताओं द्वारा प्रीति-दायक होते हो । 'तुर्वश' के लिए भी तुम प्रेरित होते हो ।१। हे इन्द्र ! तुम 'रुम' 'रुशम' 'श्यावक' और 'कृप' के साथ प्रीति करते थे । फिर भी कण्ववंशी तुम्हारा स्तोत्र करते हैं । आगमन करो ।२। जैसे प्यासा मृग जलसे परिपूर्ण तथा घासादि से युक्त स्थाय की पहिचान कर लेता है, हे इन्द्र ! वैसे ही मित्रता स्थापित होने पर तुम हमारे समक्ष आगमन करो । हम कण्व पुत्रों के साथ सोमपान करें ।३। हे ऐश्वर्यशाली इन्द्र ! सोमाभिषव करने वाले को धन देने के निमित्त तुमने बलधारण किया ।४। अपने वीरकर्म से इन्द्र ने शत्रुओं को वशीभूत किया । बल के द्वारा दूसरे के प्रकट किये गये क्रोध को उन्होंने दूर किया । उन महान् इन्द्र ने युद्ध की कामना वाले शत्रुओं को वृक्ष के समान गिरा दिया ।५।

(३०)

सहस्रेणेव सचते यवीयुधा यस्त आनलुपस्तुतिम् ।
पुत्रं प्रावर्गं कृणुते सुवीर्ये दाश्नोति नमउक्तिभिः ॥६
मा भेम मा श्रमिष्मोग्रस्य सख्ये तव ।
महत् ते पृष्णो अभिचक्ष्यं कृतं पश्येम तुर्वशं यदुम् ॥७
सव्यामनु स्फिग्यं वायसे वृषा न दानो अस्य रोषति ।
मध्वा संपृक्ताः सारघेण धेनवस्तूयमेहि द्रवा पिब ॥८
अश्वी रथी सुरूप इद् गोमाँ इदिन्द्र ते सखा ।
श्वात्रभाजा वयसा सचते सदा चन्द्रो याति सभामुप ॥९
ऋश्यो न तृष्यन्नवपानमा गहि पिबा सोमं वशाँ अनु ।
निमेघमानो मघवन् दिवेदिव ओजिष्ठं दधिषे सहः ।१०।३१

हे इन्द्र ! जो तुम्हारी स्तुति करता है वह सहस्रों वज्रायुध पाता है । जो नमस्कार पूर्वक हवि देता है वह सुन्दर पराक्रमी तथा शत्रु को मारने वाला पुत्र पाता है ।५। हे इन्द्र ! तुम उग्रकर्मा हो । तुम्हारी मित्रता प्राप्त होने पर हमको किसी का भय नही रहेगा । हम परि-श्रान्त भीं नहीं होंगे । हे इन्द्र ! तुम कामनाओं की वर्षा करने वाले हो । तुम्हारे सभी महान कर्मों को कहना चाहिये । तुमने 'तुर्वश' और 'यदु' को भी देखा था ।७। कामनाओ की वर्षा करने वाले इन्द्र ने सभी जीवों को आच्छादित किया। हे हवि देने वाली ! इन्द्र को कुपित मत करना । हे इन्द्र ! मधुमक्खी के शहद से युक्त हर्षदायक सोमके पास शीघ्र आगमन कर उसका पान करो ।८। हे इन्द्र! तुम्हारा मित्र ही अश्व, रथ, गौ एवं रूप से युक्त है । वह सदा ही श्रेष्ठ धन पाता और प्रसन्न होता हुआ सभास्थान के लिए गमन करता हैं ।९। 'ऋश्य' नामक मृग के समान, पात्र में अवस्थित सोम के समक्ष आकर इच्छानुसार पीओ । ऐश्वर्यशाली रुद्र ! तुम सदा नीचे की ओर वर्षा जल गिराते हुए पराक्रमी होते हो ।१०। (३१)

अध्वर्यो द्रावया त्वं सोममिन्द्रः पिपासति ।
उप नूनं युयुजे वृषणा हरी आ च जगाम वृत्रहा ॥११

स्वयं चित् स मन्यते दाशुरिर्जनो यत्रा सोमस्त तृम्पसि ।
इदं ते अन्नं युज्यं समुक्षितं तस्येहि प्र द्रवा पिव ॥१२
रथेष्ठायाध्वर्यवः सोममिन्द्राय सोतन ।
अधि ब्रध्नस्याद्रयो वि चक्षते सुन्वन्तो दाश्वध्वरम् ॥१३
उप ब्रध्नं वावाता वृषणा हरी इन्द्रमपसु वक्षतः ।
अर्वाञ्चं त्वा सप्तयोऽध्वरश्रियो वहन्तु सवनेदुप ॥१४
प्र पूषणं वृणीमहे युज्याय पुरूवसुम् ।
स शक्र शिक्ष पुरुहूत नो धिया तुजे राये विमोचन ।१५।३२

हे अध्वर्युओं ! इन्द्र सोम पान करता चाहते हैं । तुम सोम को सिद्ध करो । आज दोनों युवा घोड़े जोड़े गये । वे वृत्र के संहारक इन्द्र आ पहुँचे हैं ।११। हे इन्द्र तुम जिनके सोम से तृप्त होते हो, वह हविदाता यजमान ही इसे जानता है । तुम्हारे लिये सींचा गया सोम पात्र में है । तुम आकर उसका पान करो ।१२। हे अध्वर्युओं ! इन्द्र रथ पर चढ़े हैं । उनको सोम दो । सोम अभिषव के लिए चर्म पर रखे हुए सुशोभित हो रहे हैं ।१ । अन्तरिक्ष में घूमने वाले दोनों घोड़े हमारे यज्ञ में इन्द्र को लावें । हे इन्द्र ! दोनों घोड़े तुम्हें यज्ञ के पास पहुँचने वाले हों ।१४। हम पुषा का मित्रता के लिए वरण करते हैं । हे इन्द्र ! और अनेक द्वारा बुलाये गये पाप-नाशक पूषन् ! तुम कोनों ही अपनी वृद्धि करते हुए हमें धन तथा शत्रु-नाश के लिए सामर्थ्य प्रदान करो ।१५।
(३२)

स नः शिशीहि भुरिजोरिव क्षुरं रास्व रायो विमोचन ।
त्वे तन्न सुवेदमुस्रियं वसु यं त्वं हिनोषि मर्त्यम् ॥१६
वेमि त्वा पूषन्नृञ्जसे वेमि स्तोतव आघृणे ।
न तस्य वेम्यरणं हि तद् वसो स्तुषे वज्राय साम्ने ॥१७
परा गावो यवसं कच्चिदाघृणे नित्यं रेक्णो अमर्त्य ।
अस्माकं पूषन्नविता शिवो भव मंहिष्ठो वाजसातये ॥१८
स्थूरं राधः शताश्वं कुरुङ्गस्य दिविष्टिषु ।

राज्ञस्त्वेषस्य सुभगस्य रातिषु तुर्वशेष्वमन्महि ॥१६
धीभिः सातानि काण्वस्य वाजिनः प्रियमेधैरभिद्युभिः ।
षष्टिं सहस्रानु निर्मजामजे निर्यूथानि गवामृषिः ॥२०
वृक्षाश्चिन्मे अभिपित्वे अरारणुः ।
गां भजन्त मेहनाऽश्वं भजन्त मेहना ।२१।३३

नाई के हाथ में रहने वाले उस्तरे के समान हमारी बुद्धि को तीक्ष्ण करो । हे पाप-नाशक ! हमको धन-प्रदान करो ! तुम्हारा गौ रूप धन हमको सुलभता से साध्य हो । तुम मनुष्यों के लिए धनों को प्रेरणा करते हो ।१५। हे पूषा, मैं तुम्हें प्रसन्न करना चाहता हूँ । स्तुति करने का इच्छुक हूँ । मै अन्य देवताओं की कामना नहीं करता तुम सोम स्तोता को इच्छित धन प्रदान करो ।१७। हे पूषन् ! तुम तेजस्वी एवं अमरणशील हो, हमारी गायें चर को लौटती रहें । हमारा गवादि धन स्थिरहो । तुम हमारी रक्षा करने वाले और कल्याण करने वाले हो तुम अन्न देने के लिए महान बनो ।१८। 'कुरङ्ग' नामक राजा की स्वर्ग कामना के निमित्त हुए यज्ञ और दान में हमने सौ अश्वों वाले प्रचुर धन को पाया ।१९। कण्वपुत्र और मेधातिथि तथा उनके स्तोताओं द्वारा एवं प्रियमेध द्वारा मैंने आठ सहस्र गौओं को सबके पश्चात् पाया था ।२०। मेरे धन प्राप्त करने पर वृक्षों ने भी हर्ष रूप ध्वनि की थी । उनका भाव था कि मेंने स्तुति योग्य गौ अश्व रूप धन को पाया है ।२१।

(३३)

सूक्त ५

(ऋषि-ब्रह्मातिथिः, काण्वः, । देवता-अश्विनी, चैद्यस्यः कशोर्दान स्तुति । छन्द-गायत्री, बृहती, अनुष्टुप्)

दुरादिहेव यत् सत्यरुणप्सुरशिश्वितत् । वि भानुं विश्वधातनत्१
नृषद् दस्रा मनोयुभा रथेन पृथुपाजसा । सचेथे अश्विनोषसम्॥२
युवाभ्यां वाजिनीवसू प्रति स्तोमा अदृक्षत । वाचं दूतो यथोहिषे३
पुरुप्रिया ण ऊतये पुरुमन्द्रा पुरूवसू । स्तुषे कण्वासो अश्विना॥४

मंहिष्ठा वाजसातमेषयन्ता शुभस्पती । गन्तारा दाशुषो गृहम्।५।१

दूर से पास में दिखाई पड़ने वाली उषा जब सब पदार्थों को श्वेत करती है, उस समय वह अपनी क्रान्ति को फैलाती हुए बढ़ती है।१। हे अश्विद्वय ! तुम अग्रगण्य हो। इच्छा होते ही अश्वों द्वारा योजित अन्नवान रथ से तुम उषा के पास पहुँचो।२। हे अश्विद्वय ! तुम अन्न और धन से युक्त हो अपने रचे हुए स्तोत्रों का अवलोकन करो। जैसे दूत स्वामी के वचन की याचना करता है, वैसे ही तुम तुम्हारे वचन के लिए याचना करते हैं।३। हे अश्विद्वय ! तुम अनेकों के प्रीति भाजन हों। बहुत धन वाले तुम, अनेकों धन प्रदान करते हो। हम कण्ववंशी अपनी रक्षा के लिए अश्विनीकुमारों से याचना करते हैं।४। हे अश्विद्वय ! तुम पूजनीय हो। तुम सर्वाधिक अन्न देते हो,तुम सुन्दर धनों के अधिपति हो। तुम मङ्गलकारिणी हो तथा हविदाता के घर में जाया करते हो।५। (१)

ता सुदेवाय दाशुषे सुमेधामवितारिणीम् । घृतैर्गव्यूतिमुक्षतम्।।६

आ नः स्तोममुप द्रवत् तूयं श्येनेभिराशुभिः ।
यातमश्वेभिरश्विना ।।७

येभिस्तिस्रः परावतो दिवो विश्वानि रोचना ।
त्रीँरक्तून् परिदीयथः । ८

उत नो गोमतीरिष उत सातीरहर्विदा ।
वि पथः सातये सितम् ।।९

आ नो गोमन्तमश्विना सुवीरं सुरथं रयिम् ।
वोलहमश्वावतीरिषः ।१०।२

जो हविदाता सुन्दर देवता का उपासक हैं तुम उसके लिए यज्ञ युक्त सुन्दर भूमि को सींचो।६। हे अश्विद्वय ! अश्वों पर सवार होकर हमारी स्तुतियों के प्रति शीघ्र आओ। तुम्हारे अश्वों की चाल स्तुत्य है।७। हे अश्विद्वय ! तु' तीन दिन रात समस्त उज्जवल स्थानों पर अपने घोड़ों की सहायता से जाओ।८। हे अश्विद्वय ! तुम प्रातः सवन में स्तुति योग्य हो। हमारे उपभोग के लिये धन तथा गौ युक्त अन्न प्रदान करो।९। हे अश्विद्वय हमारे निमित्त, गौ,अश्व और सुन्दर संतान से युक्त धन-लाभ कराओ।१ । (२)

वावृधाना शुभस्पती दस्रा हिरण्यवर्तनी । पिबतं सोम्यं मधु ॥११
अस्मभ्यं वाजिनीवसू मघद्भ्यश्च सप्रथः । छर्दिर्यन्तमदाभ्यम्:।१२
नि षु ब्रह्म जनानां याविष्टं तूयमा गतम् ।
मो ष्वन्यां उपारतम् ॥१३
अस्य पिबतमश्विना युवं मदस्य चारुणः ।
मध्वो रातस्य धिष्ण्या ॥१४
अस्मे आ वहतं रयिं शतवन्त सहस्रिणम् ।
पुरुक्षुं विश्वधायसम् ।१५।३

हे अश्विद्वय ! तुम सुन्दर पदार्थोंके स्वामी हो । तुम उज्ज्वल मार्ग वाले तथा दर्शनीय हो । बढ़ते हुए सोम मधु को पीओ ।११। हे अश्विद्वय तुम धनवान हो । हम भी धन से युक्त है । हमको विस्तृत धन और घर दो ।१ । हे अश्विद्वय ! मनुष्य के स्तोत्र की रक्षा करो तुम शीघ्र हमारे पास आओ । अन्य के पास मत जाओ ।१३। हमारे द्वारा प्रदत्त हर्षकारी सोम को पीओ ।१४। हे अश्विद्वय ! हमारे निमित्त शत एवं सहस्र संख्यक धन निवास से युक्त प्राप्त कराओ ।१५। ( )

पुरुत्रा चिद्धि वां नरा विह्वयन्ते मनीषिणः ।
वाघद्भिरश्विना गतम् ।।१६
जनासो वृक्तबर्हिषो हविष्मन्तो अरंकृतः युवा हवन्ते अश्विना१७
अस्माकमद्य वामयं स्तोमो वाहिष्ठो अन्तमः ।
युवाभ्यां भूत्वश्विना ॥ ८
यो ह वां मधुनो दृतिराहितो रथचर्षणे । ततः पिबतमश्विना॥१९
तेन नो वाजिनीवसू पश्वे तोकाय शं गवे। वहतं पीवरीरिष:२०।४

हे अश्विद्वय ! तुमको विद्वजन अनेक स्थानों में आहूत कराते हैं तुम अपने अश्व की सहायतासे आगमन करो ।१६। हे अश्विद्वय ! हवि वाले यजमान कुशोच्छेदन करते हुए तुम्हारा आह्वाहन करते हैं ।१७। हे अश्विनीकुमारो ! हमारा यह सुन्दर स्तोत्र सब स्तोत्रों से अधिक वाहक होता हुआ तुम्हारे पास पहुँचे ।१८। हे अश्विद्वय जो मधुर रूपसे पूर्ण पात्र बीज में रखा है उससे मधु पियो ।१९। हे अश्विद्वय ! तुम अन्नवान और धनवान हो । हमारे गवादि पशु और सन्तान के लिए अपने रथ द्वारा प्रचुर अन्न लाओ ।२०। (४)

उत नो दिव्या इष उत सिन्धूँरहर्विदा । अप द्वारेव वर्षथः ।।२१
कदा वां तौग्र्यो विधत् समुद्रे जहितो नरा ।
यद् वां रथो विभिष्पतात् ।।२२
युवं कण्वाय नासत्या ऽपिरिप्ताय हर्म्ये । शश्वदूतीर्दशस्यथः।।२३
ताभिरा यातमूतिभिर्नव्यसीभिः सुशस्तिभिः ।
यद् वां वृषण्वसू हुवे ।।२४
यथा चित् कण्वमावतं प्रियमेधमुपस्तुतम् ।
अत्रिं शिञ्जारमश्विना ।२५।५

हे अश्विद्वय ! तुम प्रातःकाल में आते जाते हो । तुम आवश्यक दिव्य जल को हमारे द्वार से ही सींचो ।२१। हे अश्विद्वय ! समुद्र में पड़े हुए 'उग्र पुत्र भुज्यु' ने कब तक तुम्हारी स्तुति की थी ! जिससे तुम्हारा आश्वासन रथ उसके पास गया था ।२२। हे कभी भी असत्य न होने वाले अश्विद्वय ! असुरों द्वारा महल के नीचे बांध गये 'कण्व' की तुमने रक्षा की थी ।२ । हे अश्विनीकुमारो ! तुम वर्षणशील तथा वैभवशाली हो । मैं तुमको जब बुलाऊँ तभी तुम अपने विशाल एवं अभिनव रक्षा साधनों सहित आगमन करो ।२४। हे अश्विद्वय ! तुमने 'कण्व', 'प्रियमेध' 'उपस्तु' और स्तुति करने वाले 'अत्रि' की जैसी रक्षा की थी, वैसे ही हमारी रक्षा करो ।२५। (२५)

यथोत कृत्व्ये धनेऽशुं गोष्वगस्त्यम् । यथा वाजेषु सोभरिम् ।।२६
एतावद् वां वृषण्वसू अतो वा भूयो अश्विना ।
गृणन्त सुम्नमीमहे ।।२७
रथं हिरण्यवन्धुरं हिरण्याभीशुमश्विना :
आ हि स्थाथो दिविस्पृशम् ।।२८
हिरण्ययी वां रभिरीषा अक्षो हिरण्ययः। उभा चक्रा हिरण्यया२६
तेन नो वाजिनीवसू परावतश्चिदा गतम् ।
उपेमां सुष्टुति मम ।३०।६

धन के निमित्त अंश गौओं के लिए 'अगस्त्य' और अन्न के लिए 'सोभार' की जैसे रक्षा की, वैसे ही हमारी भी करो ।२८। हे अश्विनी कुमारो ! तुम वर्णनशील एवं ऐश्वर्यशाली हो स्तुति करने वाले हम बहुत धनकी प्रार्थना करते हैं ।२७। हे अश्विनीकुमारो ! तुम सुवर्ण

युक्त ढांचे एवं सुवर्ण की लगाम वाले रथ पर चढ़कर आओ।२८। हे अश्विद्वय! तुम्हारे रथकी ईशा, अक्ष दोनों पहिये यह सब स्वर्ण निमित्त हैं।२९। हे अन्न और धन से युक्त अश्विनीकुमारो! दूर हो तो भी इस रथ पर आओ। हमारो सुन्दर-सुन्दर स्तुति के पास पहुँचो।३०।

(६)

आ वहेथे पराकात् पूर्वीरश्नन्तावश्विना। इषो दासीरमर्त्या ॥३१

आ नो द्युम्नैरा श्रवोभिरा राया यातमश्विन।
पुरुश्चन्द्रा नासत्या ॥३२

एह वां प्रुषितप्सवो वयो वहन्तु पर्णिनः।
अच्छा स्वध्वरं जनम् ॥३३

रथं वामनुगायसं य इषा वर्तते सह। न चक्रमभि बाधते ॥३४

हिरण्ययेन रथेन द्रवत्पाणिभिरश्वैः। धीजवना नासत्या।३५ ७

हे अश्विद्वय! तुम अविनाशी हो। दुष्टों के अनेक पुरों को ध्वस्त कर अन्न लेकर आओ।३१। हे अश्विद्वय! तुम सत्य स्वभाव वाले तथा बहुतों के सखा हो, हमारे पास अन्न लेकर आओ। यश और धन के सहित हमारे पास आओ।३२। हे अश्विनीकुमारो! पक्षियोंके समान द्रुतगति वाले अश्व तुम्हें यज्ञ करने वाले यजमानके पास लावें!।३३। जो चौड़ा रथ में जुता है और स्तुति करने वालों ने जिसकी प्रशसा की है, तुम्हारा वह घोड़ा हमारे कार्यों में सहायक बने।३४। हे अश्विनी-कुमारो! तुम मन के समान वेग वाले हो तुम शीघ्र चाल वाले घोड़ों से युक्त सुवर्णमय रथ पर चढ़ कर यहाँ आगमन करो।३५।

(७)

युवं मृगं जागृवांसं स्वदथो वा वृषण्वसू।
ता नः पृङ्क्तमिषा रयिम् ॥३६

ता मे अश्विना सनीनां विद्यातं नवानाम्।
यथा चिच्चैद्यः कशुः शतमुष्ट्रानां ददत् सहस्रा दश गोनाम् ॥३७

यो मे हिरण्यसंदृशो दश राज्ञो अमंहत।
अधस्पदा इच्चैद्यस्य कृष्टयश्चर्मम्ना अभितो जनाः।३८

माकिरेना पथा गाद् येनेमे यन्ति चेदयः।

अन्यो नेत् सूरिरोहते भूरिदावत्तरो जनः ।३९।८

हे अश्विद्वय ! तुम सदा चैतन्य रहते तथा सोम-पान करते हो। तुम हमको अन्न प्रदान करो ।३६। हे अश्विद्वय ! तुम नवीन धन के जानने वाले हो । चेदि वंशीय 'कशु' राजा ने सौ ऊंट और सहस्र संख्यक धेनु प्रदान की थी,तुम इसे जानते हो ।३७। मेरी सेवाके निमित्त जिन 'कशु' राजाने स्वर्ग के समान चमकते हुए दस संस्थानों को दिया उन कशु की प्रजा उनके चरणों में आश्रय प्राप्त करतीं है ।३८। चेदि वंश वाले जिस मार्ग से जाते है, उससे कोई नहीं जाता 'कशु' से बढ़ कोई दानी विद्वान् स्तोता को नहीं देता ।३९।

सूक्त ६ (दूसरा अनुवाक)

(ऋषि-वत्स, काण्वः । देवता-इन्द्रः, तिरिन्दिरस्य पारशव्य दानस्तुतिः । छन्द—गायत्री)

महाँ इन्द्रो य ओजसा पर्जन्यो वृष्टिमाँ इव। स्तोमैर्वत्सस्य वावृधे१
प्रजामृतस्य पिप्रतः प्र यद् भरन्त वह्नयः ।
विप्रा ऋतस्य वाहसा ॥२
कण्वा इन्द्रं यदक्रत स्तोमैर्यज्ञस्य साधनम् ।
जामि ब्रुवत आयुधम् ॥३
समस्य मन्यवे विशो विश्वा नमन्त कृष्टयः । समुद्रायेव सिन्धवः४
ओजस्तदस्य तित्विष उभे यत् समवर्तयत्। इन्द्रश्चर्मेव रोदसी५।६

जो इन्द्र पर्जन्य के समान पराक्रमी हैं, वह पुत्र के समान स्तोता के पराक्रम से बढ़ते है ।१। जब आकाश को परिपूर्ण करने वाले यज्ञ रूप अश्व इन्द्र को वहन करते हैं, तब विद्वज्जन स्तोत्रों से उनकी स्तुति करते हैं ।१। कण्व वंशियों ने स्तोत्र से ही इन्द्र को यज्ञ का साधनकर्ता नियुक्त किया। इसलिए इन्द्र को मित्र कहा जाता है ।३। जैसे नदियाँ समुद्र का स्तवन करती है, वैसे सब मनुष्य इन्द्र के डर से इन्द्र का स्तवन करते हैं ।७। जिस बल से इन्द्र आकाश पृथिवी को चमड़े के समान रखते हैं, वह जल अत्यन्त तेज से पूर्ण है ।५।

वि चिद् वृत्रस्य दोधतो वज्रेण शतपर्वणा ।
शिरो बिभेद वृष्णिना ॥६

इमा अभि प्र णोनुमो विपामग्रेषु धीतयः। अग्नेः शोचिर्न दिद्युतः।७। गुहा सतीरुप त्मना प्र यच्छोचन्त धीतयः। कण्वा ऋतस्य धारया।८। प्र तमिन्द्र नशीमहि रयिं गोमन्तमश्विनम्। प्र ब्रह्म पूर्वचित्तये।९। अहमिद्धि पितुष्परि मेधामृतस्य जग्रभ। अहं सूर्य इवाजनि।१०।१०

कम्पायमान वृत्र के शिर को इन्द्र ने शतधार वाले दृढ़ तज्र से छिन्न कर दिया था।६। हम स्तुति करने वालों के सामने अग्नि के तेज के समान चमकते हुए इन स्तोत्रों का बारम्बार उच्चारण करेंगे।७। गुफा में स्थित जो गौयें इन्द्र के पास जाकर आश्वस्त होती है,उन्हें कण्व वंशीय ऋषि सोम से सीचें।८। हे इन्द्र ! हम गौ और घोड़ों से युक्त धन पावें और सबसे पहिले ही अन्न प्राप्त करें।९। मैंने ही सत्य स्वरूप एव पिता तुल्य इन्द्र की कृपा प्राप्त की ओर सूयंके समान तेजस्वी हुआ।१०।

अहं प्रत्नेन मन्मना गिरः शुम्भामि कण्ववत्। येनेन्द्रः शुष्ममिद् दधे।११। ये त्वामिन्द्र न तुष्टुवु ऋषयो ये च तुष्टतः। ममेद् वर्धस्व सुष्टुतः।१२

यदस्य मन्युरध्वनीद् वि वृत्रं पर्वशो रुजन्। अपः समुद्रमैरयत्।१३। नि शुष्ण इन्द्र धर्णसिं वज्रं जघन्थ दस्यवि। वृषा ह्युग्र शृण्विषे।१४। न द्याव इन्द्रमोजसा नान्तरिक्षाणि वज्रिणम्। न विव्यचन्त भूमयः।१५।११

कण्व के समान मैं स्तोता द्वारा वाणी को अलंकृत करता हूँ। इन्द्र उसी स्तोत्र से बल पाते हैं।११। हे इन्द्र ! जो तुम्हारा स्तव नहीं करते और जो तुम्हारा स्तव करते हैं, इन दोनोंमें भी मेरी स्तुति भले प्रकार बढ़े।१२। जब इन्द्र के क्रोध से छिन्न-भिन्न होते हुए वृत्रने शब्द किया था, तब इन्द्र ने समुद्र की ओर जल भेजा था।१३। हे इन्द्र ! तुमने 'शुष्ण' के लिए धारण किये वज्रको चलाया। हे इन्द्र ! तुम कामनाओं के वर्षक हो।१४। इन्द्र को आकाश अन्तरिक्ष और पृथ्वी अपने बलों से व्याप्त नहीं कर सकते।१५।

यस्त इन्द्र महीरपः स्तभूयमान आशयत् । नि तं पद्यासु शिश्नथः ।१६। य इमे रोदसी मही समीची समजग्रभीत् । तमोभिरिन्द्र तं गुहः ।१७। य इन्द्र यतयस्त्वा भृगवो ये च तुष्टुवुः । ममेदुग्र श्रुधी हवम् ।१८। इमास्त इन्द्र पृश्नयो घृतं दुहत आशिरम् । एनामृतस्य पिप्युषीः ।१९। या इन्द्र प्रस्वस्त्वा ऽऽसा गर्भमचक्रिरन् । परि धर्मेव सूर्यम् ।२०।१२

हे इन्द्र ! जिस वृत्र ने जलों को अन्तरिक्ष में रोक रखा था, उस वृत्र को तुमने जल में ही मार दिया ।१६। जिस वृत्र ने महत्ववती आकाश पृथवी को व्याप्त किया था,उस हे इन्द्र ! तुमने मरण का रूप अन्धकार में डाल दिया । १७। हे पराक्रमी इन्द्र ! जो अङ्गिरागण एवं भृगु वशीय तुम्हारी स्तुति करते हैं उन सबकी स्तुति श्रवणकरो ।१८। हे इन्द्र यज्ञ की वृद्धि करने वाली गौयें दूध एवं घृत प्रदान करतीं हैं ।१९। हे इन्द्र ! इन प्रसव धर्म वाली गौओं ने तुम्हारे दिये अन्न को मुख से खाकर सूर्य के चारों ओर वर्तमान जलके समान गर्भ का धारण किया था ।२०।

(२)

त्वामिच्छवसस्पते कण्वा उक्थेन वावृधुः । त्वां सुतास इन्दवः ।२१। तवेदिन्द्र प्रणीतिषूत प्रशस्तिरद्रिवः । यज्ञो वितन्तसाय्यः ।२२। आ न इन्द्र महीमिषं पुरं न दर्षि गोमतीम् । उत प्रजां सुवीर्यम् ।२३। उत त्यदाश्वश्व्यं यदिन्द्र नाहुषीष्वा । अग्रे विक्षु प्रदीदयत् ।२४। अभि व्रजं न तत्निषे सूर उपाकचक्षसम् । यदिन्द्र मृलयासि नः ।२५।१३

हे इन्द्र ! तुम बल के स्वामी हो, कण्ववंशीय तुम्हें स्तोत्र द्वारा बढाते हैं । सिद्ध सोम तुम्हें बढ़ाते हैं ।१। हे वज्रिन्! तुम्हारे पथ-प्रदर्शन करने पर श्रेष्ठ स्तोत्रों द्वारा यज्ञ किए जाते हैं ।२२। हे इन्द्र ! हमको महान गौ युक्त अन्न तथा वीर्यवान पुत्र प्रदान करने का विचार करो ।२३। हे इन्द्र ! नहुष को प्रजाओं के सन्मुख द्रुतगामी घोड़े से युक्त जो बल तुमने दिया था, वह हमको भी दो ।६। हे इन्द्र ! तुम मेधावी हो इस गौओं के सुन्दर गोष्ठ को परिपूर्ण करो और हमको सुख दो ।२५।

यदङ्ग तविषीयस इन्द्र प्रराजसि क्षितीः । महाँ अपार ओजसा ।२६। त त्वा हविष्मतीर्विश उप ब्रुवत ऊतये । उरुज्रयसमिन्दुभिः ।२७। उपह्वरे गिरीणां सगथे च नदीनाम् । धिया विप्रो अजायत ।२८। अतः समुद्रमुद्वतश्चिकित्वाँ अव पश्यति । यतो विपान एजति ।२९। आदित् प्रत्नस्य रेतसो ज्योतिष्पश्यन्ति वासरम् परो यदिध्यते दिवा ।३०।१४

हे इन्द्र ! तुम बल के समानवर्ती हो, मनुष्यों के स्वामी होओ। तुम अपने बलके द्वारा अजेय हो ।२६। हे इन्द्र तुम व्यापक हो, हव्यवान् व्यक्त तुम्हें सोम से तृप्त करनेके लिये तुम्हारे पास आकर स्तुति करते हैं ।२७। पर्वतों में, नदियों के सङ्गमों पर होने वाले यज्ञानुष्ठानों में विद्वान् इन्द्र प्रकट होते हैं ।२८। हे इन्द्र तुम सर्वत्र व्याप्त हो । जो संसार में विचरण करते हैं वे इन्द्र ! ऊपर नीचे की ओर मुख करते हुए समुद्र को देखते हैं ।२९। आकाश पर जब इन्द्र अपना तेज फैलाते हैं, तब उन प्राचीन जलमाता इन्द्र की ज्योति का सभी दर्शन करते हैं ।३०। (४१)

कण्वास इन्द्र ते मतिं विश्वे वर्धन्ति पौंस्यम् । उतो शविष्ठ वृष्ण्यम् ३१। इमां म इन्द्र सुष्टुतिं जुषस्व प्र सु मामव। उत प्र वर्धया मतिम् ।३२। उत ब्रह्मण्या वयं तुभ्यं प्रवृद्ध वज्रिवः। विप्रा अतक्ष्म जीवसे ।३३। अभि कण्वा अनूषताऽऽपो न प्रवता यतीः । इन्द्रं वनन्वती मतिः ।३४। इन्द्रमुक्थानि वावृधुः समुद्रमिव सिन्धवः अनुत्तमन्युमजरम् ।३५।१५।

हे इन्द्र ! तुम्हारे बुद्धि-बल को कण्व वंशीय वृद्धि करते हैं। वे तुम्हारे वीर कर्म को भी प्रचण्ड करते हैं ।३१। हे इन्द्र ! हमारी सुन्दर स्तुतियों को सुनो। हमारी भले प्रकार रक्षा करते हुए वृद्धि को बढ़ाओ ।३२। हे वज्रिन् ! हम विद्वान हैं अपने जीवन के लिये तुम्हारे प्रति स्तोत्रोच्चार करते हैं ।३३। कण्ववंशीय स्तुति करते हैं। नीचे की ओर जाते हुए जलों के समान स्तुतियाँ स्वयं ही इन्द्र की सेवा में जाती हैं ।३४। नदियाँ समुद्र को जैसे बढ़ाती है वैसे ही मन्त्र इन्द्र को बढ़ाते हैं, वे इन्द्र जरा रहित हैं। उनके प्रभाव को कोई रोक नहीं सकता ।३५। (१५)

आनो याहि परावतो हरिभ्यां हर्यताभ्याम्। इममिन्द्र सुतं पिब ।३६। त्वामिद् वृत्रहन्तम जनासो वृक्तबर्हिष: हवन्ते वाजसातये।३७।अनु त्वा रोदसी उभे चक्रं न वर्त्येतशम्। अनु सुवानास इन्दव:।३८। मन्दस्व सु स्वर्णर उतेन्द्र शर्यणावति । मत्स्वा विवस्वतो मती ।३९। वावृधान उप द्यवि वृषा वज्यरोरवीत् । वृत्रहा सोमपातम: ।४०।१६

हे इन्द्र ! सुन्दर रथ द्वारा दूर से भी हमारे पास आगमन करो और सुसिद्ध सोम को पीओ ।३६। हे इन्द्र ! तुम सबसे अधिक राक्षसों के हननकारी हो। कुश छेदन करने वाले साधन अन्न लाभ के लिये तुम्हारा आह्वान करते हैं ।३७। हे इन्द्र ! जैसे रथ के पहिये घोड़े के पीछे चलते हैं, वैसे ही आकाश पृथिवी तुम्हारी अनुवर्ती होती हैं और सोम भी तुम्हारा अनुगमन करता है ।३८। हे इन्द्र ! शर्यणदेश' के तालाब (कुरुक्षेत्र) के निकट सब ऋषियों के यज्ञ मे तृप्त होओ और स्तुतियों से पुष्टि को प्राप्त करो ।३९। कामनाओ के वर्षक, प्रवृद्ध, पराक्रमी, अत्यन्त सोमों के पान करने वाले वृत्रहन्त आकाश के निकट से बोलते हैं ।४०।

(१६)

ऋषिर्हि पूर्वजा अस्येक ईशान ओजसा । इन्द्र चोष्कूयसे वसु ।४१ अस्माकं त्वा सुतां उप वीतपृष्ठा अभि प्रय: । शतं वहन्तु हरय: ।४२। इमां सु पूर्व्यां धियं मधोर्घृतस्य पिप्युषीम् । कण्वा उक्थेन वावृधु:।४३। इन्द्रमिद् विमहीनां मेधे वृणीत मर्त्य: इन्द्रं सनिष्युरूतये ।४४। अर्वाञ्चं त्वा पुरुष्टुत प्रियमेधस्तुता हरी सोमपेयाय वक्षत: ।४५। शतमहं तिरिन्दिरे सहस्रं पर्शावा ददे । राधांसि याद्वानाम् ।४६। त्रीणि शतान्यर्वतां सहस्रा दश गोनाम् । ददुष्पज्राय साम्ने ।४७। उदानट् ककुहो दिवमुष्ट्राञ्चतुर्युजो ददत् । श्रवसा याद्वं जनम् ।४८।१७

हे इन्द्र ! तुम पहिले ऋषि रूप से उत्पन्न हुए फिर अपने महान् बलसे सब देवताओं के अधिपति हुए । हमको बारम्बार धन प्रदान करो

१४१। मजबूत चौड़ी पीठ वाले सौ घोड़े हमारे अभिषुत सोम तथा अन्न के लिए तुम्हें ले आवे।४२। स्तोत्र द्वारा कण्व वंशीय पूर्वजों द्वारा की हुई मधुर जलों के बढ़ाने वाली यज्ञ क्रिया की वृद्धि करें ।४३। सभी देवता महान् हैं। उन सबके मध्य इन्द्र को ही रक्षक के निमित्त धन की कामना करते हुए वरुण कहते हैं। ४। हे इन्द्र ! तुम अनेकों द्वारा स्तुत हो। यज्ञ-कामना करते ऋषियों द्वारा प्रशंसित दो घोड़े हमारे समक्ष सोम पीने के लिये ले आवें ।४५। यदुवंशियों में 'परशु' के पुत्र 'तिरिन्दिर' से सहस्र संख्यक धन मैंने प्राप्त किया था।४६। उन 'तिरिन्दिर' राजा ने वत्स और साम,को तीन सौ घोड़े और एक हजार गौयें प्रदान की।४७। उन 'तिरिन्दिर' राजा ने चार स्वर्ण भारी सहित ऊँटों को दान किया और अपने यज्ञ के तेज से स्वर्ग प्राप्त कर सके।४८। (१७)

सूक्त ७

(ऋषि-वसिष्ठ कुमारो वाग्नेयः। देवता-पर्जन्यः। छन्द-त्रिष्टुप्)

प्र यद् वस्त्रिष्टुभमिषं मरुतो विप्रो अक्षरत्। वि पर्वतेषु राजथ।१। यदङ्ग तविषीयवो यामं शुभ्रा अचिध्वम्। नि पर्वता अहासत।२। उदीरयन्त वायुभिर्वाश्रासः पृश्निमातरः। धुक्षन्त पिप्युषीमिषम्।३। वपन्ति मरुतो मिहं प्र वेपयन्ति पर्वतान्। यद् यामं यान्ति वायुभिः।४। नि यद् यामाय वो गिरिर्नि सिन्धवो विधर्मणे। महे शुष्माय येमिरे।५।१८

हे मरुद्गण ! जब मेधावी जन यज्ञ के तीनों सवनों में हव्य डालते हैं, तब तुम पर्वतों में प्रकाश फैलाते हो ।१। हे बल की कामना वाले सुन्दर रूप वाले मरुद्गण ! जब तुम घोड़ों को रथमें योजित करते हो तब पर्वत भी कम्पायमान होने लगते हैं।२। शब्दवान् मरुत् वायु से मेघादि को ऊपर उठाकर वृष्टि द्वारा अन्न प्रदान करते हैं।३। जब मरुद्गण वायुओं के साथ गमन करते हैं तब वे वृष्टि करते हुए पर्वतों को कम्पित करते हैं।४। हे मरुतो ! तुम्हारे रथ की गति पर्वतों पर निश्चित है। नदियाँ तुम्हारी रक्षा और गमन के लिये नियुक्त है।५। (१८)

युष्माँ उ नक्तमूतये युष्मान दिवा हवामहे । युष्मान् प्रयत्यध्वरे ।६। उदु त्ये अरुणप्सवश्चित्रा यामेभिरीरते । वाश्रा अधि ष्णुना दिवः ।७। सृजन्ति रश्मिमोजसा पन्थां सूर्याय यातवे। ते भानुभिर्वि तस्थिरे ।८। इमां मे मरुतो गिरमिमं स्तोममृभुक्षणः । इमं मे वनता हवम् ।९। त्रीणि सरांसि पृश्नयो दुदुह्रे वज्रिणे मधु । उत्सं कवन्धमुद्रिणम् ।१०।१९

हम रात्रि में तुम्हें रक्षा की इच्छा से बुलाते हैं। दिन में भी तथा यज्ञ के आरम्भमें भी तुम्हारा आह्वान करते हैं ।६। वे अरुण वर्ण वाले अद्भुत तथा शब्द करने वाले मरुद्गण रथ पर चढ़े हुए स्वर्ग से जाते हैं।७। जो मरुद्गण सूर्य के जाने का किरण से युक्त मार्ग बनाते है वे उन्हें प्रकाश से पूर्ण करते हैं ।८। हे मरुद्गण ! मेरे इस वाक्य को आश्रय दो । मेरे आह्वान को सुनो ।९। मरुद्गण की माता पृश्नियों ने वज्रधारी इन्द्र के लिए मीठे सोमरस को 'इत्स' और आदि नामक सरोवर से निकाला ।१०। (१९)

मरुतो यद्ध वो दिवः सुम्नायन्तो हवामहे । आ तू न उप गन्तन ।११। यूयं हि ष्ठा सुदानवो रुद्रा ऋभुक्षणो दमे । उत प्रचेतसो मदे ।१२। आ नो रयिं मदच्युतं पुरुक्षुं विश्वधायसम् । इयर्ता मरुतो दिवः ।१३। अधीव यद् गिरीणां यामं शुभ्रा अचिध्वम् । सुवानैर्मन्दध्व इन्दुभिः ।१४। एतावतश्चिदेषां सुम्नं भिक्षेत मर्त्यः । अदाभ्यस्य मन्मभिः ।१५।२०।

हे मरुद्गण जब तुमको हम सुख की कामना करते हुए स्वर्ग से बुलावें तब तुम शीघ्र ही हमारे पास आगमन करो ।११। हे दानशील सुन्दर तेजस्वी मरुद्गण ! तुम यज्ञ स्थान में हर्षकारी सोम पीकर श्रेष्ठ ज्ञानी बनते हो ।१२। हे मरुद्गण ! तुम हमारे निमित्त स्वर्ग से हर्षकारी, बहुत निवासप्रद तथा पोषण-समर्थ धन लाओ ।१३। हे मरुद्गण जब तुम पर्वत पर अपना रथ लेकर पहुँचते हो, तब सोम के हर्ष से हृष्ट होते हो ।१४। स्तुति करने वाला मनुष्य स्तोत्रों द्वारा मरुद्गण से अपने सुख की याचना करता है ।१४। (२०)

ये द्रप्सा इव रोदसी धमन्त्यनु वृष्टिभिः। उत्सं दुहन्तो अक्षितम् ।१६। उदु स्वानेभिरीरत उद् रथैरुदु वायुभिः। उत् स्तोमैः पृश्निमातरः ।१७। येनाव तुर्वशं यदुं येन कन्व धर्मस्पृतम्। रायंसु तस्य धीमहि ।१८। उव: सुदानवो घृतं म पिप्युषीरिषः। वर्धान् कण्वस्य मन्मभिः ।१९। क्वनू नं सुदानवो मदथा वृक्तबर्हिषः। ब्रह्मा को वः सपर्यति ।२०।२१

मरुदगण क्षीण न होने वाले वाले मेघ को दुहते हुए जल की बूँदों के समान वर्षा से आकाश पृथिवी को व्याप्त करते हैं ।१६। पृश्नि पुत्र मरुदगण शब्द करते हुए उठते हैं, वे अपने रथ से ऊर्ध्वगामी होते हैं। वे वायु तथा मन्त्र की शक्ति से ऊपर की ओर चढ़ते हैं ।१७। हे मरुतो! जिन रक्षण-साधनों से तुमने 'यदु' और 'तुर्वश' की रक्षा की थी और जिन साधनों से धन की कामना वाले 'कण्व' की रक्षा की थी हम भी धन के निमित्त उन्हीं साधनों को चाहते हैं ।१८। हे दानशील चित्त वाले मरुदगण ! तुम घृत के समान शरीर को बलिष्ठ बनाने वाले इस अन्न को, कण्व वंशियों द्वारा उत्पन्न किये गये स्तोत्र के समान बढ़ाओ ।१९। हे मरुतो ! तुम दानशील हो। यह कुश तुम्हारे निमित्त उखाड़े गये हैं। इस समय तुम कहाँ विहार करते हो ? कौन स्तोता तुम्हारी पूजा करता है ।२०। (२०)

नहि ष्म यद्ध वः पुरा स्तोमेभिर्वृक्तबर्हिषः। शर्धाँ ऋतस्य जिन्वथ ।२१। समु त्ये महतीरपः सं क्षोणी समु सूर्यम्। सं वज्रं पर्वशो दधुः ।२२। वि वृत्रं पर्वशो ययुर्वि पर्वताँ अराजिनः। चक्राणा वृष्णि पौंस्यम् ।२३। अनु त्रितस्य युध्यतः शुष्ममावन्नुत क्रतुम्। अन्विन्द्रं वृत्रतूर्ये ।२४। विद्युद्धस्ता अभिद्यवः शिप्राः शीर्षन् हिरण्ययीः। शुभ्रा व्यञ्जत श्रिये ।२५।२२

हे मरुदगण ! तुम अन्यों के स्तोत्रों से अपने यज्ञीय बल की वृद्धि करते हुए, उनके स्थान पर हमारे स्तोत्रों को ग्रहण करो ।२१। उन मरुदगण ने ओषधियों में जल-मिश्रित किया है, आकाश और पृथिवीको

उनके स्थानों पर स्थिर किया और सूर्य की स्थापना की। उन्होंने वृत्र की छिन्न-भिन्न करने के लिए वज्र धारण किया।२२। स्वछन्द एवं बल की वृद्धि करने वाले मरुतों ने पर्वतों के समान वृत्र के खड खडकर डाले।२३। उन मरुतो ने वीर के बल की रक्षा की, त्रित के कर्म की भी रक्षा की और वृत्र हनन कर्म के लिये इन्द्र की रक्षा की।२४। हाथ में आयुध धारण करने वाले, सुन्दर तेजस्वी, मरुद्गण ने अपने मस्तक पर शोभा के लिये शिप्र धारण किया।२५। (२२)

उशना यत् परावत उक्ष्णो रन्ध्रमयातन। द्यौर्न चक्रदद् भिया।२६। आ नो मखस्य दावनेऽश्वैर्हिरन्यपाणिभिः। देवास उप गन्तन।२७। यदेषां पृषती रथे प्रष्टिर्वहति रोहितः। यान्ति शुभ्रा रिणन्नपः।२८। सुषोमे शर्यणावत्यार्जीके पस्त्यावति। ययुर्निचक्रया नरः।२९। कदा गच्छाथ मरुत इत्था विप्रं हवमानम्। मार्डीकेभिर्नाधमानम्।३०।२३

हे मरुद्गण! स्तुति करने वालों की कामना करते हुए कामनाओं की वर्षा करने वाले रथ से तुमने दूर से आगमन किया था। उस समय देवताओं के समान मर्त्यलोक के प्राणी भी भय से कम्पित हो गये थे।२६। वे देवता मरुद यज्ञ में दान के निमित्त सुवर्ण युक्त पाँवों वाले घोड़ों पर चढ़कर आगमन करें।२७। इन मरुदगण के रथ पर जो श्वेत बूँद वाली मृगी और द्रुतगामी रोहित मृग पर चढते हैं तब सुन्दर मरुद्गण गमन करते हैं। उस समय जल वृद्धि होती है।२८। मरुद्गण गमन करते है उस समय जल वृद्धि होती है।२८। मरुदगण सुन्दर सोम से युक्त और यज्ञ गृह वाले हैं। ऋजीका देश के 'शयणा सरोवर' में रथ के पहिए को नीचे मुख करके ले जाते हैं।२। हे मरुद्गण! तुम कामना करने वाले विद्वान स्तोता के पास सुख के कारण रूप धन सहित कब जाओगे? (३९)

कद्ध नून कध प्रियो यदिन्द्रमजहातन। को वः सखित्व ओहते।३१। सहो षु णो वज्रहस्तैः कण्वासो अग्निं मरुद्भिः।

स्तुषे हिरण्यवाशीभिः ।३२। ओ षु वृष्णः प्रयज्यूना नव्यसे सुवि-ताय । ववृत्यां चित्रवाजान् ।३३। गिरयश्चिन्नि जिहते पर्शानासो मन्यमानाः । पर्वताश्चिन्नि येमिरे ।३४। आक्षणयावानो वहन्त्य-न्तरिक्षेण पततः । धातारः स्तुवते वयः ।३५। अग्निर्हि जानि पूर्व्यश्छन्दो न सूरो अर्चिषा । ते भानुभिर्वि तस्थिरे ।३६।२४

हे मरुतो ! तुम स्तोत्र से प्रसन्न होते हो । तुमने इन्द्र को कब छोड़ा ? तुम्हारी मैत्री के लिए किसने याचना की ? ।३१। कण्व-वंशियों ! तुम वज्र धारण करने वाले मरुद्गण के सहित अग्नि का स्तवन करो ।३२। यजन के योग्य, अद्भुत पराक्रम वाले, वर्षणशील मरुद्गण को मैं सुख से प्राप्त होने वाले धनके निमित्त बुलाता हूँ ।३३। सभी पर्वत आघात होने पर स्थान भ्रष्ट नहीं होते । वे सदा ही स्थिर रहते हैं ।३४। बहुत दूर तक जाने की सामर्थ्य वाले घोड़े आकाश मार्ग से मरुद्गण को लेकर आते हैं । वे स्तुति करने वाले को अन्न प्रदान करते है ।३ । अग्नि अपने तेज के बल से सूर्य के समान सबसे श्रेष्ठ होते हुए प्रकट हुए । वे मरुदगण भी अपने तेज के बल से विभिन्न स्थानों में वास करते हैं ।३६।

सूक्त ८

(ऋषि-सध्वस कण्वः । देवता-अश्विनौः । छन्द-त्रिष्टुप् अनुष्टुप्)

आ नो विश्वाभिरूतिभिरश्विना गच्छतं युवम् । दस्रा हिर-ण्यवर्तनी पिबत सोम्यं मधु ।१। आ नूनं यातमश्विना रथेन सूर्यत्वचा । भुजी हिरण्यपेशसा कवी गम्भीरचेतसा ।२। आ यातं नहुषस्पर्या ऽन्तरिक्षात् सुवृक्तिभिः । पिबाथो अश्विना मधु कण्वानां सवने सुतम् ।३। आ नो यातं दिवस्पर्या ऽन्तरिक्षादध-प्रिया । पुत्रः कण्वस्य वामिह सुषाव सोम्यं मधु ।४। आ नो यात-मुपश्रुत्यश्विना सोमपीतये । स्वाहा स्तोमस्य वर्धना प्र कवी धीतिभिर्नरा ।५।२५

हे अश्विनीकुमारो ! तुम दर्शनके योग्य हो । तुम अपने स्वर्ण रथ पर चढ़कर सभी रक्षण साधनों सहित जाओ और सोम रूप मधुर रस को पीओ ।१। हे अश्विनीकुमारो ! तुम सुवर्णमय शरीर वाले,उज्जवल कर्मवान् एवं अत्यन्त ज्ञानी हो । तुम सूर्य के समान रोचमान रथ पर आरोहण कर हमारे निकट आगमन करो ।२। हे अश्विनीकुमारो ! तुम हमारी स्तुतियों द्वारा अन्तरिक्ष से यहाँ आओ और कण्वों के यज्ञ में सोमपान करो ।३। इस यज्ञ के कण्ववंशीय तुम्हारे निमित्त सोम निष्पन्न करते हैं। हे अश्विद्वय! तुम प्रसन्नतापूर्वक स्वर्ग या अन्तरिक्ष से जाओ ।४। हे अश्विनीकुमारो ! हमारे स्तुति युक्त इस यज्ञ मे सोम-पान के लिए यहाँ आओ और अपनी बुद्धि कर्म के द्वारा स्तुति करने वाले को बढ़ाओ ।५।   (२५)

यच्चिद्धि वां पुर ऋषयो जुहूरेऽवसे नरा । आ यातमश्विना गतमुपेमां गतमुपेमां सुष्टुतिं मम ।६। दिवश्चिद् रोचना-दध्या नो गन्तं स्वर्विदा । धीभिर्वत्सप्रचेतसा स्तोमेभिर्हवन-श्रुता ।७। किमन्ये पर्यासते ऽस्मत् स्तोमेभिरश्विना । पुत्रः कण्वस्य वामृषिर्गीर्भिर्वत्सो अवीवृधत् ।८। आ वां विप्र इहावसे ऽह्वत् स्तोमेभिराश्विना। अरिप्रा वृत्रहन्तमा ता नो भूतं मयो-भुवा ।९। आ यद् वां योषणा रथमतिष्ठद् वाजिनीवसू । विश्वा-न्यश्विना युवं प्र धीतान्यगच्छतम् ।१०।२६

हे अश्विनीकुमारो ? प्राचीनकालीन ऋषियों ने जब रक्षा के लिए तुम्हारा आह्वान किया, तब तुम आ गये । अतः मेरी भी स्तुति के प्रति आगमन करो ।६। हे अश्विद्वय ! तुम सूर्य के जानने वाले हो । आकाश और अन्तरिक्ष से हमारे निकट आगमन करो । तुम स्तुति करने वाले के लिये प्रकृष्ठ बुद्धि सहित आओ । हे आह्वान के श्रवण करने वाले अश्विद्वय! तुम स्तोत्र सहित आगमन करो ।७। मेरे सिवाय अन्य कौन साधक अश्विनीकुमारों की स्तोत्र द्वारा स्तुति कर सकता है ? कण्व के पुत्र वत्स ऋषि स्तोत्रों के द्वारा तुम्हें प्रवृद्ध करते हैं ।८।

हे अश्विनीकुमारो ! इस यज्ञ में रक्षा के निमि स्तुति करने वाले ने तुम्हारा आह्वान किया है। हे असत्य रहित हे, शत्रुओं के नाश करने में श्रेष्ठ अश्विद्वय ! तुम हमारे लिए कल्याणकारी होओ ।९। धन और अन्न वाले अश्विनीकुमारो ! तुम सभी इच्छित पदार्थों को प्राप्त करो ।१०।   (२६)

अत: सहस्रनिर्णिजा रथेना यातमश्विना । वत्सो वां मधुमद् वचो ऽशंसीत् काव्य: कवि: ।११। पुरुमन्द्रा पुरूवसू मनोतरा रयीणाम् । स्तोमं मे अश्विनाविममभि वह्नी अनूषाताम् ।१२। आ नो विश्वान्यश्विना धत्तं राधांस्यह्नया । कृत न ऋत्वियावतो मा नो रीरधतं निदे ।१३। यन्नासत्या परावति यद् वा स्थो अध्यम्बरे । अत: सहस्रनिर्णिजा रथेना यातमश्विना ।१४। यो वां नासत्यावृषिर्गीर्भिर्वत्सो अवोवृधत् । तस्मै सहस्रनिर्णिजमिषं धत्तं घृतश्चुतम् ।१५।२७।

हे अश्विद्वय ! तुम जिस लोक में हो, वहीं से सुन्दर रथपर आरोहण कर यहाँ आओ । काव्य और कवि वत्स मधुर वाणी का उच्चारण करते हैं । ११। हे अश्विद्वय! तुम अत्यन्त हृष्ट संसारके वहन करने वाले, धनों के देने वाले मेरे इस स्तोत्र का पालन करो ।१२। हे अश्विद्वय ! हमको धन प्रदान करो । हमको प्रजोत्पादन कर्म में समर्थ बनाओ। हमको निन्दा करने वालों के वश में मत डाल देना ।१३। हे अश्विद्वय ! तुम सत्य स्वभाव वाले हो। तुम दूर ही या निकट जहाँ होओ, असंख्य रूप वाले सुन्दर रथसे आओ ।१४। हे अश्विद्वय ! जिन वत्स ऋषि ने अपनी स्तुति से तुम्हें बढ़ाया उन्हें विविध रूपों से युक्त तथा घृतयुक्त अन्न प्रदान करो ।१५।

प्रास्मा ऊर्जं घृतश्चुतमश्विना यच्छतं युवम् । यो वां सुम्नाय तुष्टवद्व वसूयाद दानुनस्पती ।१६। आ नो गन्तं रिशादसेम स्तोमं पुरुभुजा। कृत न: सुश्रियो नरेमा दातमभिष्टये ।१७। आ वां

विश्वाभिरूतिभिः प्रियमेधा अहूषत । राजन्तावध्वराणामश्विना यामहूतिषु ।१८। आ नो गन्त मयोभुवा ऽश्विना शंभुवा युवम । यो वां विपन्यू धीतिभिर्गीर्भिर्वत्सो अवीवृधत् ।१९। याभिः कण्वं मेधातिथिं याभिर्वशं दशव्रजम् । याभिर्गोशर्यमावतं ताभिर्नोऽव ां नरा ।२०।२८

हे अश्विद्वय ! उन स्तुति करने वालों को घृतयुक्त बलकारक अन्न दो । तुम दोनों के स्वामी हो । इन स्तोताओं ने तुम्हें सुख देने के लिए स्तुति की है । यह अपने लिए धम चाहते हैं ।१६। हे अश्विद्वय ! तुम शत्रुओं के भक्षक तथा बहुत हव्य करने वाले हो । हमारी स्तुतियों के प्रति आकर हमको सुन्दर ऐश्वर्य से युक्त करो ।१७। 'प्रियमेध' ऋषि ने देवताओं का आह्वान करते समय तुम्हें रक्षा-साधनों सहित आहूत किया । हे अश्विनीकुमारों ! तुम इस यज्ञ में आकर विराजमान होओ ।१८। हे अश्विद्वय! तुम सुख प्रदान करने वाले आरोग्यदाता और स्तुति के योग्य हो । जिन 'वत्स' ने अपनी स्तुति से तुम्हें बढ़ाया उनके समक्ष पधारो ।१९। जिन रक्षा साधनोंसे तुमने 'कण्व' मेधातिथि' और 'गोशय' की रक्षा की थी, उन्हीं साधकों से हमारी रक्षा करो ।२०।

(२८)

याभिर्नरा त्रसदस्युमावतं कृत्व्ये धने । ताभिः ष्वस्माँ अश्विना प्रावतं वाजसातये ।२१। प्र वां स्तोमाः सुवृक्तयो गिरो वर्धन्त्वश्विना । पुरुत्रा वृत्रहन्तमा ता नो भूतं पुरुस्पृहा ।२२। त्रीणि पदान्यश्विनोराविः सान्ति गुहा परः । कवी ऋतस्य पत्मभिरर्वाग्जीवेभ्यस्परि ।२३।२९

हे अश्विनीकुमारो ! जिन रक्षा साधनों से तुमने 'त्रसदस्यु' की रक्षा की थी, उन्हींसे हमारी रक्षा करो ।२१। हे अश्विद्वय ! तुम बहुतों के रक्षक तथा शत्रुओं का नाश करने वालों में प्रमुख हो । निर्दोष स्तोत्रमय वाक्य तुम्हारी वृद्धि करें । तुम हमारे प्रति कामनाओं वाले होओ ।२२। हे अश्विनीकुमारों का तीन पहियों वाला रथ छिपा हुआ

रहकर फिर प्रकट होता है। हे अश्विद्वय ! यज्ञ के कारण रूप रथ से हमारे सामने आगमन करो। ३।

सूक्त ९

(ऋषि-शशकर्णः काण्वः। देवता-अश्विनी, छन्द-बृहती, गायत्री, उष्णिक्, अनुष्टुप् पंक्तिः जगती)

आ नूनमश्विना युवं वत्सस्य गन्तमवसे। प्रास्मै यच्छतमवृक पृथु च्छर्दिर्युयुतं या जरातयः।१। यदन्तरिक्षे यद् दिवि यत् पञ्च मानुषाँ अनु। नृम्णं तद् धत्तमश्विना।२। ये वां दंसांस्यश्विना विप्रासः परिमामृशुः। एवेत् कान्वस्य बोधतम्।३। अयं वां धर्मो अश्विना स्तोमेन परि षिच्यते। अयं सोमो मधुमान् वाजिनीवसू येन वृत्रं चिकेतथः।४। यदप्सु यद् वनस्पतौ यदोषधीषु पुरुदंससा कृतम्। तेन माविष्टमश्विना।५।३०

हे अश्विनीकुमारो ! तुमने वत्स ऋषि की रक्षा के लिए गमन किया था। इन ऋषि को विघ्न रहित घर दो और इसके शत्रुओं को भगाओ।१। हे अश्विनीकुमारो ! जो धन अन्तरिक्ष और स्वर्ग में है, तथा जो पञ्च श्रेणी में है वह धन हमको दो।२। हे अश्विनीकुमारो ! जिस साधक ने तुम्हारे निमित्त बारम्बार अनुष्ठान किया, तुम उसको जानो और कण्व पुत्रों के कार्यो को भी जानकारी करो।३। हे अश्विद्वय ! तुम्हारा धर्म (यज्ञ का पाक) स्तोत्रों से भिगोया जाता है। तुम अन्न और धन वाले हो। तुमने जिस सोम के द्वारा वृष का जाना था वह मधुर सोम यही है।४। हे विविध कर्मों के करने वाले अश्विनीकुमारो ! जल, वनस्पति और लताओं को जो तुमने औषधि गुण दिया है, उसके द्वारा हमारी रक्षा करो।४।   (३१)

यन्नासत्या भुरण्यथो यद् वा देव भिषज्यथः। अयं वां वत्सो मतिभिर्न विन्धते हविष्मन्त हि गच्छथः।६। आ नूनमश्विनोर्ऋषिः स्तोमं चिकेत वामया। आ सोमं मधुमत्तमं घर्मं सिञ्चा-

दथर्वणि ।७। आ नूनं रघुवर्तनि रथं तिष्ठाथो अश्विना । आ वां स्तोमा इमे मम नभो न चुच्यवीरत ।८। यदद्य वां नासत्योक्थै-राचुच्युवीमहि । यद् वा वाणीभिराश्विनेवेत् काण्वस्य बोधतम् ।९। यद्वां कक्षीवाँ उत यद् व्यश्व ऋषिर्यद् वां दीर्घतमा जुहाव पृथी यद् वां वैन्यः सादनेष्वेवेदतो अश्विना चेतयेथाम् ।१०।३०

हे सत्यशील अश्विद्वय ! तुमने संसार का पालन किया और उसे आरोग्य दिया। स्तुति द्वारा वत्स ऋषि तुम्हें प्राप्त नहींकर पाते । तुम तो हविर्वान साधकों के निकट जाते हो ।५। 'वत्स' ऋषि ने उत्तम बुद्धि से अश्विनीकुमारों की स्तुति को जाना । 'वत्स' ने मधुर सोम और हव्य को अर्पित किया था ।७। हे अश्विद्वय ! तुम द्रुतगामी रथ पर आरोहण करो । मेरे यह सूर्य के समान तेज वाले स्तोत्र तुम्हे प्राप्त होते हैं ।८। हे अश्विद्वय ! हम स्तोत्र द्वारा जैसे तुम्हें ले आते है, वैसे ही तुम मेरे स्तोत्र को जानो ।९। हे अश्विद्वय जैसे 'कक्षीवान्' ने तुम्हें आहूत किया था, जैसे 'व्यश्व' तथा 'दीर्घतमा' ने, वेन के पुत्र 'पृथु' ने यज्ञ स्थान में आहूत किया था, वैसे ही में मैं स्तुति करता हूँ मेरे स्तोत्र को जानो ।१९।

यातं छर्दिष्पा उत नः परस्पा भूतं जगत्पा उत नस्तनूपा । वर्ति-स्तोकाय तनयाय यातम् ।११। यदिन्द्रेण सरथं याथो अश्विना यद् वा वायुना भवथः समोकसा । यदादित्येभिर्ऋभुभिः सजोषसा यद् वा विष्णोर्विक्रमणेषु तिष्ठथः ।१२। यदद्याश्विनावहं हुवेय वाजसातये । यत् पृत्सु तुर्वणे सहस्तच्छ्रेष्ठमश्विनोरवः।१३। आ नूनं यातमश्विनेमा हव्यानि वां हिता । इमे सोमासो अधि तुर्वशे यदा विमे कन्वेषु वामथ ।१४। यन्नासत्या पराके अर्वाके अस्ति भेषजम् । तेन नूनं विमदाय प्रचेतसा छर्दिर्वत्साय यच्छतम् ।१५।१२

हे अश्विद्वय ! तुम घर के पक्षक होकर आगमन करो । तुम अत्यन्त पालन कर्त्ता हो । तुम संसार के पालक हो । पुत्र और पौत्र के

घर में आओ ।११। हे अश्विनीकुमारो ! तुम यदि इन्द्र के रथ के साथ रथ पर बैठकर गमन करते हो, यदि तुम वायु के साथ एक स्थान पर रहती हो, यदि तुम विष्णुके पदक्षेप के साथ लोकत्रय में व्यापते हो तो यहाँ आओ ।१२। जब मैं युद्ध के लिये अश्विद्वय का आह्वान करता हूँ तब वे आगमन करें। शत्रुओं को नष्ट करने के लिए जो रक्षा-साधन अश्विनीकुमारों के पास हैं, वह अत्युत्कृष्ट हैं ।१३। हे अश्विद्वय ! ये हवियाँ तुम्हारे निमित्त है। तुम अवश्य आगमन करो। यह सोम 'तुर्वश' और 'यदु' द्वारा वर्तमान हैं। यह कण्व-पुत्रों को दिया गया था ।१४। हे सत्याचरण वाले अश्विमीकुमारो ! दूर अथवा पास जो औषध हैं, उनके सहित 'विमद' के समान 'वत्स'को भी निवास योग्य घरदो ।१५।

(३२)

अभुत्स्यु प्र देव्या साकं वाचाहमश्विनो । व्यावर्देव्या मति वि रातिं मर्त्येभ्यः।१६। प्र बोधयोषो अश्विना प्र देवि सूनृते महि। प्र यज्ञहोतरानुषक प्र मदाय श्रवो बृहत् ।१७। यदुषो यासि भानुना सं सूर्येण रोचते। आ हायमश्विनो रथो वर्तिर्याति नृपाय्यम् ।१८। यदापीतासो अशवो गावो न दुह्र ऊधभिः। यद् वा वाणीरनूषत प्र देवयन्तो अस्विना ।१९। प्र द्युम्नाय प्र शवसे प्र नृषाह्याय शर्मणे । प्र दक्षाय प्रचेतसा ।२०। यन्नूनं धीभिरश्विना पितुर्योना निषोदथः। यद् वा सुम्नेभिरुक्थ्या।२१।३३

मैं अश्विनीकुमारों के स्तोत्रके साथ जाग गया। हे काव्यमयी उषे! मेरी स्तुति से अन्धकार को नष्ट करो और मनुष्यों को धन प्रदान करो ।१६। सुन्दर नेत्र वाली देवी उषा ! तुम अश्विद्वय को जगाकर प्रवृद्ध करो। हे देवताओं का आहवान करने वाली ! तुम अश्विद्वय को सदा चैतन्य करो। उनके हर्ष के लिए वृहद् अन्न यहाँ उपस्थित हैं ।१७। हे उषे ! जब तुम तेज के साथ जाती हो, तब सूर्य के समान सुशोभित होती हो। उस समय अश्विनीकुमारों का यह रथ मनुष्यों का पोषण करने वाले यह गृह में आगमन करता है ।१८। जिस समय पीले रङ्ग

वाली सोमलता गौ के स्तन के समान दुही जाती है और जिस समय देवताओं की कामना वाले मनुष्य स्तुति करते हैं, उस समय हे अश्विनीकुमारो ! तुम रक्षा करने वाले होओ ।१९। हे अश्विनीकुमारो ! धन के निमित्त तुम हमारी रक्षा करो । बल के निमित्त रक्षा करो । मनुष्यों को सुख समृद्धि के निमित्त रक्षक होओ ।२०। हे अश्विनीकुमारों यदि तुम पिता के समान स्वर्ग के अङ्क में कर्म सहित स्थित हो, यदि प्रशंसा के योग्य होकर सुख सहित निवास करते हो तो भी हमारे पास आगमन करो ।२१।　　　　(३३)

सूक्त १०

(ऋषि-प्रगाथ: आण्व, । देवता-अश्विनी । छन्द-बृहती, त्रिष्टुप, पंक्ति)

यत् स्थो दीर्घप्रसद्मनि यद् वादो रोचने दिव: । यद् वा समुद्रे अध्याकृते गृहेऽत आ यातमश्विना।१। यद् वा यज्ञं मनवे संमिमिक्षथुरेवेत् कान्वस्य वोधतम्। बृहस्पतिं विश्वान्देवाँ अहहुव इन्द्राविष्णू अश्विनावाशुहेषसा ।२। त्या न्वश्विना हुवे सुदससा गृभे कृता । ययोरस्ति प्र ण: सख्यं देवेष्वध्याप्यम् ।३। ययोरधि प्र प्रज्ञा असूरे सन्ति सूरय: । ता यज्ञस्याध्वरस्य प्रचेतसा स्वधाभिर्या पिबत: सोम्यं मधु ।४। यदद्याश्विनावपाग् यत् प्राक् स्थो वाजिनीवसू । यद् द्रुह्यव्यनवि तुर्वशे यदौ हुवे वामथ गा गतम् यदन्तरिक्षे पतथ: पुरुभूजा यद् वेमे रोदसी अनु । यद् वा स्वधाभिरधितिष्ठथो रथमत आ यातमश्विना ।६।३४

हे अश्विनीकुमारो ! जहाँ वृहद् यज्ञ गृह हैं यदि तुम वहाँ रहते हो, यदि तुम स्वर्ग के तेजोमव प्रदेश में वास करते हो, यदि अन्तरिक्ष में बने घर में वास करते हो तो इन सब स्थानों से यहाँ आगमन करो ।१। हे अश्विनीकुमारो ! तुमने मनु के निमित्त जैसे यज्ञ को सींचा था, वैसे ही कण्व पुत्र के यज्ञ को जानो । मैं वृहस्पति,इन्द्र, विष्णु, अश्विद्वय और सभी देवता का आह्वान करता हूँ ।२। अश्विनीकुमार सुन्दर कर्म वाले हैं । वे हमारे हव्य को ग्रहण करने के लिए उत्पन्न हुए हैं ।

मैं उसका आह्वान करताहूं। अश्विनीकुमारोंकी मित्रता सभी देवताओं में श्रेष्ठ तुलभतासे प्राप्त हो जाती है।३। जिन अश्विनीकुमारों पर यज्ञ कर्म होते हैं, जिनके स्तोता स्तोत्र-रहित स्थान में भी हैं, वे हिंसा शून्य यज्ञ के ज्ञाता हैं। वे स्तुति के साथ सोम युक्त मधु को पीवें।४। हे अश्विनी कुमारो ! तुम अन्न-धन से युक्त हो। तुम इस समय पूर्व या पश्चिम में हो अथवा 'द्रुह्य', अनुः, 'तुर्वश' और 'यदु' के निकट हो, वहीसे मेरे आह्वान के प्रति आगमन करो।५। हे अश्विद्वय ! तुम बहुत हव्य के भक्षण करने वालेहो यदि अन्तरिक्ष में जा रहे हो, यदि आकाश पृथिवी के समक्ष जा रहे हो और यदि तेज के बलसे रथ पर बैठ रहे हो, तो इन समस्त स्थानों से आगमन करो।६। (३४)

सूक्त ११

(ऋषि—वत्स काण्वः। देवता—अग्निः। छन्द—गायत्री, त्रिष्टुप्)

त्वमग्ने व्रतपा असि देव आ मर्त्येष्वा। त्वं यज्ञेष्वीड्यः।१। त्वमसि प्रशस्यो विदथेषु सहन्त्य। अग्ने रथीरध्वराणाम्।२। स त्वमस्मदप द्विषो युयोधि जातवेदः। अदेवीरग्ने अरातीः।३। अन्ति चित् सन्तमह यज्ञं मर्तस्य रिपोः। नोप वेषि जातवेदः।४। मर्ता अमर्त्यस्य ते भूरि नाम मनामहे। विप्रासो जातवेदसः।५।५

हे अग्ने ! तुम मनुष्योंमें कर्मकी रक्षा करने वाले हो, इसलिए तुम यज्ञ में स्तुति के योग्य हो।१। हे अग्ने ! तुम शत्रु को पराजित करने वाले हो। तुम यज्ञ में बढ़ते ही, यज्ञों के नेता हो।२। हे अग्ने ! तुम उत्पन्न पदार्थों को जानने वाले हो। हमारे शत्रुओं को पृथक् करो। हे अग्ने ! तुम देवताओं के शत्रु और उसकी सेना को दूर करो।३। हे अग्ने ! पास रहने पर भी तुम शत्रु के यज्ञ की कभी इच्छा नहीं करते।४। हे उत्पन्न वस्तु के ज्ञाता अग्नि ! हम विप्र हैं। हम तुम्हारे स्तोत्र की वृद्धि करेंगे।५। (३५)

विप्रं विप्रासोऽवसे देवं मर्तास ऊतये । अग्निं गीर्भिर्हवामहे ।६। आ ते वत्सो मनो यमत् परमाच्चित् सधस्थात् । अग्ने त्वां-कामया गिरा।७। पुरुत्रा हि सदृङ्ङसि विशो विश्वा अनु प्रभुः । समत्सु त्वा हवामहे ।८। समत्स्वग्निमवसे वाजयन्तो हवामहे । वाजेषु चित्रराधसम् ।९। प्रत्नो हि कमीड्यो अध्वरेषु सनाच्च होता नव्यश्च सत्सि । स्वां चाग्ने तन्वं पिप्रयस्वाऽस्मभ्यं च सौभगमा यजस्व ।१०-३६

हम अग्नि को हव्य द्वारा प्रसन्न करनेके लिए अपनी रक्षा के लिये स्तोत्र द्वारा आहूत करते हैं ।६। हे अग्ने ! श्रेष्ठ वासस्थान से भी वत्स ऋषि तुम्हारे मन को आकर्षित करते हैं। उनकी स्तुति तुम्हे चाहती हैं ।७। तुम अनेक देशों में समान रूप से देखने वाले हो। तुम समस्त प्रजा के अधिपति हो। हम तुम्हें आहूत करते हैं ।८। हम अन्न की कामना वाले होकर रक्षा के लिए रणक्षेत्र में अग्नि का आह्वान करते हैं। वे अग्नि युद्ध स्थल में अद्भुत धन वाले होते हैं ।९। हे अग्ने ! तुम प्राचीन हो। यज्ञ में पूजनीय हो। तुम चिरकाल से ही होता और स्तुति के योग्य हो तुम यज्ञ में बैठते हो। तुम अपने शरीर को हव्य से सन्तुष्ट करो। हमको भी सौभाग्यशाली बनाओ ।१०। (३६)

॥ पञ्चम अष्टक समाप्तम् ॥

✻ षष्ठ अष्टक ✻

प्रथम अध्याय

सूक्त १२

(ऋषि—पर्वत। काण्वः। देवता—इन्द्रः। छन्द—उष्णिक्)

य इन्द्र सोमपातमो मदः शविष्ठ चेतति। येना हंसि न्यत्रिणं तमोमहे।१। येना दशग्वमध्रिगुं वेपयन्तं स्वर्णरम्। येना समुद्रमाविथा तमीमहे।२। येन सिन्धुं महीरपो रथाँ रव प्रचोदयः। पन्थामृतस्य यातव तमोमहे।३। इमं स्तोममभिष्टये घृतं न पूतमद्रिवः। येना नु सद्य ओजसा ववक्षिथ।४। इमं जुषस्व गिर्वणः समुद्र इव पिन्वते। इन्द्र विश्वाभिरूतिभिर्ववक्षिथ ५।१

हे इन्द्र ! तुम अत्यन्त सोमके प्रेमी हो। पराक्रमियों में मुख्य हो। सोम पीने से हृष्ट हुए तुम अपने कर्मों को भले प्रकार जानते हो। जैसे तुम सोम से उत्पन्न पराक्रम दैत्यों का हनन करते हो वैसेही हर्षकारी होने को हम प्रार्थना करते हैं।१। हे इन्द्र ! तुमने सोम की जिस शक्ति से हृष्ट होकर अङ्गिरा वशोय 'अध्रिगु' को तथा अन्धकार के नाश करने वाले सुर्य को रक्षा की थी, जिस शक्ति से तुमने समुद्र की रक्षा की थी उसी शक्ति से युक्त होने को हम तुमसे प्राथना करते हैं।२। हें इन्द्र ! जैसे सोम पीने से उत्पन्न वल द्वारा रथ के समान जल रूप वृद्धि को समुद्र की ओर प्रेरित करते हो, यैंसे ही शक्ति युक्त होने पर हम तुमको यज्ञमार्ग की कामना से प्रार्थना करते हैं।३। हे वज्रित ! जिस स्तुति से पुजित होकर तुम अपनी शक्ति से हमारा अभीष्ट पूर्ण करते हो, उसी पवित्र स्तुति को अभीष्ट के लिए ग्रहण करो।४। हे इन्द्र ! तुम स्तोत्र द्वारा उपासनीय हो, हमारे स्तोत्र को स्वीकार करो। यह स्तोत्र समुद्र के समान प्रवद्ध होता है। हे इन्द्र! तुम उस स्तोत्र द्वारा हमारा समस्त रक्षा साधनों के मङ्गल करन में समर्थ हो।५।

यो नो देवः परावतः सखित्वनाय मामहे दिवो न वृष्टिं प्रथयन् ववक्षिथ ।६। ववक्षुरस्य केतव उत वज्रो गभस्त्योः। यत् सूर्यो न रोदसी अवर्धयत् ।७। यदि प्रवृद्ध सत्पते सहस्रं महिषाँ अघः। आदित् त इन्द्रियं महि प्र वावृधे ।८। इन्द्रः सूर्यस्य रश्मिभिर्न्यर्शसानमोषति। अग्निर्वनेव सासहिः प्र वावृधे ।९। इयं त ऋत्वियावती धीतिरेति नवीयसी। सपर्यन्ती पुरुप्रिया मिमीत इत् ।१०।२

इन्द्र ने दूर से आगमन कर हमारे प्रति सख्य भाव वर्तने को धन प्रदान किया है। हे इन्द्र ! तुम आकाश से होने वाली वृष्टि के समान हमारे ऐश्वर्य की वृद्धि करते हुए हमें कर्मों का श्रेय देने की कामना करते हो ।६। जब वे इन्द्र सबको प्रेरणा देने वाले सूर्यके समान वृष्टि आदि कर्मों से आकाश पृथ्वी की वृद्धि करते है, तब उनकी पताकायें और इन्द्र के हाथ में सुशोभित वज्र हमारे लिए मंगलकारी होता है ।७। हे श्रेष्ठ अनुष्ठान करने वालों की रक्षा करने वाले इन्द्र ! जब तुमने सहस्रों वृत्र आदि राक्षसों का संहार किया, उसके पश्चात् ही तुम्हारा पराक्रम अत्यन्त प्रवृद्ध हुआ ।८। जैसे दावाग्नि जंगलों को दग्ध करती है, वैसे ही इन्द्र उन विघ्नकारी शत्रुओं को सूर्यकी रश्मियों द्वारा दग्ध द्वारा दग्ध करते हैं। शत्रुओं को वशीभूत करने वाले इन्द्र ! भले प्रकार प्रवृद्ध होते हैं ।९। हे इन्द्र! मेरा स्तोत्र तुम्हारे प्रति गमन करता है। वह स्तोत्र बसन्त आदिमें किये जाने वाले यज्ञ से युक्त अत्यन्त सुखदायक है ।१०।

गर्भो यज्ञस्य देवयुः क्रतुं पुनीत आनुषक्। स्तोमैरिन्द्रस्य वावृधे मिमीत इत्।११। सनिर्मित्रस्य पप्रथ इन्द्रः सोमस्य पीतये। प्राची वाशीव सुन्वते मिमीत इत् ।१२। यं विप्रा उक्थवाहसोऽभिप्रमन्दुरायवः। घृतं न पिप्य आसन्यृतस्य यत् ।१३। उत स्वराजे अदितिः स्तोममिन्द्राय जीजनत्। पुरुप्रशस्तमूतय ऋतस्य यत् ।१४। अभि वह्नय ऊतयेऽनूषत प्रशस्तये। न देव विव्रता हरी ऋतस्य यत् ।१५।३

यह स्तुति करने वाला इन्द्रका यज्ञ कर्ता है, वह इन्द्रके पीने योग्य सोम को दशा पवित्र में छानता है। वह स्तोत्र से इन्द्र को बढ़ाता है और स्तोत्र से ही इन्द्र को सोमित करता है।११। स्तुति करने वाले सखा के लिए दानशील इन्द्र ने गुण गाने वाले की वाणी के समान धन देने के निमित्त अपने शरीर का विस्तार किया यह स्तुति रूप वाणी इन्द्र के गुणों की सीमा करती है।१२। मेधावी स्तोता जिन इन्द्र को भले प्रकार प्रसन्न कर लेते हैं, उन इन्द्र के सुख में, मैं यज्ञ की हवियों को घृत के समान सींचूँगा।१३। अदितिने स्वयं सुशोभित इन्द्र के लिए रक्षा करने तथा अनेकों से प्रशंसित सत्य रूप स्तोत्रको प्रकट किया।१४। यज्ञ हवन करने वाले ऋत्विक् रक्षा के निमित्त इन्द्र की स्तुति करते हैं। हे इन्द्र ! विविध कर्मों के करने वाले दोनों घोड़े तुमको यज्ञ में वहन करते हैं।१५। (१)

यत् सोममिन्द्र विष्णवि यद् वा घ त्रित आप्त्ये। यद् वा मरुत्सु मन्दसे समिन्दुभिः।१६। यद् वा शक्र परावति समुद्रे अधि मन्दसे। अस्माकमित् सुते रणा समिन्दुभिः।१७। यद् वासि सुन्वतो वृधो यजमानस्य सत्पते। उक्थे वा यस्य रण्यसि समिन्दुभिः।१८। देवंदेवं वोऽवस इन्द्रमिन्द्रं गृणीषणि। अधा यज्ञाय तुर्वणे व्यानशुः।१९। यज्ञेभिर्यज्ञवाहसं सोमेभिः सोमपातमम्। होत्राभिरिन्द्रं वावृधुर्व्यानशुः।२०।४

हे इन्द्र ! विष्णु आप्तत्रित या मरुद्गण के आगमन पर दूसरों के यज्ञ में उनके साथ सोम से हृष्ट होते हैं, फिर भी तुम हमारे सोमसे हृष्टि को प्राप्त होओ।१६। हे इन्द्र ! तुम दूरस्थ देश में हव्य रूप सोम से हृष्ट होते हो तो भी हमारे सोम से अर्पित होने पर तुम उसके साथ प्रसन्न होओ।१७। हे इन्द्र ! तुम सत्य के पालनकर्त्ता हो। तुम सोम अभिषव करने वाले को बढ़ाते हो। तुम जिस यजमान के स्तोत्र से प्रसन्न होते हो उसके सोम से हृष्टि को प्राप्त होओ।१८। हे ऋत्विजों तुम्हारी रक्षा के लिये मैं जिन इन्द्र का स्तव करता हूँ यज्ञ के निमित्त

उन इन्द्र को मेरी स्तुतियाँ प्राप्त करें ।१९। हव्य, स्तोत्र और सोम द्वारा यज्ञ में लाने योग्य सबसे अधिक सोम पीने वाले इन्द्र को स्तुति करने वाले यजमान बढ़ाते हुए व्याप्त करते हैं ।२०।   (४)

महीरस्य प्रणीतयः पूर्वीरुत प्रशस्तयः। विश्वा वसूनि दाशुषे व्यानशुः ।२१। इन्द्रं वृत्राय हन्तवे देवासो दधिरे पुरः । इन्द्रं वाणीरनूषता समोजसे ।२२। महान्तं महिना वयं स्तोमेभिर्हवनश्रुतम् । अर्कैरभि प्र णोनुमः समोजसे ।२३। न यं विविक्तो रोदसी नान्तरिक्षाणि वज्रिणम्। अमादिदस्य तित्विषे समोजसः ।२४। यदिन्द्र पृतनाज्ये देवास्त्वा दधिरे पुरः । आदित् ते हर्यता हरी ववक्षतुः ।२५।५

इन्द्र का दान प्रचुर परिमाण में मिलता है । वे बहुत यशस्वी हैं । वे हवि देने वाले यजमान के लिये समस्त ऐश्वर्यों को व्याप्त करते हैं । ।२२। देवताओं ने वृत्र-नाश के निमित्त इन्द्र को धारण किया था, बल के निमित्त हमारी वाणी इन्द्र की स्तुति करती हैं।२२। अत्यन्त महिमा-वान् और आह्वान के सुनने वाले इन्द्र को हम स्तोत्र द्वारा बल प्राप्ति के लिये बारम्बार स्तुति करतेहैं ।२३। जिन वज्रधारी इन्द्रको आकाश पृथिवी और अन्तरिक्ष अपने से पृथक नहीं होने देते, उन्हीं इन्द्र के बल से संसार प्रकाशित होता है ।२४। हे इन्द्र ! जब कभी देवताओं ने तुम्हें धारण किया तभी अश्वों ने तुम्हारा वहन करके वहाँ पहुँचाया। ।२५।   (५)

यदा वृत्रं नदीवृतं शवसा वज्रिन्नवधीः । आदित् ते हर्यता हरी ववक्षतुः ।२६। यदा ते विष्णुरोजसा त्रीणि पदा विचक्रमे । आदित् ते हर्यता हरी ववक्षतुः ।२७। यदा ते हर्यता हरी वावृधाते दिवेदिवे । आदित् ते विश्वा भुवनानि येमिरे ।२८। यदा ते मारुतीर्विशस्तुभ्यमिन्द्र नियेमिरे । आदित् ते विश्वा भुवनानि येमिरे ।२९। यदा सूर्यममुं दिवि शुक्रं ज्योतिरधारयः । आदित् ते विश्वा भुवनानि येमिरे।३०। इमां त इन्द्र सुष्टुतिं विप्र इयर्ति धीतिभिः । जामिं पदेव पिप्रतीं प्राध्वरे ।३१। यदस्य धामनि

प्रिये समीचीनासो अस्वरन् । नाभा यज्ञस्य दोहना प्राध्वरे ।३२। सुवीर्यं स्वश्व्यं सुगव्यमिन्द्र दद्धि नः । होतेव पूर्वचित्तये प्राध्वरे ।३३।६

हे इन्द्र ! जब तुमने जल रोकने वाले वृत्र का वध किया, तभी तुम्हें घोड़े अपने स्थल पर ले आये ।२६। हे इन्द्र ! जब विष्णु ने तीन पग से लोक त्रय को नाप लिया, तब तुम्हें दोनों घोड़े ले आये ।२७। हे इन्द्र जब तुम्हारे दोनों अश्व वृद्धिको प्राप्त हुए,तभी सारा विश्व तुम्हारे द्वारा नियमित हो गया ।२८। हे इन्द्र ! जब तुम्हारे मरुदगण समस्त जीवों को नियमित करते हैं, तभी तुम सब विश्व को नियमित करते हों ।२९। हे इन्द्र ! जब इन ज्योतिर्मान सूर्य को तुम सूर्यमण्डलमें स्थित करते हो,तभी इस विश्व को नियमित करते हो ।३०। हे इन्द्र ! जैसे सभी अपने बन्धुओं को उच्च स्थान में ले जाते हैं वैसे ही विद्वान स्तुति करने वाला प्रसन्न करने वाली स्तुति को, यज्ञ में तुम्हारे पास पहुँचता है ३१। इन्द्र के तेज की कामना के लिए यज्ञ स्थान में एकत्रित स्तोता-गण जब भले प्रकार स्तुति करते हैं, तब हे इन्द्र ! नाभिरूप यज्ञ के अभिषव स्थान पर धन प्रदान करो ।३२। हे इन्द्र ! श्रेठ पराक्रम, श्रेष्ठ गौओं और उत्तम अश्वों से युक्त ऐश्वर्य हमको प्रदान करो मैंने सबसे पहले ज्ञान की प्राप्ति के निमित्त होता के समान यज्ञ-गृह में तुम्हारी स्तुति की थी ।३३।

सूक्त १३ [तीसरा अनुवाक]

(ऋषि—नारदः काण्वः देवता—इन्द्रः । छन्द—उष्णिक्)

इन्द्रः सुतेषु सोमेषु क्रतुं पुनीत उक्थ्यम् । विदे वृधस्य दक्षसो महान् हि षः ।१। स प्रथमे व्योमनि देवानां सदने वृधः । सुपारः सुश्रवस्तमः समप्सुजित् ।२। तमह्वे वाजसातय इन्द्रं भराय शुष्मिणम् । भवा नः सुम्ने अन्तमः सखा वृधे ।३। इयं त इन्द्र गिर्वणो रातिः क्षरति सुन्वतः । मन्दानो अस्यबर्हिषो वि राजसि ।४। नूनं यदिन्द्र दद्धि नो यत् त्वा सुन्वन्त ईमहे । रयिं नश्चित्रमा भरा स्वर्विदम् ।५।७।

वे इन्द्र सोम के अर्पित किए जाने पर यज्ञ करने वाले और स्तुति करने वाले को पवित्र मानते हैं इन्द्र ही बढ़ाने वाले बल की प्राप्ति के लिए महत्त्ववान होते हैं ।१। वे इन्द्र प्रथम व्योम और स्वर्ग में यजमानों की रक्षा करते हैं । वह प्रारम्भ किये कर्म को सम्पूर्ण करने वाले हैं । वे अत्यन्त यशस्वी, जल की प्राप्ति के लिये वृत्र पर विजय प्राप्त करते हैं ।२। मैं पराक्रमी इन्द्र का युद्ध स्थल में आह्वान करता हूँ । हे इन्द्र ! धन की कामना होने पर युम वृष्टि के निमित्त हमारे मित्र बनो ।३। हे स्तुतियों द्वारा पूजनीय इन्द्र ! तुम्हारे निमित्त यजमान द्वारा प्रदत्त आहुति प्राप्त होती हैं । तुम प्रसन्न हुए हमारे यज्ञ में विराजमान होओ ।४। हे इन्द्र ! सोम सिद्ध करने वाले तुमसे कामना करते हैं, तुम मुझे ऐश्वर्य अवश्य दो । वह अद्भुत और स्वर्ग प्राप्त करने वाला ऐश्वर्य लेकर आओ ।५।

स्तोता यत् ते विचर्षणिरतिप्रशर्धयद् गिरः । वया इवानु रोहते जुषन्त यत् ।६। प्रत्नवज्जनया गिरः शृणुधी जरितुर्हवम् । मदेमदे ववक्षिथा सुकृत्वने।७। क्रीलन्त्वस्य सूनृता आपो न प्रवता यतीः । अया धिया य उच्यते पतिर्दिवः ।८। उतो पतिर्य उच्यते कृष्टीनामेक इद् वशी । नमोवृधैरवस्युभिः सुते रण ।९। स्तुहि श्रुतं विपश्चितं हरी यस्य प्रसक्षिणा । गन्तारा दाशुषो गृहं नमस्विनः ।१०।८।

हे इन्द्र ! स्तुति करने वाला जब तुम्हारे लिये शत्रुओं को हराने वाली स्तुति करता है और जब सभी वचन तुम्हें हर्षित करते हैं, तब तुम सभी गुणों से युक्त हो जाते हैं ।६। हे इन्द्र ! पूर्वकाल के समान स्तोत्र प्रकट करो । स्तुति करने वाले का आहवान सुनो । जब तुम सोम से हृष्ट होते हो तब सुन्दर कार्य करने वाले यजमान को फल देते हो ।७। इन्द्र की सत्य वाणी नीचेकी ओर जाते हुए जलके समान जाती है । स्वर्गाधिपति इन्द्र इस स्तुति द्वारा यश प्राप्त करते हैं।८। एकमात्र इन्द्र ही मनुष्यों के रक्षक हैं । हे इन्द्र ! तुम स्तोत्र द्वारा बढ़ाने वालों

और जो युद्ध की कामना वालों के साथ सोमसे हृष्ट होओ।९। हे स्तुति करने वालो ! तुम मेधावी एवं प्रसिद्ध इन्द्र की स्तुति करो। शत्रुओं को जीतने वाले इन्द्र के दोनों घोड़े हव्य और नमस्कार वाले यजमान के गृह में पहुँचते हैं।१०। (८)

तूतुजानो महेमते ऽश्वेभिः प्र षितप्सुभिः। आ याहि यज्ञमाशुभिः शमिद्धि ते।११। इन्द्र शविष्ठ सत्पते रयिं गृणत्सु धारय। श्रवः सूरिभ्यो अमृतं वसुत्वनम्।१२। हवे त्वा सूर उदिते हवे मध्यंदिने दिवः। जुषाण इन्द्र सप्तिभिर्न आ गहि।१३। आ तू गहि प्र तु द्रव मत्स्वा सुतस्य गोमतः। तन्तुं तनुष्व पूर्व्यं यथा विदे।१४। यच्छक्रासि परावति यदर्वावति वृत्रहन्। यद् वा समुद्रे अन्धसोऽवितेदसि।१५।९

हे इन्द्र! तुम्हारी बुद्धि अत्यन्त फलदेने वाली है। तुम अपने द्रुतगामी घोड़ों सहित हमारे यज्ञ में आओ। क्योंकि तुम यज्ञ में ही सुख पाते हो।११। हे सज्जनों की रक्षा करने वाले, पराक्रमी इन्द्र ! हम तुम्हारा स्तवन करते हैं। तुम हमको धन प्रदान करो। स्तुति करने वालों को कभी भी नष्ट न होने वाला यश दो।१२। हे इन्द्र ! सूर्योदय काल में, में तुम्हारा आह्वान करता हूँ। मैं दिन के मध्य के सवन में भी तुम्हें बुलाता हूँ, प्रसन्न होते हुए अपने गतिमान घोड़ों सहित आगमन करो।१३। हे इन्द्र ! शीघ्र ही जहाँ सोम है, वहाँ आगमन करो। दुग्ध मिश्रित सोम से प्रसन्न होओ, फिर में जैसा चाहता हूँ, वैसे ही मेरे यज्ञको पूर्ण करो।१४। हे वृत्रके मारने वाले इन्द्र। तुम दूर हो अथवा पास हो, या अन्तरिक्ष में कहीं भी हो, तो भी वहाँ से आकर सोमरस को पीओ और हमारे रक्षक बनो।१५। (९)

इन्द्रं वर्धन्तु नो गिर इन्द्रं सुतास इन्दवः। इन्द्रे हविष्मतीर्विशो अराणिषुः।१६।तमिद्विप्रा अवस्यवः प्रवत्वतीभिः रूतिभिः। इन्द्रं क्षोणीरवर्धयन् वया इव।१७। त्रिकद्रुकेषु चेतनं देवासो यज्ञमत्नत। तमिद् वर्धन्तु नो गिरः सदावृधम्।१८। स्तोता यत्

ते अनुव्रत उक्थान्यृतुथा दधे। शुचि: पावक उच्यते सो अद्भुत: ।१९। तदिद् रुद्रस्य चेतति यह्वं प्रत्नेषु धामसु। मनो यत्रा वि तद् दधुर्विचेतस: ।२०। १०

हमारी स्तुतियाँ को बढ़ावे। अभिषुत सोम इन्द्र को बढ़ावें। हवि वाले यजमान इन्द्र को साधना में लीन हुए है।०६। रक्षा की कामना वाले मेधावी जन उन इन्द्र को तृप्त करते हुए आहुतियों द्वारा बढ़ाते हैं पृथ्वी के सभी जीव इन्द्र को वृक्ष की शाख के समान बढ़ाते हैं।१७। त्रिकद्रुक नामक यज्ञ में देवताओंने चैतन्यता प्रदान करने वाले इन्द्र का सम्मान किया। इन्द्र को हमारी वर्धक स्तुतियाँ सदा बढ़ावें।१८। हे इन्द्र! तुम्हारी स्तुति करने वाले समय-समय पर स्तोत्रोच्चार करते हैं। तुम अम्भुत देश वाले एवं स्तुत्य हों।१९। जिनके निमित्त मेधावीजन स्तोत्रोच्चार करते हैं। वे रुद्र पुत्र मरुद्गण अपने पुरातन स्थानों में वर्तमान हैं।२०।   (१०)

यदि मे सख्यमावर इमस्य पाह्यन्धस:। येन विश्वा अति द्विषो अतारिम।२१। कदा त इन्द्र गिर्वण: स्तोता भवति शंतम:। कदा नो गव्ये अश्व्ये वसौ दध: ।२२। उत ते सुष्टुता हरी वृषणा वहतो रथम्। अजुर्यस्य मदिन्तमं यमीमहे।२३। तमीमहे पुरुष्टुतं यह्वं प्रत्नाभिरूतिभि:। नि बर्हिषि प्रिये सददध द्विता।२४। वर्धस्वा सु पुरुष्टुत ऋषिष्टुताभिरूतिभि:। धुक्षस्व पिप्युषीमिषमवा च न: ।२५।११

हे इन्द्र ? तुम मुझे अपनी मित्रता दो और इस सोमरस को पीओ तभी हम सब शत्रुओं को जीत सकते है।२१। हे इन्द्र ? तुम स्तुतियों के पात्र हो। तुम्हारी स्तुति करने वाला क्या कम सुखी होगा? तुम हमको अम्व गवादि से युक्त अन्दर गृह वाला कब प्रदान करोगे? ।२२। हे इन्द्र ? तुम जरा-रहित हो। कामनाओं की वर्षा करने वाले भले प्रकार स्तुत्य तुम्हारे दोनों घोड़े तुम्हारे रथ को हमारे यहाँ लावें। तुम अनन्त हृष्ट हवि प्रदान करतेहैं।२३। बहुतों द्वारा स्तुत्य एवं

महान इन्द्र की तृप्ति करने वाली आहुतियों सहित हम प्रार्थना करते हैं। वे प्रसन्नताप्रद कुशों पर विराजमान हों। फिर दोनों प्रकार का हव्य ग्रहणकरें।२ । हे इन्द्र ! तुम बहुतों एवं ऋषियों द्वारा स्तुत हो। अपने रक्षण साधनासे हमको बढ़ाओ और हमको अन्न प्रदानकरो।२५। (११)

इन्द्र त्वमवितेदसीत्या स्तुवतोअद्रिवः। ऋतादियर्मि ते धियं मनोयुजम्।२६। इह त्या सधमाद्या युजानः सोमपीतये। हरी इन्द्र प्रतद्वस् अभि स्वर।२७। अभि स्वरन्तु ये तव रुद्रासः सक्षत श्रियम्। उतो मरुत्वतीर्विशो अभि प्रयः।२८। इमा अस्य प्रतूर्तयः पदं जुषन्त यद् दिवि। नाभा यज्ञस्य सं दधुयथा विदे।२९ अयां दीर्घाय चक्षसे प्राचि प्रयत्यध्वरे। मिमीते यज्ञमानुषग्विचक्ष्य।३०।१२

हे वज्रिन् ! तुम स्तुति करने वाले के रक्षक हो। मैं तुम्हारे स्तोत्र वाले दृढ़ एवं धन-युक्त दोनों घोड़ों को रथ में जातकर सोम पीने के निमित्त यहाँ आगमन करो।२७। हे इन्द्र ! तुम्हारे जो मरुद्गण है वे इस यज्ञमें आगमन करें। मरुद्गण की प्रजायें भी यहाँ आवें।२८। इन्द्र की मरुदादि प्रजायें स्वयं में या जहाँ भी वे हैं, उनकी परिचर्या करती हैं। हम जिस प्रकार धन पावें उसी प्रकार वे यज्ञ के नाभि स्थल पर रहते हैं।२९। यज्ञ के प्राचीन गृह में आरम्भ होने पर यथाविधि देख कर इच्छित फल के निमित्त इन्द्र यज्ञ का सम्पादन करते हैं।३०। (१२

वृषायमिन्द्र ते रथ उतो ते वृषणा हरी। वृषा त्वं शतक्रतो वृषा हवः।३१। वृषा ग्रावा वृषा मयो वृषा सोमो अयं सुतः। वृषा यज्ञो यमिन्वसि वृषा यज्ञो यमिन्वसि वृषा हवः।३२। वृषा त्वा वृषणं हुवे वज्रिञ्चित्राभिरूतिभिः। वावन्थ हि प्रतिष्टुतिं हवः।३३।१३

हे इन्द्र ! तुम्हारा रथ अभीष्टों को पूर्ण करने वाला है। तुम्हारे दोनों अश्व भी कामनाओं की वर्षा करते हैं। हे सैकड़ों कर्म करने वाले

इन्द्र ! तुम अभीष्ट की वर्षा करने वाले हो और तुम्हारा आह्वान इच्छित फल का देने वाला है ।३१। सोम को कूटने वाला पाषाण कामनाओं की वर्षा करता है । सोम मनोरथों का दाता है । सोम सभी कामनाओं की वर्षा करने वाला है । जिस यज्ञ को तुम प्राप्त करते हो वह भी इच्छित वर्षक हो । तुम्हारा आह्वान इच्छित फलों को देने वाला है ।३२। हे वज्रिन ! तुम कामनाओं के वर्षकहो । मैं हवि सिंचन करने वाला हूँ । मैं विविध स्तुतियोंसे तुम्हारा आह्वान करता हूँ । तुम अपने निमित्त की जाने वाली स्तुति को ग्रहण करते हो । अतः तुम्हारा आह्वान इच्छित फलों का देने वाला है ।३३।   (१३)

सूक्त १४

(ऋषि–गौ पूरतयश्वसूक्तिनौ: । देवता–इन्द्र: । छन्द–गायत्री)

यदिन्द्राहं यथा त्वमीशीय वस्व एक इत् । स्तोता मे गोषखा स्यात्।१। शिक्षेयमस्मै दित्सेयं शचीपते मनीषिणे । यदहं गोपतिः स्याम् ।२। धेनुष्ट इन्द्र सूनृता यजमानाय सुन्वते । गामश्वं पिप्युषी दुहे ।३। न ते वर्तास्ति राधस इन्द्र देवो न मर्त्यः । यद् दित्ससि स्तुतो मघम् ।४। यज्ञ इन्द्रमवर्धयद् यद् भूमिं व्यवर्तयत् । चक्राण ओपशं दिवि ।५।१४

हे इन्द्र ! जैसे केवल तुम्हीं सबके स्वामी हो वैसे ही यदि मैं भी धनवान हो जाऊँ तो मेरा स्तोता गौओं से युक्त हो जाये ।१। हे इन्द्र तुम सर्वशक्तिमान हो यदि मैं तुम्हारी कृपा से गौ वाला हो जाऊं तो इस स्तुति करने वाले को गौ तथा धन देने की इच्छा करूँगा ।२। हे इन्द्र ! तुम्हारी सत्यप्रिय और बढ़ाने वाली स्तुति रूप धेनु सोम प्रस्तुत करने की गौ और घोड़े प्रदान करती है ।३। हे इन्द्र ! तुम स्तुत होकर धन देने की कामना करते हो कोई देवता या मनुष्य तुम्हारे उस धन को नहीं रोक सकता ।४। यज्ञ ने इन्द्र को बढ़ाया है । इन्द्र ने स्वर्ग में मेघ सुषुप्त कर पृथिवी को वृष्टि देकर स्थिर किया है ।५।   (१४)

वावृधानस्य ते वयं विश्वा धनानि जिग्युषः। ऊतिमिन्द्रा वृणीमहे ।६। व्यन्तरिक्षमतिरन्मदे सोमस्य रोचना। इन्द्रो यद-भिनद् वलम् ।७। उद्गा आजदङ्गिरोभ्य आविष्कृण्वन् गुहा सतीः। अर्वाञ्चं नुनुदे वलम् ।८। इन्द्रेण रोचना दिवो दृलहानि दृंहितानि च। स्थिराणि न पराणुदे ।६। अपामूर्मिर्मदन्निव स्तोम इन्द्राजिरायते। वि ते मदा अराजिषुः ।१०।१५

हे इन्द्र! तुम बढ़ने वाले एवं शत्रुओं के सब धनों को जीत लेने वाले हो। हम तुम्हारी रक्षा चाहते हैं।६। सोम से उत्पन्न हर्ष के होने पर इन्द्र ने अन्तरिक्ष को बढ़ाया है। क्योंकि उन्होंने मेघ को खोला है।७। इन्द्र ने गुफा में छिपी हुई गौओंको मिलाकर अङ्गिराओं को प्रदान की और गौओं के चुराने वाले पणियोंके मुखिया 'बल' राक्षस को नीचे गिराया।८। इन्द्र ने आकाश के नक्षत्रों को स्थिर किया। इन नक्षत्रों को उनके स्थानों से च्युत कोई नहीं कर सकता।६। हे इन्द्र! समुद्र की लहरों के समान तुम्हारी स्तुतियाँ शीघ्र जाती हैं। तुम्हारी दृष्टि सदा तेज को प्राप्त करती है।१०।

त्वं हि स्तोमवर्धन इन्द्रास्युक्थवर्धनः: स्तोतॄणामुत भद्र-कृत् ।११। इन्द्रमित् केशिना हरी सोमपेयाय वक्षतः उप यज्ञं सुराधसम् ।१२। अपां फेनेन नमुचेः शिर इन्द्रोदवर्तयः। विश्वा यदजयः स्पृधः ।१३। मायाभिरुत्सिसृप्सत इन्द्र द्यामारुरुक्षतः। अव दस्यूँरधूनुथा।१४। असुन्वामिन्द्र संसदं विषूचीं व्यनाशयः। सोमपा उत्तरो भवन् ।१५।१६

हे इन्द्र! तुम स्तोत्र द्वारा बढते हो और 'उकथ' द्वारा भी बढ़ते हो। तुम स्तुति करने वालोंके लिये मङ्गलकारी हो।११। इन्द्र के दोनों अश्व सोम पीने के लिये इन्द्र को यज्ञ स्थान में ले जाते हैं।१२। हे इन्द्र! जब तुमने सब राक्षसों को पराजित किया था, तब जल के फेन द्वारा ही 'नमुचि' के सिर को पृथक कर दिया था।१३। हे इन्द्र! तुम माया द्वारा सर्वत्र व्याप्त हो। तुमने स्वर्ग में चढ़ने की इच्छा करने वाले शत्रुओं को नीचे गिरा दिया।१४। हे इन्द्र! सोम पीकर श्रेष्ठतम

होते हुए तुमने सोम अभिषव न करने वाले व्यक्तियों को परस्पर लड़ा कर नष्ट कर डाला ।१५। (१६)

सूक्त १५

(ऋषि-गोषूक्त्यश्वसूक्तिनौ: काण्वायनौ: । देवता-इन्द्र: । छन्द-उष्णिक्)

तम्वभि प्र गायत पुरुहूतं पुरुष्टुतं । इन्द्रं गीर्भिस्तविषमा विवासत ।१। यस्य द्विबर्हसो बृहत् सहो दाधार रोदसी । गिरीं रज्रां अप: स्ववृषत्वना ।१। स राजसि पुरुष्टुतं एको वृत्राणि जिघ्नसे । इन्द्र जैत्रा श्रवस्या च यन्तवे ।३। तं ते मदं गृणीमसि वृषणं पृत्सु सासहिम् । उ लोककृत्नुमद्रिवो हरिश्रियम् ।४। येन ज्योतींष्यायवे मनवे च विवेदिथ । मन्दानो अस्य बर्हिषो वि राजसि ।५।१७

मनुष्यों ! अनेकों द्वारा आहूत और अनेकों द्वारा ही स्तुत उन्हीं इन्द्र की स्तुति करो । सुन्दर वाणी से महान इन्द्र की पूजा करो ।१। इन्द्र का प्रशंसनीय पराक्रम आकाश पृथिवी को धारण करता है। वह शीघ्रगामी मेघ तथा गतिशील बल को अपने पराक्रमसे ही धारण करते हैं ।२। हे इन्द्र ! तुम बहुतों द्वारा स्तुतहो । तुम सुशोभित हो । जीतने तथा सुनने के योग्य धन को स्वच्छन्द करने के लिए तुम पुत्रादि हो । जीतने तथा सुनने के योग्य धन को स्वच्छन्द करने के लिए तुम वृत्रादि रक्षसों को मारते हो ।३। हे इन्द्र ! तुम्हारे पराक्रम की हम स्तुति करते हैं। वह अभीष्ट पूर्ण करने वाले, शत्रुओं के पराजित करने वाला तथा अश्वों द्वारा सेवाके योग्य हैं ।४। हे इन्द्र ! तुमने जिस तेज से सूर्य आदि ज्योतियो को प्रकट किया था उसी के द्वारा बढ़ते हुए तुम यज्ञ कर्म करने वाले हुए ।५।

तदद्या चित् त उक्थिनोऽनु ष्टुवन्ति पूर्वथा । वृषपत्नीरपो जया दिवेदिवे ।६। तव त्यदिन्द्रियं बृहत् तव शुष्ममुत क्रतुम् । वज्रं शिशाति धिषणा वरेण्यम् ।७। तव द्यौरिन्द्र पौंस्यं पृथिवी वर्धति श्रव: । त्वामाप: पर्वतासश्च हिन्विरे ।८। त्वां शर्धो मदत्यनु मारुतम् ।९। त्वं वृषा जनानां मंहिष्ठ इन्द्र जज्ञिषे । सत्रा त्वं विश्वा स्वपत्यानि दधिषे ।१०।१८

हे इन्द्र! पूर्वकाल के समान अब भी स्तोत्र करने वाले तुम्हारे बल की स्तुति करते हैं। जिस जल के स्वामी पर्जन्य हैं तुम उस बल को मुक्त करो।५। हे इन्द्र ! हमारे स्तोत्र, तुम्हारे पराक्रम, कर्म और वरण करने योग्य वज्र को तीक्ष्ण करते हैं।७। हे इन्द्र ! आकाश तुम्हारे बल को, पृथ्वी तुम्हारे यश को तथा अन्तरिक्ष और मेघ तुम्हारी प्रसन्नता को बढ़ाते हैं।८। हे इन्द्र ! पालनकर्ता विष्णु, मित्र और बरुण तुम्हारा स्तवन करते हैं। मरुदगण तुम्हारे भरोसे से अधिकार को प्राप्त होते हैं।९। हे इन्द्र ! तुम वर्णशील एवं दानशील हो। तुम अपत्ययुक्त सुन्दर धन धारण करते हो।१०।   (१८)

सत्रा त्वं पुरुष्टुतं एको वृत्राणि तोशसे। नान्य इन्द्रात् करणं भूय इन्वति।११। यदिन्द्र मन्मशस्त्वा नाना हवंत ऊतये। अस्माकेभिर्नृभिरत्रा स्वर्जय।१२। अरं क्षयाय नो महे विश्वा रूपाण्याविशन्। इन्द्रं जैत्राय हर्षयाशचीपतिम्।१३।१९

हे इन्द्र ! तुम अनेकों द्वारा स्तुत हो। तुम अकेले ही असंख्य शत्रुओं को नष्ट करते। इन्द्र से बढ़कर कर्म करने वाला अन्य कोई भी नहीं है।११। हे रक्षा के निमित्त जिस युद्ध में तुम स्तोत्रो द्वारा पूजित होते हो, उसी युद्धमे बुलाये जाकर तुम शत्रुओं के बल पर विजय प्राप्त करो।१२। हे स्तुति करने वालो ! हमारे महान् गृह के निमित्त सर्वत्र व्याप्त और कर्मों के रक्षक इन्द्र का, जीतने योग्य धनके निमित्त, स्तवन करो।१३।   (१९)

सूक्त १६

(ऋषि–इरिम्बिठः काण्वः। देवता–इन्द्रः। छन्द–गायत्री)

प्र सम्राजं चर्षणीनामिन्द्रं स्तोता नव्यं गीर्भिः। नरं नृषाहं मंहिष्ठम्।१। यस्मिन्नुक्थानि रण्यन्ति विश्वानि च श्रवस्या। अपामवो न समुद्रे।२। तं सुष्टुत्या विवासे ज्येष्ठराजं भरे कृत्नुम्। महो वाजिन सनिभ्यः।३। यस्यानूना गभीरा मदा उरवस्तरुत्राः। हर्षुमन्तः शूरसातो।४। तमिद् धनेषु हितेष्वधि-

वाकाय हवन्ते । येषामिन्द्रस्ते जयन्ति ।५। तमिच्च्यौत्नैरार्यन्ति तं कृतेभिश्चर्षणयः । एष इन्द्रो वरिवस्कृत् ।६।२०।

हे स्तोताओ ! मनुष्यों के सम्राट इन्द्र का स्तव करो । वे स्तुतियों द्वारा प्रशंसित, शत्रुओं को डराने वाले एवं अन्य की अपेक्षा अधिक देने वाले हैं ।१। जैसे जल की लहरें सिन्धु में सुशोभित होती है, वैसेही स्तोत्र और हविरत्न इन्द्रमें सुशोभित होते हैं ।२। मैं सुन्दर स्तोत्र द्वारा इन्द्र की धन प्राप्ति के लिए स्तुति करता हूँ । वे इन्द्र सभी श्रेष्ठ देवताओं में सुशोभित रहते हैं । वे पराक्रमी, रणक्षेत्रमें महान बल दिखाते हैं ।३। इन्द्र की शक्ति महती, गम्भीर विस्तृत शत्रु से बचाने वाली और वीरों के संग्राम में रहती है । धन मिलने पर स्तुति करने वाले अपने पक्ष के लिए इन्हीं इन्द्र का आह्वान करते हैं । जिस पक्ष में इन्द्र रहते हैं, उधर विजय मिलती है ।५। अपने शक्तिशाली स्तोत्रों द्वारा इन्द्र को ही ईश्वर बनाया जाता है । अपने कर्मसे ही मनुष्य उन्हें ईश्वर मानते हैं। इन्द्र ही धन के कर्ता स्वरूप हैं ।६।

इन्द्रो ब्रह्मेन्द्र ऋषिरिन्द्रः पुरू पुरुहूतः । महान् महीभिः शचीभिः ।७। सः स्तोम्यः स हव्यः सत्यः सत्वः तुविकूर्मिः । एकश्चित् सन्नभिभूतिः ।८। तमर्केभिस्तं सामभिस्तं गायत्रैश्चर्षणयः । इन्द्रं वर्धन्ति क्षितयः ।९। प्रणेतारं वस्यो अच्छा कर्तारं ज्योतिः समत्सु । सासह्वांसं युधामित्रान् ।१०। स नः पप्रिः पारयाति स्वस्ति नावा पुरुहूतः । इन्द्रो विश्वा अति द्विषः ।११। स त्वं न इन्द्र वाजेभिर्दशस्या च मातुया च । अच्छा च नः सुम्नं नेषि ।१२।२१।

इन्द्र बहुतों द्वारा बुलाये जाते हैं । वे अपने महान कार्यों के द्वारा ही महान् हैं ।७। वे इन्द्र स्तुति और आह्वान के योग्य हैं । वे शत्रुओं के अवसादक बहुत कर्मवान है तथा अकेले रहते हुए भी असंख्य शत्रुओं को भगाने वाले हैं ।८। मेधावी मनुष्य पूजा साधक स्तोत्रों द्वारा इन्द्र को बढ़ाते हैं । गायन योग्य स्तोत्रों से बढ़ाते हैं और गायत्री आदिछन्दा

तथा युद्ध मन्त्रों द्वाराभी बढ़ते हैं ।९। वे इन्द्र प्रशंसा योग्य धनीके प्रकट करने वाले, रणक्षेत्रमें पराक्रमके दिखाने वाले और शस्त्रो द्वारा शत्रुओं को पराजित करने वाले हैं ।१०। वे इन्द्र सब कार्योंके सम्पन्न-कर्त्ता ओर बहुतों द्वारा आहूत है । वे हमको अपनी रक्षारूपी नावके द्वारा शत्रुओं के विघ्नादि से पार लगावें ।११। हे इन्द्र! अपने बलसे हमको धन दो । तुम हमको श्रेष्ठ मार्ग दो । हमको सुखी बनाओ ।१२।

सूक्त १७

(ऋषि–इरिम्बिठिः काण्वः । देवता–इन्द्रः । छन्द–गायत्री वृहती)

आ याहि सुषुमा हि त इन्द्र सोमं पिबा इमम् । एदं वर्हिः सदो मम ।१। आ त्वा ब्रह्मयुजा हरी वहतामिन्द्र केशिना । उप ब्रह्माणि नः शृणु ।२। ब्रह्माणस्त्वा वयं युजा सोमपामिन्द्र सोमिनः । सुतावन्तो हवामहे ।३। आ नो याहि सुतावतो ऽस्माकं सुष्टुतीरुप । पिबा सु शिप्रिन्नन्धसः ।४। आ ते सिञ्चामि कुक्ष्योरनु गात्रा वि धावतु । गृभाय जिह्वाय मधु ।५।२२

हे इन्द्र ! यहाँ आओ । तुम्हारे निमित्त छना हुआ सोम रखा है । मेरे इस कुश पर विराजमान होकर इस मधुर सोम-रस का पान करो ।१। हे इन्द्र ! मरुद्गण द्वारा जोड़े हुए सुन्दर केश वाले घोड़े तुम्हें यहाँ ले आवें । तुम इस यज्ञ स्थान में आगमन कर हमारे सुन्दर स्तोत्र को श्रवण करो ।२। हे इन्द्र! हम स्तुति करने वाले हैं । तुमको आह्वानीय स्तोत्र द्वारा आहूत करते हैं हम अभिषुत सोम से युक्त है । हम सोमपान करने वाले इन्द्र का आह्वान करते है ।३। हे इन्द्र ! हम सोमवान् है । तुम हमारे समक्ष आगमन करो हमारे श्रेष्ठ स्तोत्रों को जानो । सुन्दर मुकुट धारण करने वाले हो । तुम अन्न सेवन करो ।४। हे इन्द्र ! तुम्हारे दाये और वायें उदर को सोम से पूर्ण करता, हूँ । वह सोम तुम्हारे शरीर को परिपूर्ण करे । तुम इस मधुर सोमरस को जिह्वा द्वारा सेवन करो ।५। (२२)

स्वादुष्टे अस्तु संसुदे मधुमान् तन्वे तव । सोमः शमस्तु ते हृदे ।६। अयमु त्वा विचर्षणे जनीरिवाभि संवृतः । प्र सोम इन्द्र सर्पतु ।७। तुविग्रीवो वपोदरः सुबाहुरन्धसो मदे । इन्द्रो वृत्राणि जिघ्नते ।८। इन्द्र प्रेहि पुरस्त्वं विश्वस्येशान ओजसा । वृत्राणि वृत्रहञ्जहि ।९। दीर्घस्ते अस्त्वङ्कुशो येना वसु प्रयच्छसि । यजमानाय सुन्वते ।१०।२३

हे इन्द्र! तुम्हारे दानशील शरीर के निमित्त यह मधुर रस वाला सोम सुस्वादु बने । यह सोम तुम्हारे लिए हर्ष उत्पन्न करने वाला हो ।६। हे इन्द्र ! यह सोम सुरक्षित रहने के लिए सब तरफ से ढका हुआ तुम्हारे समीप में गमन करे ।७। वे विशाल स्कन्ध, स्थूल उदर और शोभन बाहु वाले इन्द्र अन्नरूप सोम का प्रभाव होनेपर वृत्र आदि असुरों का संहार करते हैं ।८। हे इन्द्र ! तुम बल के कारण रूप एवं संसार के ईश्वर हो । तुम हमारे समक्ष आओ । हे वृत्रहन्ता इन्द्र ! तुम शत्रुओं और असुरोंका संहार करो ।९। हे इन्द्र ! तुम अपने जिस अंकुश से अभिषव करने वाले यजमान को ऐश्वर्य प्रदान करते हो, तुम्हारा वह अंकुश महान् हो ।१०। (१०)

अयं त इन्द्र सोमो निपूतो अधि बर्हिषि । एहीमस्य द्रवा पिब ।११। शाचिगो शाचिपूजनाऽयं रणाय ते सुतः । आखण्डल प्र हूयसे ।१२। यस्ते शृङ्गवृषो नपात् प्रणपात् कुण्डपाय्यः । न्यस्मिन् दध्र आ मनः ।१३। वास्तोष्पते ध्रुवा स्थूणांऽसत्रं सोम्यानाम् । द्रप्सो भेत्ता पुरां शश्वतीनामिन्द्रो मुनीनां सखा ।१४। पृदाकुसानुर्यजतो गवेषण एकः सन्नभि भूयसः । भूर्णिमश्वं नयत् तुजा पुरो गृभेन्द्रं सोमस्य पीतये ।१५।२४

हे इन्द्र ! यह सोम वेदी पर बिछे हुए कुश पर विशेष रूप से तुम्हारे लिए सुसिद्ध किया गया है । तुम इस सोम के सामने आकर शीघ्र ही इसका पान करो ।११। हे सुसिद्ध पूजा के योग्य इन्द्र ! तुम्हें प्रसन्न करने के लिए सोम अभिषुत हुआ । हे शत्रुहन्ता ! तुम श्रेष्ठ

स्तुतियों द्वारा बुलाये जाते हो ।१२। हे इन्द्र! तुम्हारी रक्षा वाला श्रेष्ठ कुण्डपायी यज्ञ है, उसमें ऋषिगण लीन हो रहे हैं। ।३। हे इन्द्र ! तुम गृहपति हो। घर का आधार रूप स्तम्भ सुदृढ़ हो। हम सोमके सम्पादन कर्त्ता है। हमारे स्कन्ध में रक्षाके लिए सामर्थ्य हो। सोमवान् एवं अनेक नगरों के ध्वस्त करने वाले इन्द्र ऋषियोंके सखा बनें।१४। ऊंचे शिर वाले, यज्ञके योग्य, गौओं के प्रकट करने वाले वे इन्द्र अकेले रहकर भी असंख्या शत्रुओं हरातेहैं स्तुति करने वाले विद्वान् उन विस्तृत इन्द्र को सोम पीने के लिए हमारे सामने लाते हैं।१। (२४)

सूक्त १८

(ऋषि—इरिम्बिठिः काण्वः। देवता—आदित्या, अश्विनी, अग्नि, सूर्यानिलाः। छन्द—उष्णिक्)

इद ह नूनमेषां सुम्नं भिक्षेत मर्त्यः। आदित्यानामपूर्व्यं सवीमनि।१। अनर्वाणो ह्येषां पन्था आदित्यानाम्। अदब्धाः सन्ति पायवः सुगेवृधः।२। तत् सु नः सविता भगो वरुणो मित्रो अर्यमा। शर्म यच्छन्तु सप्रथो यदीमहे।३। देवेभिर्देव्यदिते ऽरिष्टभर्मन्ना गहि। स्मत् सूरिभिः पुरुप्रिये सुशर्मभिः।४। ते हि पुत्रासो अदितेर्विदुर्द्वेषांसि योतवे। अंहोश्चिदुरुचक्रयोऽनेहसः। ५।२५

इस समय मनुष्य आदित्यों के सामने पूर्ण न हुए सुख के परिपूर्ण होनेकी याचना करे। । इन आदित्यों के मार्ग अहिंसित हैं। उन मार्गों पर अन्य कोई नहीं चला है। वे पालन करने वाले सर्व सुखों के बढ़ाने वाले हैं।२। हम जिस अत्यन्त सुख की इच्छा करते हैं, उसी सुख को सविता, भग, मित्र, वरुण और अर्यमा हमको दें।३। हे देवताओं ! अहिंसा को पुष्ट करने वाली और बहुतों को प्रिय अदिति, विद्वान् और सुख के देने वाले देवताओं के सहित सुख-रूप होकर यहाँ आवें।४। अदितिके बन्धु एवं पुत्रादि बैरियों को भगाना जानते हैं। विस्तृत कर्मों के करने वाले और रक्षा करने में समर्थ वे सभी हमको पापोंसे बचाना जानते हैं।५। (२५)

अदितिर्नो दिवा पशुमदितिर्नक्तमद्वयाः । अदितिः पात्वंहसः सदावृधा ।६। उत स्या नो दिवा मतिरदितिरूत्या गमत् । सा शंताति मयस्करदप स्रिधः ।७। उत त्या दैव्या भिषजा शं नः करतो अश्विना । युयुयातामितो रपो अप स्रिधः ।८। शमग्निरग्निभिः करच्छं नस्तपतु सूर्यः । शं वातो वात्वरपा अप स्रिधः ।९। अपामीवामप स्रिधमप सेधत दुर्मतिम् । आदित्यासो युयोतना नो अंहसः ।१०।२६

दिन एवं रात्रि में ही हमारे पशुओंकी रक्षा माता अदिति करें तथा वे अपने विस्तुत रक्षा साधनों द्वारा हमारी पाप से भी रक्षा करें ।६। वे स्तुति की पात्र अदिति दिन में अपनी रक्षा सहित आगमन करें वे शान्ति वाले सुख को हमें प्रदान करें । वे विघ्न करने वालों को हमसे दूर करें ।७। देवताओं के विख्यात चिकित्सक अश्विनी कुमार हमको सुख प्रदान करें । पापों को हमारे पास से हटावें शत्रुओं को भी हमसे दूर करें ।८। तथा अग्निदेव हमारे रोग को शांत करें । सूर्य का ताप सुख देने वाला हो । वायु पाप और ताप से रहित होकर प्रवाहित हो और यह सभी शत्रुओं को दूर भगावें ।६। हे आदित्यो ! रोगों को हमसे दूर करो । शत्रुओं को भी भगाओ । बुरी गतियों और पापों को भी दूर रखो ।१०। (२६)

युयोता शरुमस्मदाँ आदित्यास उतामतिम् । ऋधग्द्वेषः कृणुत विश्ववेदसः ।११। तत् सु नः शर्म यच्छताऽऽदित्या यन्मुमोचति । एनस्वन्तं चिदेनसः सुदानवः ।१२। यो नः कश्चिद् रिरिक्षति रक्षस्त्वेन मर्त्यः । स्वैः ष एवै रिरिषीष्ट युर्जनः ।१३। समित् तमघमश्नवद् दुःशंसं मर्त्यं रिपुम् । यो अस्मत्रा दुर्हणावाँ उप द्वयुः ।१४। पाकत्रा स्थन देवा हृत्सु जानीथ मर्त्यम् । उप द्वयुं चाद्वयुं च वसवः ।१५।२७

हे आदित्यो ! हिंसकों को हमसे दूर करो । कुबुद्धि को भी दूर करो । शत्रुओं को भी दूर करो ।११। सुन्दर दान वाले आदित्यो ! तुम्हारा जो सुख पापी स्तोता को भी पाप से छुड़ा देता है, वही सुख

हमें दें ।१२। जो मनुष्य राक्षस-वृत्ति द्वारा हमारा वध करना चाहता है, तो वह अपने ही कार्यों में मारा जाय । वह हमसे दूर रहे ।१३। कुख्यात व्यक्ति कपटी एवं हमारा हिंसक हैं, उसे उसका ही पाप व्याप्त करे ।१४। हे सुन्दर वास देने वाले, दोनों तरहके मनुष्यों को पूरी तरह जानने वाले हों ।१५। (२७)

आ शर्म पर्वतानामोतापां वृणीमहे । द्यावाक्षामारे अस्मद् रपस्कृतम् ।१६। ते नो भद्रेण शर्मणा युष्माकं नावा वसवः । अति विश्वानि दुरिता पिपर्तन ।१७। तुचे तनाय तत् सु नो द्राघीय आयुर्जीवसे । आदित्यासः सुमहसः कृणोतन ।१८। यज्ञो हीलो वो अन्तर आदित्या अस्ति मृलत । युष्मे इद् वो अपि ष्मसि सजात्ये ।१९। बृहद् वरूथं मरुतां देवं त्रातारमश्विना । मित्रमीमहे वरुणं स्वस्तये ।२०। अनेहो मित्रार्यमन् नृवद् वरुण शंस्यम् । त्रिवरूथं मरुतो यन्त नश्छर्दिः ।२१। ये चिद्धि मृत्युबन्धव आदित्या मनवः स्मसि । प्र सू न आयुर्जीवसे तिरेतन । २२।२८

हम पर्वत के तथा जलों के सुखों की इच्छा करते हैं । हे आकाश, पृथिवी ! तुम पापों को हमसे दूर भेज दो ।१६। हे वास देने वाले आदित्यो ! अपनी सुन्दर ओर सुख देने वाली नाव के द्वारा सभी पापों से पार लगाओ ।१७। हे आदित्यो ! तुम अत्यन्त तेजस्वी हो हमारी सन्तान को अधिकतम आयु प्रदान करो ।१८। हे आदित्यो ! हमारे कृत्य यज्ञ तुम्हारे पास हैं । तुम हमको सुखदो । तुम्हारी मित्रता पाकर हम सदैव तुम्हारे रहेंगे ।१९। हे मरुद्गण के पालन कर्त्ता इन्द्र अश्विनीकुमार, मित्र और वरुण ! हम तुमसे शीत ताप आदिके निवारक घर को अपने सुख के लिए माँगते हैं ।२०। हे मित्र, अर्यमा, वरुण, मरुद्गण ! तुम अहिंसि एवं स्तुत्य हो । शीत-ताप-वर्षा आदिका निवारक सन्तान युक्त 'घ' हमको प्रदान करो ।२१। हे आदित्यो! जो मनुष्य मृत्यु के निकट जाने वाले (अल्प आयु है) उनके जीवनके निमित्त आयु की वृद्धि करो ।२२। (२८)

सूक्त १९

(ऋषि–सौभरि: काण्व । देवता–अग्नि: आदित्य: । छन्द–उष्णिक, (पंक्ति, वृहती)

तं गूर्धया स्वर्णरं देवासो देवमरतिं दधन्विरे । देवत्रा हव्यमोहिरे ।१। विभूतरातिं विप्र चित्रशोचिषमग्निमीलिष्व यन्तुरम् । अस्य मेधस्य सोम्यस्य सोभरे प्रेमध्वराय पूर्व्यम् ।२। यजिष्ठं त्वा ववृमहे देवं देवत्रा होतारममर्त्यम् । अस्य यज्ञस्य सुक्रतुम् ।३। ऊर्जो नपातं सुभगं सुदीदितिमग्निं श्रेष्ठशोचिषम् । स नो मित्रस्य वरुणस्य सो अपामा सुम्नं यक्षते दिवि ।४। यः समिधा य आहुती यो वेदेन ददाश मर्तो अग्नये । यो नमसा स्वध्वरः ।५।२९

हे स्तोताओ ! अग्नि का स्तवन करो। वे स्वर्ग में हवि पहुँचाने वाले हैं । ऋत्विगण अपने स्वामी अग्नि की सेवा में पहुँच कर देवताओं के निमित्त पुरोडास आदि देते हैं ।१। हे विद्वानों ! उस अद्भुत तेज वाले दानी यज्ञके नियन्ता, सोर साध्य, प्राचीन अग्नि की यज्ञ के लिये स्तुति करो ।२१। हे अग्ने ! तुम याज्ञिकों में श्रेष्ठ देवताओं में अत्यन्त दानादि गुण से युक्त अविनाशी- होता एवं यज्ञकर्त्ता हो । हम तुम्हारा स्वत करते हैं ।३। मै अन्नदाता, सुन्दर धनदाता, अत्यन्त तेजस्वी एवं प्रकाशप्रद अग्नि का स्तवन करता हूँ । वे हमारे देवताओं के निमित्त किये जाने वाले यज्ञ में मित्र और वरुण के लिए यज्ञ करें ।४। जो साधक समिधादि से अग्नि की सेवा करता है, जो आहुतियों से अग्नि की सेवा करता है, जो वेदाध्ययन से अथवा सुन्दर यज्ञादि अनुष्ठानों से नमस्कार युक्त होकर अग्नि की सेवा करता है ।५।

तस्येदर्वन्तो रंहयन्त आशवस्तस्य द्युम्नितमं यशः । न तमंहो देवकृतं कुतश्चन न मर्त्यकृतं नशत् ।६। स्वग्नयो वो अग्निभिः स्याम सूनो सहस ऊर्जां पते । सुवीरस्त्वमस्मयुः ।७। प्रशंसमानो अतिथिर्न मित्रियोऽग्नी रथो न वेद्यः । त्वे क्षेमासो अपि

सन्ति साधवस्त्वं राजा रयीणाम् ।८। सो अद्धा दाश्वध्वरो ऽग्ने मर्तः सुभग स प्रशंस्यः । स धीभिरस्तु सनिता।९। यस्य त्वमूर्ध्वो अध्वराय तिष्ठसि क्षयद्वीरः स साधते । सा अर्वद्भिः सनिता स विपन्युभिः स शूरैः सनिता कृतम् ।१०।३०

उनके ही अश्वद्रुत गति वाले होते हैं। वह सबसे अधिक यशस्वी होता है और उसे दैहिक तथा दैहिक ताप नहीं व्यापते ।६। हे बल के पुत्र और अन्नादि के स्वामी ! तुम्हारे गार्हपत्यादि अग्नि-पूजों द्वारा सुन्दर अग्नि वाले होंगे । तुम सुन्दर वीरोंवाले होकर हमारे रक्षक बनो ।७। अतिथियों के समान प्रशक अग्निदेव स्तुति करने वालों के हित-साधक और रथ के समान फल देने वाले हैं। अग्निदेव ! तुम रक्षाओं से युत हो । तुम धनों के स्वामी हो ।८। हे अग्ने ! जो मनुष्य यज्ञ कर्मसे युक्त है, वह सत्य फलसे भी युक्त हो । वह स्तोत्रों द्वारा तुम्हारा सम्भजन करने वाला हो ।९। हे अग्ने ! जिस यजमान का यज्ञ कर्म करने को तुम उच्च स्थान में रहते हो, वह यजमान गृह से युक्त होकर तथा वीर सन्तान वाला होकर अपने सभी कामोंको साध लेता है । वह अश्वों द्वारा विजय प्राप्त करता और विगानों तथा वीरों से युक्त हुआ न्याय युक्त विवरणकर्ता होता है ।१०। (८०)

यस्याग्निर्वपुगृहे स्तोमं चनो दधीत विश्ववार्यः । हव्या वा वेविषद् विषः ।११। विप्रस्य वा स्तुवतः सहसो यहो मक्षूतमस्य रातिषु । अवोदेवमुपरिमर्त्यं कृधि वसो विविदुषो वचः ।१२। यो अग्निं हव्यदातिभिर्नमोभिर्वा सुदक्षमाविवासति । गिरा वाजिरशोचिषम् ।१३। समिधा यो निशिती दाशददितिं धामभिरस्य मर्त्यः । विश्वेत् स धीभिः सुभगो जनाँ अति द्युम्नैरुद्न इव तारिषत् ।१४। तदग्ने द्युम्नमा भर यत् सासहत् सदने कं चिदत्रिणम् । मन्युं जनस्य दूढ्यः ।१५।३१

वे अग्नि जिस यजमान के घर में स्तोत्र और अन्न ग्रहण करते हैं, उस यजमान की हवियाँ देवताओं को प्राप्त होती है ।११। हे अग्ने!

तुम बल के पुत्र तथा निवासप्रद हो। विद्वान स्तोता के दान में शीघ्र काअरी के वचनों को देवगण से नीचे रखे हुए भी मनुष्यों से ऊपर उठाओ ।१२। जो यजमान हविर्दान और नमस्कारोंसे सुन्दर तेज वाले अग्नि की पूजा करता है वह समृद्धिको प्राप्त होता है ।१३। जो मनुष्य इन अग्नि की समिधादि के द्वारा सेवा करता है वह अपने कर्मों से ही भाग्यशाली होकर सुन्दर यश के द्वारा सब मनुष्यों को जल के समान लांघता है ।१४। हे अग्ने! जो धन घरमें आसुरी वृत्ति को दबाता तथा पापी मनुष्य के क्रोध को भी दबाता है, वही धन लेकर आओ ।१५।
(११)

येन चष्ठे वरुणो मित्रो अर्यमा येन नासत्या भगः। वयं तत् ते शवसा गातुवित्तमा इन्द्रत्वोता विधेमहि ।१६। ते घेदग्ने स्वाध्यो ये त्वा विप्र निदधिरे नृचक्षसम्। विप्रासो देव सुक्रतुम् ।१७। त इद् वेदिं सुभग त आहुतिं ते सोतुं चक्रिरे दिवि। त इद् वाजेभिर्जिग्युर्महद् धनं ये त्वे कामं न्येरिरे ।१७। भद्रो नो अग्निराहुतो भद्रा रातिः सुभग भद्रो अध्वरः भद्रा उत प्रशस्तयः ।१९। भद्रं मनः कृणुष्व वृत्रतूर्ये येना समत्सु सासहः। अव स्थिरा तनुहि भूरि शर्धतां वनेमा ते अभिष्टिभिः।३०।३२

अग्नि के जिस तेजसे वरुण, मित्र और अर्यमा ज्योति देते हैं तथा जिस तेज से अश्विद्वय और भग देवता प्रकाश देते हैं, हे अग्ने ! हम इन्द्र के द्वारा प्राप्त करते हुए तथा बल के द्वारा अधिक स्तोता वाले होकर तुम्हारे उस तेज सेवा करतेहैं ।१६। हेविद्वान् एवं तेजस्वी अग्निदेव! जो मेधाजीवन मनुष्यों के साक्षिरूप तुम श्रेष्ठकर्म वाले को धारण करते हैं, वे श्रेष्ठ ध्यानी होते हैं ।१७। हे अग्ने ! जो यजमान तुम्हारे निमित्त वेदी बनाते हैं, आहुतियाँ देते हैं, सोम का अभिषव करते हैं, वे अपने ही बल से अभीष्ट धन पाते हैं ।१८। यह आहुति अग्नि के लिए सुखकर हों। हे अग्ने ! तुम्हारा दान हमारे लिए मङ्गलकारी हो। यह यज्ञ एवं स्तुतियाँ सभी कल्याण करने वाली हों।१९। रणक्षेत्र में मन कल्याण वाहक हो। मन के द्वारा ही हे अग्ने ! तुम युद्ध में शत्रुओं

को हराओ। शत्रुओं के बलको भी जीतलो। स्तोत्रों द्वारा हम तुम्हारी उपासना करें।२०। (३२)

ईलो गिरा मनुर्हितं यं देवा दूतमरतिं न्येरिरे। यजिष्ठं हव्यवाहनम्।२१। तिग्मजम्भाय तरुणाय राजते प्रयो गायस्यग्नये। यः पिंशते सूनृताभिः सुवीर्यमग्निर्घृतेभिराहुतः।२२। यदी घृतेभिराहुतो वाशीमग्निर्भरत उच्चाव च। असुर इव निर्णिजम्।।२३। यो हव्यान्यैरयता मनुर्हितो देव आसा सुगन्धिना। विवासते वार्याणि स्वध्वरो होता देवो अमर्त्यः।२४। यदग्ने मर्त्यस्त्वं स्यामहं मित्रमहो अमर्त्यः। सहसः सूनवाहुत।२५।३३

मैं प्रजापतिके द्वारा स्थापित अग्निपूजन करताहूँ। वे सबसे अधिक यज्ञ करने वाले हवि-वाहक एवं ईश्वर रूपहै और देवताओंने उन्हें दूत-रूप से भेजा है।२१। सतत, युवा सुशोभित तथा तीखी ज्वालाओं वाले अग्नि को लक्ष्यकर हव्यरूप का दान करो। प्रिय एवं सत्यवाणों द्वारा स्तुत्य किये हुए तथा घृत की आहुतियाँ ग्रहण करते हुए वे अग्नि स्तुति करने वाले को श्रेष्ठ वीर्य देते हैं।२। घृत द्वारा आहूत अग्नि जब ऊपर और नीचे शब्द करते हैं, तब महा पराक्रमी सर्य के समान अपने तेज को प्रकट करते हैं।२३। प्रजापति द्वारा स्थापित जो अग्नि अपने मुखमें ग्रहण कर देवों के निकट हव्य पहुँचाते हैं, वे सुन्दर यज्ञवान् देवाह्वाक, तेजस्वी और अविनाशी अग्नि धन प्रदान करते हैं।२४। हे अग्ने! तुम बल के पुत्र द्वारा आहूत एवं सुन्दर तेज वाले हों। मैं मरणधर्मा मनुष्य तुम्हारी उपासना करता हुआ तुम्हारे समान ही अमरत्व प्राप्त करूँ।२५। (३३)

न त्वा रासीयाभिशस्तये वसो न पापत्वाय सन्त्य। न मे स्तोतामतीवा न दुर्हितः स्यादग्ने न पापया।२६। पितुर्न पुत्रः सुभृतो दुरोण आ देवाँ एतु प्र णो हविः।२७। तवाहमग्न ऊतिभिर्नेदिष्ठाभिः सचेय जोषमा वसो। सदा देवस्य मर्त्यः।२८। तव

क्रत्वा सनेयं तव रातिभिरग्ने तव प्रशस्तिभिः । त्वामिदाहुः प्रमतिं वसो ममाऽग्ने हर्षस्व दातवे ।२९। प्र सो अग्ने तवोतिभिः सुवीराभिस्तिरते व जभर्मभिः । यस्य त्वं सख्यमावरः ।३०।३४

हे अग्ने ! मैं तुम्हें मिथ्या अपवाद के लिए तिरस्कृत नहीं करूँगा। मैं पाप के लिए तुम्हारा तिरस्कार नहीं करूँगा । मेरा स्तोता अनुचित शब्द द्वारा तुम्हारा तिरस्कार न करेगा । मेराशत्रु कुबुद्धि वाला न हो, वह पाप बुद्धि से मेरे लिए विघ्नकारक न बने ।१६। पुत्र द्वारा पिता के लिए प्रेरणा करने के समान पोषक अग्नि यज्ञ स्थानों में देवताओं के निमित्त हव्य प्रेरणा करते हैं ।२७। हे इन्द्र ! में यजमान निकटवती साधनों से तुम्हारी प्रसन्नता प्राप्त करू ं ।२८। हे अग्ने ! तुम्हारी सेवा करता हुआ ही में उपासना करू ंगा । हव्य और स्तुति के द्वारा तुम्हारी उपासना करू ंगा । तुम मेधावी हो । तुम मेरे रक्षक कहलाते हो । हे अग्ने ! दान के निमित्त हर्षित होओ ।२९। हे अग्ने ! तुम जिस यजमान की सखा बनाने हो वह तुम्हारी बल और अन्न से युक्त रक्षा के द्वारा प्रवृद्ध होता है ।३०।

तव द्रप्सो नीलवान् वाश ऋत्विय इन्धानः सिष्णवा ददे । त्वं महीनामुषसामसि प्रियः क्षयो वस्तुषु राजसि ।३१। तमागन्म सोभरयः सहस्रमुष्कं स्वभिष्टिमवसे । सम्राजं त्रासदस्यवम् ।३२। यस्य ते अग्ने अन्ये अग्नव उपक्षितो वया इव । विपो न द्युम्ना नि युवे जनानां तव क्षत्राणि वर्धयन् ।३३। यमादित्यासो अद्रुहः पारं नयथ मर्त्यम् । मघोनां विश्वेषां सुदानवः ।३४। यूयं राजानः कं चिच्चर्षणीसहः क्षयन्तं मानुषां अनु । वयं ते वो वरुण मित्रार्यमन् त्स्यामेहतस्य रथ्यः ।३५। अदान्मे पौरुकुत्स्यः पञ्चाशतं त्रसदस्युर्वधूनाम् । मंहिष्ठो अर्यः सत्पतिः ।३६। उत मे प्रयियोर्वयियोः सुवास्त्वा अधि तुग्वनि । तिसृणां सप्ततीनां श्यावः प्रणेता भुवद् वसुर्दियानां पतिः ।३७।३५

सोम द्वारा विविध शब्द करने वाले तेजस्वी अग्ने ! तुम्हारी

निमित्त सोम ग्रहण किया जाता है । तुम विशाल रूप वाली उषाओं के सखा हो । तुम रात्रि में चीजों को दिखाते हो ।३१। रक्षा के निमित्त हम अग्निको प्राप्त हुए । हैं । हे अग्ने! तुम अत्यन्त तेजस्वी, सुन्दर रूप वाले तथा "त्रसदस्यु" के द्वारा पूजित हो ।३२। हे अग्ने ! अन्य अग्नियां वृक्ष की शाखा के समान तुम्हारी शाखा रूप हैं । हे मनुष्यों ! मैं तुम्हारे को बढ़ाते हुए समान यश लाभ करूंगा ।३३। हे श्रेष्ठ दान वाले द्रोह रहित आदित्यों ! हवि वाले यजमानों में भी जिस किसी को तुम पार लगाना चाहते हो, वही उतम फल प्राप्त करता है ।३४। हे आदित्यो ! तुम शोभा सम्पन्न एवं शत्रुओं के पराजित करने वाले हो अतः मनुष्य के हिंसक शत्रुओं को हराओ । वरुण, मित्र और । अर्यमा इस यज्ञ में मुख्य होंगे ।३५। "पुरुकुत्य" के पुत्र 'त्रसदस्तु ने मुझे पचास बन्धु दिये, जो अत्यन्त दानी और स्तुति करने वालों के रक्षक हैं ।३६। सुन्दर वास वाली नदी के किनारे श्याम वर्ण वाले बैलों के स्वामी और श्रेष्ठ धन देने के योग्य २२० गायों के अधिपति "त्रसदस्यु' ने घर और वस्त्रादि प्रदान किये थे ।३७।   (३५)

सूक्त २०

(ऋषि–सोभरिः । काण्वः । देवता–मरुतः । छन्द–उष्णिक् पंक्तिः)

आ गन्ता मा रिषण्यत प्रस्थावानो माप स्थाता समन्यवः । स्थिरा चिन्नमयिष्णवः ।१। वीलपविभिर्मरुत ऋभुक्षण आ रुद्रासः सुदीतिभिः । इषा नो अद्या गता पुरुस्पृहो यज्ञमा सोभरीयवः ।२। वेद्मा हि रुद्रियाणां शुष्ममुग्रं मरुतां शिमीवताम् । विष्णोरषेस्य मीलहुषाम् ।३। वि द्वीपानि पापतन् तिष्ठद् दुच्छुनोभे युजन्त रोदसी । प्र धन्वान्यैरत शुभ्रखादग्रो यदेजथ स्वभानवः ।४। अच्युता चिद्द वो अज्मन्ना नानदति पर्वतासो वनस्पतिः । भूमिर्यामेषु रेजते ।५।३६।

हे मरुतो ! तुम गमनशील हो, हमको हिंसित न करना । हम त्याग कर अन्यत्र वास न करना । तुम समान तेज वाले होकर भीषण

पर्वतों को भी कम्पायमान करते हो ।१। हे रुद्र पुत्रों ! तुम शोभन आवास वाले, तेजस्वी हो। पहिये लगे डण्डों वाले रथ से आओ। तुम सभी के द्वारा कामना करने योग्य हो। मुझ सोभरि की ओर आने की करते हुए तुम हमारे यज्ञस्थान में अन्न के सहित आगमन करो ।२। कर्म में रत रहने वाले विष्णु और काम्य जलों को सींचने वाले इन्द्रपुत्र मरुतों के विकराल पराक्रमके हम ज्ञाता है ।३। हे मरुद्गण ! तुम तेज से युक्त और श्रेष्ठ और आयुधों से सम्पन्न हो। जब तुम कम्पन-कर्म करते हो तब सभी द्वीप च्युत हो जाते हैं। गमनशील जल प्रवाहमान होता है, आकाश-पृथिवी कम्पित होते हैं। और स्थावर पदार्थ विपत्ति को प्राप्त होते हैं ।४। हे मरुद्गण ! जब तुम रणके लिये प्रस्थान करते हो तब पतनशील मेंघ तथा वनस्पति आदि बारम्बार घोर शब्द करते हैं। भूमण्डल भी कम्पायमान हो जाता है ।५। (३६)

अमाय वो मरुतो यातवे द्यौर्जिहीत उत्तरा बृहत्। यत्रा नरो देदिशते तनूष्वा त्वक्षांसि बाह्वोजसः :६। वधामनु श्रियं नरो महि त्वेषा अमवन्तो वृषप्सवः। वहन्ते अह्रुतप्सवः ।७। गोभिर्वाणो अज्यते सोभरीणां रथे कोशे हिरण्यये। गोवन्धवः सुजातास इषे भुजे महान्तो नः स्परसे नु ।८। ति वो वृषदश्चयो वृष्णे शर्धाय मारुताय भरध्वम्। हव्या वृषप्रताव्णे ।९। वृषणश्वेन मरुतो वृषप्सुना रथेन वृषनाभिना। आ श्येनासो न पक्षिणो वृथा नरो हव्या नो वीतये गत ।१०।३७

हे मरुद्गण ! विस्तृत आकाश तुम्हारे बल के परिभ्रमण के निमित्त अन्तरिक्ष से पृथक् होकर ऊर्ध्वगामी हुआ। नेता एवं विकराल बल सम्पन्न मरुद्गण अपनी देह को उज्ज्वल बनाते हैं ।६। यह नेता मरुद्गण शक्तिशाली, कुटिलता-रहित, और सेचन-समर्थ हैं ।७। मरुद्गण की वीणा सोभरि आदि महर्षियों के शब्दों से स्वर्णित रथ के मध्य में आदिर्भत हो रही है। दे मरुद्गण सुन्दर जन्म वाले तथा गोमातृक

हैं । वे हमारी प्रीति अन्न और भोगो का प्रात कराने मे प्रयत्नशील हों ।८। हे अध्वर्युओं ! तुम सोम को वर्षा करने वाले हो, अतः तुम वर्षा प्रदान करने वाले मरुतों के बल के निमित्त हविरन्न लेकर आओ। तुम्हारे द्वारा प्राप्त बल से वे शीघ्र गमनशील और सेचन-समर्थ होते हैं ।९। वे मरुद्गण अभीष्टवर्षक वृष्टिकारक के रूह में, अश्वों के समान हमारी हवि के समीप आवें ।१०। (७)

समानमञ्ज्येषां वि भ्राजन्ते रुक्मासो अधि बाहुषु । दविद्युतत्यृष्टयः ।११। त उग्रासो वृषण उग्रबाहवो नकिष्टनूषु येतिरे। स्थिरा धन्वान्यायुधा रथेषु वो ऽनीकेष्वधि श्रियः ।१२। येषान सप्रथो नाम त्वेषं शश्वतामेकमिद् भुजे । वयो न पित्र्यं सहः ।१३। तान् वन्दस्व मरुतस्ताँ उप स्तुहि तेषां हि धुनीनाम् । अराणां न चरमस्तदेषां दाना मह्ना तदेषाम् ।१४। सुभगः स व उतिष्वास पूर्वासु मरुतो व्युष्टिषु । यो वा नूनमुतासति ।१५।३८

इन मरुद्गणों की वेश-भूषा एक सी ही है । उनके हृदय प्रवेश में दमकता हुआ सुवर्ण हार सुशोभित है । उनकी भुजाओंमें आयुध दमक रहे है ।११। वे मरुद्गण पराक्रमी है, उग्रकर्मा और वष है । उन्हें अपने देहोंकी रक्षाका यत्न नही करना पड़ता । हे मरुद्गण ! तुम्हारा रथ धनुष और आयुधों से सम्पन्न है और रणक्षेत्र में सभी सेनाओं के मुख पर तुम्हारी जीत के भाव ही लक्षित होते हैं ।१२। इन बहुसंख्यक मरुद्गण का नाम एक होकर भी, जैसे भोग के लिए पैतृक सम्पत्ति यथेष्ट होती है, वैसे ही यथेष्ट है । यह तेजस्वी, सर्वत्र ही जल के समान विस्तार यूक्त है ।१३। स्वामी के तुच्छ सेवक के समान हम कम्पन्न को उन्नत करने वाले मरुद्गण के तुच्छ सेवक हैं, उनका दान महिमावान हैं । इसलिए उनकी स्तुति करते हुए नमस्कार करो ।१४। हे मरुद्गण! तुम्हारा स्तोता पूर्वकाल में तुम्हारे द्वारा रक्षित हुआ था । तुम्हारी स्तुति करने पर तुम्हारा ही होता है ।१५। (७)

यस्य वा यूयं प्रति वाजिनो नर आ हव्या वीतये गथ। अभि ष द्युम्नैरुत वाजसातिभिः सुम्ना वो धूतयो नशत् ।१६। यथा रुद्रस्य सूनवो दिवो वशन्त्यसुरस्य वेधसः। युवानस्तथेदसत् ।१७। ये चार्हन्ति मरुतः सुदानवः स्मन्मीलहुषश्चरन्ति ये। अतश्चिदा न उप वस्यसा हृदा युवान आ ववृध्वम् ।१८। यून ऊ षु नविष्ठया वृष्णः पावकाँ अभि सोभरे गिरा। गाय गा इव चर्कृषत् ।१९। साहा ये सन्ति मुष्टिहेव हव्यो विश्वासु पृत्सु होतृषु। वृष्णश्चन्द्रान्न सुश्रवस्तमान् गिरा वन्दस्व मरुतो अह। ।२०।३६

हे मरुदगण ! तुम जिस हविसम्पन्न यजमानके पास हवि सेवनार्थ प्रस्थान करते हो,वह तुम्हारे तेजस्वी अन्न और उसके उपभोगसे प्राप्त सुख को सब ओर फैलता है ।१६। यह रुद्रपुत्र, बलकारक सदा तरुण रहते हैं। वे मरुद्गण जिस प्रकार अन्तरिक्ष से आकर हमको चाहने लगें, हमारा यह स्तोत्र उसी प्रकारका हो ।१७। जो हविदाता यजमान इन्हें हवि देतेहुए भेजतेहैं अथवा जो दानशील यजमान इनकी उपासना करते हैं, इन दोनों प्रकार के यजमानों के समान ही हम भी है। हे मरुतो! महान् धन देने वाले मनसे आते हुए हमको प्राप्त होओ ।१८। अत्यन्त वर्षाकारक, सदा युवा पवित्र करने वाले मरुतो की स्तव के समान ही स्तुति करो ।१९। वीरों द्वारा आहूत किये जाने पर मरुद्गण विजय करने वाले होतें हैं। वे आह्वान योग्य पहलवान के समान आनन्द देने वालें हैं। उन अत्यन्त सेचन समर्थ और तेजस्वी मरुद्गण की सुन्दर स्तोत्र द्वारा पूजा करो ।२०। (३६)

गावश्चिद् घा समन्यवः सजात्येन मरुतः सबन्धवः रिहते ककुभो मिथः ।२१। मर्तश्चिद् वो नृतवो रुक्मवक्षस उप भ्रातृत्वमायति। अधि नो गात मरुतः सदा हि व आपित्वमस्ति निध्रुवि ।२२। मरुतो मारुतस्य न आ भेषजस्य वहता सुदानवः। यूयं सखायः सप्तयः ।२३। याभिः सिन्धुमवथ याभिस्तूर्वथ

याभिर्दशस्यथा क्रिविम् । मयो नो भूतोतिभिर्मयोभुवः शिवाभिरसचद्विषः ।२४। यत् सिन्धो यदसिक्न्यां यत् समुद्रेषु मरुतः सुबर्हिषः । यत् पर्वतेषु भेषजम् ।२५। विश्वं पश्यन्तो बिभृथा तनूष्वा तेना नो अधि वोचत। क्षमा रपो मरुत आतुरस्य न इष्कर्ता विह्रुतं पुनः ।२६।४०

हे मरुद्गण ! तुम समान तेज वाले हो। समान जाति के कारण गौयें समान बन्धुत्व को प्राप्त सब ओर से चाटती हैं। ।२१। हे मरुद्गण ! तुम हृदय प्रदेश मैं दमकते हुए आभूषण धारण करते हो। हे मरुतो ! तुम नर्तनशील हो। मनुष्य भी तुम्हारे अखयभाव की कामना मरते हैं। इसलिए तुम हमारे प्रति आत्मीयता से कहने वाले होओ। सभी धारक यज्ञों में तुम्हारा बन्धुभाव सदा ही बना रहता है ।२२। हे मरुद्गण ! तुम मित्र रूप हो। तुम सुन्दर दानशील एवं गमनशील हो। तुम हमें अपनी सम्बन्धित औषधियाँ प्राप्त कराओ ।२३। हे मरुद्गण ! तुमने अपने जिस रक्षण सामर्थ्य द्वारा गौतमको कूप प्रदान किया जिस सामर्थ्यमें तुम यजमानके शत्रुओं को मारते हो तथा जिस सामर्थ्य से तुमने समुद्र की रक्षा की है, उसी सामर्थ्य से हे शत्रु रहित सुख उत्पन्न करने वाले मरुद् ण ! हमारे निमित्त सखोत्पादक होओ ।२४। मरुद्गण ! तुम शोभन यज्ञ वाल हो समुद्र, नदी, पर्वत आदि मैं तुम्हारी ही औषधि हैं । ५। हे मरुद्गण ! हमारी शरीर की चिकित्सा के लिए उपयुक्त औषधि को लाओ व्याधिग्रस्त अङ्ग को, जैसे भी रोग का शमन हो सके वैसे ही पूर्ण करो ।२६।   (४०)

सूक्त २१ [चौथा अनुवाक]

(ऋषि–सोभरिः काण्वः। देवता–इन्द्रः चित्रस्य दानस्तुतिः।
छन्द–उष्णिक् पंक्ति)

वयमु त्वामपूर्व्य स्थूरं न कच्चिद् भरन्तोऽवस्यवः। वाजे चित्रं हवामहे ।१। उप त्वा कर्मन्नूतये स नो युवोग्रश्चक्राम यो धृषत् । त्वामिद्ध्यवितारं ववृमहे सखाय इन्द्र सानसिम् ।२।

आ याहीम इन्दवो ऽश्वपते गोपत उर्वरापते । सोमं सोमपते पिव ।३। वयं हि त्वा बन्धुमन्तमबन्धवो विप्रास इन्द्र येमिम । या ते धामानि वृषभ तेभिरा गहि विश्वेभिः सोमपीतये ।४। सीदन्तस्ते वयो यथा गोश्रीते मधौ मदिरे विवक्षणे । अभि त्वामिन्द्र नोनुमः ।५।१

हे इन्द्र! तुम अदभुत हो । तुम विभिन्न पापोंके धारण करने वाले हो विद्वान् पुरुषों के समान हम भी तुम्हें रक्षा की कामना करते हुए सोम द्वारा पुष्ट करने के लिए आहूत करते हैं ।१। हे इन्द्र! तुम शत्रुओं के विजेता और विकराल तथा उग्रहो । तुम हमारे सामने होओ । हम अपने यज्ञों की रक्षा के लिए तुम्हारे आश्रय में आते हैं । हे इन्द्र ! तुम उपसनीय और हमारे मित्र हो । हम तुम्हारा वरण करते हैं ।२। हे इन्द्र ! तुम सोमके अधिपति हो,यहाँ आकर सोमपान करो । तुम गौओं के पालन कर्त्ता, उर्वर भूमि तथा अश्वों के भी स्वामी हो ।३। हे इन्द्र! तुम कामनाओं की वर्षा करने वाले हो । तुम अपनी शारीरिक शक्ति सहित आकर सोमपान करो । हम बन्ध रहित तुम बन्धुवान्से बन्धुत्व स्थापना करने के इच्छुक हैं ।४। हे इन्द्र ! स्वर्ग प्राप्ति के निमित्त रूप गव्य मिश्रित सोम में रहते हुए तुम्हारे सामने हम पक्षियों के समान मधुर शब्द से तुम्हारा ही स्तव करते हैं ।४। (१)

अच्छा च त्वैना नमसा वदामसि किं मुहुश्चिद् वि दीधयः । सन्ति कामासो हरिवो ददिष्ट्वं स्मो वयं सन्ति नो धियः ।६। नूत्ना इदिन्द्र ते वयमूती अभूस नहि नू ते अद्रिवः विद्मा पुरा परीणसः ।७। विद्मा सखित्वमुत शूर भोज्यमा ते ता वज्रिन्नीमहे । उतो समस्मिन्ना शिशीहि नो वसो वाजे सुशिप्र गोमति ।८। यो न इदमिदं पुरा प्र वस्य आनिनाय तमु वः स्तुषे । सखाय इन्द्रमूतये ।९। हर्यश्वं सत्पतिं चर्षणीसहं स हि ष्मा यो अमन्दत। आ तु नः स वयति गव्यमश्व्यं स्तोतृभ्यो मघवा शतम् ।१०।२

हे इन्द्र ! तुम चिन्तित न होओ, हम स्तोत्र द्वारा तुम्हारी

ही स्तुति करेंगे। हम पुत्र, पशु आदि की कामना करते हैं और तुम धनादि के देने वाले हो। अतः हे हर्यश्वान् इन्द्र ! हमारे सर्वश्रेष्ठ कर्म तुम्हारे लिये ही प्राप्त होते हैं।६। हे इन्द्र ! तुम्हारी रक्षा को पाकर हम सदा नवीन रहेंगे। हे वज्रिन् ! तुम सर्वव्याप्त हो, यह सभी हमने जाना है। पहले हम इस बात को नहीं जानते थे।७। हे इन्द्र ! हे वज्रिन! हम तुम्हारे सख्यभाव को जानते हुए उसकी कामना करते है। हम तुम्हारे धनको जानते हैं, इसलिए तुमसे धन माँगते हैं। तुम सुन्दर मुकुट धारण करने वाले और निवास दाता हो, अतः गवादि से सम्पन्न धनों को हमारे लिए उज्ज्वल करो।८। हे सखारूप ऋत्विजों और यजमानो ! प्राचीन काल में जो इन्द्र हमारे लिए सम्पूर्ण ऐश्वर्य को ले आये थे, रक्षा निमित्त मैं उन्हीं इन्द्र की स्तुति करता हूँ।९। जो मनुष्य हर्यश्वयुक्त देवताओं के स्वामी शत्रु को वश में करने वाले इन्द्रका स्तव करता है। वह तृप्त होता है। वे इन्द्र हम स्तोताओं के लिए सौ-सौ गौयें और अश्व लेकर आये थे।१०। (२)

त्वया ह स्विद् युजा वयं प्रति श्वसन्तं वृषभ ब्रुवीमहि। संस्थे जनस्य गोमतः।११। जयेम कारे पुरुहूत कारिणोऽभि तिष्ठेम दूढ्यः। नृभिर्वृत्रं हन्याम शूशुयाम चाऽवेरिन्द्र प्र णो धियः।१२। अभ्रातृव्यो अना त्वमनापिरिन्द्र जनुषा सनादसि। युधेदापित्वमिच्छसे।१३। नकी रेवन्तं सख्याय विन्दसे पीयन्ति ते सुराश्वः। यदा कृणोषि नदनुं समूहस्यादित् पितेव हूयसे।१४। मा ते अमाजुरो यथा मूरास इन्द्र सख्ये त्वावतः। नि षदाम सचा सुते।१५।३

हे इन्द्र ! तुम अभीष्ट फल देने वाले हो। गौओं से सम्पन्न शत्रुओं के साथ युद्ध में लगे हुए हम तुम्हारी सहायता पाकर अत्यन्त कुपित शत्रु को भी शान्त कर देंगे।११। हे इन्द्र ! तुम अनेकों द्वारा आहूत

किये जाते हो। हम पाप बुद्धि वाले हिंसक शत्रुओका रणक्षेत्र में पराजित करेंगे। मरुद्गण की सहायता पाकर हम वृत्र रूप शत्रुओं को मारते हुए वीर कर्म की वृद्धि करेंगे। हे इन्द्र ! हमारे सब कर्मो के रक्षक होओ ।१२। हे इन्द्र ! तुम उत्पन्न होते ही शत्रुओं से शून्य हो गये थे। तुम बहुत समय से बन्धु-रहित हो। हे इन्द्र ! तुम जिस संख्य भाव की कामना करते हो, उसे संग्राम से ही पाते हो ।१३। हे इन्द्र ! अयाज्ञिक मनुष्य सुरा पीकर उन्मुक्त हो जाते हैं और वे तुम्हारी हिंसा करने में प्रवृत्त होते हैं, इसलिए तुम अयाज्ञिकों को धन होने पर भी आश्रय नहीं देते। जब तुम्हें स्तुति करने वाला अपने पिता के समान मानता हुआ आहूत करता है तब तुम उसे अपना मानकर धन प्रदान करते हो ।१४। हे इन्द्र ! हम सोमका अभिषव करने से वंचित न हों। हम तुम्हारे जैसे देवता के बन्धुत्व से हीन न हो सकें। सोमका संस्कार होने पर हम एक साथ ही उपवेशन करेंगे ।१५।   (२)

मा ते गोदत्र निरराम राधस इन्द्र मा ते गृहामहि। दृलहा चिदर्य: प्र मृशाभ्या भर न ते दामान आदमे ।१६। इन्द्रो वा घेदियन्मघं सरस्वती वा सुभगा ददिर्वसू। त्वं वा चित्र दाशुषे ।१७। चित्र इद् राजा राजका इदन्यके यके सरस्वतीमनु ! पर्जन्य इव ततनद्धि वृष्टया सहस्रमयुता ददत् ।१८।४

हे इन्द्र ! तुम गौ प्रदान करने वाले हो। हम धन से हीन न हों। हम तुम्हारे है अतः अन्य किसी से धन न लें। हे स्वामिन् ! तुम्हारे दानको कोई बाधा नहीं दे सकता। अतः हमारे पास अपना स्थाई धन प्रेरित करो ।१६। हे चित्र नामक यजमान ! मुझ हवि देने वालेको यह दान क्या इन्द्र ने दिया है ? वह सुन्दर धन की स्वामिनी सरस्वती ने दिया है ? अथवा क्या तुमने ही प्रदान किया है ? ।१७। वर्षा के द्वारा मेंघ जैसे पृथिवी को पुष्ट करता है, वैसे ही राजा चित्र सरस्वती नदीके तटपर वास करने वालों को धन प्रदान करते हुए उन्हें सुखी करते हैं। ।१८।
(७)

सूक्त २२

(ऋषि—सौभरि, काण्वः । देवता—अश्विनौ । छन्द—बृहती, पंक्ति, अनुष्टुप् उष्णिक्, त्रिष्टुप)

ओ त्यमह्व आ रथमद्या दंसिष्ठमूतये । यमश्विना सुहवा रुद्रवर्तनी आ सूर्यायै तस्थथुः ।१। पूर्वापुषं सुहवं पुरुस्पृहं भुज्युं वाजेषु पूर्व्यम् । सचनावन्तं सुमतिभिः सोभरे विद्वेषसमनेहसम् ।२। इह त्या पुरुभूतमा देवा नमोभिरश्विना । अर्वाचीना स्ववसे करामहे गन्तारा दाशुषो गृहम् ।३। युवो रथस्य परि चक्रमीयत ईर्मान्यद् वामिषण्यति । अस्माँ अच्छा सुमतिर्वां शुभस्पती आ धेनुरिव धावतु ।४। रथो यो वां त्रिवन्धुरो हिरण्याभीशुरश्विना। परि द्यावापृथिवी भूषति श्रुतस्तेन नासत्या गतम् ।५।५

हे अश्विनीकुमारो! तुम स्तूयमान मार्गवाले और शोभन आह्वान वाले हो । तुम जिस रथ पर सूर्या का वरण करने को आरूढ़ हुए थे, उसी रथके निमित्त आह्वान करता हूँ ।१। हे सौभरि! यह प्राचीन रथ स्तुति करने वालों को पुष्ट करने वाला है,अतः अपनी मङ्गलमयी स्तुतियों से इस रथ की उन्नति करो। यह रथ पाप रहित, युद्ध क्षेत्रमें आगे चलने वाला, सबकी रक्षा करने वाला, बहुतों के द्वारा कामवा किया गया और सुन्दर आह्वान से सम्पन्न है ।२। हे शत्रु विजेता अश्विनीकुमारो ! तुम इस अविदाता यजमान के स्वामी हो । हम इस यह-कर्म में रक्षा प्राप्त करने के निमित्त नमस्कार करते हुए तुम्हें अपने सामने बुलावेंगे ।३। हे अश्विनीकुमारो ! तुम्हारे रथ का एक पहिया तुम्हारे साथ रहता हैं और एक पहिया स्वर्ग लोक तक पहुँचता है । तुम जलोंके स्वामी तथा सभी कार्योके प्रेरणा करने वाले हो । तुम्हारी कल्याणमयी सुबुद्धि हमको गौओंके समान प्राप्तहो ।४। हे अश्विनीकुमारो ! तुम्हारा रथ सुवर्ण की लगामों वाला ओर तीन प्रकार की गद्दी वाला है । तुम्हारा वह रथ आकाश-पृथिवी को अपने प्रकाश से सुशोभित करता है ।५।

दशस्यन्ता मनवे पूर्व्यं दिवि यवं वृकेण कर्षथः । ता वामद्य सुमतिभिः शुभस्पती अश्विना प्र स्तुवीमहि ।६। उप नो वाजिनीवसू यातमृतस्य पथिभिः । येभिस्तृक्षिं वृषणा त्रासदस्यवं महे क्षत्राय जिन्वथः ।७। अयं वामद्रिभिः सुतः सोमो नरा वृषण्वसू । आ यातं सोमपीतये पिबतं दाशुषो गृहे ।८। आ हि रुहतमश्विना रथे कोशे हिरण्यये वृषण्वसू । युञ्जाथां पीवरीरिषः ।९। याभिः पक्थमवथो याभिरध्रिगु याभिर्बभ्रुं विजोषसम् । ताभिर्नो मक्षू तूयमश्विना गतं भिषज्यतं यदातुरम् ।१०।६

हे अश्वनी कुमारो ! तुमने आकाश स्थित प्राचीन जल को मनु को दिया और हल से जौ की खेती की । तुम जलके पालन करने वालों की हम अपने सुन्दर स्तोत्र द्वारा पूजा करते है ।६। हे अश्विद्वय ! तुम अन्नवान् एवं धनवान् हो, तुम धन को प्रदान करने वाले हो । तुमने जिस मार्ग से आकर त्रसदस्यु के पुत्र तृक्षिको अपरमित धन प्रदान कर सन्तुष्ट किया था, उसी यज्ञ मार्ग से आगमन करो ।७। हे अश्विद्वय ! यह सोम पाषाणों द्वारा तुम्हारे निमित्त ही संस्कारित किया गया है । हे धन्न-सम्पन्न एवं वर्षणशील अश्विनीकुमारो ! इस हविदाता के गृहमें आकर सुमधुर सोम का पान करो ।८। हे वर्षणशील अश्विनीकुमारो ! तुम्हारा रथ स्वर्ण की लगामों से युक्त तथा आयुधों का कोष रूप है । तुम अपने उस रमण योग्य रथ पर आरूढ़ होओ ।९। हे अश्विद्वय ! तुमने जिस रक्षा साधनों से अध्रिगु नामक राजा को तथा पक्थ नामक राजा की सोम पीकर रक्षा की थी, तुम अपने उन्ही रक्षा साधनों द्वारा इस रोगी की चिकित्सा के लिए शीघ्र ही हमारे पास आगमन करो ।१०।

यदध्रिगावो अध्रिगू इदा चिदह्नो अश्विना हवामहे । वयं गीर्भिर्विपन्यवः ।११। ताभिरा यातं वृषणोप मे हवं विश्ववार्यम् । इषा मंहिष्ठा पुरुभूतमा नरा याभिः क्रिविं वावृधुस्ताभिरा गतम् ।१२। ताविदा चिदहानां तावश्विना वन्दमान उप ब्रुवे । ता ऊ

नमोभिरीमहे ।१३। ताविद् दोषा ता उषसि शुभस्पती ता यामन् रुद्रवर्तनी। मा नो मर्ताय रिपवे वासिनीवसू परो रुद्रवति ख्यतम् ।१४। आ सुग्म्याय सुग्म्यं प्राता रथेनाश्विना वा सक्षणी। हुवे पितेव सोभरी ।१५।७

हे अश्विद्वय ! **जैसे तुम रणक्षेत्र** में शत्रु-वध करने वाले कर्म में शीघ्रकारी हो, **वैसे ही हम अपने कर्म** में कुशल एवं शीघ्रकारी हैं। इस प्रातः स्तवनमें हम तुम्हें स्तोत्र द्वारा आहूत करते हैं।११। हे अश्विनी-कुमारो ! तुम विविध रूप वाले, वर्षणशील और सब देवताओं द्वारा वरण करने योग्य हो तथा हविकी कामना करने वाले, रणक्षेत्रमें धनों को जीतने वाले, अत्यन्त धन वाले हो। तुमने जिन रक्षा साधनोंसे कूप को बढ़ाया है, उन सब रक्षा साधनों सहित हमारे द्वारा आह्वान करने पर आगमन करो।१२। मैं उन अश्विनीकुमारोंसे स्तुति धनआदि माँगता हूँ। मैं इस प्रातः समय में उनकी नमस्कार पूर्वक स्तुति करता हूँ।१३। हम अश्विनीकुमारों को वर्षाकाल, दिन और रात्रि तीनों समय आहूत करते हैं। वे रण में स्तूयमान मार्ग वाले हैं तथा जलों को पुष्ट करते हैं। हे अश्विनीकुमारो ! तुम अन्न और धन वाले हो। हमको शत्रुओं के अधीन मतकर देना।१४। हे अश्विनीकुमारो ! मैं भी सौभरि ऋषि सुख पाने का अधिकारी हूँ। अपने पिता के समान मैं भी तुम्हें आहूत करता हूँ। तुम दोनों सेंचन-समर्थ हो। तुम अपने रथ पर आरूढ़ होकर प्रातः काल ही सुख को लेकर यहाँ आगमन करो।१५।

मनोजवसा वृषणा मदच्युता मक्षुंगमाभिरूतिभिः। आरात्ताच्चिद् भूतमस्मे अवसे पूर्वीभिः पुरुभोजसा।१६। आ नो अश्वावदश्विना वर्तिर्यासिष्ट मधुपातमा नरा। गोमद् दस्रा हिरण्यवत् ।१७। सुप्रावर्गं सुवीर्यं सुष्ठु वार्यमनाधृष्टं रक्षस्विना। अस्मिन्ना वामायाने वाजिनीवसू विश्वा वामानि धीमहि ।१८।८

हे अश्विद्वय ! तुम धन की वर्षा करने वाले शीघ्र गमन वाले,

अनेकों के रक्षक और शत्रुओं का नाश करने में समर्थ हो। इसलिए अपने द्रुतगामी रक्षा साधनों सहित हमारी रक्षा के लिए आगमन करो ।१६। हे अश्विनीकुमारो! तुम नेता, अत्यन्त सोम पीनेवाले तथा दर्शन के योग्य हो। तुम हमारे यज्ञमार्ग को गौ, अश्व, सुवर्ण आदि धनो से सम्पन्न करते हुए आगमन करो।१७। जिस धन का सुन्दर रूप सब के वरण करने योग्य है, जिसका बल और दान भी सुन्दर है तथा जिसे पराक्रमी पुरुष भी नहीं हरा सकते, हम ऐसे धन को धारण करते हैं। हे अश्विद्वय ! तुम अन्न धन वाले हो, तुम्हारे आने पर हम समस्त धनों को पा लेंगे।१८।

सूक्त २३

(ऋषि–विश्वमना वैयश्वः। देवता–अग्निः। छन्द–उष्णिक्)

ईलिष्वा हि प्रतीव्यं यजस्व जातवेदसम्। चरिष्णुधूममगृभीतशोचिषम्।१। दामानं विश्वचर्षणेऽग्निं विश्वमनो गिरा। उत स्तुषे विष्पर्धसो रथानाम्।२। येषामावाध ऋग्मिय इषः पृक्षश्च निग्रभे। उपविदा वह्निर्विन्दते वसु।३। उदस्य चोचिरस्थाद् दीदियुषो व्यजरम्। तपुर्जम्भस्य सुद्युतो गणश्रियः।४। उदु तिष्ठ स्वध्वर स्तवानो देव्या कृपा। अभिख्या भासा बृहता शुशुक्वनिः।५।६

जिस अग्नि का धूम सब ओर फैलता है, जिसकी ज्वाला को पकड़नेमें कोई समर्थ नहीं है वे अग्नि शत्रुओं के विरुद्ध जाने वाले हैं। उन्हीं जातवेदा की स्तुति और पूजा।१। हे विश्वमना ऋषि ! तुम सर्वार्थदर्शक हो। तुम इस यजमान के लिए रथादि प्रदान करने वाले अग्निदेव की स्तोत्रों द्वारा स्तुतिकरो।२। जिसके अन्न और मधुर सोमरस को शत्रुओं को बाधा देने वाली ऋचाओंके द्वारा ग्रहण करते हैं वे यजमान धन पातेहैं।३। वे अग्नि अत्यन्त तापप्रद, तेजस्वी सुन्दर दीप्ति वाले तथा दण्ड से युक्त हैं। वे अग्नि यजमानों के आश्रय में रहते हैं उनकी नवीन दीप्ति प्रकट होरही है।४। हे सुन्दर यज्ञ रूप अग्ने ! तुम

सुन्दर दीप्ति द्वारा देदीप्यमान हो, तुम अपनी चमकती हुई ज्वाला सहित उठों ।५।

(६)

अग्ने याहि सुशस्तिभिर्हव्या जुह्वान आनुषक् । यथा दूतो बभूथ हव्यवाहनः ।६। अग्नि वः पूर्व्यं हुवे होतारं चर्षणीनाम् । तमया वाचा गृणे तमु वः स्तुषे ।७। यज्ञेभिरद्भुतक्रतुं यं कृपा सूदयन्त इत् । मित्रं न जने सुधितमृतावनि ।८। ऋतावानमृतायवो यज्ञस्य साधनं गिरा । उपो एनं जुजुषुर्नमसस्पदे ।९। अच्छा नो अङ्गिरस्तमं यज्ञासो यन्तु संयतः । होता यो अस्ति विक्ष्वा यशस्तमः ।१०।१०

हे अग्ने ! तुम हवियों में वहन करने वाले दूत हो । अतः देवताओं को हव्य पहुँचानेके निमित्त सुन्दर स्तोत्र सहित गमन करो ।६। मैं यज्ञ सम्पादक प्राचीन अग्नि को आहूत करता हूँ । मैं सूक्त बन्धनों के द्वारा तुम्हारे निमित्त उन्हीं अग्निकी स्तुति करताहूँ ।७। अग्नि देवता अत्यन्त मेधावी और मित्ररूप हैं । उनके तृप्त होने पर यज्ञ के बल और उनकी कृपा से यजमान का अभीष्ट पूर्ण होता है ।८। हे यज्ञ में कामना वाली, तुम इस हवियों वाले यज्ञ में, यज्ञ के साधक रूप अग्नि की स्तोत्रों द्वारा पूजा करो ।९। यह अग्नि यज्ञ सम्पादक और अत्यन्त तेजस्वी है । हमारे यज्ञ उन्हीं आंगिरस अग्नि के सामने पहुँचे ।१०। (१०)

अग्ने तव त्ये अजरेन्धानासो बृहद् भाः । अश्वा इव वृषणस्तविषीयवः ।११। स त्वं न ऊर्जां पते रयिं रास्व सुवीर्यम् । प्राव नस्तोके तनये समत्स्वा ।१२। यद् वा उ विश्पतिः शितः सुप्रीतो मनुषो विशि । विश्वेदग्निः प्रति रक्षांसि सेधति ।१३। श्रुष्ट्यग्ने नवस्य मे स्तोमस्य वीर विश्पते । नि मायिनस्तपुषा रक्षसो दह ।१४। न तस्य मायया चन रिपुरीशीत मर्त्यः । यो अग्नये ददाश हव्यदातिभिः ।१५।११

हे अग्ने ! तुम जरा रहित हो, तुम्हारी रश्मियाँ अत्यन्त तेज

वाली तथा कामनाओं की वर्षा करने वाली हैं। वे अश्व के समान बल को उत्पन्न करतीहैं ।११। हे अग्ने तुम अन्नोंके स्वामी हो । तुम हमको सुन्दर बल से सम्पन्न धन प्रदान करो। रणके अवसर पर हमारे पुत्र-पौत्रादिके पास स्थित धनकी रक्षाकरो ।१२। जब वे तीक्ष्ण एवं मनुष्यों के रक्षक अग्नि अत्यन्त प्रसन्नता पूर्वक घर में निवास करते हैं, तब वे सब दैत्यों का नाशकर देते हैं ।१३। हे अग्ने ! तुम मनुष्योंके रक्षक हो, तुम हमारे स्तोत्र को श्रवण कर मायावी दैत्यों को अपने संतारक तेज से भस्म करो ।१४। जो हविदाता यजमान अग्नि के लिये हवि देता है, उसे मनुष्यों के शत्रु दैत्य अपनी माया से भी अपने आधीन नहीं कर सकते ।१५। (११)

व्यश्वस्त्वा वसुविदमुक्षण्युरप्रीणादृषिः । महो राये तमु त्वा समिधीमहि ।१६। उशना काव्यस्त्वा नि होतारमसादयत् । आयजिं त्वा मनवे जातवेदसम् ।१७। विश्वे हि त्वा सजोषसो देवासो दूतमक्रत ।श्रुष्टी देव प्रथमो यज्ञियो भुवः ।१८। इमं घा वीरो अमृतं दूतं कृण्वीत मर्त्यः । पावकं कृष्णवर्तनिं विहायसम् ।१९। तं हुवेम यतस्रुचः सभासं शुक्रशोचिषम् । विशामग्निमजरं प्रत्नमीड्यम् ।२०।१२

हे अग्ने ! व्यश्व ऋषि ने अपने धन की वर्षा करने वाला बनाने की कामना से तुम्हें प्रसन्न किया था। हे अग्ने ! तुम धन प्रदान करने वाले को हम भी महान् धनके निमित्त प्रदीप्त करते हैं ।१६। हे अग्ने ! उत्पन्न हुओं के ज्ञाता, कवि और यज्ञशील उशना ने तुम्हें होता रूप से मनु के गृह में स्थापित किया था ।१७। हे अग्ने ! तुम देवताओंमें प्रमुख हो। जब तुम्हें सब देवताओं ने अपना दूत बनाया था, तभीसे तुम यज्ञ के योग्य हो गये थे ।१८। यह अग्नि धूम्रमार्ग वाले अविनाशी तेजस्वी और पवित्र हैं। इन्हें वीर मनुष्यों ने दूत नियुक्त किया था ।१९। वे अग्नि मनुष्यों द्वारा स्तुति करने योग्य, तेजस्वी, उज्ज्वल वर्णवाले और सुन्दर दीप्त वाले हैं, उन्हीं जरा रहित अग्नि को हम आहूत करते हैं ।२०। (१२)

यो अस्मै हव्यदातिभिराहुतिं मर्तोऽविधत् । भूरि पोषं स धत्ते वीरवद् यशः ।२१। प्रथमं जातवेदसमग्निं यज्ञेषु पूर्व्यम् । प्रति स्रुगेति नमसा हविष्मती ।२२। आभिर्विधेमाग्नये ज्येष्ठाभिर्व्यश्ववत् । मंहिष्ठाभिर्मतिभिः शुक्रशोचिषे ।२३। नूनमर्च विहायसे स्तोमेभिः स्थूरयूपवत् । ऋषे वैयश्व दम्यायाग्नये ।२४। अतिथिं मानुषाणां सूनुं वनस्पतीनाम् । विप्रा अग्निमवसे प्रत्नमीलते ।२५।१३

जो यजमान अग्नि को हवि प्रदान करता है वह अत्यन्त पुष्टि, वीर सन्तान और अन्न आदि पाताहै ।२१। अग्नि उत्पन्न हुओंके ज्ञाता देवताओं में मुख्य और प्राचीन हैं हवि युक्त स्रुक, नमस्कार के सहित उनके पास पहुँचता है ।२२। हम उन पूज्य, उज्ज्वल, तेजस्वी और स्तुतियों द्वारा प्रवृद्ध अग्निकी सेवा करते हैं ।२३। हे ऋषि विश्वमना! तुम स्थूलयूप ऋषि के समान ही यजमान के घर में प्रकट हुए अग्निदेव की स्तोत्रों द्वारा पूजो ।२४। विद्वान् यजमान, वनस्पतियों द्वारा उत्पन्न, प्राचीन एवं मनुष्यों के अतिथि रूप अग्नि की रक्षा की कामना करते हुए स्तुति करते हैं ।२५। (१३)

महो विश्वाँ अभि षतो ऽभि हव्यानि मानुषा । अग्ने नि षत्सि नमसाधि बर्हिषि ।२५। वंस्वा नो वार्या पुरु वंस्व रायः पुरुस्पृहः । सुवीर्यस्य प्रजावतो यशस्वतः ।२७। त्वं वरो सुषाम्णे ऽग्ने जनाय चोदय । सदा वसो रातिं यविष्ठ शविष्ठ शश्वते ।२८। त्वं हि सुप्रतूरसि त्वं नो गोमतीरिषः । महो रायः सातिमग्ने अपा वृधि ।२९। अग्ने त्वं यशा अस्या मित्रावरुणा वह । ऋतावाना सम्राजा पूतदक्षसा ।३०।१४

हे अग्ने ! तुम सब स्तुति करने वालों के समक्ष कुशाके ऊपर प्रतिष्ठित होओ । हे स्तुति के पात्र ! तुम मनुष्यों द्वारा दी जाती हुई हवियों को ग्रहण करो ।२६। हे अग्ने ! वरण करने योग्य, बहुतों द्वारा कामना किया गया सुन्दर पुत्र-पौत्रादि से सम्पन्न और यश से सम्पन्न धन हमको प्रदान करो ।२७। हे अग्ने ! तुम तरुण, वरणीय एवं

निवास-प्रद हो । इन सुन्दर साम गायकों के लिए धन आदि की प्रेरणा करो ।२८। हे अग्ने ! तुम अत्यन्त दानी हो । पशुओं से सम्पन्न धन हमको प्रदान करो ।२६। हे अग्ने ! देवताओं में तुम अत्यन्त यशस्वी हो । जो मित्रावरुण अत्यन्त बली, सत्यनिष्ठ एवं प्रतिष्ठितहैं उन्हें हमारे इस यज्ञ कर्म में ले आओ ।३०।

(१४)

सूक्त २४

(ऋषि–विश्वमना वैयश्वः । देवता–इन्द्रः वरोः सौषाम्णस्य दान स्तुतिः । छन्द–उष्णिक् अनुष्टुप्)

सखाय आ शिषामहि ब्रह्मेन्द्राय वज्रिणे । स्तुष ऊ षु वो नृतमाय धृष्णवे ।१। शवसा ह्यसि श्रुतो वृत्रहत्येन वृत्रहा । मघैर्मघोनो अति शूर दाशसि ।२। स नः स्तवान आ भर रयिं चित्रश्रवस्तमम् । निरेके चिद् यो हरिवो वसुर्ददिः ।३। आ निरेकमुत प्रियमिन्द्र दर्षि जनानाम् धृषता धृष्णो स्तवमान आ भर ।४। न ते सव्यं न दक्षिणं हस्तं वरन्त आमुरः । न परिबाधो हरिवो गविष्टिषु ।५।१५।

हे सखा रूप ऋत्विजो ! इस स्तोत्र को इन्द्र के निमित्त करेंगे । वे इन्द्र शत्रुओंके घसीटने वाले एवं आयुधोंके स्वामी हैं । युद्ध में आने के लिए मैं उन्हीं इन्द्र की स्तुति करूँगा ।१। हे इन्द्र ! तुम वृत्र हनन के कारण ही वृत्रहन्ता कहलाते हो । तुम अपने पराक्रम के द्वारा ही विख्यात हुए हो । हे वीर ! तुम धनवान् पुरुषों को अपने ही धनसे अधिक धन प्रदान करते हो ।२। हे इन्द्र ! तुम अश्ववान् हो । हमारे द्वारा स्तुत होने पर तुम विभिन्न अन्नों से सम्पन्न धन हमें दो । तुम आने के समय ही शत्रुओं के धन को देने वाले होते हो ।३। हे इन्द्र ! हमारे निमित्त धन को प्रकट करो । तुम शत्रुओं के नाश करने वाले

होकर, उनका धन हमें प्रदान करो ।४। हे अश्ववान इन्द्र ! तुम गौओं को ढूंढते रहो, तब वीर पुरुष भी तुम्हारे दाँयें या बायें हाथ को नही रोक सकते । तुम बाधा-रहित हो, इसलिये वृत्र आदिभी तुम्हारे रोकने में समर्थ नहीं है ।५। (१५)

आ त्वा गोभिरिव व्रजं गीर्भिर्ऋणोम्यद्रिवः । आ स्मा कामं जरितुरा मनः पृण ।६। विश्वानि विश्वमनसो धिया नो वृत्रहन्तम । उग्र प्रणेतरधि षू वसो गहि ।७। वय ते अस्य वृत्रहन् विद्याम शूर नव्यसः । वसोः स्पार्हस्य पुरुहूत राधसः ।८। इन्द्र यथा ह्यस्ति ते ऽपरीतं नृतो शवः । अमृक्ता रातिः पुरुहूत दाशुषे ।९। आ वृषस्व महामह महे नृतम राधसे । दृलहश्चिद् दृह्य मघवन् मघत्तये ।१०।१६

हे वज्रिन् ! जैसे गौयें गोष्ठ को प्राप्त होती है, वैसे ही मैं तुम्हें स्तुतियों द्वारा प्राप्त होताहूं ।६। हे इन्द्र तुम उत्तमवास देने वाले, नेता, उग्र एवं वृत्रादिका नाश करने वालेहो । विश्वमना ऋषि जिन स्तोत्रों को करते हैं,उनके उन सब स्तोत्रोंमें तुम अभिमुख रहना ।७। हे बहुतों द्वारा आहूत, वृत्रहन् इन्द्र ! तुमसे सुख का साधन रूप, स्पृहरणीय एवं नवीन धन प्राप्त करेंगे ।८। हे इन्द्र ! शत्रु तुम्हारे बल को दबानें में समर्थ नहीं हैं । तुम बहुतों द्वारा आहूत और सबको नचाने वाले हो। तुम जिस हविदाता को प्रदान करते हो उसे कोई नष्ट नहीं कर सकता ।९। हे इन्द्र ! तुम नेताओं में उत्कृष्ठ और अत्यन्त पुज्य हो । तुम धन की प्राप्ति के लिए शत्रुओं के दृढ पुरो को ध्वस्व करो । अपने वृहद् उदर को महान् धन के निमित्त तृप्त करो ।१०।

नू अन्यत्रा चिदद्रिवस्त्वन्नो जग्मुराशसः । मघवञ्छग्धि तव तन्न ऊतिभिः ।११। नह्यङ्ग नृतो त्वदन्यं विन्दामि राधसे : राये द्युम्नाय शवसे च गिर्वणः ।१२। एन्दुमिन्द्राय सिञ्चत पिबाति सोम्यं मधु । प्र राधसा चोदयाते महित्वना ।१३। उपो हरीणां

पति दक्षं पृच्छन्तमव्रवम् । नूनं श्रुधि स्तुवतो अश्वयस्य ।१४। नह्यङ्ग पुरा चन जज्ञे वीरतरस्त्वत् । नकी राया नैवथा न भन्दना ।१५।'७

हे वज्रिन ! तुमसे पूर्व हमने अन्य देवताओं से याचनायें की थीं, अब तुम हमको धन प्रदान करते हुए रक्षक बनो ।११। हे स्तवनीय इन्द्र ! तुम सबको नचाने वाले हो । अन्न को प्रकट करने वाले बल तथा यशके निमित्त मैं के ल तुमको ही जानता हूँ, अन्य किसी को नहीं ।१२। इन्द्र तुम्हारे मधुर सोम का पान करे इसीलिए उन्हीं के निमित्त तुम सोम को सींचो । वह इन्द्र अपनी महिमा के द्वारा अन्न युक्त धन आदि को प्रेरित करते है ।१३। वे इन्द्र अपनी वृद्धि करने वाला बल दूसरे को प्रदान करते है, अतः मैं उन्ही अश्व स्वामी इन्द्र की स्तुति करू ँ। हे इन्द्र ! मुझ व्यश्व के पुत्र की स्तुति सुनो ।१४। हे इन्द्र ! प्राचीन काल में तुमसे अधिक बलशाली, धनवान्, आश्रयदाता और स्तुतियों से सम्पन्न अन्य कोई प्रकट नहीं हुआ ।१६।

एदु मध्वो मदिन्तरं सिञ्च वाध्वर्यो अन्धसः । एवा हि वीरः स्तवते सदावृधः ।१६। इन्द्र स्थातर्हरीणां नकिष्टे पूर्व्यस्तुतिम् । उदानंश शवसा न भन्दना ।१७। तं वो वाजानां पतिमहूमहि श्रवस्यवः । अप्रायुभिर्यज्ञोभिर्वावृधेन्यम् ।१८। एतो न्विन्द्रं स्तवाम सखायः स्तोम्यं नरम् । कृष्टीर्यो विश्वा अभ्यस्त्येक इत् ।१९। अगोरुधाय गविषे द्युक्षाय दस्म्यं वचः । घृतात् स्वादीयो मधुनश्च वोचत ।२०।१८

हे ऋत्विजो ! सोम रूप अन्नके हर्षकारी रस को इन्द्र के लिए ही सींचो । क्योंकि यह इन्द्र सदा बढ़ने वाले और वीरहै । सभी स्तोता

इनकी ही स्तुति करते हैं।१६। हे इन्द्र ! तुम हर्यश्वों के स्वामी हो। प्रथम तुम्हारे निमित्तकी गई स्तुतिको कोई भी धनी या बली उल्लंघन नही कर सकता है।१७। हम अन्न की कामना करते हुए, जिन यज्ञों में ऋत्विग्गण आलस्य नही करते उन्ही यज्ञों से, अन्नों के स्वामी इन्द्र का आह्वान करते हैं।१८। हे सखारूप ऋत्विजो ! तुम शीघ्र ही यहाँ आओ। हम स्तुति के योग्य इन्द्र का ही स्तव करेंगे क्योंकि वह अकेले ही शत्रु की सेनाको हरा देते हैं।१९। हे ऋत्विजो ! जो इन्द्र स्तुतियों की कामना करते हैं, जो स्तुतियों को रोकते नहीं, उन इन्द्र के प्रति घृत जैसे सुस्वादु मधुर वाणी का उच्चारण करो।२०।

यस्यामितानि बीर्या न राधः पर्येतवे। ज्योतिर्न विश्वमभ्यस्ति दक्षिणा।२१। स्तुहीन्द्रं व्यश्ववदनूर्मि वाजिनं यमम्। अर्यो गयं मंहमानं वि दाशुषे।२२। एवा नूनमुप स्तुहि वैयश्व दशमं नवम्। सुविद्वांसं चर्कृत्यं चरणीनाम्।२३। वेत्था हि निर्ऋतीनां वज्रहस्त परिवृजम्। अहरहः शुन्ध्युः परिपदामिव।२४। तदिन्द्राव आ भर येना दंसिष्ठ कृत्वने। द्विता कुत्साय शिश्नथो नि चोदय।२५।१६।

जो इन्द्र असीम कर्मा हैं, जिसके धन को शत्रु प्राप्त नहीं कर सकते जिनका दान ज्योति के समान सब स्तुति करने वालों में व्याप्त होता है। हे स्तोताओ ? उन्हीं अहिंस्य, बलवान इन्द्र की अश्व ऋषि के समान स्तुति करो। वे इन्द्र हवि देने वाले को विशाल गृह प्रदान करते हैं।२१-२२। हे विश्वमना ऋषि ! इन्द्र मनुष्य के दसवें प्राण हैं और नमस्कारों के योग्य मेधावी तथा अभिनव हैं, तुम उन्हीं इन्द्र की स्तुति करो।२३। हे वज्रिन ! जैसे सूर्य पक्षियों के उड़ने को नित्य

हो जानते हैं वैसे ही तुम निर्ऋतियों के गमन को जानते हो ।२८। हे इन्द्र ! तुम अतीव दर्शनीय हो, कुत्स ऋषि के लिये तुमने दो रक्षाओं शत्रुओं को मारा था, उन्हीं रक्षाओं को हमें प्रदान करो । इस कर्म में करने वाले यजमान को अपनी शरण प्रदान करो ।२५। (१६)

तमु त्वा नूनमीमहे नव्यं बंसिष्ठ सन्यसे । स त्वं नो विश्वा अभिमातीः सक्षणिः ।२६। य ऋक्षादंहसो मुचद् यो वार्यात् सप्त सिन्धुषु । वधर्दासस्य तुविनृम्ण नीनमः ।२७। यथा वरो सुषाम्णे सनिभ्य आवहो रयिम् । व्यश्वेभ्यः सुभगे वाजिनीवति ।२८। आ नार्यस्य दक्षिणा व्यश्वाँ एतु सोमिनः । स्थूरं च राधः शतवत् सहस्रवत् ।२९। यत् त्वा पृच्छादीजानः कुहया कुहयाकृते । एषो अपश्रितो वलो गोमतीमव तिष्ठति ।३०।२०

हे स्तुतियों के पात्र इन्द्र ! तुम दर्शन के योग्य हो । हम तुमसे धन माँगते हैं । तुम हमारे शत्रुओं की सेनाओं को हराने वालेहो ।२६। जो इन्द्र सात नदियों के किनारे निवास करने वाले यजमानों के पास धन प्रेरण करते हैं और जो निर्ऋति के बन्धन से छुड़ाते हैं, ऐसे हे इन्द्र ! तुम राक्षसों का संहार करने के लिए शस्त्र को झुकाओ ।२७। हे वरु ! प्राचीन काल में जैसे तुमने सुषमा राजा के लिए याचकों को धन प्रदान किया था, वैसे ही हम व्यश्वों को प्रदान करो। हे उषे ! तुम शोभन अन्न-धन से सम्पन्न हो अतः तुमभी धन प्रदान करो ।२८। इस राजावरु की दक्षिणा हम व्यश्त पुत्रो को प्राप्त हो । सौ सहस्र संख्यक धन हमारे पास आवे ।२९। हे उषे! अग्र-जिज्ञासु वरु कहाँ रहते हैं' ऐसा पुछते हैं । यदि तुमने इन आश्रय स्थान और शत्रुनाशक वरु राजा के सम्बन्ध में पूछे तो बताना कि वे गोमती तट पर बास करते हैं ।३०।

सूक्त २५

(ऋषि–विश्वमना वैयश्वः। देवता–मित्रावरुणौ, विश्वा देवाः।
छन्द—उष्णिक्)

ता वां विश्वस्य गोपा देवा देवेषु यज्ञिया। ऋतावाना यजसे पूतदक्षसा ।१। मित्रा तना न रथ्या वरुणो यश्च सुक्रतुः। सनात् सुजाता तनया धृतव्रता ।२। ता माता विश्ववेदसा ऽसुर्याय प्रमहसा। मही जजानादितिर्ऋतावरी ।३। महान्ता मित्रावरुणा देवावसुरा। ऋतावानावृतमा घोषतो बृहत् ।४। नपाता शवसो महः सुनू दक्षस्य सुक्रतू। सृप्रदानू इषो वास्त्वधि क्षितः ।५।२१

हे मित्रावरुण! तुम सब विश्व के पालक हो। तुम देवताओं में उपासना के योग्य हो। तुम हवि के लिये यजमान का आश्रय बनाओ। हे व्यश्व! तुम धनवान् एवं यज्ञवान् मित्रावरुण के लिए यजन करो।१। मित्रावरुण अदितिके पुत्रहैं। वे घृत धारण करने वाले, सुन्दर कर्म वाले शोभन, उत्पत्ति तथा धन और रथ वाले हैं।२। सत्य-निष्ठ एवं महिमामयी अदिति ने उन तेजस्वी एवं ऐश्वर्यवाली मित्रा-वरुण को राक्षसों का बल मिटाने के लिए ही प्रकट किया है।३। वे मित्रावरुण सत्य-सम्पन्न बली सम्राट एवं महान् है। वे शोभन यज्ञ को प्रकट करने वाले हैं।४। मित्रावरुण वेग से उत्पन्न, सुन्दर कर्म वाले प्रचुर धनदाता और बल के पौत्र रूप है। वे अन्न के स्थान में वास करते हैं।५।

सं या दानूनि येमथुर्दिव्याः पार्थिवीरिषः। नभस्वतीरा वां चरन्तु वृष्टयः।६। अधि या वृहतो दिवो ऽभि यूथेव पश्ययः। ऋतावाना सम्राजा नमसे हिता।७। ऋतावाना नि षेदतुः साम्राज्याय सुक्रतू। धृतव्रता क्षत्रिया क्षत्रमाशतुः ।८। अक्ष्ण-श्चिद् गातुवित्तरा ऽनुल्बणेन चक्षसा। नि चिन्मिषन्ता विनचिरा

नि चिक्यतुः ।६। उत नो देव्यदितिरुरुष्यता नासत्या । उरुष्यन्तु मरुतो वृद्धशवसः ।१०।२२

हे मित्रावरुण ! तुम द्यावापृथिवी पर धन और अन्न प्रदान करते हो । जल से सम्पन्न वृष्टि तुम्हारी आश्रित है ।६। हे मित्रावरुण ! तुम वृषभ द्वारा गौओं के देखने के समान ही प्रसन्न करने वाले, देवताओं को देखने वाले, सत्यनिष्ठ, सम्राट और हवियों के प्रति प्रेम करने वाले हो ।७। वे सुन्दर कर्म वाले मित्रावरुण साम्राज्य के निमित्त प्रतिष्ठित हों । वे व्रतधारी जल को व्याप्त करने वाले हों ।८। नेत्र की सृष्टि होने से पूर्व ही प्राणियों ने ज्ञाता, सबको प्रेरणा देने वाले मित्रावरुण तेज और बल से सुशोभित हुए । । अदिति अश्विनीकुमार और वेगवान् मरुद्गण हमारी रक्षा करने वाले हों ।१०।

ते नो नावमुरुष्यत दिवा नक्तं सुदानवः । अरिष्यन्तो नि पायुभिः सचेमहि ।११। अघ्नते विष्णवे वयमरिष्यन्तः सुदानवे । श्रुधि स्वयावन् त्सिन्धो पूर्वचित्तये ।१२। तद् वार्यं वृणीमहे वरिष्ठं गोपयत्यम् । मित्रो यत् यान्ति वरुणो यदर्यमा ।१३। उत नः सिन्धुरपां तन्मरुतस्तदश्विना । इन्द्रो विष्णुर्मीढ्वांसः सजोषसः ।१४। ते हि ष्मा वनुषो नरो ऽभिमातिं कयस्य चित् । तिग्मं न क्षोदः प्रतिघ्नन्ति भूर्णयः ।१५।२३

हे मरुद्गण ! तुम सुन्दर दान वाले हो, तुम्हारी कोई हिंसा नहीं कर सकता तुम रात दिन हमारी नाव की रक्षा करने वाले बनो । हम तुम्हारी रक्षा प्राप्त करके ही एकत्र होंगे ।११। हम सुन्दर दान वाले विष्णु की अहिंसित रहते हुए स्तुति करेंगे ।१२। वे विष्णु युद्ध कर्मों में कुशल है । हे विष्णो ! तुम स्तुति करने वालों को धन देते हो । जिस यजमानने यज्ञ प्रारम्भ किया है उसकी स्तुति की श्रवण करो ।१२। हम अपने को सबके रक्षा श्रेष्ठ और वरणीय धन के आश्रित करते हैं । इस धन के रक्षक मित्रावरुण और अर्यमा हैं ।२३। मरुद्गण हमारे धन की रक्षा करें, पर्जन्य हमारे धन की

रक्षा करे। अश्विनीकुमार, इन्द्र विष्णु और कामनाओ की वर्षा करने वाले सभी देवता हमारे धन के रक्षक हो ।२४। वे देवता पूजनीय, नेता और वेगवान् जल द्वारा वृक्ष को उखाड़ फेंकने के समान ही शत्रु को समूल उखाड़ फेंकने वाले हैं ।२५। (२६)

अयमेक इत्था पुरूरु चष्टे वि विश्पतिः ।
तस्य व्रतान्यनु वश्चरामसि ।१६
अनु पूर्वाण्योक्या साम्राज्यस्य सश्चिम ।
मित्रस्य व्रता वरुणस्य दीर्घश्रुत् ।१७
परि यो रश्मिना दिवो ऽन्तान् ममे पृथिव्याः ।
उभे आ पप्रौ रोदसी महित्वा ।१८
उदु ष्य शरणे दिवो ज्योतिरयंस्तु सूर्यः ।
अग्निर्न शुक्रः समिधान आहुतः ।१९
वचो दीर्घप्रसद्मनीशे वाजस्य गोमतः ।
ईशे हि पित्वोऽविषस्य दावने ।२०।२४

और मित्र वरुण में से मैं तुम्हारे निमित्त मित्र के व्रत को करता हूँ। वे मित्र देवता लोकों के अधिपति है और अपने तेज से सभी प्रधान द्रव्यों को देखते हैं ।१६। हम सम्राट् वरुण से गृह प्राप्त करेंगे। हम अत्यन्त विख्यात मित्र देवता के व्रत को करेंगे ।१७। जो मित्र देवता अपने तेज से सुवर्ण तथा विश्व के अन्न को प्रकट करते हैं वे इन दोनों को अपनी ही महिमा से पूर्ण करते हैं ।१८। वे मित्रावरुण सूर्यके स्थान में अपनी ज्योति को प्रकट करते हैं, फिर सबके द्वारा बुलाये जाकर अग्नि के समान दमकते हुए चलते हैं ।१९। हे स्तुति करने वालो ! मित्रावरुण विशाल गृह स्वामी हैं । तुम उन्हीं की स्तुति करो । पशुओं से सम्पन्न अन्न के स्वामी वरुण हैं, वे अत्यन्त पुष्टि देने वाले अन्न को प्रदान करने वाले हैं ।२०। (२४)

तत् सूर्यं रोदसी उभे दोषा वस्तोरुप ब्रुवे ।
भोजेष्वस्माँ अभ्युच्चरा सदा ।२१
ऋज्रमुक्षण्यायने रजतं हरयाणे ।
रथं युक्तमसनाम सुषामणि ।२२
ता मे अश्व्यानां हरीणां नितोशना ।
उतो नु कृत्व्यानां नृवाहसा ।२३
स्मदभीशू कशावन्ता विप्रा नविष्ठया मती ।
महो वाजिनावर्वन्ता सचासनम् ।२४।२५

मैं मित्रावरुण के तेज की स्तुति करताहूँ द्यावापृथिवी की भी दिन-रात स्तुति करता हूँ । हे वरुण! हमको अपने दानके समक्ष करो ।२१। उक्ष गोत्रीय सुषमा के पुत्र वरु राजा के द्वारा चाँदी के समान शुभ्रवर्ण वाले अश्वों से युक्त, सरलगामी रथ हमको प्राप्त हुआ था । वह रथ शत्रुओं की आयु और धनों का हरण करने में समर्थ है ।२२। शत्रुओं को बाधा देने वाले, हरे रङ्ग के अश्वों में से दो अश्व हमको वरु राजा के द्वारा शीघ्र दिए जाँय ।२३। सुन्दर लगामवाले केशोंसे युक्त, संतोषी, अभिनव स्तोत्र द्वारा स्तुति करते हुए शीघ्र गमनकारी दो अश्वों को मैं पाऊँ ।२४।

(२५)

सूक्त २६

(ऋषि—विश्वमना वैयश्वो वाङ्गिरसः । देवता—अश्विनी, वायुः ।
छन्द—उष्णिक्, गायत्री, अनुष्टुप्)

इवोरु षू रथं हुवे सधस्तुत्याय सूरिषु ।
अतूर्तदक्षा वृषणा वृषण्वसू ।१
युवं वरो सुषाम्णे महे तने नासत्वा ।
अवोभिर्याथो वृषणा वृषण्वसू ।२

ता वामद्य हवामहे हव्येभिर्वाजिनीवसू ।
पूर्वीरिष इषयन्तावति क्षपः ।३
आ वां वाहिष्ठो अश्विना रथो यातु श्रुतो नरा ।
उप स्तोमान् तुरस्य दर्शथः श्रिये ।४
जुहुराणा चिदश्विना ऽऽमन्येथां वृषण्वसू ।
युवं हि रुद्रा पर्षथो अति द्विषः ।५।२६

हे अश्विनीकुमारो ! तुम दोनों धनवान्, बलवान् और वर्षणशील हो । तुम्हारे बल को नष्ट करनेमें कोई समर्थ नहीं हैं । मैं तुम्हारे रथ को स्तुति करने वालों के मध्य मैं आहूत करता हूँ ।१। हें अश्विनी कुमारो ! तुम कामनाओं के देने वाले धनशाली एवं सत्यरूप हो । तुम जैसे राजा सुषमा को धन प्रदान करने के लिए आते थे, वैसे ही यहाँ अपने रक्षा-सहित आगमन करो । हे वरु ! तुम ऐसी याचना करो ।२। हे अन्न धन सम्पन्न अश्विनीकुमारो । प्रातःकाल होने पर हम तुमको हवि से आहूत करेंगे ।३। अश्विनीकुमारो ! सबसे अधिक वाहक तुम्हारा रथ यहाँ आवे । तुम स्तोता को अपना धन देने के लिए उसके स्तोत्रों को जानो ।४। हे अश्विद्वय ! तुम कामनाओं के देने वाले हो । तुम रुद्रहो । कुटिल कार्य करने वाले शत्रुओं को अपने सामने खड़ा समझो और बैरियों को व्यथित करो ।५। (२६)

दस्रा हि विश्वमानुषङ् मक्षूभिः परिदीयथः ।
धियंजिन्वा मधुवर्णा शुभस्पती ।६
उप नो यातमश्विना राया विश्वपुषा सह ।
मघवाना सुवीरावनपच्युता ।७
आ मे अस्य प्रतीव्यमिन्द्रनासत्या गतम् ।
देवा देवेभिरद्य सचनस्तमा ।८

वयं हि वां हवामह उक्षण्यन्तो व्यश्ववत् ।
सुमतिभिरुप विप्राविहा गतम् ।६
अश्विना स्वृषे स्तुहि कुवित् ते श्रवतो हवम् ।
नेदीयसः कूलयातः पणीरुत ।१०।२७

हे अश्विद्वय ! तुम हर्ष प्रदायक, क्रान्ति से सम्पन्न, सबके दर्शन योग्य और जलों के पोषक हो । तुम अपने शीघ्रगामी सुन्दर घोड़ों से इस यज्ञमें आओ ।६। हे अश्विनीकुमारो ! तुम वीर और अजेय हो। अतः संसार का भरण करने वाले धन के सहित हमारे यज्ञ में आगमन करो ।७। हे इन्द्र अश्विद्वय ! तुम सब देवताओं सहित मेरे इस यज्ञ में अत्यन्त सेवायें प्राप्त करने के लिए पधारो ।८। धन की प्राप्ति की कामना से व्यश्व के समान हम भी तुम्हें आहूत करते हैं । इसलिए यहाँ आगमन करो ।६। हे ऋषि ! तुम्हारे आह्वानों को सुनते हुए अश्विनीकुमार पास रहने वाले शत्रुओं और पणियों का हनन करें । इसलिए उन अश्विद्वय की स्तुति करो ।१०। (२७)

वैयश्वस्य श्रुतं नरोतो मे अस्य वेदथः ।
सजोषना वरुणो मित्रो अर्यमा ।११
युवादत्तस्य धिष्ण्या युवानीतस्य सूरिभिः ।
अहरहवृषणा मह्यं शिक्षतम् ।१२
यो वां यज्ञेभिरावृतो ऽधिवस्त्रा वधूरिव ।
सपर्यन्ता शुभे चक्राते अश्विना ।१३
यो वामुरुव्यचस्तमं चिकेतति नृपाय्यम् ।
वर्तिरश्विना परि यातमस्मयू ।१४
अस्मभ्यं सु वृषण्वसू यातं वर्तिर्नृपाय्यम् ।
विषुद्रुहेव यज्ञमूहथुर्गिरा ।१५।२८

हे नेताओ ! वैयश्व का स्तोत्र श्रवण करो । मेरे आह्वान को जानो । मित्रावरुण और अर्यमा सदा संयुक्त रहते हैं ।११। हे अश्वि-

द्वय ! तुम कामनाओंके देने वाले और स्तुतियोंके योग्य हो। तुम स्तोताओं के लिए लाकर जो कुछ देते हो, वह मुझे भी नित्यप्रति प्रदान करों।१२। वस्त्र से ढकी हुई वधू के समान जो यजमान यज्ञ से ढका रहता है, उस पर दृष्टि रखने वाले अश्विद्वय उसका कल्याण करते हैं, १३। हे अश्विनीकुमारो ! जो मनुष्य पीने के योग्य सोम रस को देना जानता है, उस यजमान के घर में सोम पीने की इच्छा से जाओ।१४। हे अश्विद्वय ! तुम धनवान और कामनाओं के देने वाले हो, तुम सोम पान के लिए हमारे यहाँ आगमन करो। स्तोत्र द्वारा यज्ञ को सम्पूर्ण करो।१५। (२८)

वाहिष्ठो वां हवानां स्तोमो दूतो हुवन्नरा।
युवाभ्यां भूत्वश्विना।१६
यदद्दो दिवो अर्णव इषो वा मदथो गृहे।
श्रुतमिन्मे अमर्त्या।१७
उत स्या श्वेतयावरी वाहिष्ठा वां नदीनाम्।
सिन्धुर्हिरण्यवर्तनिः।१८
स्मदेतया सुकीर्त्याऽश्विना श्वेतया धिया।
वहेथे शुभ्रयावाना।१९
युक्ष्वा हि त्वं रथासहा युवस्व पोष्या वसो।
आन्नो वायो मधु पिबाऽस्माकं सवना गहि।२०।२९

हे अश्विनीकुमारो ! स्तोत्र तुम्हारे पास पहुँच कर तुम्हें आहूत करें और हर्षित करे।१६। हे अश्विद्वय ! द्युलोक के नीचे वाले समुद्र में या अन्न की कामना वाले यजमान के घर यदि तुम हर्ष प्राप्त करना चाहो तो हमारी इस स्तुति को श्रवण करो।१७। हिरण्यमार्ग वाली श्वेतयावरी नाम्नी नदी स्तुतियों के द्वारा तुम्हारे पास पचयती हैं।१८। हे अश्विनीकुमारो ! तुम श्वेतवर्ण वाली, यशस्वी, पुष्टिदायनी श्वेतयावरी को बहने वाली करो।१९। हे वायो ! वाहक अश्वोंको रथ में संयुक्त करो। तुम वास देने वाले हो, पोषण करने योग्य अश्विद्वय

को रणक्षेत्र में ले आओ। फिर हमारे हर्ष प्रदायक सोमरस को पीने के लिए तीनों सवनः में आगमन करो।२०।   (२६)

तव वायवृतस्पते त्वष्टुर्जामातरद्भुत।
अवास्था वृणीमहे।२१।
त्वष्टुर्जामातरं वयमीशानं राय ईमहे।
सुतावन्तो वायुं द्युम्ना जनासः।२२
वायो याहि शिवा दिवो वहस्वा सु स्वश्व्यम्।
वहस्व महः पृथुपक्षसा रथे।२
त्वां हि सुप्सरस्तमं नृषदनेषु हूमहे।
ग्रावाणं नाश्वपृष्ठं मंहना।२४
स त्वं नो देव मनसा वायो मन्दानो अग्रियः।
कृधि वाजाँ अपो धियः।२५।३०

हे विचित्र कर्म वाले वायो! तुम यज्ञ के स्वामी और त्वष्टा के जमाता हो। हम तुम्हारी रक्षायें प्राप्त करें।२१। वायु सामर्थ्यवान् हैं, वे त्वष्टा के जमाता है। उनसे सोम को संस्कारित करने के पश्चात् धन की याचना करते हैं। उनके धन देनेसे हम धनवान् हो जायेंगे।२२। हे वायो! तुम महान् हो। अश्व से संयुक्त रण को चलाते हुए द्युलोक में कल्याण को ले जाओ। इन स्थूल पार्श्व वाले अश्वों को अपने रथ में संयुक्त करो।२३। हे वायो! तुम अत्यन्त रूपवान् हो। तुम्हारे सभी अङ्ग महिमा से सम्पन्न हैं। हम सोमाभिषव वाले पाषाण से युत हुए तुम्हें यज्ञों में आहूत करते हैं।२४। हे वायो! तुम देवताओं में प्रमुख हो। तुम हृदय से प्रसन्न होते हुए हमको अन्न और जलदो तथा कर्मों में प्रयुक्त करो।३५।
(३०)

सूक्त २७

(ऋषि–मनुर्वैवस्वतः। देवता–विश्वेदेवाः। छन्द-बृहती, पक्ति)

अग्निरुक्थे पुरोहितो ग्रावाणो बर्हिरध्वरे।
ऋचा यामि मरुतो ब्रह्मणस्पतिं देवाँ अवो वरेण्यम्।१

आ पशुं गासि पृथिवीं वनस्पतीनुषासा नक्तमोषधीः।
विश्वे च नो वसवो विश्ववेदसो धीनां भूत प्राविताारः।२
प्र सू न एत्वध्वरो ऽग्ना देवेषु पूर्व्यः।
आदित्येषु प्र वरुणे धृतव्रते मरुत्सु विश्वभानुषु।३
विश्वे हि ष्मा मनवे विश्ववेदसो भुवन् वृधे रिशादसः।
अरिष्टेभिः पायुभिर्विश्ववेदसो यन्ता नोऽवृकं छर्दिः।४
आ नो अद्य समनसो गन्ता विश्वे सजोषसः।
ऋचा गिरा मरुतो देव्यदिते सदने पस्त्ये महि।५।३१

इस स्तोत्र वाले यज्ञमें सोमाभिषवके निमित्त पाषाण तथा अग्रभाग में कुशा दिखाई गई है। मैं ब्रह्मणस्पति, मरुद्गण तथा अन्य सब देवताओं से स्तुति के द्वारा रक्षा माँगता हूँ।१। हे अग्ने ! हमारे यज्ञ में तुम पशु, वनस्पति और पृथिवी का सामीप्य प्राप्त करते हो और प्रातः काल तथा रात्रि में सोम का अभिषव हमारे कर्मों की रक्षा करें।२। अग्नि तथा अन्य देवताओं के पास प्राचीन यज्ञ उत्तमता से जाँय तथा मरुद्गण वृतधारी वरुण और आदित्योंके पास भी पहुँचे।३। विश्वेदेवा शत्रुओं का नाश करने वाले तथा बहुतसे धनों के स्वामी हैं। यह मनु की वृद्धि करने वाले हों। हे सबके जानने वाले देवताओ ! तुम हमारी रक्षा करते हुए बाधा-हीन घर दो। । हे विश्वेदेवाओ ! आज के इस यज्ञमें समान मन वाले होकर तथा परस्पर सुसङ्गत होते हुई ऋचा रूप वाणी के सहित हमारे पास आगमन करो। हे अदिति देवी और हे मरुद्गण ! तुम भी हमारे उस यज्ञ गृहमें विराजमान होओ।५। (३१)

अभि प्रिया मरुतो या वो अश्व्या हव्या मित्र प्रयाथन।
आ बर्हिरिन्द्रो वरुणस्तुरा नर आदित्यासः सदन्तु नः।६।
वयं वो वृक्तबर्हिषो हितप्रयस आनुषक्।
सुतसोमासो वरुण हवामहे मनुष्वदिद्धाग्नयः।७
आ प्र यात मरुतो विष्णो अश्विना पूषन् माकीनया धिया।
इन्द्र आ यातु प्रथमः सनिष्युभिर्वृषा यो वृत्रहा गृणे।८

वि नो देवासो अद्रुहो ऽच्छिद्रं शर्म यच्छत ।
न यद् दूराद् वसवो नू चिदन्तितो वरूथमादधर्षति ।९
अस्ति हि वः सजात्यं रिशादसो देवासो अस्त्याप्यम् ।
प्र णः पूर्वस्मै सुविताय वोचत मक्षू सुम्नाय नव्यसे ।१०।३२

हे मरुद्गण! तुम अपने प्रिय अश्वों सहित इस यज्ञमें आगमन करो, हे मित्र देवता ! इस हवि के निमित्त आओ। रणक्षेत्र में शत्रु-वध में शीघ्रता करने वाले आदित्यों और इन्द्रावरुण भी हमारे यज्ञ में आकर कुशाओं पर विराजमान हों।६। हे वरुण ! हम भी मनु के समान सोम को संस्कारित करके और अग्निको प्रदीप्त करते हुए हवि स्थापित कर तुम्हें आहूत करते हैं।७। हे मरुतो! विष्णो ! पूषा और अश्विनीकुमारों के सहित मेरी स्तुति सुनते ही यज्ञमें आओ। इन्द्र भी इन देवताओं के मध्य प्रथम आवें। इन्द्रकी कामना करने वाले स्तोता उन्हें वृत्रहन कहकर स्तुति करते हैं।८। हे देवताओं! मुझे बाधा रहित घरदो तुम्हारे दिये हुए वरणीय गृह कोई पास से या दूर से भी आकर नष्ट करने में समर्थ नहीं है।९। हे देवताओ ! तुम शत्रुओं का भक्षण करने में समर्थ हो। तुम बन्धु-भाव से पूर्ण हों। तुम हमारे अभ्युदयके लिए और अभिनव धन के लिए शीघ्र ही आज्ञा करो।१०।   (३२)

इदा हि व उपस्तुतिमिदा वामस्य भक्तये ।
उप वो विश्ववेदसो नमस्युराँ असृक्ष्यन्यामिव ।११
उदु ष्य वः सविता सुप्रणीतयो ऽस्थादूर्ध्वो वरेण्यः ।
नि द्विपादश्चतुष्पादो अर्थिनो ऽविश्रन् पतयिष्णवः ।१२
देवंदेवं वोऽवसे देवंदेवमभिष्टये ।
देवंदेवं हुवेम वाजसातये गृणन्तो देव्या धिया ।१३
देवासो हि ष्मा मनवे समन्यवो विश्वे साकं सरातयः ।
ते नो अद्य ते अपरं तुचे तु नो भवन्तु वरिवोविदः ।१४
प्र वः शंसाम्यद्रुहः संस्थ उपस्तुतीनाम् ।
न तं धूर्तिर्वरुण मित्र मर्त्यं यो वो धामभ्योऽविधत् ।१५

प्र स क्षयं तिरते वि महीरिषो यो वो वराय दाशति ।
प्र प्रजाभिर्जायते धर्मणस्पर्यरिष्टः सर्व एधते ।१६। ३

हे देवताओं ! तुम सब धनों के स्वामी हो । मैं तुमसे अन्न मांगता हूँ । जो कर्म अभी तक किसीने नहीं किया, वैसा कर्म तुम्हारे योग्य धन को पाने के लिए करता हूँ ।११। हे चारू स्तोत्र मरुद्गण ! तुम में से ऊपर को गमन करने वाले एवं कर्म प्रेरक सूर्य जब उदित होते हैं तब मनुष्य, पशुपक्षी आदि सभी कर्मों में प्रवृत्त हो जाते हैं ।२०। तुम में से महान देवता को हम अपनी स्तुतियों द्वारा कर्मकी रक्षा के लिए आहूत करते हैं । अभीष्ट प्राप्तिके लिए हम तेजस्वी देवताको आहूत करते हैं । हम अन्न प्राप्तिके लिए दिव्य देवताका आह्वान करते हैं ।१४। विश्वे· देवा मुझ मनुको धनादि देनेके लिए सकाम बुद्धि वाले होकर एक साथ प्रवृत्त हों । वे मुझे और मेरे पुत्र के लिए नित्यप्रति वरणीय धन प्रदान करने वाले हों ।१४। हे देवताओ ! स्तोत्र के आश्रित इस यज्ञ में मैं तुम्हारी अतीव स्तुति करता हूँ । हे मित्रावरुण ! जो व्यक्ति तुम्हारे निमित्त हवि रखता है,उसे शत्रुओके हिंसक कर्मबाधक नहीं होते ।१५। हे देवो ! जो यजमान तुम्हें धन को कामनासे हवि प्रदान करता है वह अपने गृह और अन्नका वृद्धि करने वाला होता । वह सन्तानों से संपन होता हुआ समृद्धिको प्राप्त करता है । उसे कोई हिंसत नहीं कर सकता ।१६। (३३)

ऋते स विन्दते युधः सुगेभिर्यात्यध्वनः ।
अर्यमा मित्रो वरुणः सरातयो यं त्रायन्ते सजोषसः ।१७
अज्रे चिदस्मै कृणुथा न्यञ्चनं दुर्गे चिदा सुसरणम् ।
एषा चिदस्मादशनिः परो नु सास्रेधन्ती वि नश्यतु ।१८
यदद्य सूर्य उद्यति प्रियक्षत्रा ऋतं दध ।
यन्निम्रुचि प्रबधि विश्ववेदसो यद् वा मध्यंदिने दिवः ।१९
यद् वाभिपित्वे असुरा ऋत यते छर्दिर्येम वि दाशुषे ।
वयं तद् वो वसवो विश्ववेदस उप स्थेयाम मध्य आ ।२०

यदद्य सूर उदिते यन्मध्यंदिन आतुचि ।
वामं धत्थ मनवे विश्ववेदसो जुह्वानाय प्रचेतसे ।२१
वयं तद् वः सम्राज आ वृणीमहे पुत्रो न बहुपाय्यम् ।
अश्याम तदादित्या जुह्वतो हविर्येन वस्योऽनशामहै ।२२।३४

वह पुरुष मित्र वरुण और अर्यमा द्वारा रक्षित होता हुआ युद्ध के बिनाही धन प्राप्त करता है तथा गमनशील सुन्दर अश्वोंके द्वारा मार्ग पर चला जाता है ।१७। हे देवताओ । न जानेयोग्य अथवा कठिनतासे जाने योग्य मार्ग को सुगम करो । यह आयुध हममें से किसी की हिंसा न करता हुआ स्वयं ही नाशको प्राप्तहो ।१८। हे देवताओ ! आज तुम सूर्योदय होने पर मङ्गलकय गृह को धारण करो। तुम सब धनों से सम्पन्न हो । अतः सायंकाल, प्रातःकाल, और मध्याह्न कालमें भी मनु के लिए सब धनों को धारण करो ।१६। हे देवो ! तुम्हारे लाभ की प्राप्ति के निमित्त हवि देने वाले यजमानों को तुम यदि घर देते हो तो हम उसी दिये गये कल्याणकारी घर में तुम्हारी उपासना करेंगे । हे देवो! तुम सब धनोंके स्वामी हो तुम सूर्योदय होने पर मध्याह्न काल में और सायंकाल में जो रमणीय धन मुझे हविदाता मेधावी मनु के निमित्त धारण करते हो, तुम्हारे पुत्रोंके समान हम उसी उपभोग्य धन को पावेंगे । हे आदित्यो ! हम यज्ञ करते हुए तुम्हारे उसी धनसे धनवान् हो जायेंगे ।२०-२२। (३८)

सूक्त २८

(ऋषि—मनुर्वैवस्वतः । देवता—विश्वेदेवाः । छन्द—गायत्री उष्णिक्)

ये त्रिंशति त्रयस्परो देवासो बर्हिरासदन् । विदन्नह द्वितासनन् ।१
वरुणो मित्रो अर्यमा स्मद्रातिषाचो अग्नयः ।
पत्नीवन्तो वषट्कृताः ।२
ते नो गोपा अपाच्यास्त उदक्त इत्था न्यक् ।
पुरस्तात् सर्वया विशा ।३
यथा वशन्ति देवास्तथेदसत् तदेषां नकिरा मिनत् ।
अरावा चन मर्त्यः ।४

सप्तानां सप्त ऋष्टयः सप्त द्युम्नान्येषाम्।
सप्तो अधि श्रियो धिरे ।५।३५

कुशाओ पर विराजमान तैंतीस देवता हमको जाने और बारम्बार धन प्रदान करें ।१। वरुण, मित्र, अर्यमा देव-पत्नियों सहित हविदाता यजमानों के विभिन्न वषट्कारसे आहूत किये गये ।२। हे वरुणादि देवताओं ! तुम अपने सभी अपने सभी गुणों सहित सब ओर से हमारी रक्षा करो ।३। देवताओं की जो इच्छा होती है, वही होता है उनकी इच्छाको कोई मिटा नहीं सकता। अदानशील भी बादमें यदि हविदाता बन जाये तो उसे भी कोई नष्ट नही कर सकता ।४। मरुद्गण के सात प्रकार के आयुध, सात आभरण और सात प्रकार के ही तेज हैं ।५।
(२५)

सूक्त २९

(ऋषि—मनुर्वैवस्वतः कश्यपो या मारीचः। देवता—विश्वेदेवाः। छन्द गायत्री)

बभ्रुरेको विषुणः सूनरो युवाञ्ज्यङ्क्ते हिरण्ययम् ।१
योनिमेक आ ससाद द्योतनो ऽन्तर्देवेषु मेधिरः ।२
वाशीमेको बिभर्ति हस्त आयसीमन्तर्देवेषु निध्रुविः ।३
वज्रमेको बिभर्ति हस्त आहितं तेन वृत्राणि जिघ्नते ।४
तिग्ममेको बिभर्ति हस्त आयुधं शुचिरुग्रो जलाषभेषजः ।५
पथ एकः पीपाय तस्करो यथाँ एष वेद निधीनाम् ।६
त्रीण्येक उरुगायो वि चक्रमे यत्र देवासो मदन्ति ।७
विभिर्द्वा चरत एकया सह प्र प्रवासेव वसतः ।८
सदो द्वा चक्राते उपमा दिवि सम्राजा सर्पिरासुती ।९
अर्चन्त एके महि साम मन्वत तेन सूर्यमरोचयन् ।१०।३६

रात्रियों नेता, वरुण सोम देवता हिरण्यमय प्रकाश को प्रकट करते हैं ।१। अग्नि देवता प्रदीप्त, सम्पन्न और ज्ञानी हैं वे अपने स्थान को प्राप्त होते हैं ।२। देवताओं के मध्यमें विराजमान त्वष्टा अपने हाथों में लौह निर्मित कुठार ग्रहण किये हैं ।३। हे इन्द्र अकेलाही बज्र धारण

करके वृत्रादिका संहार करते हैं ।४। पवित्र एवं सुखदाता एवं विकराल रुद्र अपने हाथों में तीक्ष्ण आयुध धारण करते हैं ।५। जैसे चोर सबके धनों को जानते हैं, वैसे ही पूषा सबके धनों के जानने वाले हैं, वे मार्ग के रक्षक हैं ।६। विष्णु ने तीन पैरों में त्रैलोक्य को नाप लिया। उनके इस कर्मसे देवता हर्षित हुए । वे अनेकों की स्तुतिके पात्र हैं ।७। अश्विद्वय सूर्या के साथ, प्रवासी के समान वास करते हैं, वे अश्वों द्वारा गमन करते हैं।८। मित्रावरुण घृत रूप हवि से सम्पन्न तथा अत्यन्त देदीप्यमान हैं। स्वर्ग का मार्ग बनाने वाले हैं। स्तुति करने वाले विद्वान साम-गानों द्वारा सूर्य को तीक्ष्ण बनाते हैं ।९-१०।

सूक्त ३०

(ऋषि–मनुर्वैवस्वतः देवता–विश्वेदेवाः । छन्द-गायत्री उष्णिक्, बृहती, अनुष्टुप्)

नहि वो अस्त्यर्भको देवासो न कुमारकः ।
विश्वे सतोमहान्त इत् ।१
इति स्तुतासो असथा रिशादसो ये स्थं त्रयश्च त्रिंशच्च ।
मनोर्देवा यज्ञियासः ।२
ते नस्त्राध्वं तेऽवत त उ नो अधि वोचत ।
मा नः पथः पित्र्यान्मानवादधि दूरं नैष्ट परावतः ।३
ये देवास इह स्थन विश्वे वैश्वानरा उत ।
अस्मभ्यं शर्म सप्रथो गवेऽश्वाय यच्छत ।४।३७

हे विश्वेदेवाओ ! तुममें कोई भी बालक नहीं है,तुम सभी महान् हो ।१। हे देवो ! तुम शत्रुओं के भक्षक और यज्ञार्ह हो तुम तेतीस देवताओं के रूप में स्तुत होते हो ।२। हे देवताओं ! राक्षसों से हमारी रक्षा करो । धन आदिके द्वारा हमारा पालन करो तुम हमसे अनुग्रह वाक्य कहो। मनुसे चले आते हुए सन्मार्ग से तथा दूर स्थित मार्गसे तुम हमको भ्रष्ट मत कर देना ।३। हे देवताओ ! यज्ञ से प्रकार अग्ने !

तुम यहाँ प्रतिष्ठित होकर हमको गौ, अश्व आदि धन का सुख दो ।२३। (३७)

सूक्त ३१ (पाँचवाँ अनुवाक)

(ऋषि—मनुर्वैवस्वतः । देवता—ईज्यास्तवा, यजमान प्रशंसा च दम्पती, षस्पत्योराशिषः । छन्द—गायत्री, अनुष्टुप्, पंक्ति)

यो यजाति यजात इत् सुनवच्च पचाति च । ब्रह्मेदिन्द्रस्य चाकनत् ।१। पुरोलाशं यो अस्मै सोमं ररत आशिरम् । पादित् तं शक्रो अंहसः ।२। तस्य द्युमाँ असद् रथो देवजूतः स शूशुवत् । विश्वा वन्वन्नमित्रिया ।३। अस्य प्रजावती गृहे ऽसंश्चन्ती दिवेदिवे । इला धेनुमती दुहे ।४। या दम्पती समनसा सुनुत आ च धावतः । देवासो नित्ययाशिरा ।५।३८

जो यजमान बारंबार यज्ञ करता हुआ सोमाभिषव तथा पुरोडाश पाक करता है और इन्द्र की स्तुति करनेकी बारम्बार इच्छा करता है, जो यजमान पुरोडास और गव्य मिश्रित सोम इन्द्र को देता है, इन्द्र उसकी पाप से रक्षा करते हैं ।१-२। देवताओं पार भेजा गया दमकता हुआ रथ उसी यजमान का होता है और वह शत्रुओं को बाधाओ को नष्ट करता हुआ ऐश्वर्यो सहित समृद्धिको प्राप्त करता है ।३। इस यजमान के घर में पुत्रादि से सम्पन्न अविनाशी धन प्रति दिन प्राप्त होता है ।४। हे देवगण ! पति पत्नी यजमान समान मनवाले होकर अभिषव करते और छन्ने से सोमको छानकर उसमें गव्यादि का मिश्रण करते हुए मधुर बनाते हैं ।५। (३८)

प्रति प्राशव्याँ इतः सम्यञ्चा बर्हिराशाते । न ता वाजेषु वायतः।६
न देवानामपि ह्नुतः सुमतिं न जुगुक्षतः । श्रवो बृहद् विवासतः।७
पुत्रिणा ता कुमारिणा विश्वमायुर्व्यश्नुतः । उभा हिरण्यपेशसा।८
वीतिहोत्रा कृतद्वसू दशस्यन्तामृताय कम् ।
समूधो रोमश हतो देवेषु कृणुतो दुवः ।९।
आ शर्म पर्वतानां वृणीमहे नदीनाम् ।
आ विष्णोः सचाभुवः ।१०।३९

वे उपभोग्य अन्न आदि पीते हैं। उन्हें अन्न के निमित्त किसी के पास नहीं जाना पड़ता ।६। वे दम्पत्ति देवताओं की उपेक्षा नहीं करते और महान् अन्न द्वारा ही तुम्हारी सेवा करते है ।७। पुत्रवान् होकर स्वर्णादि धन से सुसज्जित होते हुए पूर्ण आयु वाले होते हैं ।८। यज्ञकर्म वाले इन दम्पत्ति की स्तुतियाँ देवताओं की इच्छा करती हैं वे देवताओं को हवि रूप अन्न देते हैं। वे सन्तान लाभ के लिए रोमश और ऊधको संयुक्त करते हैं। वे देवताओं की उपासना करने वाले होते हैं ।९। हम देवताओं सहित विष्णु से सुख माँगते है। हम पर्वत और नदी से भी सुख की कामना करते हैं ।१०।

(३)

ऐतु पूषा रयिर्भगः स्वस्ति सर्वधातमः। उरुरध्वा स्वस्तये ।११
अरमतिरनर्वणो विश्वो देवस्य मनसा। आदित्यानामनेह इत्।१२
यथा नो मित्रो अर्यमा वरुणः सन्ति गोपाः सुगा ऋतस्य पन्थाः१३
अग्नि वः पूर्व्यं गिरा देवमीले वसूनाम्।
सपर्यन्तः पुरुप्रियं मित्रं न क्षेत्रसाधसम् ।१४
मक्षू देववतो रथः शूरो वा पृत्सु कासु चित्।
देवानां य इन्मनो यजमान इयक्षत्यभीदयज्वनो भुवत् ।१५
न यजमान रिष्यसि न सुन्वान न देवयो।
देवानां य इन्मनो यजमान इयक्षत्यभीदयज्वनो भुवत् ।१६
नकिष्टं कर्मणा नशन्न प्र योषन्न योषति।
देवानां य इन्मनो यजमान इयक्षत्यभीदयज्वनो भुवत् ।१७
असदत्र सुवीर्यमुत त्यदाश्वश्व्यम्।
देवानां य इन्मनो यजमान इयक्षत्यभीदयज्वमो भुवत् ।१८।४०

पूषा धन प्रदान करने वाले तथा सबके रोषक हैं, वह अपनी रक्षात्मक शक्तियों सहित आगमन करें और उनका विस्तृत भाग हमारे लिए कल्याणकारी हो ।११। पूषा की स्तुति करन वाले श्रद्धा सहित स्तुति करते हैं। पूषा किसी के भी वशमें न आने वाले है। आदित्यों का दान पाप से रहित होता हैं ।१२। जैसे मित्रावरुण और अर्यमा हमारी रक्षा

करते हैं वैसे ही यश के सभी मार्ग हमारे लिए सुगम हों ।३। हे देवताओं ! तुम से प्रमुख अग्नि देवता की मैं धन प्राप्ति के लिए स्तुति करता हूँ। तुम्हारे सेवक अनेकों के प्रिय होते हैं। वे मित्र के समान ही यज्ञ को सिद्ध करने वाले अग्नि का पूजन करते हैं।१४। जैसे वीर किसी सेना में प्रविष्ट होता है, वैसे ही देवोपासक मनुष्य का रथ दुर्गमें शीघ्र प्रविष्टहो जाता है। जो याज्ञिक देवताओं की पूजन-कामना करता है सह अयाज्ञिक को पराजित करता है।१५। हे यजमान! तुमसोमका अभिषव करने वाले हो,तुम हिंसित नहीं हो सकते। तुमदेवताओं की कामना करने वाले हो, इसलिए नाशको प्राप्त नहीं होगे। जो वजमान देवताओं की पूजा करता है, वह अयाज्ञिने को परास्त करने में समर्थ होता है।१६। देवयज्ञ करने वाले यजमानको कम द्वारा व्याप्त करनेमें समर्थ कोई नहीं होता वह स्थानच्युत नही हो सकता और पुत्रादि से भी दूर नहीं होता। जो यजमान देवताओं की स्तोत्र से पूजा करता है वह अयाज्ञिक को परास्त करने वाला होता है।१७। देवताओं के मन का यज्ञ करने का कामना वाला यजमान सुन्दर पुत्रवान् होता है। उसे अश्विादि से युक्त धन प्राप्त होता है। जो यजमान स्तुतियों के द्वारा देव पूजन की कामना करता है, वह अयाज्ञिकों को परास्त करने में समर्थ होता है।१८। (४०)

सूक्त ३२

(ऋषि—मेधातिथिः। काण्वः। देवता—इन्द्रः।—गायत्री)

प्र कृतान्युजीषिणः कण्वा इन्द्रस्य गाथया। मदे सोमस्य वोचत।१
यः सृबिन्दमनर्शनिं पिप्रुं दासमहीशुवम्। वधीदुग्रो रिणन्नपः।२
न्यर्बुदस्य विष्टपं वर्ष्माणं बृहतस्तिर। कृषे तदिन्द्र पौंस्यम्।३
प्रति श्रुताय वो धृषत् तूर्णाशं न गिरेरधि। हुवे सुशिप्रमूतये।४
स गोरश्वस्य वि व्रजं मन्दानः सोम्येभ्यः। पुरं न शूर दर्षसि।५।१

हे कण्व गोत्र वाले ऋषियों! इन्द्र के यश कीर्तन पर जब इन्द्र शक्ति से भर जाय तब तुम उनके सब कर्मों का बखान करो।१।

जल को प्रेरित करने वाले पराक्रमी इन्द्र ने अनर्शनि, विप्र, सृविन्द, दास और अहीशुवका संहार किया ।२। हे इन्द्र ? वृत्र का छेदन करो । इस वीर कर्म में तत्पर होओ ।३। हे स्तुति करने वाली ? मेघ से जल की याचना करने के समान ही शत्रुओं का नाश करने वाले इन्द्र से तुम्हारी रक्षा की प्रार्थना करता हूँ ।४। हे वीर इन्द्र? जब तुम प्रसन्न होते हो तब जैसे तुमने शत्रु-पुरों के द्वार खोले थे वैसे ही स्तुति करने वालों के लिए गौ अश्वादि के स्थान का द्वार खोल देते हो ।५।१।

यदि मे रारणः सुत उक्थे वा दधसे चनः । आराद्रुप स्वधा गहि ।६। वय घा ते अपि ष्मसि स्तोतार इन्द्र गिर्वणः । त्वं नो जिन्व सोमपाः ।७। उत नः पितुमा भर संरराणो अविक्षितम् । मघवन् भूरि ते वसु ।८। उत नो गोमतस्कृधि हिरण्यवतो अश्विनः । इलाभिः सं रभेमहि ।९। बृवदुक्थं हवामहे सुप्रकरस्त्र-मूतये । साधु कृण्वन्तमवसे ।१०।२

हे इन्द्र ? मेरे अभिषुत सोम और स्तोत्र की कामना करते हो तो मुझे अन्न देने के लिए दूर देश से भी अन्न के सहित यहाँ आगमन करो ।६। हे इन्द्र हे सोमपाये ? हम तुम्हारी स्तुति करने वाले हैं, तुम हमको हर्षित करते हो ।७। हे इन्द्र ? हमपर प्रसन्न होओ । क्षीण न होने वाला अन्न हमको प्रदान करों, क्योंकि तुम अपरिमित धन वाले हो । हे इन्द्र ! हम अन्नसे संपन्न हों । हमें गो, अश्व और सुवर्ण आदि धनों से भी संपन्न करो ।७।९। इन्द्र अपनी भुजाओं को जगत् की रक्षा के लिए फैलाते हैं और पोषण के लिये हितकर कार्यों को करते हैं । हम उन्हीं उक्थ वाले इन्द्र को आहूत करते हैं ।११। (२)

यः संस्थे चिच्छतक्रतुरादीं कृणोति वृत्रहा । जरितुभ्यः पुरूवसुः ।११। सः नः शक्रश्चिदा शकद् दानवाँ अन्तराभरः । इन्द्रो विश्वाभिरूतिभिः ।१२। यो रायोवनिर्महान् त्सुपारः सखा । तमिन्द्रमभि गायत ।१३। आयन्तारं महि स्थिरं पृतनासु श्रवोजितम् । भूरेरीशानमोजसा ।१४। नकिरस्य शचीनां नियन्ता सूनृतानाम् । नकिर्वक्ता न दादिति ।१५।३

रणक्षेत्र में बहुकर्मा हुए इन्द्र शत्रुओं का संहार करते हैं, वृत्रहन्द इन्द्र ही स्तुत करने वालों के धनों के ईश्वर हैं ।११। इन्द्र दानशील हैं वे अपने रक्षण सामर्थ्यों द्वारा हमारे छिद्रों को भरते हैं । वे इन्द्र हम को शक्तिशाली बनावें ।१२। जो इन्द्र सोमाभिषव करने वालों के मित्र हैं, जो सुन्दरता पूर्वक पार लगाने वाले तथा धनों के रक्षक हैं, उन्हीं इन्द्र की प्रार्थना करो ।१३। जो इन्द्र रणक्षेत्र में विचलित नहीं होते, जो अन्नो को जीतने वाले हैं, वह इन्द्र अपरिमित धनों के स्वामी हैं ।१४। इन्द्र को कोई अदाता नहीं कहता और उनके सुन्दर कार्यों को कोई रोक नहीं सकता ।१५।

न नूनं ब्रह्मणामृणं प्राशूनामस्ति सुन्वताम् । न सोमो अप्रता पपे ।१६। पन्य इदुप गायत पन्य उक्थानि शंसत । ब्रह्मा कृणोत पन्य इत् ।१७। पन्य आ दर्दिरच्छता सहस्रा वाज्यवृतः । इन्द्रो यो यज्वनो वृधः ।१८। वि षू चर स्वधा अनु कृष्टीनामन्वाहुवः । इन्द्र पिब सुतानाम् ।१९। पिब स्वधैनवानामुत यस्तुग्र्ये सचा । उतायमिन्द्र यस्तव ।२०।४

सोम का अभिषव करने वाले और सोम पान करने वाले ब्राह्मण देवऋण से युक्त नहीं हैं, जिसके पास असीमित दिव्य धन है,वही सोम पीने में समर्थ होता है ।१६। स्तुतियों के योग्य इन्द्रके लिए स्तुतिगाओ उनके लिए ही स्तोत्र उच्चारण करो और उन्हीं इन्द्र के लिए स्तोत्रों की रचना करो ।१७। पराक्रमी इन्द्र ने सहस्र शत्रुओं को मार डाला । शत्रु उन्हें आच्छादित नही कर सकते । वे यज्ञ करने वाले यजमान की वृद्धि करते हैं ।१८। इन्द्र आह्वान के पात्र हैं । हे इन्द्र ! तुम मनुष्यों की हवियों के पास घूमो और सुसंस्कारित सोम का पान करो ।१९। हे इन्द्र ! जल से मिश्रित तथा गाय के परिवर्तन से क्रय किये गये इस सोम को पीओ ।२०। (६)

अतीहि मन्युषाविणं सुषुवांसमुपारणे । इमं रातं सुतं पिब ।२१। इहि तिस्रः परावत इहि पञ्च जनाँ अति । धेना इन्द्रावचाकशत् ।२२। सूर्यो रश्मिं यथा सृजा ऽऽत्वा यच्छन्तु मे गिरः । निम्नमापो न सध्र्यक् ।२३। अध्वर्यवा तु हि षिञ्च सोमं वीराय

शिप्रिणे । भग सुतस्य पीतये ।२४। य उद्नः फलिग भिनन्न्यक् सिन्धूंरवासृजत् । यो गोषु पक्वं धारयत् ।२५।५

हे इन्द्र ! जो अनुपयुक्त स्थान में अथवा क्रोधपूर्ण मुद्रा में सोमका अभिषव करे उसे लांघते हुए हमारे द्वारा अभिषुत इस सोम का पान करो ।२१। हे इन्द्र ! तुम दूर से हमारे पास आगे, पीछे या बगल में आगमन करो । तुमने हमारे स्तोत्र को समझ लिया है अतः पितरों, गन्धर्वों, देवताओ और राक्षसों को भी लाँघ कर यहाँ आओ ।२२। हे इन्द्र ! जैसे सूर्य रश्मियों को प्रदान करते हैं, वैसे ही तुम हमको धन प्रदान करो । जैसे जल नीची भूमि में प्राप्त होता है, वैसेही मेरे स्तोत्र तुम्हें प्राप्त हों ।२३। हे अध्वर्यो ! तुम इस सुन्दर जबड़े वाले इन्द्र के लिए सोम-पान के निमित्त सुन्दरता से आहूत करो ।२४। जिन इन्द्र ने जल के लिए मेघको विदीर्ण किया, जिन्होंने अन्तरिक्षसे जलको पृथिवी पर प्रेरित किया और जिन्होने गौओंमें सुमधुर दूध भरा, इन सब कर्मों के कर्ता इन्द्र ही हैं ।२५   (२५)

अहन् वृत्रमृचींषम औंर्णवाभमहीशुवम् । हिमेनाविध्यदर्बुदम् ।२६। प्र व उग्राय निष्टुरे ऽषालहाय प्रसक्षिणे । देवत्तं ब्रह्म गायत ।२७। यो विश्वान्यभि व्रता सोमस्य मदे अन्धसः । इन्द्रो देवेषु चेतति ।२८। इह त्या सधमाद्या हरी हिरण्यकेश्या । वोल्हामभि प्रयो हितम् ।२९। अर्वाञ्चं त्वा पुरुष्टुत प्रियमेधस्तुता हरी । सोमपेयाय वक्षतः ।३०।६

इन्द्र ने और्णनाभ, अहीशुव और वृत्र का संहार किया और तुषारजल के द्वारा मेघ को विदीर्ण कर डाला ।२६। हे सामगाय को ! जो इन्द्र पराक्रमी, कठोर शत्रुओं को हराने वाले हैं उन इन्द्र के निमित्त देवताओं प्रसन्न करके प्राप्त किये सुन्दर स्तोत्रों का गमन करो ।२७ सोम का हर्ष उत्पन्न होने पर इन्द्र सब देवताओं को अपने सब कर्मों की सुचना देते हैं ।२८। समान शक्ति वाले, स्वर्णिम केश वाले पर्यश्च इस सोम यागमें इन्द्र को हमारे अन्नके सामने लावें ।२९। इन्द्र अनेकों

द्वारा स्तुत हैं, अश्विनीकुमार प्रियमेध के द्वारा स्तुत हैं, वे हमारे सोम को पीने के लिए सामने आवें ।३०। (६)

सूक्त ३३

(ऋषि—मेधातिथिः काण्वः । देवता—इन्द्रः । छन्द—बृहती, गायत्री, अनुष्टुप्)

वयं घ त्वा सुतावन्त आपो न वृक्तबर्हिषः ।
पवित्रस्य प्रस्रवणेषु वृत्रहन् परि स्तोतार आसते ।१
स्वरन्ति त्वा सुते नरो वसो निरेक उक्थिनः ।
कदा सुतं तृषाण ओक आ गम इन्द्र स्वब्दीव वंसगः ।२
कण्वेभिर्धृष्णवा धृषद् वाजं दर्षि सहस्रिणम् ।
पिशङ्गरूपं मघवन् विचर्षणे मक्षू गोमन्तमीमहे ।३
पाहि गायान्धसो मद इन्द्राय मेध्यातिथे ।
यः सँमिश्लो हर्योर्यः सुते सचा वज्री रथो हिरण्ययः ।४
यः सुषव्यः सुदक्षिण इनो यः सुक्रतुर्गृणे ।
य आकरः सहस्रा यः शतामघ इन्द्रो यः पूर्भिदारितः ।५।७

हे वृत्रहन् ! सोमको संस्कारित किया है । उसके सम्पन्न होने पर कुशायें बिछाते हुए स्तोतागण, जल के समान तुम्हारे समक्ष जाते हुए तुम्हें पूजते हैं ।१। हे वासक इन्द्र ! हे सोम के अभिषुत होने पर उक्थ गायक स्तुति करते हैं कि इन्द्र वृषभ के समान शब्द करते हुए यहाँ आगमन करेंगे ।२। हे इन्द्र ! तुम शत्रुओं का दमन करने वाले हो, कण्वगोत्री ऋषियों को सहस्र संख्यक अन्न प्रदान करो । तुम धनवान् से हम पीले रङ्ग के धन और गवादियुक्त अन्न माँगते हैं ।३। हे मेधातिथि ! सोम को पीओ । जो इन्द्र हर्यश्वों को रथ में संयुक्त करते हैं, जिनका रथ सोने का है, सोम से हर्ष उत्पन्न होने पर उन्हीं बज्रधारी इन्द्र का स्तव करो ।४। जिनका मस्तक और दक्षिण हस्त सुन्दर हैं जो मेधावी और सहस्त्रकर्मा हैं, जो अत्यन्त धनी हैं जो शत्रु पुरियों के ध्वसंक हैं, जो यज्ञ में स्थिर रहते हैं उन इन्द्र की स्तुति करो ।५। (७)

यो धृषितो योऽवृतो यो अस्ति श्मश्रुषु श्रितः ।
विभूतद्युम्नश्च्यवनः पुरुष्टुतः क्रत्वा गौरिव शाकिनः ।६
क ईं वेद सुते सचा पिवन्तं कद् वयो दध ।
अयं यः पुरो विभिनत्योजसा मन्दानः शिप्रचन्धसः ।७
दाना मृगो न वारणः पुरुत्रा चरथं दधे ।
नकिष्ट्वा नि यमदा सुते गमो महाँश्चरस्योजसा ।८
य उग्रः सन्ननिष्टुतः स्थिरो रणाय संस्कृतः ।
यदि स्तोतुर्मघवा शृणवद्धवं नेन्द्रो योषत्या गमत् ।९
सत्यमित्था वृषेदसि वृषजूतिर्नोऽवृतः ।
वृषा ह्युग्र शृण्विषे परावति वृषो अर्वावति श्रुतः ।१०।८

जो प्रचुर धनवान शत्रुओं के धर्षक और सोम के पीने वाले हैं वे बहुतों के द्वारा स्तुत इन्द्र अपने कर्ममें रहने वाले यजमान के लिये दूध देने वाली गाय के समान हैं। उनकी पूजा करो।६। जो सोम से तृप्त होते हैं जिनके जबड़े सुन्दर है जो शत्रु पुरों को तोड़ते हैं,उन सोमपीने वाले इन्द्र को जानने वाला कौन है ? उनके निमित्त अन्न धारण कौन करता हैं।७। जैसे शत्रुओं को खोज करने वाला हाथी मदमस्त हो जाता है, वैसे ही इन्द्र भी यज्ञ में हर्षयुक्त भावको धारण करते हैं। हे तुम्हें कोई नहीं रोक सकता। तुम अपने बल से सर्वत्र विचरण करने वाले हो, तुम इस अभिषुत सोमकी ओर आगमन करो।८। जब इन्द्र पराक्रम में भर जाते हैं, तब उन्हें भी दबा नहीं सकता। वे यज्ञ आह्वान सुनते हैं तो अन्यत्र न जाकर, वहीं पहुँचते हैं।९। हे इन्द्र ! तुम कामनाओं की वर्षा करने वाले हो। तुम कामनाओं वालों की ओर खिच जाते हो। तुमको शत्रु आच्छादित नहीं कर सकते। तुम पास में और दूर में भी कामनाओं के वर्षक रूप से प्रसिद्ध हो।१०।

वृषणस्ते अभीशवो वृषा कशा हिरण्ययी ।
वृषा रथो मघवन् वृषणा हरी वृषा त्व शतक्रतो ।११

वृषा सोता सुनोतु ते वृषन्नृजीपिन्ना भर।
वृषा दधन्वे वृषण नदीष्वा तुभ्यं स्थातर्हरीणाम् ।१२
एन्द्र याहि पीतये मधु शविष्ठ सोम्यम् ।
नायमच्छा मघवा शृणवद् गिरो ब्रह्मोक्था च सुक्रतुः ।१३
वहन्तु त्वा रथेष्ठामा हरयो रथयुजः ।
तिरश्चिदर्यं सवनानि वृत्रहन्नन्येषां या शतक्रतो ।१४
अस्माकमद्यान्तमं स्तोमं धिष्व महामह ।
अस्माकं ते सवना सन्तु शंतमा मदाय द्युक्ष सोमपाः ।१५।९

हे इन्द्र ! तुम्हारे घोड़ों को लगाम और चाबुक कामनाओं की वर्षा करने वाली हैं, तुम्हारे अश्व अभीष्ट वर्षक हैं और तुम इच्छाओं की वृद्धि करने वाले हो। हे इन्द्र ! तुम्हारे लिए सोम का संस्कार करने वाला कामनाओं की वर्षा करने वाला होता हुआ सोमाभिषव करे। तुम्हारे लिये जलमें सोम को संस्कृत करने वाले ऋत्विज ने सोम धारण किया था । हे इन्द्र ? हमको धन प्रदान करो। हे इन्द्र ? तुम आये बिना स्तुति, स्तोत्र और उक्थों को श्रवण नहीं करते। अतः इस मधुर सोम का पान करने के लिए आगमन करो। हे मेधावी इन्द्र ? तुम रथ सम्पन्न, वृत्र हननकर्ता और ईश्वर हो। तुम्हारे अश्व अन्यों को लांघकर तुम्हें हमारे यज्ञ-स्थानमें पहुँचावें ।४। हे इन्द्र? तुम हमारे निकटस्थ सोमों को धारण करो। यह सोम तुम्हारे हर्ष के लिए सुखकारी हों ।११-१५। (६)

नहि षस्तव नो मम शास्त्रे अन्यस्य रण्यति ।
यो अस्मान् वीर आनयत् ।१६
इन्द्रश्चिद् घा तदब्रवीत् स्त्रिया अशास्यं मनः ।
उतो अह क्रतुं रघुम् ।१७
सप्ती चिद् घा मदच्युता मिथुना वहतो रथम् ।
एवेद् धूर्वृषण उत्तरा ।१८
अधः पश्यस्व मोपरि संतरां पादकौ हर।
मा ते कशप्लकौ दृशन् स्त्री हि ब्रह्मा बभूविथ ।१९।१०

इन्द्र हमारे प्रभु हैं । वे हमारे, तुम्हारे या अन्य किसी के वश में रहना स्वीकार नहीं करते ।१६। इन्द्र का कथन था कि स्त्रीके मन पर नियंत्रण करना दुष्कर कार्य है क्योंकि स्त्री चंचल मन वाली होती है ।१७। सोम के सामने पहुँचने वाले इन्द्र के दोनों घोड़े रथ का वहन करते हैं । इन्द्र कामनाओं की वर्षा करने वाले है। इसलिए उनका रथ अश्वों की समानता में श्रेष्ठ हैं।१८। इन्द्र ने कहा-हे प्रायोगि ! तुम स्तोता होते हुए भी स्त्री बन गये हो । अतः अपने पैरोंको मिलाये रक्खो, तुम्हारे श्रेष्ठ प्रान्त और कटि से नीचे के भाग को कोई देख न सके ।१६।　　　　(१९)

सूक्त ३४

(ऋषि-नीपातिथिः काण्वः, सहस्र वसुरोचिशोऽङ्गिरस । देवता-इन्द्र । छन्द-अनुष्टुप्, गायत्री)

एन्द्र याहि हरिभिरुप कण्वस्य सुष्टुतिम् ।
दिवो अमुष्य शासतो दिवं यय दिवावसो ।१
आ त्वा ग्रावा वदन्निह सोमी घोषेण यच्छतु ।
दिवो अमुष्य शासतो दिवं यय दिवावसो ।२
अत्रा वि नेमिरेषामुरां न धूनुते वृकः ।
दिवो अमुष्य शासतो दिवं यय दिवावसो ।३
आ त्वा कण्वा इहावसे हवन्ते वाजसातये ।
दिवो अमुष्य शासतो दिवं यय दिवावसो ।४।
दधामि ते सुतानां वृष्णे न पूर्वपाय्यम् ।
दिवो अमुष्य शासतो दिवं यय दिवावसो ।५।११

हे इन्द्र ! कण्व गोत्री महर्षियों की स्तुतियों के प्रति अपने अश्वों सहित आगमन करो । तुम स्वर्गके शासक हो, अतः स्वर्ग लोक से गमन करो ।१। हे इन्द्र ! सोम का अभिषव करने वाले पाषाण शब्द करते हुए तुम्हें इस यज्ञ में सोम दें । तुम दीप्ति हविसे सम्पन्न हो और स्वर्ग का शासन करने वाले हो, अतःस्वर्ग लोकका गमन करो ।२। अभिषव

करने वाला पाषाण इस यज्ञ भूमि को सिंह द्वारा भेड़ को कंपाने के समान कम्पित करता है। दीप्ति हवियोंसे सम्पन्न इन्द्र स्वर्ग के शासक हैं, अतः हे इन्द्र ! स्वर्ग लोक को गमन करो।३। कण्वगोत्री ऋषि अन्न और रक्षा पाने की कामना करते हुए इस यज्ञ में इन्द्र को आहूत करते हैं। इन्द्र स्वर्ग के शासक हैं, हे सुन्दर हवियों से सम्पन्न इन्द्र ! तुम स्वर्ग लोक का गमन करो।४। जैसे ही तुम्हारे लिए भी संस्कृत सोम रस दूंगा। इन्द्र स्वर्ग का शासन करने वाले हैं। हे हवि-र्वान इन्द्र ! तुम स्वर्ग लोक को गमन करो।५। (११)

स्मत्पुरंधिर्न आ गहि विश्वतोधीर्न ऊतये ।
दिवो अमुष्य शासतो दिवं यय दिवावसो ।६
आ नो याहि महेमते सहस्रोते शतामघ ।
दिवो अमुष्य शासतो दिवं यय दिवावसो ।७
आ त्वा होता मनुर्हितो देवत्रा वक्षदीड्यः ।
दिवो अमुष्य शासतो दिवं यय दिवावसो ।८
आ त्वा मदच्युता हरी श्येनं पक्षेव वक्षतः ।
दिवो अमुष्य शासतो दिवं यय दिवावसो ।९
आ याह्यर्य आ परि स्वाहा सोमस्य पीतये ।
दिवो अमुष्य शासतो दिवं यय दिवावसो ।१०।१२

हे इन्द्र ! तुम्हारे बाँधव स्वर्ग के निवासी हैं, तुम हमारे पास आगमन करो। इन्द्र स्वर्ग का शासन करने वाले हैं, हे हवियुक्त इन्द्र ! तुम स्वर्ग लोक को गमन करो।६। हे इन्द्र! तुम अत्यन्त मेधावी, महान् ऐश्वयवान् और सहस्रों रक्षा-साधनों से सम्पन्न हो। तुम हमारे पास आगमन करो। इन्द्र स्वर्ग के शासक हैं, हे हविर्दान इन्द्र ! तुम स्वर्ग-लोक में गमन करो।७। हे इन्द्र ! मनुष्यों के द्वारा घरों में होता रूप से प्रतिष्ठित अग्निदेव देवताओं द्वारा स्तुत हैं वही तुम्हें वहन करे। इन्द्र स्वर्ग के शासक हैं हे हविर्दान इन्द्र ! तुम स्वर्ग लोकमें गमन करो।८। हे इन्द्र ! जैसे बाज अपने दोनों पंखों को करता है वैसे ही शक्ति-शाली दोनों घोड़े तुम्हें वहन करें। इन्द्र स्वर्ग का शासन करने वाले

हैं। हे इन्द्र तुम स्वर्ग लोक में गमन करो ।९। हे इन्द्र! सब ओर आगमन करो। तुम्हारे पान के निमित्त सोम रूप हवि देता है। इन्द्र स्वर्ग से शासक है। हे दीप्त हवि से सम्पन्न इन्द्र! तुम स्वर्ग लोक को प्रस्थान करो ।१०। (१०)

आ नो याह्युपश्रुत्युक्थेषु रणया इह।
दिवो अमुष्य शासतो दिवं यय दिवावसो ।११
सरूपैरा सु नो गहि संभृतैः संभृताश्वः।
दिवो अमुष्य शासतो दिवं यय दिवावसो ।१२
आ याहि पर्वतेभ्यः समुद्रस्याधि विष्टपः।
दिवो अमुष्य शासतो दिवं यय दिवावसो ।१३
आ नो गव्यान्यश्व्या सहस्रा शूर दर्दृहि।
दिवो अमुष्य शासतो दिवं यय दिवावसो ।१४
आ नः सहस्रशो भरायुतानि शतानि च।
दिवो अमुष्य शासतो दिवं यय दिवावसो ।१५
आ यदिन्द्रश्च दद्वहे सहस्रं वसुरोचिषः। ओजिष्ठमश्व्यं पशुम्।१६
य ऋज्रा वातरंहसो ऽरुषासो रघुष्यदः। भ्राजन्ते सूर्या इव ।१७
पारावतस्य रातिषु द्रवच्चक्रेष्वाशुषु।
तिष्ठं वनस्य मध्य आ ।१८।१३

हे इन्द्र! तुम इस उक्थों वाले यज्ञ में हमारे पास आकर हमको हर्षित करो। इन्द्र स्वर्ग का शासन करते हैं। हे दीप्त हवियों वाले इन्द्र! तुम स्वर्ग लोक से प्रस्थान करो ।११। हे इन्द्र! तुम्हारे अश्व हृष्ट पुष्ट है, तुम उन एक से रूप वाले दोनों अश्वों के सहित आगमन करो। इन्द्र स्वर्ग का शासन करने वाले हैं। सुन्दर हवियों वाले इन्द्र! तुम स्वर्गलोक में प्रस्थान करो ।१२। हे इन्द्र! तुम अन्तरिक्ष से अथवा पर्वत से आगमन करो। तुम स्वर्ग के शासक हो। हे श्रेष्ठ हवियों से सम्पन्न इन्द्र! तुम स्वर्ग के लिए गमन करो ।१०। हे इन्द्र! तुम सहस्र संख्यक धेनु और अश्व प्रदान करो। इन्द्र स्वर्ग के शासक है। श्रेष्ठ

हवियों से सम्पन्न इन्द्र ! तुम स्वर्गलोक के लिए गमन करो ।१४। हे इन्द्र ! हमको सौ सहस्र और दस सहस्र प्रकार की वस्तुयें दो । इन्द्र स्वर्ग के शासक हैं श्रेष्ट हवियों से सम्पन्न इन्द्र ! तुम स्वर्गलोक को गमन करो ।१५। हम सहस्र संख्यक हैं, हम और तुम्हारे नेतृत्व करने वाले इन्द्र वसिष्ठ घोड़े आदि पशुओं का पालन करते हैं । इस प्रकार हम धन के द्वारा प्रतिष्ठा को प्राप्त करते हैं ।१६। वायु के समान वेग वाले, सरलता से चलने वाले, मनोहर अश्व सूर्य के समान तेजस्वी हैं ।१७। रथ के पहियों को चलने में समर्थ बनाने वाले इन घोड़ों की जब परावत ने दिया था, तब मैं वन में था ।१८। (१३)

सूक्त ३५

(ऋषि—श्यावाश्वः । देवता—अश्विनौ । छन्द—जगती, त्रिष्टुप् पंक्ति)

अग्निनेन्द्रेण वरुणेन विष्णुनाऽऽदित्यै रुद्रैर्वसुभिः सचाभुवा ।
सजोषसा उषसा सूर्येण च सोमं पिबतमश्विना ।१
विश्वाभिर्धीभिर्भुवनेन वाजिना दिवा पृथिव्याद्रिभिः सचाभुवा।
सजोषसा उषसा सूर्येण च सोमं पिबतमश्विना ।२
विश्वैर्देवैस्त्रिभिरेकादशैरिहाऽद्भिर्मरुद्भिर्भृगुभिः सचाभुवा ।
सजोषसा उषसा सूर्येण च सोम पिबतमश्विना ।३
जुषेथां यज्ञं बोधतं हवस्य मे विश्वेह देवौ सवनाव गच्छतम् ।
सजोषसा उषसा सूर्येण चेष नो वोलहमश्विना ।४।
स्तोमं जुषेथां युवशेव कन्यनां विश्वेह देवौ सवनाव गच्छतम् ।
सजोषसा उषसा सूर्येण चेषं नो वोलहमश्विना ।५
गिरो जुषेथामध्वरं जुषेथां विश्वेह देवौ सवनाव गच्छतम् ।
सजोषसा उषसा सूर्येण चेषं नो वोलहमश्विना ।६।१४

हे अश्विनीकुमारो ! आदित्यो, रुद्रो, वसुओ, विष्णु, अग्नि, इन्द्र, वरुण, उषा और सूर्यके सहित तुम सोम पीओ ।१। पराक्रमी अश्विनी कुमारो ! सब प्राणियों, प्रजाओं, स्वर्ग, पृथिवी, पर्वत, उषा और सूर्य के सहित तुम सोम पान करो ।२। हे अश्विनीकुमारो ! तुम तैंतीस देव-

ताओं भृगुओं, मरुतो, उषा और सूर्य के सहित आगमन करो ।३। हे अश्विनीकुमारो ! तुम मेरे आह्वान को समझते हुए, मेरे यज्ञ का सेवन करो । इस यज्ञ के सब सवनों में रहो और उषा तथा सूर्य के सहित हमारे हविरन्न को स्वीकार करो ।४। हे अश्विनीकुमारो! जैसे कन्याओं के (स्वयम्वर में) बुलावे को युवक स्वीकार करते हैं वैसेही इस यज्ञ के स्तोत्रों को तुम स्वीकार करो । तुम इस यज्ञ के सब सवनों में रहो । उषा और सूर्य के सहित हमारे हविरन्न को स्वीकार करो ।५। हे अश्विनीकुमारो ! हमारी स्तुतियों और यज्ञ का सेवन करो । इस यज्ञ के सब सवनों में रहो । उषा और सूर्य के सहित हमारे हविरूप अन्न का भी सेवन करो ।६।

(१४)

हारिद्रवेव पतथो वनेदुप सोमं सुतं महिषेवाव गच्छथः ।
सजोषसा उषसा सूर्येण च त्रिर्वर्तिर्यातमश्विना ।७
हंसाविव पतथो अध्वगाविव सोमं सुतं महिषेवाव गच्छथः ।
सजोषसा उषसा सूर्येण च त्रिर्वर्तिर्यातमश्विना ।८
श्येनाविव पतथो हव्यदातये सोमं सुतं महिषेवाव गच्छथः ।
सजोषसा उषसा सूर्येण च त्रिर्वर्तिर्यातमश्विना ।९
पिबतं च तृष्णुतं चा च गच्छतं प्रजां च धत्तं द्रविणं च धत्तम् ।
सजोषसा उषसा सूर्येण चोर्जं नो धत्तमश्विना ।१०
जयतं च प्र स्तुतं च प्र चावतं प्रजां च धत्तं द्रविणं च धत्तम् ।
सजोषसा उषसा सूर्येण चोर्जं नो धत्तमश्विना ।११
हतं च शत्रुन् यततं च मित्रिणः प्रजां च धत्तं द्रविणं च धत्तम् ।
सजोषसा उषसा सूर्येण चोर्जं नो धत्तमश्विना ।१२।१५

जैसे दो पक्षी जल की ओर झुकते हैं, वैसे ही इन संस्कारित सोम की ओर तुम दोनों झुको । सोम को दो भैंसों के समान जानो । हे अश्विद्वय तुम उषा और सूर्य के सहित त्रिमार्गगामी होओ ।७। तुम दो हंसों और दो प्यासे पथिकों के संस्कारित सोम की ओर आओ और उसे दो भैंसों के समान समझो । हे अश्विनीकुमारो ! और सूर्य के सहित त्रिमार्गगामी होओ ।८। हे अश्विनीकुमारो ! दो बाजों के

समान संस्कारित सोम को और आगमन करो और उसे दो भैंसों के समान समझो। उषा और सूर्य के सहित त्रिमार्गगामी होओ।९। हे अश्विनीकुमारो तुम पीकर तृप्ति को प्राप्त करो। यहाँ आकर धन, सन्तान दो। उषा और सूर्यके सहित तुम दोनों हमको बल प्रदान करो।१०। हे अश्विनीकुमारो ! शत्रुओंपर विजय प्राप्त करो। स्तुति करने वालों की रक्षा करते हुए, उनकी प्रशंसा करो। धन, सन्तान देते हुए उषा और सूर्य के सहित हमको बल प्रदान करें।११। हे अश्विनी-कुमारो ! मन्त्रो सहित रणक्षेत्रमें जाकर शत्रुओं को नष्टकरो। हमको धन, सन्तान दो। उषा और सूर्यके सहित तुम दोनों हमको बल प्रदान करो।१२। (१५)

मित्रावरुणवन्ता उत धर्मवन्ता मरुत्वन्ता जरितुर्गच्छथो हवम्।
सजोषसा उषसा सूर्येण चाऽऽदित्यैर्यातमश्विना।१३
अङ्गिरस्वन्ता उत विष्णुवन्ता मरुत्वन्ता जरितुर्गच्छथो हवम्।
सजोषसा उषसा सूर्येण चाऽऽदित्यैर्यातमश्विना।१४
ऋभुमन्ता वृषणा वाजवन्ता मरुत्वन्ता जरितुर्गच्छथो हवम्।
सजोसाषा उषसा सूर्येण चाऽऽदित्यैर्यातमश्विना।१५
ब्रह्म जिन्वतमुत जिन्वतं धियो हतं रक्षांसि सेधतममीवाः।
सजोषसा उषसा सूर्येण च सोमं सुन्वतो अश्विना।१६
क्षत्रं जिन्वतमुत जिन्वतं नृन् हतं रक्षांसि सेधतममीवाः।
सजोषसा उषसा सूर्येण च सोम सुन्वतो अश्विना।१७
धनूर्जिन्वतमुत जिन्वतं विशो हतं रक्षांसि सेधतममीवाः।
सजोषसा उषसा सूर्येण च सोमं सुन्वतो अश्विना।१८ १६

हे अश्विनीकुमारो ! तुम मित्रावरुण, मरुद्गण और धर्म के सहित स्तुति करने वालेके आह्वान की ओर गमन करों। उषा और सूर्य को भी अपने साथ ले लो १३। हे अश्विनीकुमारो ! तुम मरुद्गण विष्णु आँगिरस, उषा और सूर्य को साथ लेकर स्तुति करने वाले आह्वान की ओर गमन करो।१४। हे अश्विनीकुमारो! तुम मरुद्गण, ऋभुगण,

उषा और सूर्य को साथ लेकर स्तोता के आह्वान की ओर गमन करो ।१५। हे अश्विनीकुमारो ! तुम हमारे स्तोत्र और कर्म पर अधिकार करो ! दैत्यों का संहार करो । सोम अभिषव करने वाले के सामने, उषा और सूर्य के साथ आकर सोमको पीओ ।१६। हे अश्विनीकुमारो! तुम वीरों और उनके बल को अधीन करो । राक्षसों को वश में करते हुए उन्हें मार डालो । उषा और सूर्य के साथ अभिषुत सोम पान करो ।१७· हे अश्विनीकुमारो ! विशों और उनके धन गौओंको अपने अधीन करो । दैत्यों को वश में करते हुए मारो उषा और सूर्य के साथ मिल-कर अभिषुत सोम का पान करो ।१८।

(१६)

अत्रेरिव शृणुतं पूर्व्यस्तुतिं श्यावाश्वस्य सुन्वतो मदच्युता ।
सजोषसा उषसा सूर्येण चाऽश्विना तिरोअह्नचम् ।१६
सर्गाँ इव सृजतं सुष्टतीरुप श्यावाश्वस्य सुन्वतो मुदच्युता ।
सजोषसा उषसा सूर्येण चाऽश्विना तिरोअह्नचम् ।२०
रश्मीरिव यच्छतमध्वराँ उप श्यावाश्वस्य सुन्वतों मदच्युता ।
सजोषसा उषसा सूर्येण चाऽश्विना तिरोअह्नचम् ।२१
अर्वाग् रथं नि यच्छतं पिबतं सोम्यं मधु ।
आ यातमश्विना गतभवस्युर्वामहं हुवे धत्तं रत्नानि दाशुषे ।२२
नमोवाके प्रस्थिते अध्वरे नरा विवक्षणस्य पीतये ।
आ यातमश्विना गतमवस्युर्वामह हुवे धत्तं रत्नानि दाशुषे ।२३
स्वाहाकृतस्य तृम्पतं सुतस्य देवावन्धसः ।
आयातं मश्विना गतमवस्युर्वामहं हुवे धत्तं रत्नानि दाशुषे।२४।१७

हे अश्विनीकुमारो ! तुम शत्रुओं के अहङ्कार को नष्ट करने में समर्थ हो अत्रिके समान ही मुझ श्यावाश्व की स्तुति भी सुनो । प्रातः सवन में उषा और सूर्य के साथ सोम को पीओ ।१६। हे अश्विनी-कुमारो ! आभरण के समान ही इस सुन्दर स्तोंत्रको ग्रहण करो । मुझ श्यावाश्व के प्रातः यज्ञ में उषा और सूर्य के साथ आकर सोंम का पान करों ।२०। हे अश्विनीकुमारो ! मुझ श्यावाश्व के यज्ञ की ओर लगाम

के समान आओ। मेरे इस प्रातः सवन में उषा और सूर्य के सहित आकर अभिषुत सोमरस का पान करो ।२१। हे अश्विनीकुमारो ! अपने रथ को हमारे सामने लाकर सोम पीओ। मेरे यज्ञ में सोम के सामने आओ। मैं तुम्हें रक्षा की कामना से आहूत करता हूँ। मुझ हविदाता को रत्न-धन दो ।२२। हे अश्विनीकुमारो। मेरे इस यज्ञ मे किये जाते हुए नमस्कारोंके प्रति आकार सोमपान करो। मैं तुम्हें रक्षा की कामना करता हुआ आहूत करता हूँ। मुझे हविदाता को रत्न-धन दो ।२३। हें अश्विनीकुमारो ! इस अभिषुत सोम की दी गई आहुति से तुम तृप्त होओ। मैं रक्षाकी कामना करता हुआ तुम्हें आहूत करता हूँ। इसलिए इस यज्ञ में आकर तुम हवि देने वाले को रत्न धन प्रदान फरो ।२४। (१७)

सूक्त ३६

(ऋषि—श्यावाश्वः। देबता—इन्द्रः। छन्द—शक्वरी, जगती)

अवितासि सुन्वतो वृक्तबर्हिषः पिबा सोमं मदाय कं शतक्रतो।
यं ते भागमधारयन् विश्वाः सेहानः पृतना उरु ज्रयः समप्सुजि-न्मरुत्वाँ इन्द्र सत्पते ।१
प्राव स्तोतारं मघवन्नव त्वां पिबा सोमं मदाय कं शतक्रतो।
यं ते भागमधारयन् विश्वाः सेहानः पृतना उरु ज्रयः
समप्सुजिन्मरुत्वाँ इन्द्र सत्पते ।२
ऊर्जा देवाँ अवस्योजसा त्वां पिबा सोमं मदाय कं शतक्रतो।
यं ते भागमधारयन् विश्वाः सेहानः पृतना उरु ज्रयः
समप्सुजिन्मरुत्वां इन्द्र सत्पते ।३
जनिता दिवो जनिता पृथिव्याः पिवा सोमं मदाय कं शतक्रतो।
यं ते भागमधारयन् विश्वाः सेहानः पृतना उरु ज्रयः
समप्सुजिन्मरुत्वाँ इन्द्र सत्पते ।४
जनिताश्वानां जनिता गवामसि पिवा सोमं मदाय कं शतक्रतो।
यं ते भागमधारयन् विश्वाः सेहानः पृतना उरु ज्रयः

समप्सुजिन्मरुत्वाँ इन्द्र सत्पते ।५
अत्रीणां स्तोममद्रिवो महस्कृधि पिबा सोमं मदाय कं शतक्रतो ।
यं ते भागमधारयन् विश्वाः सेहानः पृतना उरु ज्रयः
समप्सुजिन्मरुत्वाँ इन्द्र सत्पते ।६
श्यावाश्वस्य सुन्वतस्तथा शृणु यथाशृणोरत्रेः कर्माणि कृण्वतः ।
प्र त्रसदस्युमाविथ त्वमेक इन्नृषाह्य इन्द्र ब्रह्माणि वर्धयन्।७।१८

हे इन्द्र ! तुम अनेक कर्मों के करने वाले हो । सोम का अभिषव करने वाले और कुश बिछाने वाले यजमान की तुम रक्षा करते हो । तुम सत्य के स्वामी और मरुद्गण से युक्त हो, तुम्हारे लिए सोम का जो भाग देवताओं ने निश्चित किया है, उस सोम भाग को शक्ति के निमित्त सब शत्रुओं को हराते हुए पान करो ।१। हे इन्द्र ! सोम पीकर अपने को पुष्ट करो और स्तुति करने वाले का भी पोषण करो । तुम सत्य के स्वामी और मरुद्गण से युक्त हो । तुम्हारे लिए सोम का जो जो भाग देवताओं ने कल्पित किया, उस सोम भाग की शक्ति के लिए, शत्रुओं को हराते हुए पान करो । हे इन्द्र ! तुम बल के द्वारा अपने को पुष्ट करते हो और अन्न के द्वारा देवताओं को पोषण करते हो । तुम अनेक कर्मों के करने वाले सत्यके स्वामी तथा मरुतों से युक्त हो । तूम्हारे लिय सोम का जो भाग देवतातो ने कम्पित किया है, शत्रुओं के वेग को दबाते हुए जल के मध्य विजय प्राप्त करते हुए उस सोम भाग को हर्ष के निमित्त पान करो ।३। हे इन्द्र ! तुम स्वर्ग और पृथिवी के उत्पन्न कर्ता, सत्य के स्वामी, बहुत से कर्मो के करने वाले और मरुतों से युक्त हो । तुम्हारे लिए सोमका जो भाग देवताओं ने कल्पित किया है, सोम के भाग को शत्रुओं के वेग दबाते हुए और जल से विजय प्राप्त करते हुए शक्ति के लिए पान करो ।४। हे इन्द्र ! तुम गौओं और घोड़ों के पिता हो । बहुत कर्म करने वाले, सत्य के स्वामी और मरुतों से युक्त हो । तुम्हारे लिए सोम का जो भाग देवताओं ने कल्पित किया है, उस सोम भाग को, शत्रुओं के वेग

को दबाते हुए तथा जल में विजय प्राप्त हुए शक्ति के निमित्त पीओ ।५। हे इन्द्र ! तुम पार्वती और मरुतों से युक्त हो । तुम सत्यके स्वामी और अनेक कर्मों के कर्ता हो । तुम्हारे लिये सोमका जो भाग देवताओं ने कल्पित किया है, तुम शत्रुओं के भीषण वेष के वशीभूत करते हुए और जल के मध्य विजय प्राप्त करते हुए सोम भाग का शक्ति के निमित्त पान करो ।६। हे इन्द्र ! यज्ञानुष्ठान करने वाले महर्षि अत्रि की स्तुति के समान ही मुझ सोमका अभिषव करने वाले श्यावाश्व की भी स्तुति सुनो । एक मात्र तुमने ही रणक्षेत्र में फल को बढ़ाते हुए त्रसदस्यु की रक्षा की थी ।१७।

(१८)

सूक्त ३७

(ऋषि—श्यावाश्वः । देवता—इन्द्रः । छन्द—जगती)

प्रेदं ब्रह्म वृत्रतूर्येष्वाविथ प्र सुन्वतः शचीपत इन्द्र विश्वाभिरूतिभिः ।
माध्यंदिनस्य सवनस्य वृत्रहन्ननेद्य पिबा सोमस्य वज्रिवः ।१
सेहान उग्र पृतना अभि द्रुहः शचीपत इन्द्र विश्वाभिरूतिभिः ।
माध्यंदिनस्य सवनस्य वृत्रहन्ननेद्य पिबा सोमस्य वज्रिवः ।२
एक राळस्य भुवनस्य राजसि शचीपत इन्द्र विश्वाभिरूतिभिः ।
माध्यंदिनस्य सवनस्य वृत्रहन्ननेद्य पिबा सोमस्य वज्रिवः ३
सस्थावाना यवयसि त्वमेक इच्छचीपत इन्द्र विश्वाभिरूतिभिः।
माध्यंदिनस्य सवनस्य वृत्रहन्ननेद्य पिबा सोमस्य वज्रिवः ।४
क्षेमस्य च प्रयुजश्च त्वमीशिषे शचीपत इन्द्र विश्वाभिरूतिभिः ।
माध्यंदिनस्य सवनस्य वृत्रहन्ननेद्य पिबा सोमस्य वज्रिवः ।५
क्षत्राय त्वमवसि न त्वमाविथ शचीपत इन्द्र विश्वाभिरूतिभिः ।
माध्यंदिनस्य सवनस्य वृत्रहन्ननेद्य पिबा सोमस्य वजिवः ।६
श्यावाश्वस्य रेभतस्तथा शृणु यथाशृणोरत्रेः कर्माणि कृण्वतः ।
प्र त्रसदस्युमाविथ त्वमेक इन्नृषाह्य इन्द्र क्षत्राणि वर्धयन् ।७।१९

हे यज्ञ के स्वामी इन्द्र ! अपने सब रक्षा साधनों द्वारा इस स्तोत्र की संग्राम में रक्षा करो । तुम निन्दा-रहित, वज्रधारी और वृत्रहन्ता हो । मेरे सोमाभिषव कर्म की रक्षा करते हुए माध्य सवन में आकर

सोम-पान करो ।१। हे इन्द्र ! तुम सब कर्मों के स्वामी, और विकराल कर्म वाले हो । शत्रु सेनाओं को अपने सब रक्षा साधनों द्वारा हराकर इस स्तोत्र की रक्षा करो । तुम निन्दा-रहित, वज्रधारी और वृत्रहन्ता हो । मान्यध्य सवन में आकर सोमपान करो ।२। हे यज्ञ-स्वामी इन्द्र तुम इस लोक में एक मात्र स्वामी होतेहुए सब रक्षा-साधनों से सम्पन्न रहते हो, अतः इसे स्तोत्र को रक्षित करें । तुम निन्दा रहित, वज्र के धारश करने वाले और वृत्रहन्ता हो । मान्ध्य सवनमें आकर सोम-पान करो ।३। हे स्वामी इन्द्र ! तुम इन दोनों को पृथक् करते हुए दोनों में ही समान रूप से अवस्थित रहते हो । अतः तुम निन्दा रहित, वृत्र-हन्ता और वज्रधारी हो । मान्ध्य सवन में आकर सोम पान करो ।४। हे यज्ञपते ? हे इन्द्र? तुम सब रक्षा-साधनों से सम्पन्न, अखिल विश्व, सब कल्याणों एवं प्रयोगों के स्वामी हो । तुम निन्दा-रहित, वृत्रहनन कर्त्ता, और वज्र के धारण करने वालेहो मान्ध्यन्दि में आकर सोमपान करो ।५। हें इन्द्र ! तुम सब राक्षसों से सम्पन्न होकर बलवान् होते हो । तुम्हें किसी की रक्षा प्राप्त करने की आवश्यकता नहीं होती । वृत्रहनन, वज्रधारी अनिद्य हो । साध्य सवन में सोम-पान करो ।६। हे इन्द्र ! अनुष्ठाता अत्रि की स्तुति सुनने के समान ही मुझ श्वावाश्व की स्तुति सुनो । एक मात्र तुमनेही स्तोत्रोंको प्रवृद्ध करते हुए रणक्षेत्र में त्रसदस्यु की रक्षा की थी ।७।

(१९)

सूक्त ३८

(ऋषि—श्यावाश्वाः देवता—इन्द्राग्निः । छन्द—गायत्री)

यज्ञस्य हि स्थ ऋत्विजा सस्नी वाजेषु कर्मसु । इन्द्राग्नी तस्य बोधतम् ।१। तोशासा रथयावाना वृत्रहणापराजिता । इन्द्राग्नी तस्य बोधतम्।२। इद वां मदिरं मध्वधुक्षन्नद्रिभिर्नरः। । इन्द्राग्नो तस्य बोधतम् ।३। जुषेथां यज्ञमिष्टये सुतं सोमं सधस्तुती । इन्द्राग्नी आ गतं नरा ।४। इमा जुषेथां सवना येभिर्हव्यान्यूहथुः । इन्द्राग्नी आ गतं नरा ।५। इमां गायत्रवर्तनिं जुषेथां सुष्टुतिं मम । इन्द्राग्नी आ गतं नरा ।६।२०

इन्द्राग्ने! तुम पवित्र और सात्विक् हो । यज्ञों और संग्रामों में मुझ यजमान के स्तोत्र को समझो ।१। हे इन्द्राग्ने ! तुम शत्रुको हिंसा करने वाले रथ के द्वारा विचरण करने वाले, वृत्रहन्ता और अजेय हो । तुम मुझ यजमान को जानो ।२। हे इन्द्राग्ने ! यज्ञ में पाषाण के द्वारा यह हर्षकारी सोम-रस दुहा गया है । तुम मुझ यजमान को जानो ।३। हे इन्द्राग्ने ! तुम्हारी एक साथ स्तुति की जाती है, तुम इस यज्ञका सेवन करो और अभिषुत सोम की ओर आगमन करो ।४। हे नेता इन्द्राग्ने ! तुम यहाँ आओ, जिसके द्वारा तुम सोम का वहन करते हो, उस सेवन को सेवन करो ।५। (२०)

प्रातर्यावभिरा गतं देवेभिर्जेन्यावसू । इन्द्राग्नीं सोमपीतये ।७
श्यावाश्वस्य सुन्वतो ऽत्रीणां शृणुतं हवम् । इन्द्राग्नी सोतपीतये ।८
एवा वामह्व ऊतये यथाहुवन्त मेधिराः । इन्द्राग्नी सोमपीतये ।६
आहं सरस्वतीवतोरिन्द्राग्न्योरवो वृणे । याभ्यां गायत्रमुच्यते ।१०।२१

हे इन्द्राग्ने ! तुम इस गायत्री छन्द वाली सुन्दर स्तुति को आकर सुनो ।६। हे इन्द्राग्ने ! तुम धन के विजेता हो । तुम प्रातः सवन में देवताओं सहित आकर सोम-पान करो ।७। हे इन्द्राग्ने ! सोमका अभिषव करने वाले श्यावाश्व के ऋत्विजो का सोम पीनेके लिए आह्वान सुनो ।८। हे इन्द्राग्ने ! जैसे प्राचीन विद्वानों ने तुम्हें आहूत किया था वैसे रक्षाके लिए और सोमपान के लिए तुम्हें आहूत करता हूँ ।६। जिन इन्द्राग्नि के निमित्त सोम पान किया जाता है उन्ही से मैं रक्षा की प्रार्थना करता हूँ ।१०। (२१)

सूक्त ३९

(ऋषि—नाभाकः काण्वः । देवता—अग्निः । छन्द- त्रिष्टुप्, जगती)

अग्निमस्तोष्यृग्मियमग्निमीला यजध्यै ।
अग्निर्देवाँ अनक्तु न उभे हि विदथे कविरन्तश्चरति दूत्यं
नभन्तामन्यके समे ।१
न्यग्ने नव्यसा वचस्तनूषु शंसमेषाम् ।

न्यराती रराव्णां विश्वा अर्यो अरातीरितो युच्छन्त्वामुरो
नभन्तामन्यके समे ।२
अग्ने मन्मानि तुभ्यं कं घृतं न जुह्व आसनि ।
स देवेषु प्र चिकिद्धि त्वं ह्यसि पूर्व्यः शिवो दूतो विवस्वतो
नभन्तामन्यके समे ।३
तत्तदग्निर्वयो दधे यथायथा कृपण्यति ।
ऊर्जाहुतिर्वसूनां शं च योश्च मयो दधे विश्वस्यै देवहूत्यै
नभन्तामन्यके समे ।४
स चिकेत सहीयसा ऽग्निश्चित्रेण कर्मणा ।
स होता शश्वतीनां दक्षिणाभिरभीवृत इनोति च प्रतीव्यं
नभन्तामन्यके समे ।५।२२

मैं यज्ञ के लिए ऋक् मन्त्रों के पात्र अग्नि की स्तुति करता हूँ । वे अग्नि हमारे यज्ञ से हवियों से देवताओं को पूजें । विद्वान अग्नि, स्वर्ग और पृथिवी में 'दौत्य-कर्म करते हैं, वे हमारे शत्रुओं का संहार करे ।४। हे अग्ने ! हमारे प्रति शत्रुओं में जो हिंसा भावना व्याप्त है उसे अभिनव स्तोत्र द्वारा भस्म करो । हम हवि देने वालों के शत्रुओं को भस्म कर डालो । सभी मूढ़ शत्रु यहाँ से पलायन करें । अग्नि, देवता हमारे सब शत्रुओं का संहार करें ।२। हे अग्ने ! मैं तुम्हारे मुख में सुखकारी घृतयुक्त हव्य को स्तोत्र द्वारा डालता हूँ तुम प्राचीन, सुखकारी और देवदूत हो । देवताओंके मध्य हमारे स्तोत्रको जानो और हमारे सब शत्रुओं का संहार कर डालो । । स्तुति करने वाले जिस अन्नकी कामना करते हैं,अग्निदेव उन्हें वही अन्न देते हैं। हवियों द्वारा आहूत अग्नि यजमानो को उपभोग के योग्य तथा मङ्गल करने वाला सुख प्रदान करते हैं । सब देवताओं के आह्वान में रहने वाले अग्नि हमारे सब शत्रुओं का संहार करें ।४। वे अग्नि सब देवताओं के होता है विविध कर्मों द्वारा वे जाने जाते हैं । शत्रुओं के सामने जाने वाले अग्नि हमारे शत्रुओं का संहार करें ।५। (२२)

अग्निर्जाता देवानामग्निर्वेद मर्तानामपीच्यम् ।
अग्निः स द्रविणोदा अग्निर्द्वारा व्यूर्णुते स्वाहुतो नवीयसा
नभन्तामन्यके समे ।६
अग्निर्देवेषु संवसुः स विक्षु यज्ञियास्वा ।
स मुदा काव्या पुरु विश्वं भूमेव पुष्यति देवो देवेषु यज्ञियो
नभन्तामन्यके समे ।७
यो अग्निः सप्तमानुषः श्रितो विश्वेषु सिन्धुषु ।
तमागन्म त्रिपस्त्यं मन्धातुर्दस्युहन्तममग्निं यज्ञेषु पूर्व्यं
नभन्तामन्यके समे ।८
अग्निस्त्रीणि त्रिधातून्या क्षेति विदथा कविः ।
स त्रींरेकादशाँ इह यक्षश्च पिप्रयच्च नो विप्रो दूतः परिष्कृतो
नभन्तामन्यके समे ।९।
त्वं नो अग्न आयुषु त्वं देवेषु पूर्व्य वस्व एक इरज्यसि ।
त्वामापः परिस्रुतः परि यन्ति स्वसेतवो
नभन्तामन्यके समे ।१०,२३

मनुष्यों में जो रहस्य है, उसे अग्नि जानते हैं, वे देवताओं की उत्पत्ति के भी जानने वाले है। वे धन देने वाले अग्नि हवियों द्वारा बुलाये जाकर धन का द्वार खोलते हैं। वह अग्नि हमारे सब शत्रुओं का संहार करे।६। वह अग्नि देवताओ में निवास करते हैं, वे प्रजाओंमें भी व्याप्त रहते हैं। पृथ्वी जैसे सब संसारका पोषण करती है, वैसे अग्नि भी सब कार्यों को तुष्ट करते हैं। वे देवताओं में यज्ञ के पात्र अग्नि हमारे सब शत्रुओं का वध करें।७। अग्नि सातों प्रदेशोंके मनुष्यों और सब नदियो में व्याप्त हैं। वे तीनों स्थानों में समान रूपसे रहते हैं उन्होंने यौवनाश्व पुत्र मान्धाता के निमित्त राक्षसों का नाश किया। यज्ञों में मुख्य अग्नि हमारे सब पशुओं की हिंसा करें।८। तीनों स्थानों में निवास करने वाले अग्नि इस यज्ञ में दौत्य कर्म से सम्पन्न, मेधावी और सुशोभित होते हुए तेतीस देवताओं का यजन करें। वे हमारी कामनाओं का पूर्ति करते हुए सब शत्रुओं की हिंसा करें।९।

हे अग्ने तुम प्राचीन हो । देवताओं और मनुष्यों के तुम स्वामी हो। यह जल तुम्हारे चारों ओर गमन करता है । वह अग्नि सब शत्रुओं का संहार करें ।१०।

सूक्त ४०

(ऋषि—नाभाकः काण्वः । देवता—इन्द्राग्नीः । छन्द-त्रिष्टुप्, शक्वरी, जगती)

इन्द्राग्नी युवं सु नः सहन्ता दासथो रयिम् ।
येन दृलहा समत्स्वा वीलु चित् सहिषीमह्यग्निर्वनेव वात इन्नभन्तामन्यके समे ।१
नहि वां वव्रयामहे ऽथेन्द्रमिद् यजामहे शविष्ठं नृणां नरम् ।
स नः कदा चिदर्वता गमदा वाजसातये गमदा मेधसातये नभन्तामन्यके समे ।२
ता हि मध्यं भराणामिन्द्राग्नी अधिक्षितः ।
ता उ कवित्वना कवी त्वना कवी पृच्छ्यमाना सखीयते सं धीतमश्नुतं नरा नभन्तामन्यके समे ।३।
अभ्यर्च नभाकवदिन्द्राग्नी यजसा गिरा ।
ययोर्विश्वमिद जगदिय द्यौः पृथिवी मह्युपस्थे बिभृतो वसु नभन्तामन्यके समे ।४
प्र ब्रह्माणि नभाकवदिन्द्राग्निभ्यामिरज्यत ।
या सप्तबुध्नमर्णवं जिह्मबारमपोर्णुत इन्द्र ईशान ओजसा नभन्तामन्यके समे ।५
अपि वृश्च पुराणवद् व्रततेरिव गुष्पितमोजो दासस्य दम्भय ।
वयं तदस्य संभृतं वस्विन्द्रेण बि भजेमहि
नभन्तामन्यके समे ।६।२४

हे इन्द्राग्ने ! शत्रुओं को पराजित करो और हमको धन प्रदान करो । अग्नि जैसे वायु की द्वारा जङ्गलको दबाते हैं, वैसे ही हम भी शत्रुओं को वशीभूत करेंगे । यह इन्द्राग्नि हमारे सब शत्रुओं का संहार

करें ।१। हे इन्द्राग्ने ! हम तुमसे धन नहीं मांगते । हम नेताओं के नेता एक महाबली इन्द्र के लिए यज्ञ करते हैं । वे इन्द्र कभी यज्ञ की प्राप्ति को और कभी अन्न की प्राप्ति को आगमन करते है ये इन्द्राग्नि सब शत्रुओंका नाश करें ।२। हे नेताओं ! तुमही मित्रता के इच्छुक यजमान द्वारा किये गये कर्मको व्याप्त करते हो । जो इन्द्राग्नि रणक्षेत्र में वास करते हैं, वह सब शत्रुओं को हिंसित करें ।३। इन्द्राग्नि में सब जगत् विद्यमान् है, इन इन्द्र और अग्निको यज्ञ तथा स्तुतियोसे प्रसन्न करो । इनकी ही गोद में स्वर्ग और महिमामयी पृथिवी धन को धारण करते हैं । वही इन्द्राग्नि हमारे सब शत्रुओं का संहार करें ।४। यह इन्द्राग्नि सात मूल वाले बल द्वारा ईश्वर, अपने तेजसे समुद्र के आच्छादक और अवरुद्ध द्वार वाले हैं । इन इन्द्राग्नि के लिए नाभाक के समान ऋषि-गण स्तुतियाँ करते हैं । वे इन्द्र और अग्नि हमारे सब शत्रुओं का वध कर डालें ।५। हे इन्द्र ! तुम दस्युओं के बल को नष्ट करो, लता को शाखायें जंसी काटी जाती हैं, वैसेही हमारे सब शत्रुओंको काट डालो। इन्द्र की कृपा से हम एकत्रित धन को बाँट लेंगे । वे इन्द्र और अग्नि हमारे सब शत्रुओं को मार डालें ।६। (२४)

यदिन्द्राग्नी जना इमे विह्वयन्ते तना गिरा ।
अस्माकेभिर्नृभिर्वयं सासह्याम पृतन्यतो वनुयाम वनुष्यतो
नभन्तामन्यके समे ।७

या नु श्वेताववो दिव उच्चरात उप द्युभिः ।
इन्द्राग्न्योरनु व्रतमुहाना यन्ति सिन्धवो यान् त्सीं बन्धादमुञ्चतां
नभन्तामन्यके समे ।८

पूर्वीष्ट इन्द्रोपमातयः पूर्वीरुत प्रशस्तयः सूनो हिन्वस्य हरिवः ।
वस्वो वीरस्यापृचो या नु साधन्त नो धियो नभन्तामन्यके समे।९

तं शिशीता सुवृक्तिभिस्त्वेषं सत्वानमृग्मियम् ।
उतो नु चिद् य ओजसा शुष्णस्याण्डानि भेदति जेषत् स्वर्वती-
रपो नभन्तामन्यके समे ।१०

तं शिशीता स्वध्वरं सत्यँ सत्वानमृत्वियम् ।
उतो नु चिद् य ओहत आण्डा शुष्णस्य भेदत्यजैः स्वर्वतीरपो नभन्तामन्यके समे ।११
एवेन्द्राग्निभ्यां पितृवन्नवीयो मन्धातुवदङ्गिरस्वदवाचि ।
त्रिधातुना शर्मणा पातमस्मान् वयं स्याम पतयो रयीणाम्।१२।२५

जो व्यक्ति अपने धन और स्तुतियों से इन्द्राग्नि को आहूत करते हैं, उनमें हम सेनाओं वाले व्यक्ति अपने वीरों को साथ लेकर शत्रुओं को पराजित करेंगे और हममें से जो स्तोता है, वह शत्रुओं को पकड़ लेंगे ।७। जो इन्द्र अग्नि दीप्ति के द्वारा आकाश के लिये ऊर्ध्वगमन करते हैं, हवि-वाहक यजमान उनके लिए ही यज्ञ कर्म करते हैं। उन इन्द्र और अग्नि ने ही प्रसिद्ध सिन्धु आदि नदियों को खोला था। हे इन्द्राग्नि हमारे सब शत्रुओं का संहार करें ।८। हे वज्रिन् तुम ! स्नेह करने वाले धनवान् और हर्यश्ववान् हो तुम्हारी प्राचीन स्तुतियाँ बहुत हैं। यह स्तोत्र हमारी बुद्धि को प्रवृद्ध करें। वे इन्द्राग्नि हमारे सब शत्रुओं का संहार करें ।९। हे स्तुति करने वालों ! धन के भंडार, देदीप्यमान और मन्त्र योग्य इन्द्र को श्रेष्ठ स्तोत्रो द्वारा प्रवृद्ध करो। शुष्मासुर की सन्तानों के वध करने वाले इन्द्र ही दिव्य जलो को वश में करते। वे इन्द्राग्नि हमारे सब शत्रुओं का संहार करें ।१०। हे स्तुति करने वालो ! इन्द्र यजनीय, अविनाशी, ऐश्वर्यवान् और सुन्दर कर्म वाले हैं, उन्हें स्तुति द्वारा बढ़ाओ। वे इन्द्र शुष्म के अण्डों को नष्ट करते, दिव्य जलों को अभिभूत करते और यज्ञ में व्याप्त होते हैं। वह इन्द्र अग्नि हमारे शत्रुओं को नष्ट करें ।११। इन्द्र और अग्नि क निमित्त मैंने अपने पिता मान्धता और अङ्गिरा के समान ही अभिनव स्तोत्रों को उच्चारण किया है। वे हमको तीन पर्वो वाला घर दें : उनकी कृपा से ही हम धनवान बनेंगे।१२।

सूक्त ४१ (२५)

(ऋषि—नाभाक काण्वः। देवता—वरुण छन्द—त्रिष्टुप, जगती)

अस्मा ऊ षु प्रभूतये वरुणाय मरुद्भ्यो ऽर्ची विदुष्टरेभ्यः।
यो धीता मानुषाणां पश्वो गा इव रक्षति नभन्तामन्यके समे।१
तमू षु समना गिरा पितृणां च मन्मभिः।
नाभाकस्य प्रशस्तिभिर्यः सिन्धूनामुपोदये सप्तस्वसा स मध्यमो
नभन्तामन्यके समे।२
स क्षपः परि षस्वजे न्युस्रो मायया दधे स विश्वं परि दर्शतः।
तस्य वेनीरनु व्रतमुषस्तिस्रो अवर्धयन् नभन्तामन्यके समे।३
यः ककुभो निधारयः पृथिव्यामधि दर्शतः।
स माता पूर्व्यं पदं तद् वरुणस्य सप्त्यं स हि गोपा इवेर्यो
नभन्तामन्यके समे।४
यो धर्ता भुवनानां य उस्राणामपीच्या वेद नामानि गुह्या।
स कविः काव्या पुरु रूपं द्यौरिव पुष्यति नभन्तामन्यके समे।५।२६

हे स्तोताओ ! इन्द्र, वरुण, और मरुदगण की धन-प्राप्तिके निमित्त स्तुति करो। वरुण, मनुष्यों के सब पशुओं को, गोओंकी रक्षा करने के समान ही रक्षा करते हैं। वह हमारे शत्रुओं का वध करें।१। सुन्दर स्तोत्रों से वरुण का स्तव करता हूँ। श्रेष्ठ स्तोत्रों से पितरों की स्तुति करता हूँ। मैं नाभाक के स्तोत्रोंसे उन सात बहनों वाले नदियोंके पास आविर्भूत होने वाले की स्तुति करता हूँ। वह मेरे शत्रुओं को नष्ट करें।२। दर्शनीय वरुण रात्रियो से मिलते हैं, वे ऊर्ध्वगामी होते हुए कर्म के द्वारा जगत् को धारण करते हैं, उनके कर्म की इच्छा वाले पुरुष तीन उपायों को बढ़ाते है। वह सब शत्रुओं का बध करें।३। वे दर्शनीय वरुण पृथिवी पर दिशाओंको धारण करते हैं। हमारे विचरण स्थान पृथिवी और स्वर्ग के वह स्वामी हैं। वे हमारी गौओं के रक्षक, स्वामी तथा निर्माता हैं। वह शत्रुओं का वध करें।४। सब भुवनों के धारक और रश्मियों में निहित नामों के ज्ञाता वरुण ही आकाश के समान कवि-कर्मों को पुष्ट करते हैं। वह सब शत्रुओंका वध करें।५।
(२)

यस्मिन् विश्वानि काव्या चक्रे नाभिरिव श्रिता।

त्रितं जूती सपर्यत व्रजे गावो संयुजे युजे अश्वां अयुक्षत
नभन्तामन्यके समे ।६
य आस्वत्क आशये विश्वा जातान्येषाम् ।
परि धामानि मर्मृशद् वरुणस्य पुरो गये विश्वे देवा अनु व्रतं
नभन्तामन्यके समे ।७
स समुद्रो अपीच्यस्तुरो द्यामिव रोहति नि यदासु यजुर्दधे ।
स माया अर्चिना पदा ऽस्तृणान्नाकमारुहन्नभन्तामन्यके समे ।८
यस्य श्वेता विचक्षणा तिस्रो भूमीरधिक्षितः ।
त्रिरुत्तराणि पप्रतुर्वरुणस्य ध्रुवं सदः स सप्तानामिरज्यति
नभन्तामन्यके समे ।९
यः श्वेतां अधिनिर्णिजश्चक्रे कृष्णाँ अनु व्रता ।
स धाम पूर्व्यं ममे यः स्कम्भेन वि रोदसी
अजो न द्यामधारयन्नभन्तामन्यके समे ।१० २७

चक्र-नाभि के समान सभी काव्य जिन वरुण के आश्रित है, उस तीन स्थान वाले वरुण की सेवा करो। गौ जैसे गोष्ठमें जाती है वैसेही शत्रु को हम पराजित करनेके उद्देश्य से संग्राम के लिए घोड़ोंको जोतते है उन सब शत्रुओं को वह मारे ।३। सब दिशाओं में व्याप्त वरुण शत्रुओं के चारों ओर बने नगरों को ध्वस्त करते हैं। सब देवता वरुण के रथ के सामने ही कर्म करते हैं। वह वरुण हमारे सब शत्रुओं का वध करें ।७। समुद्र रूप में प्रत्यक्ष, वरुण आदित्य के समान ही द्यो पर आरूढ़ होकर सब दिशाओं में अवस्थित प्रजाओं को दान देते हैं। वे अपने प्रतिष्ठित पद से माया को नष्ट करते हुए स्वर्ग को जाते हैं। वह वरुण हमारे सब शत्रुओं का वध करें ।८। वरुण अन्तरिक्ष में निवास करते हैं, उसके अद्भुत और उज्ज्वल तीन तेज और लोक में प्रख्यात हैं। वह निश्चित स्थान वाले, सातों नदियों के स्वामी हैं। वह हमारे सब शत्रुओं को बध करें ।९। जिनकी किरणें दिन में श्वेत और रात्रि में काले वर्ण की होती है उन वरुण ने आकाश और अन्तरिक्ष को

अपने कर्म के लिए रचा। जैसे सूर्य स्वर्ग को धारण करते हैं, वैसे ही वरुण भी आकाश-पृथिवी को अन्तरिक्ष के द्वारा धारण करते है। वे सब शत्रुओं का वध करें ।१०। (२७)

सूक्त ४२

(ऋषि–नाभाका काण्व:, अर्चना वा । देवता–वरुण: अश्विनी ।
छन्द- त्रिष्टुप अनुष्टुप्)

अस्तभ्नाद् द्यामसुरो विश्ववेदा अमिमीत वरिमाणं पृथिव्याः ।
आसीदद् विश्वा भुवनानि सम्राड् विश्वेत् तानि वरुणस्य व्रतानि ।१

एवा वन्दस्व वरुणं दृहन्तं नमस्या धीरममृतस्य गोपाम् ।
स नः शर्म त्रिवरूथं वि यंसत् पातं नो द्यावापृथिवी उपस्थे ।२

इमां धियं शिक्षमाणस्य देव क्रतुं दक्षं वरुण सं क्षिशाधि ।
ययाति विश्वा दुरिता तरेम सुतर्मापामधि नावं रुहेम ।३

आ वाँ ग्रावाणी अश्विना धीभिर्विप्रा अचुच्यषुः ।
नासत्या सोमपीतये नभन्तामन्यके समे ।४

यथा वामत्रिरश्विना गीर्भिर्विप्रो अजोहवीत् ।
नासत्या सोमपीतये नभन्तामन्यके समे ।५

एवा वामह्व ऊतये यथाहुवन्त मेधिराः ।
नासत्या सोमपीतये नभन्तामन्यके समे ।६।२८

करो। सब दुष्कर्मो से पार लगाने वाली नाव पर हम आरूढ़ होंगे ।३।

वरुण सबके जानने वाले और बलवान हैं, उन्होंने पृथिवी को विस्तीर्ण किया और आकाश को स्थिर किया । वह सब लोकों के अधीश्वर होते हुए प्रतिष्ठित हुए। वरुण के ऐसे ही अनेक कर्म हैं ।१। हे स्तोता ! वरुण बृहत् हैं, वे धीर अमृत की रक्षा करते हैं उन्हें नमस्कार पूर्वक पूजो। वह वरुण हमको तीन पर्वों का भवन प्रदान करे। हम उनके अङ्क में निर्भीक रहते हैं। आकाश और पृथिवी हमारा पालन करने वाले हैं ।२। हे वरुण ! मेरे यज्ञ, कर्म, ज्ञान और बल को प्रबुद्ध

अश्विनीकुमार सत्य रूप वाले हैं। ऋत्विजके सब प्रस्तरों और तुम्हारे कर्मों के सामने पहुँचते हैं। वह दोनों हमारे शत्रुओं का वध करें। ।४। हे अश्विनीकुमार ! जैसे महर्षि अत्रि ने अपने स्तोत्र के द्वारा तुम्हें सोम-पान के निमित्त आहूत किया था, वैसे ही में तुम्हारा आह्वान करताहूँ। वह अश्विद्वय मेरे शत्रुओंको नष्टकरें ।५। हे अश्विनीकुमारो! जैसे विद्वानों ने तुम्हें सोम पीने के लिए आहूत किया था, वैसे ही मैं भी अपनी रक्षाके लिए तुम्हें आहूत करता हू। अश्विनीकुमार मेरे सब शत्रुओं को नष्ट करें ।६। (२८)

सूक्त ४३ (छठवाँ अनुवाक)

(ऋषि—विरूप आँगिरसः । देवता—अग्निः । छन्द—गायत्री)

इमे विप्रस्य वेधसोऽग्नेरस्तृतयज्वनः । गिरः स्तोमास ईरते ।१। अस्मै ते प्रतिहर्यते जातवेदो विचर्षणे । अग्ने जनामि सुष्टुतिम् ।२। आरोका इवघेदह तिग्मा अग्ने तव त्विषः। दद्भिर्वनानि बप्सति ।३। हरयो धूमकेतवो वातजूता उप द्यवि । यतन्ते वृथगग्नयः ।४। एते त्ये वृथगग्नय इद्धासः समदृक्षत । उषसामिव केतवः ।५।२९

अग्नि ही विधाता है। वह मेधावी अपने यजमानको कभी हिंसित नहीं करते। हमारे स्तोता उन्हीं अग्नि की पूजा करते हैं। ।१। हे दर्शनीय अग्ने ! मैं तुम्हारे निमित्त सुन्दर स्तोत्र करता हूँ, क्योंकि तुम देने वाले हो ।२। हे अग्ने ! जैसे पशु दाँतों द्वारा तृणादि का भक्षण करता है वैसे ही तुम्हारी तीक्ष्ण ज्वालायें वन का भक्षण करती हैं ।३। धूम्र रूप ध्वज वाले अग्नि हरणशील हैं, वह वायु के द्वारा प्रेरित होकर पृथक-पृथक रूप से अन्तरिक्ष में गमन करते हैं ।४। यह समिद्ध अग्नि, होताओं द्वारा उषा की ध्वजा के समान दर्शनीय होते हैं ।५। (२९)

कृष्णा रजांसि पत्सुतः प्रयाणे जातवेदसः । अग्निर्यद् रोधति क्षमि ।६। धासिं कृण्वान ओषधीर्बप्सदग्निर्न वायति । पुनर्यन् तरुणीरपि ।७। जिह्वाभिरह नन्नमदर्चिषा जञ्जणाभवन्।

अग्निर्वनेषु रोचते ।८। अप्स्वग्ने सधिष्टव सौषधीरनु रुध्यसे । गर्भे सञ्जायसे पुनः।९। उदग्ने तव तद् घृतावर्ची रोचत आहुतम्। निसानं जुह्वो मुखे ।१०।३०

तब उत्पन्न प्राणियों के ज्ञाता अग्नि पृथिवी के सूखे हुए काठ के आश्रित होते हैं, तब उनके जाते समय, धूलें कृष्ण वर्ण की ही जाती है ।६। औषधियों को अन्न मानकर उन्हें खाने मात्र से ही अग्नि तृप्त नहीं होते, वह तरुणावस्था प्राप्त औषधियों में प्राप्त होते हैं ।७। बनस्पतियों को अपनी जीभ से चाटते हुए अग्नि तेज से प्रदीप्त होते हुए सुशोभित होते है ।८। हे अग्ने ! तुम जल में प्रविष्ट होते हो, तुम औषधियों को स्थिर कर उन्हीं के गर्भ से प्रकट होते हो ।९। हे अग्ने ! तुम धृताक्त जूहू के मुख को चाटते हो तब तुम्हारी ज्वाला अत्यन्त सुशोभित होती है ।१०।

उक्षान्नाय वशान्नाय सोमपृष्ठाय वेधसे । स्तोमैर्विधेमाग्नये ।११। उत त्वा नमसा वयं होतर्वरेण्यक्रतो । अग्ने समिद्भिरीमहे ।१२ उत त्वा भृगुवच्छुचे मनुष्वदग्न आहुत । अङ्गिरस्वद्धवामहे ।१३। त्वं ह्यग्ने अग्निना विप्रो विप्रेण सन् त्सता । सखा सख्या समिध्यसे ।१४। स त्वं विप्राय दाशुषे रयिं देहि सहस्त्रिणम् । अग्ने वीरवतीमिषम् ।१५।३१

जिनका अन्न कामना करने योग्य तथा हव्य भक्षण करने योग्य हैं, उन सोम पीठ वाले अग्नि को सुन्दर स्तोत्रों से सेवा करते हैं ।११। हे प्रज्ञाग्ने ! तुम वरणीय एवं देवाह्वाक हो हम समिधा प्रधान करने वाले तुम्हें नमस्कार करते है ।१२। हे अग्ने ! तुम्हें भृगु और मनु ने जिस प्रकार बुलाया था, उसी प्रकार हम भी आहूत करते हैं ।१३। हे अग्ने! तुम मित्र सन्त एवं मेधावी हो । तुम इन्हीं गुण वाली अग्नियोंके द्वारा प्रज्वलित किए जातेहो ।१४। हे अग्ने ! तुम हविदाता विद्वान को सहस्त्रों धन और पुत्रादि से सम्पन्न अन्न प्रदान करो ।१ । (३५)

अग्ने भ्रातः सहस्कृत रोहिदश्व शुचिव्रत । इमं स्तोमं

जुषस्व मे ।१६। उत त्वाग्ने मम स्तुतो वाश्राय प्रतिहर्यते । गोष्ठं गाव इवाशत ।१७। तुभ्यं ता अङ्गिरस्तम विश्वाः सुक्षितयः पृथक् । अग्ने कामाय येमिरे ।१८। अग्नि धीभिर्मनीषिणो मेधिरासो विपश्चितः । अद्मसद्याय हिन्विरे ।१९। तं त्वामज्मेषु वाजिनं तन्वाना अग्ने अध्वरम् । वह्निं होतारमीलते ।२०।३२

हे यजमानों सखा रोहितताश्व वाले, बलोत्पन्न पावक! तुम हमारे स्तोत्र पर प्रतिष्ठित होओ ।११। हे अग्ने ! जैसे शब्द करते हुए बछड़ों की ओर गौयें जाती हैं, वैसे ही हमारे स्तोत्र तुम्हारी ओर गमन करते हैं । ।१७। हे अग्ने तुम अङ्गिराओं में श्रेष्ठ हो। अभीष्ट कीं प्राप्ति के लिए सब प्रजायें तुम्हारी कामना करती है ।१८। सभी चतुर विद्वान्, पुरुष अन्न पाने के लिए इस अग्नि देवता को प्रदीप्त करते हैं ।१६। हे अग्ने ! तुम होता हो. पराक्रमी एवं हवियो के वहन करने वाले हो । स्तोता अपने घर में अनुष्ठान करते हैं, वह तुम्हारे स्तुति करते हैं ।२०।

(३२)

पुरुत्रा हि सदृङ्ङसि विशो विश्वा अनु प्रभुः । समत्सु त्वा हवामहे ।२१। तमीलिष्व य आहुतो ऽग्निर्विभ्राजते घृतैः । इमं नः शृणवद्धवम् ।२२। तं त्वा वयं हवामहे शृण्वन्तं जातवेदसम् । अग्ने घ्नन्तमप द्विषः ।२३। विशां राजानमद्भुतमध्यक्षं धर्मणामिमम । अग्निमीले स उ श्रवत् ।२४। अग्निं विश्वायुवेपसं मर्यं न वाजिनं हितम् । सप्तिं न वाजयामसि ।२५।३३

हे अग्ने ! तुम सबको समान देखने वाले, सर्वव्याप्त और स्वामी हो । युद्ध के अवसर पर हम तुम्हें आहूत करते हैं ।२२। घृत की आहुतियों से अग्नि प्रदीप्त होते हैं, वे हमारे आह्वान की सुनते हैं । हे स्तोताओं ! उनका स्तव करो ।२२। हे अग्ने ! तुम शत्रुओं का वध करने में समर्थ हो, तुम उत्पन्न हुओं में धन देने वाले हो और तुम हमारे आह्वानको भी सुनते हो । अतः हम तुम्हें आहूत करते हैं ।२३।

अग्नि महान् कर्मो के स्वामी, मनुष्यों के पति हैं मैं उनका स्तोत्र करता हूँ।२४। अग्नि मनुष्यों के समान हित करने वाले, शक्तिशाली और सर्वत्र गमन करने वाले हैं। उस अग्नि को हम अश्वके समान बलवान् बनावेंगे।२५। (३३)

घ्नन् मृध्राण्यप द्विषो दहन् रक्षांसि विश्वहा। अग्ने तिग्मेन दीदिहि।२६। यं त्वा जनास इन्धते मनुष्यदङ्गिरस्तम। अग्ने स बोधि मे वचः।२७। यदग्ने दिविजा अस्यप्सुजा वा सहस्कृत। तं त्वा गीर्भिर्हवामहे।२८। तुभ्यं घेत् ते जना इमे विश्वाः सुक्षितयः पृथक्। धासिं हिन्वन्त्यत्तवे।२९। ते घेदग्ने स्वाध्यो ऽहा विश्वा नृचक्षसः। तरन्तः स्याम दुर्गहा।३०।३४

हे अग्ने ! तुम राक्षसों को भस्म करते हुए तथा हिंसाशील पापों जो नष्ट करते हुए अपने तेजसे प्रवृद्ध होओ।२६। हे अग्ने ! तुम अङ्गिराओं में श्रेष्ठ हो। जैसे तुम्हें मनु ने प्रदीप्त किया था वैसे ही यह मनुष्य करते हैं, मेरी स्तुतिको भी तुम उन्हीं के समान समझो।२७। हे अग्ने ! तुम अन्तरिक्ष से उत्पन्न बल से प्रकट हुए हो। तुम्हें स्तोत्रों द्वारा आहूत करते हैं।२८। हे अग्ने ! तुम प्राणी तुम्हारे भक्षणार्थ हविरन्न को पृथक्-पृथक् प्रदान करते है।२९। हे अग्ने ! हम सुन्दर कर्म वाले और सर्वदर्शी होते हुए सभी दुर्गम स्थलों को लाँघ जायेंगे।३०। (३४)

अग्निं मन्द्रं पुरुप्रियं शीरं पावकशोचिषम्। हृद्भिर्मन्द्रेभिरीमहे।३१। स त्वमग्ने विभावसुः सृजन् त्सूर्यो न रश्मिभिः। शर्धन् तमांसि जिघ्नसे।३२। तत् ते सहस्व ईमहे दात्रं यन्नोपदस्यति। त्वदग्ने वार्यं वसु।३३।३५

वे अग्नि पवित्र दीप्ति वाले, बहुतों के प्रिय और यज्ञ में शयन करने वाले हैं। हम प्रसन्नताप्रद स्तोत्रों द्वारा उन्हें हर्षित करते हैं।३१ हे अग्ने ! जैसे रश्मियों द्वारा सुर्य बल को बढ़ाते हैं, वैसे ही अपनी लपटों द्वारा तुम भी बल की वृद्धि करते हुई अन्धकार का नाशकर देते हो।३२। हे अग्ने! तुम्हारा वरण करने योग्य तथा दान योग्यधन सदा अक्षुण्य रहता है। उसी धन की याचना करते हैं।३३। (३५)

सूक्त ४४

(ऋषि–विरूप आङ्गिरसः । देवता–अग्निः । छन्द–गायत्री)

समिधाग्निं दुवस्यत घृतैर्बोधयतातिथिम् । आस्मिन् हव्या जुहोतन ।१। अग्ने स्तोमं जुषस्व मे वर्धस्वानेन मन्मना । प्रति सूक्तानि हर्य नः।२। अग्निं दूतं पुरो दधे हव्यवाहमुप ब्रुवे । देवाँ आ सादयादिह ।३। उत् ते बृहन्तो अर्चयः समिधानस्य दीदिवः। अग्ने शुक्रास ईरते ।४। उप त्वा जुह्वो मम घृताचीर्यन्तु हर्यत । अग्ने हव्या जुषस्व नः ।५।३६

हे ऋत्विजो ! अग्नि अतिथि के समान है, इनको हवियों से सेवा करो, इन्हें हवियों से चैतन्य करो ।१। हे अग्ने ! हमारे स्तोत्र को ग्रहण करो; उसके द्वारा प्रवृद्ध होओ । हमारे सूक्त की अभिलाषा करो ।२। मैं उन हवि-वहन करने वाले अग्निकी स्थापना करता हुआ उनका स्तव करता हूँ । वे इस यज्ञ में देवताओं का आह्वान करें ।३। हे अग्ने ! तुम्हारे प्रदीप्त होने पर तुम्हारी ज्वालायें उन्नत होती हुई चमकती हैं ।४। हे अग्ने ! घृतदासी स्रुक तुम्हारी ओर गमन करे और तुम हमारी हवियों का भक्षण करो ।५। (३६)

मन्द्रं होतारमृत्विजं चित्रभानुं विभावसुम् । अग्निमीले स उ श्रवत् ।६। प्रत्नं होतारमीड्यं जुष्टमग्निं कविक्रतुम् । अध्वराणामभिश्रियम् ।७। जुषाणो अङ्गिरस्तमेमा हव्यान्यानुषक् । अग्ने यज्ञं नय ऋतुथा ।८। समिधान उ सन्त्य शुक्रशोच इहा वह । चिकित्वान् दैव्यं जनम् ।९। विप्रं होतारमद्रुहं धूमकेतुं विभावसुम् । यज्ञानां केतुमीमहे ।१०।३७

अग्नि ऋत्विज रूप, होता रूप तथा दीप्तिमान हैं, मैं उनकी स्तुति करता हूँ उसे वह सुनें ।६। अग्नि यज्ञ भूमि के आश्रित है वह मेधावी, स्तुत्य, प्राचीन होता है, मैं उनका स्तव करता हूँ ।७। हे अग्ने! तुम अङ्गिराओं में महान हो । हमारे यज्ञोंको सम्पन्न करते हुए हवियों का भक्षण करो ।८। हे अग्ने ! तुम यजनीय और दर्शनीय दीप्ति वाले हो । तुम प्रदीप्त होते हो देवताओ को हमारे यज्ञ में ले आओ ।९।

अग्नि देवता धूम रूप ध्वजा वाले द्रोह रहित मेधावी और होता है हम उससे अपने इच्छित की याचना करते हैं।   (३७)

अग्ने नि पाहि नस्त्वं प्रति ष्म देव रीषतः। भिन्धि द्वेषः सहस्कृत ।११। अग्निः प्रत्नेन मन्मना शुम्भानस्तन्वं स्वाम्। कविर्विप्रेण वावृधे ।१२। ऊर्जो नपातमा हुवे ऽग्निं पावकशोचिषम्। अस्मिन् यज्ञे स्वध्वरे।१३। स नो मित्रमहस्त्वमग्ने शुक्रेण शोचिषा। देवैरा सत्सि बर्हिषि ।१४। यो अग्निं तन्वो दमे देवं मर्तः सपर्यति। तस्मा इद् दीदयद् वसु ।१५।३८

हे बलोत्पन्न अग्ने। हिंसक शत्रुओं से हमारी रक्षा करते हुए उन्हें हनन कर डालो ।११। प्राचीन और सुन्दर स्तोत्र द्वारा सुशोभित होते हुए अग्नि वृद्धि को प्राप्त होते हैं ।१२। अन्न से उत्पन्न, पवित्र दीप्ति से सम्पन्न अग्नि को मैं हिंसा रहित यज्ञ में आहूत करता हूं ।१३। हे अग्ने! तुम हम सखाओं द्वारा पूजा करने के योग्य हो। अपने उज्ज्वल तेज के सहित देवताओं के साथ यज्ञ में प्रतिष्ठित होओ ।१४। धन की कामना वाला जो मनुष्य अपने घर में अग्नि की सेवा करता है, उसे वे धन प्रदान करते हैं ।१५।   (३८)

अग्निमूर्धा दिवः ककुत् पतिः पृथिव्या अयम्। अपां रेतांसि जिन्वति ।१६। उदग्ने शुचयस्तव शुक्रा भ्राजन्त ईरते। तव ज्योतींष्यर्चयः ।१७। ईशिषे वार्यस्य हि दात्रस्याग्ने स्वपतिः। स्तोता स्यां तव शर्मणि ।१८। त्वामग्ने मनीषिणस्त्वां हिन्वन्ति चित्तिभिः। त्वां वर्धन्तु नो गिरः ।१९। अदब्धस्य स्वधावतो दूतस्य रेभतः सदा। अग्नेः सख्यं वृणीमहे ।२०।३९

अग्ने देवता जलसे उत्पन्न प्राणियोंको हर्षित करते हैं। वह पृथिवी के स्वामी आकाश के ककुद् और देवताओं के सिर रूप हैं ।१६। हे अग्ने। तुम्हारी उज्ज्वल आभायें तुम्हें तेजस्वी बनाती हैं ।१७। हे अग्ने। तुम वरण करने योग्य धनों के और स्वर्ग के स्वामी हो। मैं स्तुति करने वाला, सुख प्राप्ति के लिए तुम्हारी स्तुति करूँ ।१८। हे अग्ने! विद्वज्जन तुम्हारी स्तुति करते हुए अपने सुन्दर कर्म से तुम्हें

प्रसन्न करते हैं, हमारी स्तुतियाँ बढ़ावे ।१९। हे अग्ने ! तुम देवताओं के दूत और उनके स्तोता हो। तुम बलवान् और अहिंसित हो। हम तुम्हारे सत्य भाव की सदा कामना करते हैं ।२०। (३९)

अग्निः शुचिव्रततमः शुचिर्विप्रः शुचिः कविः। शुची रोचत आहुतः ।२१। उत त्वा धीतयो मम गिरो वर्धन्तु विश्वहा। अग्ने सख्यस्य बोधि नः ।२२। यदग्ने स्यामहं त्वं त्व घा स्या अहम्। स्युष्टे सत्या इहाशिषः ।२३। वसुर्वसुपतिर्हि कमस्यग्ने विभावसुः स्याम ते सुभ्रताबपि ।२४। अग्ने धृतव्रताय ते समुद्रायेव सिन्धवः। गिरो वाश्रास ईरते ।२५।४०

हे अग्नि मेधावी, पवित्र शुभ कर्म वाले तथा कवि है। वह आहुतियो द्वारा सुशोभित होते हैं ।२१। हे अग्ने ! मेरे अनुष्ठान और स्तुतियाँ तुम्हारी वृद्धि करे। तुम हमारे बन्धु-भाव को सदा जानो ।२२। हे अग्ने ! मैं अत्यन्त ऐश्वर्य वाला होकर भी तुम्हारे लिए पूर्ववत् ही रहूँगा। तुम्हारे आशीर्वाद सदा सुफल हो। २३। हे अग्ने ! तुम धन के स्वामी और निवासदाता हो हम तुम्हारी कृपा प्राप्त करे ।२४। हे अग्ने तुम कर्मों के धारणकर्त्ता हो नदियाँ जैसे समुद्र की ओर जाती है, वैसे हो मेरी सुन्दर शब्द वाली स्तुतियाँ तुम्हारी ओर जाता है ।२५। (४०)

युवानं विश्पतिं कविं विश्वादं पुरुवेपसम्। अग्निशुम्भामि मन्मभिः ।२६। यज्ञानां रथ्ये वयं तिग्मजम्भाय वीलवे। स्तोमैरिषेमाग्नये ।२७। अयमग्ने त्वे अपि जरिता भूतु सन्त्य। तस्मै पावक मृलय ।२८। धीरो ह्यस्यद्मसद् विप्रो न जागृविः सादा। अग्ने दीदयसि द्यवि ।२९। पुराग्न दुरितेभ्यः पुरा मृध्रेभ्यः कवे। प्र ण आयुर्वसो तिर ।३०।४१

अपने कर्म वाले अग्नि लोकों के स्वामी, सदा तरुण, सब भक्षक और कवि हैं। मैं उन्हें स्तोत्रों से बढ़ता हूँ ।२६। तीक्ष्ण ज्वाला वाले, पराक्रमी, यज्ञ के नेता अग्नि के स्तोताओं द्वारा स्तुति करने को हम कामना करते हैं ।२७। हे अग्ने ! तुम पवित्र करने वाले हो। हमारा

स्तोता तुम्हारी उपासना करे, तुम उनका कल्याण करो ।२८। हे अग्ने विद्वान् हविदाता के समान बैठे हुए । तुम सदा चैतन्य रहते हुए अन्तरिक्ष मे प्रकाशित होते हो ।२९। हे अग्ने! तुम निवासप्रद हो । पापियों और हिंसकों हमारी रक्षा करो और हमारी आयु की भी वृद्धि करो ।३०।
(४१)

सूक्त ४५

(ऋषि-त्रिलोक: काण्व: । देवता-इन्द्राग्नि: । छन्द-गायत्री ।

आ घा ये अग्निमिन्धते स्तृणन्ति बर्हिरानुषक् । येषामिन्द्रो युवा सखा ।१। बृहन्निदिध्म एषां भूरि शस्तं पृथुः स्वरुः । येषामिन्द्रो युवा सखा।२। अयुद्ध इद् युधा वृत शूर आजति सत्वभिः। येषामिन्द्रो युवा सखा ।३। आ बुन्द वृत्रहा ददे जातः पृच्छद् वि मातरम् । क उग्राः के ह शृण्विरे ।४। प्रति त्वा शवसी वदद् गिरावप्सो न योधिषत् । यस्ते शत्रुत्वमाचके ।५।४२

जिन ऋषियों की तरुण इन्द्र से मैत्री है और अग्नि को भले प्रकार चैतन्य करते हैं, वे सब कुशायें बिछाते हैं ।१। ऋषियों की महिमामयी समिधायें हैं, यह प्रचुर स्तोत्रों वाले हैं और इनका यज्ञ भी महान् है। यह सब तरुण इन्द्र से मित्रता रखते है ।२। शत्रुओं द्वारा आच्छादित कौन-सा निर्बल मनुष्य अपने बल से बली होकर हमारे शत्रुओं का तिरस्कार करता है ।३। वे इन्द्र तुमने उत्पन्न होतेही बाण ग्रहण किया और अपनी माता से पूछा कि इस जगत में अत्यन्त पराक्रमी कौन-२ हैं ।४। बल से सम्पन्न माताने कहा कि तुम्हारा शत्रु दर्शनीय हाथी के समान निवास करता है ।५।
(४)

उत त्वं मघवञ्छृणु यस्ते वष्टि ववक्षि तत् । यद् वीलयासि वीलु तत् ।६। यदाजिं यात्याजिकृदिन्द्रः स्वश्वयुरुप । रथीतमो रथानाम् ।७। वि षु विश्वा अभियुजो वज्रिन् विष्वग्यथा वृह । भवा नः सुश्रवस्तमः ।८। अस्माकं सु रथं पुर इन्द्रः कृणोतु सातये । न यं धूर्वन्ति धूर्तयः ।९। वृज्याम ते परि द्विषोऽरं ते शक्र दावने । गमेमेदिन्द्र गोमतः ।१०।४

हे इन्द्र ! तुम स्तोत्र को अभीष्ट देते हों, तुम जिसे दृढ़ कर देते हो वही दृढ़ हो जाता है। अतः हमारी भी स्तुति सुनो ।७। वह इन्द्र जब अश्व की कामना करते हुए रणक्षेत्र में गमन करते हैं तब वे रथियों में महारथी होते हैं ।६। हे वज्रिन् ! सभी कामना करने वाली प्रजायें जिनसे बढ़ें" वैसेहो तुम बढ़ो। तुम हमारे निमित्त अन्नवान् होओ ।८। हिंसक जिन्हें हिंसित नहीं कर सकते, वह इन्द्र हमको इच्छित प्रदान करने के लिए अपने सुन्दर रथ को सामने लावें ।६। हे इन्द्र ! हम तुम्हारे शत्रुओं के पास नहीं रहते। जब तुम वहुत-सी गौओं से युक्त काम्य धन प्रदान करते हो, तब हम तुम्हारे पास उपस्थित रहें। ।१०।

(४३)

शनैश्चिद् यन्तो अद्रिवो ऽश्वावन्तः शतग्विनः विवक्षणा अनेहसः।११। ऊर्ध्वा हि ते दिवेदिवे सहस्रा सूनृता शता। जरितृभ्यो विमंहते ।१२। विद्मा हि त्वा धनंजयमिन्द्र दृलहा चिदारुजम्। आदारिणं यथा गयम् ।१३। ककुहं चित् त्वा कवे मन्दन्तु धृष्णविन्दवः। आ त्वा पणिं यदीमहे। १४। यस्ते रेवाँ अदाशुरिः प्रममर्ष मघत्तये। तस्य नो वेद आ भर ।१५।४४

हे वज्रिन् ! हम अश्वों से सम्पन्न, अत्यन्त ऐश्वर्यवान् अद्भुत और युद्ध वीर होने ।११। हे इन्द्र ! तुम्हारी स्तुति करने वाले विद्वानों को यह यजमान नित्य प्रति सौ और हजार संख्यक प्रिय वस्तुयें प्रदान करता है ।१२। हे इन्द्र हम तुमको धनों के विजेता, शत्रुओं के हनन-कर्त्ता और उपद्रवों से घर के समान रक्षा करने वाला जानते हैं ।१३। हे इन्द्र ! तुम श्रेष्ठ: धर्षक, कवि और वणिकहो। हम जब तुमसे अपने इच्छित की याचना करते हैं, तब यह सोम तुम्हारे लिए हर्ष प्रदायक और मधुर हो ।१४। हे इन्द्र ! जो दाता होकर भी तुमसे ईर्ष्या करता है अथवा जो धनी होकर भी दानशील नहीं है, ऐसे दोनों प्रकार के पुरुषों का धन लेकर हमारे पास आओ ।१५।

(४४)

इम उ त्वा वि चक्षते सखाय इन्द्र सोमिनः। पुष्टावन्तो यथा पशुम् ।१६। उत त्वाबधिरं वयं श्रुत्कर्णं सन्तमूतये। दूरादिह हवामहे।१७। यच्छुश्रूया इमं हवं दुर्मर्षं चक्रिया उत। भवेरापिर्नो अन्तमः।१८। यच्चिद्धि ते अपि व्यथिर्जगन्वांसो अमन्महि। गोदा इदिन्द्र बोधि नः।१९। आ त्वा रम्भं न जिव्रयो ररम्भा शवसस्पते। उश्मसि त्वा सधस्थ आ।२०।४५

हे इन्द्र ! घास लाकर पशु स्वामी अपने पशु को देखता है। वैसे हमारे यह मित्र सोम को संस्कारित करके तुम्हें देखते हैं।१६। हे इन्द्र ! तुम श्रोतेन्द्रिय से सम्पन्न हो, तुम बधिर नहीं हो। अतः हम अपनी रक्षा के निमित्त दूर देश से भी तुम्हारा आह्वान करते हैं।१७। हे इन्द्र ! हमारे आह्वान को सुनकर शत्रुओं के लिए अपना बल अप्राप्य बनाओ और हमारे निकटस्थ बन्धु होओ।८। हे इन्द्र ! जब हम निर्धन होकर तुम्हारी शरण को प्राप्त हो तब तुम हमको गौयें देने के लिए चैतन्य होना।१९। हे बल के स्वामी इन्द्र ! हम दुर्बल होकर दण्ड के समान तुम्हें पावेंगे यज्ञ में हम तुम्हारी इच्छा करेंगे।२०। (४५)

स्तोत्रमिन्द्राय गायत पुरुनृम्णाय सत्वने। नकिर्यं वृण्वते युधि।२१। अभि त्वा वृषभा सुते सुतं सृजामि पीतये तृम्पा व्यश्नुही मदम्।२२। मा त्वा मूरा अविष्यवो मोपहस्वान आ दभन्। माकीं ब्रह्मद्विषो वनः।२३। इह त्वा गोपरीणसा महे मन्दन्तु राधसे। सरो गौरो यथा पिब।२४। या वृत्रहा परावति सना नवा च चुच्युवे। ता संसत्सु प्र वोचत।२५।४६

हे स्तोता ! इन्द्र महान ऐश्वर्य वाले और दानशील हैं, तुम उनके लिये स्तुतियाँ उच्चारण करो। संग्राममें उनको कोई जीत नहीं सकता।२१। हे इन्द्र ! तुम बलवान् हों। मैं वह संस्कारित सोम तुम्हें पीने के लिए देता हूँ,यह हर्ष प्रदायक सोम पीकर तृप्त होओ।२२। हे इन्द्र! रक्षा की कामना वाले मूर्ख तुम पर व्यङ्ग न करें, वे तुम्हारी हिंसा न करें। ब्राह्मणों से द्वेष करने वालोंको तुम अपनी शरण कभी प्रदान न

करना ।२३। हे इन्द्र ! महा धन की प्राप्ति वाले इस यज्ञ में दुग्धादि मिश्रित सोम को पीकर हर्षयुक्त होओ। जैसे मृग सरोवरमें जलपीकर तृप्त होता है, वैसे ही तुम सोम पीकर तृप्त होओ।२४। हे वृत्रहन् ! जिस नवीन और प्राचीन धन का तुमने दूर देश प्रेरण किया है, उसका इस यज्ञ में वर्णन करो ।२५।

अपिवत् कद्रु वः सुतमिन्द्रः सहस्रबाह्वे । अत्रादेदिष्ट पौंस्यम् ।।२६ सत्यं तत् तुर्वशे यदौ विदानो अह्नवाय्यम् । व्यानट् तुर्वणे शमि ।२७। तरणिं वो जनानां त्रदं वाजस्य गोमत. । समानमु प्र शंसिषम् ।२८। ऋभुक्षणं न वर्तव उक्थेषु तुग्र्यावृधम् । इन्द्रं सोमे सचा सुते ।२९। यः कृन्तदिद् वि योन्यं त्रिशोकाय गिरिं पृथुम् । गोभ्यो यातुं निरेतवे ।३०.४७

हे इन्द्र ! तुमने रुद्र ऋषि के संस्कारित सोमको पिया और सहस्र बाहु वाले शत्रु को मारा । उस समय तुम्हारा बल अत्यन्त दीप्त हो हो गया था ।२६। हे इन्द्र ! तुमने यादवों के प्रसिद्ध कर्मों को यथार्थ मानकर संग्राम में अन्हवाय्य को व्याप्त कर डाला ।२७। हे स्तोताओ ! तुम्हारे पुत्रादि सम्पन्न अन्न के देने वाले इन्द्र का पूजन करो ।२८। मैं जलों को प्रवृद्ध करने वाले इन्द्र को धन के लिए सोम के संस्कारित होने पर उक्थों द्वारा स्तुति करता हूँ ।२९। जिन इन्द्र ने जल निकालने के लिए मेघ को द्वार रूप से तोड़ा था, त्रिशोक ऋषि के स्तोत्र पर उन्होंने ही जल के प्रवाहित होने का मार्ग निमित्त किया था ।२०।

यद् दधिषे मनस्यसि मन्दानः प्रेदियक्षसि । मा तत् करिन्द्र मृलय ।३१। दभ्रं चिद्धि त्वावतः कृतं शृण्वे अधि क्षमि । जिगात्विन्द्र ते मनः ।३२। तवेदु ताः सकीर्तयोऽसन्नुत प्रशस्तयः । यदिन्द्र मृलयासि नः ।३३। मा न एकस्मिन्नागसि मा द्वयोरुत त्रिषु । वधीर्मा शूर भूरिषु ।३४। बिभया हि त्वावत उग्रादभिप्रभङ्गिणः । दस्मादहमृतीषहः ।३५।४८

हे इन्द्र ! तुम प्रसन्न होकर जो धारण करते हो, जो देते हो,

जो पूजते हो, वह सब कर्म हमारे लिए क्यों नहीं करते ? हे इन्द्र ! हमारा कल्याण करो ।३१। हे इन्द्र ! तुम्हारी कृपासे स्वल्पकर्मा मनुष्य भी पृथिवी में प्रसिद्धि प्राप्त करता है । अतः तुम्हारा मन मेरी ओर आकर्षित हो ।३२। हे इन्द्र ! तुम अपनी जिन वस्तुओं को प्राप्त करके हमको सुख देते हो, वह स्तुतियाँ तुम्हीं को प्राप्त हो ।३३। हे इन्द्र ! हमारे द्वारा एक अपराध होने पर भी हमारी हिंसा मत करना।३४। हे इन्द्र ! तुम उग्र, शत्रु, हिंसक, पापियों के संहारक और शत्रुओं द्वारा प्रेरित आक्रमण के सहने वाले हो, मैं तुमसे भयभीत न होऊँ ।३५। (४८)

मा सख्यः शूनमा विदे मा पुत्रस्य प्रभूवसो । आवृत्वद् भूतु ते मनः ।३६। को नु मर्या अमिथितः सखा सखायमब्रवीत् । जहा को अस्मदीषते ।३७। एवारे वृषभा सुते ऽसिन्वन् भूर्यावयः । श्वघ्नीव निवता चरन् ।३८। आ त एता वचोयुजा हरी गृभ्णे सुभद्रथा । यदीं ब्रह्मभ्य इद्ददः ।३९। भिन्धि विश्वा अप द्विषः परि बाधो जही मृधः । वसु स्पार्हं तदा भर ।४०। यद्वीलाविन्द्र यत् स्थिरे यत् पर्शाने पराभृतम् । वसु स्पार्हं तदा भर ।४१। यस्य ते विश्वमानुषो भूरेर्दत्तस्य वेदति । वसु स्पार्हं तदा भर । ४२।४९

हे इन्द्र ! तुम्हारे धन का परिमाण नहीं है । तुम में तुम्हारे मित्र और उनके पुत्र की बात कहता हूँ मैं समृद्ध होऊँ, तुम्हारा मन मुझ से विरक्त न होवे ।३६। हे मनुष्य ! इन्द्र के सिवाय अन्य कौन द्वेष न करने वाला सखा है जो प्रश्न करने से पहले कह दे कि 'मैंने किसे मारा, कौन मुझसे भयभीत होकर भाग जायेगा ?' ।३७। हे इन्द्र ! तुम इच्छित देने वाले हो । संस्कारित होने पर सोम तुम्हारी ओर गमन करता है । देवता तुम्हारे सामने से नीचा मुख करके चले गये ।३८। मन्त्र द्वारा सुन्दर रथमें योजित होने वाले इन्द्र के दोनों घोड़ोंको आकर्षित करता हूँ । हे इन्द्र ! तुम ब्राह्मणों को धन प्रदान करते हो ।

।३९। हे इन्द्र ! सब शत्रुओं को विदीर्ण करो और युद्ध की समाप्तिपर अभिलाषा के योग्य सब धनों को ले आओ ।४०। हे इन्द्र ! तुमने जिस धन को दृढ़ स्थान पर स्थिर स्थान पर और संदिग्ध स्थान पर रक्खा है, उस कामना से योग्य धन को लेकर यहाँ आगमन करो ।४१। हे इन्द्र ! तुमने जो धन अनजाने में अन्य पुरुषो को दिया है वह कामना के योग्य धन यहाँ लाओ ।४२।

सूक्त ४६

(ऋषि-वशोऽश्व्यः । देवता-इन्द्रः, पृथृश्रवसः कानीतस्यः दानस्तुतिः, वायुः । छन्द-गायत्री, उष्णिक्, बृहती, अनुष्टुप्, पंक्ति, जगती)

त्वावतः पुरूवसो वयमिन्द्र प्रणेतः । स्मसि स्थातर्हरीणाम् ।१। त्वां हि सत्यमद्रिवो विद्म दातारमिषाम् । विद्म दातारं रयीणाम् ।२। आ यस्य ते महिमानं शतमूते शतक्रतो । गीर्भिर्गृणन्ति कारवः ।३। सुनीथो घा स मर्त्यो य मरुतो यमर्यमा । मित्रः पान्त्यद्रुहः ।४। दधानो गोमदश्ववत् सुवीर्यमादित्यजूत एधते । सदा राया पुरुस्पृहा ।५।१

हे ऐश्वर्यवान, कर्मों में लगाने वाले इन्द्र ! हम तुम्हारे समान सम्पन्न देवता के ही आत्मीय हैं। तुम हर्यश्वों के स्वामी हो ।१। हे वज्रिन् ! तुम अन्न प्रदान करने वाले हो ऐसा हम जानते हैं। तुम धन देने वाले हो, यह भी जानते हैं ।२। हे इन्द्र ! तुम बहुकर्मा हो। स्तोता तुम्हारी उस महिमा का बखान स्तुतियों से करते हैं ।३। जिस पुरुष की मरुद्गण, मित्र और अर्यमा रक्षा करते हैं, वही यज्ञवान होते हैं ।३। सूर्य की कृपा से ही यजमान गौ, अश्वा और वीर्यादि वाला होकर वृद्धि को पाता है। वह कामना किये हुए असंख्य धन से प्रवृद्ध होता है ।५।

तमिन्द्रं दानमीमहे शवसानमभीर्वम् । ईशानं राय ईमहे ।६ तस्मिन् हि सन्त्यूतयो विश्वा अभीरवः सचा । तमा वहन्तु सप्तयः पुरूवसुं मदाय हरयः सुतम् ।७

यस्ते मदो वरेण्यो य इन्द्र वृत्रहन्तमः ।
य आददिः स्वर्नृभिर्यः पृतनासु दुष्टरः ।८
यो दुष्टरो विश्ववार श्रवाय्यो वाजेष्वस्ति तरुता ।
स नः शविष्ठ सवना वसो गहि गमेम गोमति व्रजे ।९।
गव्यो षु णो यथा पुराऽश्वयोत रथया । वरिवस्य महामह।१०।२

भय रहित बल वाले, सबके स्वामी इन्द्र से ही हम धन माँगते हैं ।६। यह मरुद्गण रूप सर्वत्र गमन करने वाली भयरहित सेना इन्द्र-की ही हैं । असीमित धन प्रदान करने वाले इन्द्र को उनके वेगवान घोड़े हमारे सोम के समीप लावें ।७। हे इन्द्र ! तुम अपनी जिस शक्ति से युद्ध में शत्रुओं को मारते हो, तुम्हारी वह शक्ति वरण करने योग्य है। वह मद तुम्हें शत्रुओं से धन प्राप्त कराने वाला और युद्ध में पार लगाने वाला है ।८। सब के द्वारा वरणीय शत्रुओंको लाँघने वाला सबसे पराक्रमी और प्रसिद्ध इन्द्र उसी शौर्य के साथ हमारे यज्ञ में आगमन करे तभी हम गौओं से सम्पन्न गोष्ठ में प्रतिष्ठित होंगे ।९। हे ऐश्वर्य सम्पन्न इन्द्र !, गौ अश्व और रथ की प्राप्ति कामना करने पर हमको सब कुछ पहिले के समान ही प्रदान करना ।१०।   (२)

नहि ते शूर राधसोऽन्तं विन्दामि सत्रा ।
दशस्या नो मघवन्नू चिदद्रिवो धियो वाजेभिराविथ ।११
य ऋष्वः श्रावयत्सखा विश्वेत् स वेद जनिमा पुरुष्टुतः :
तं विश्वे मानुषा युगेन्द्रं हवन्ते तविषं यतस्रुचः ।१२
स नो वाजेष्ववितापुरूवसुः पुरःस्थाता । मघवा वृत्रहा भुवत्१३
अभि वो वीरमन्धसो मदेषु गाय गिरा महा विचेतसम् ।
इन्द्रं नाम श्रुत्यं शाकिनं वचो यथा ।१४
ददी रेक्णस्तन्वे ददिर्वसु ददिर्वाजेषु पुरुहूत वाजिनम् ।
नूनमथ ।१५।३

हे इन्द्र ! तुम्हारा धन यथार्थ ही असीम है, अतः हमको धन प्रदान करो। हे वज्रिन् ! धन देकर हमारे कर्म की जल के द्वारा रक्षा

करो ।११। इन्द्र दर्शनीय हैं, ऋत्विज उनके मित्र है, वे संसार के सब जीवों के ज्ञाता और अनेकों द्वारा स्तुत है। सब मनुष्य हवियों द्वारा उन्हीं इन्द्र का आह्वान करते हैं।१२। वह वृत्रहन्ता इन्द्र अपरिमित धन से सम्पन्न हैं, रणक्षेत्र में वे हमारे आगे चलते हुए रक्षा करें।१३। हे स्तोताओ ! सोम से हर्षित होने पर अपनी वाणी की स्फूर्ति होने के अनुसार महान स्तोत्रों से इन्द्र की स्तुति करो। वह इन्द्र शत्रुओं को पतित करने वाले, शक्तिशाली, सर्व विख्यात, अत्यन्त मेधावी महान है, ।१४। हे इन्द्र ! तुम मुझे धन देने वाले होओ। युद्ध के अवसर पर अन्न से सम्पन्न धन दो। हमारे पुत्रों द्वारा आहूत किये जाने पर उन्हें भी धन देने वाले होओ ।१५।

(२)

विश्वेषामिरज्यन्त वसूनां सासह्वांस चिदस्य वर्षसः ;
कृपयतो नूनमत्यथ ।१६
महः सु वो अरमिषे स्तवामहे मीलहुषे अरङ्गमाय जग्मये।
यज्ञेभिर्गीर्भिर्विश्वमनुषां मरुतामियक्षसि गाये त्वा नमसा गिरा ।१७
ये पातयन्ते अज्मभिर्गिरीणां स्नुभिरेषाम्।
यज्ञं महिष्वणीनां सुम्नं तुविष्वणीनां प्राध्वरे ।१८
प्रभङ्गं दुर्मतीनामिन्द्र शविष्ठा भर।
रयिमस्मभ्यं युज्यं चोदयन्मते ज्येष्ठं चोदयन्मते ।१९
सनितः सुसनितरुग्र चित्र चेतिष्ठ सूनृत।
प्रासहा सम्राट् सहुरिं सहन्तं भुज्यु वाजेषु पूर्व्यम् ।२०।४

हे स्तोताओ ! समस्त धनों के स्वामी, युद्ध को कामना करने वाले और शत्रुओं को परास्त करने वाले इन्द्र की स्तुति करो, क्योंकि हमें धनवान बनाने में वहीं समर्थ हैं।१६। हे इन्द्र ! तुम्हें बुलाना चाहता हूँ क्योंकि तुम सर्वत्र गमन करने वाले और वर्षक हो। मैं अपने यज्ञ में स्तुतियों से तुम महान की स्तुति करता हूँ। तुम सब प्राणियों के ईश्वर और मरुद्गणके नेता हो। मैं तुम्हें नमस्कार करता हुआ सुन्दर स्तोत्रों द्वारा तुम्हारा आह्वान गुणानुवाद करता हूँ।

।१७। जो मरुद्गण मेघ के बलकारी प्राचीन जलों के साथ गमन करने हैं उन गर्जनशील मरुतों के निमित्त करते हुए हम उनसे जो कल्याण प्राप्त हो सकेगा, उसे लेंगे ।१८। हे इन्द्र तुम पाप बुद्धि वालों को नाश करते हो । तुम्हारी मति धन को प्रेरित करने में लगी रहती हैं । अतः हम तुमसे धन माँगते हैं और हमारे लिए श्रेष्ठ धनों को लेकर आगमन करो ।१९। हे इन्द्र ! तुम शत्रुओं को हराने वाले, पराक्रमी सत्यभाषी दाता और सबके प्रिय तथा स्वामी हो। तुम हमको युद्धक्षेत्र में शत्रुओं को पराभूत करने वाला धन प्रदान करना ।२०। (४)

आ स एतु य ईवदाँ अदेवः पूर्तमाददे ।
यथा चिद्वशो अश्व्यः पृथुश्रवसि कानीतेऽस्या व्युष्याददे ।२१
षष्टिं सहस्राश्व्यस्यायुतासनमुष्ट्रानां विंशतिं शता ।
दश श्यावीनां शता दश त्र्यरुषीणां दश गवां सहस्रा ।२२
दश श्यावा ऋधद्रयो वीतवारास आशवः ।
मथ्रा नेमिं नि वावृतुः ।२३
दानासः पृथुश्रवसः कानीतस्य सुराधसः ।
रथं हिरण्ययं ददन्मंहिष्ठः सूरिरभूद्वर्षिष्ठमकृत श्रवः ।२४
आ नो वायो महे तने याहि मखाय पाजसे ।
वयं हि ते चकृमा भूरि दावने सद्यश्चिन्महि दावने ।२५।५

कन्या पुत्र पृथुश्रवा से जिन अश्व-पुत्र वशने धन पाया था, वे वश यहाँ आगमन करें ।२१। मैंने आठ सहस्र और दस सहस्र अश्वो को, दो सहस्र ऊँटोंको और एक सहस्र कृष्णवर्ण वाली अश्वियोंको प्राप्त किया है, तथा श्वेत रङ्ग वाली दस सहस्र धेनु भी तीन स्थानो में प्राप्त की है ।२२। दश काले घोड़े रथ की नेमि को खींचते हैं । वे घोड़े अत्यन्त वेग वाले, बली और मथने वाले हैं ।२३। कन्या-पुत्र पृथुश्रवा अत्यन्त धनी हैं, इनके दान में सुवर्ण का रथ भी मिला है । वे महान दानी हैं, इसीलिए उन्होंने महान् कीर्तिका अर्जन किया है ।२४। हे वायो ! पूजनीय बल तथा वृहत् धन के निमित्त हमारे पास आओ । हम तुम्हारा स्तव करते हैं, क्योंकि तुम महान दानी हो तुम्हारे आगमन पर हम तुम्हारी स्तुति करते हैं, क्योंकि तुम असीम धन वाले हो ।२५। (५)

यो अश्वेभिर्वहते वस्त उस्रास्त्रिः सप्त सप्ततीनाम् ।
एभिः सोमेभिः सोमसुद्भिः सोमपा दानाय शुक्रपूतपाः ।२६
यो म इमं चिदु त्मनामन्दच्चित्रं दावने ।
अरट्वे अक्षे नहुषे सुकृत्वनि सुकृत्तराय सुक्रतुः ।२७
उचथ्ये वपुषि यः स्वरालुत वायो घृतस्नाः ।
अश्वेषितं रजेषितं शुनेषितं प्राज्म तदिदं नु तत् ।२८
अध प्रियमिषिराय षष्टिं सहस्रासनम् । अश्वानामिन्न वृष्णाम् २९
गावो न यूथमुप यन्ति वध्रय उप मा यन्ति वध्रयः ।३०
अध यच्चारथे गणे शतमुष्ट्राँ अचिक्रदत् ।
अध श्वित्नेषु विंशति शता ।३१
शतं दासे बल्बूथे विप्रस्तरुक्ष आ ददे ।
ते ते वायविमे जना मदन्तीन्द्रगोपा मदन्ति देवगोपाः ।३२
अध स्या योषणा मही प्रतीची वशमश्व्यम् ।
अधिरुक्मा वि नीयते ।३३।६

सोम को पीने वाले, दीप्त वायु पृथुश्रवा के घोड़ों के साथ आकर घरमें रहते हैं और सप्त सप्तति की तिगुनी गायों के साथ गमन करते हैं । वे सोम का अभिषव करने वालों से मिलकर सोम प्रदान करने के लिए ही सोमवान हुए हैं ।२६। जो पृथुश्रवा गौ, अश्व आदिके दाम को विचार करते हुए प्रसन्न हुए थे उन श्रेष्ठ कर्म वाले पृथुश्रवा के अपने विभागाध्यक्षअक्ष, नहुष सुकृत्व और अरट्व को इसका आदेश दिया ।२७। उच्चस्थ और वपु नामक राजाओं के भी राजा वायु ने अश्वों, ऊँटों और श्वानों के द्वारा जो अन्न भेजा जाता है 'वह तुम्हारा, ही है" ऐसा कहा ।२ । धन आदि को प्रेरित करने वाले राजा की कृपा से मैंने आठ सहस्र गौओं को भी प्राप्त किया ।२९। गायें जैसे अपने झुण्डों को प्राप्त होती हैं, वैसे ही पृतुश्रवा प्रदत्तावृषभ मुझे प्राप्त होते हैं ।३०। जब ऊंट जङ्गल में प्रेषित किये गये तब एक-एक ऊंट और दो सहस्र गौयें मेरे लिये लाये थे ।३१। मैं गौ घोड़ों का पालक ब्राह्मण हूँ । मैंने बल्बूणसे सौं गौ और घोड़ प्राप्त किये थे । हे वायो ! यह सब

तुम्हारे ही है, इन्द्रादि देवताओं की रक्षा प्राप्त करके यहसब सुखी रहते हैं ।३३। राजा पृथुश्रवा के दान के साथ प्रदत्त सुवर्ण भूषणों से सुसज्जित् पूजनीय कन्या को वे अश्व पुत्र वश के अभिमुख लाते हैं ।३३।

सूक्त ४७

(ऋषि–त्रित आप्यः। देवता–आदित्याः, आदित्या उषाश्च।
छन्द–जगती, त्रिष्टुप्)

महि वो महतामवो वरुण मित्र दाशुषे ।
यमादित्या अभि द्रुहो रक्षथा नेमघं नशदनेहसो व ऊतः
सऊतयो व ऊतयः ।१
विदा देवा अधानामादित्यासो अपाकृतिम् ।
पक्षा वयो यथोपरि व्यस्मे शर्म यच्छतानेहसो व ऊतयः
सुऊतयो व ऊतयः ।२
व्यस्मे अधि शर्म तत् पक्षा वयो न यन्तनः ।
विश्वानि विश्ववेदसो वरूथ्या मनामहे ऽनेहसो व ऊतयः
सुऊतयो व ऊतयः ।३
यस्मा अरासत क्षयं जीवातुं च प्रचेमसः ।
मनोर्विश्वस्य घदिम आदित्या राय ईशते ऽनेहसो व ऊतयः
सुऊतयो व ऊतयः ।४
परि णो वृणजन्नघा दुर्गाणि रथ्यो यथा ।
स्यामेदिन्द्रस्य शर्मण्यादित्यानामुतावस्यजेहसो व ऊतयः
सुऊतयो व ऊतयः ।५।७

हे मित्र वरुण ! हविदाता के निमित्त तुम्हारे रक्षा साधन महान् है । तुम जिसे चाहो, वह शत्रु के हाथमें नहीं पड़ता और पाप भी उसे छू नहीं सकता, तुम्हारे द्वारा रक्षित व्यक्ति का उपद्रव व्यर्थ होता है, तुम्हारी रक्षायें सुन्दर है ।१। हे आदित्यो ! तुम दुःख दूर करना जानते हो । जैसे चिड़ियायें पंख फैलाकर अपने बच्चों को सुख देती है, वैसे ही सुख प्रदान करो । तुम्हारा सामर्थ्य शोभनीय है, उसके प्राप्त होने पर किसी उपद्रव का भय नहीं रहता ।२। पक्षियों के पंख के समान जो

तुम्हारे पास है उसे हमको दो । हे आदित्यो ! हम तुमसे घर के योग्य धन को याचना करते हैं, तुम्हारे रक्षा साधन सुन्दर है,उन्हें प्राप्त करने पर किसी प्रकार के उपद्रव का भय नहीं रहता ।३ जिस यजमान को आदित्य अन्न देते हैं, उसके लिए सब मनुष्यों के धन का स्वामित्व प्राप्त करते हैं, तुम्हारे रक्षात्मक साधन सुन्दर है, उन्हें प्राप्त करने पर किसी प्रकार के उपद्रव का भय नहीं रहता । । जैसे रथ को खींचने वाले अश्व दुर्गम पथ पर नहीं चलते, वैसेही हम भी पाप-पथ पर नहीं चलेगे । हम आदित्य से रक्षा और कल्याण पावेंगे, उनके रक्षात्मक साधन श्रेष्ठ हैं उन्हें पाकर किसी प्रकार का भय नहीं रहता ।५। (७)

परिह्वतेदना जनो तुष्मादत्तस्य वायति ।
देवा अदभ्रमाश वो यमादित्या अहेतनानेहसो व ऊतयः
सुऊतयो व ऊतयः ।६
न तं तिग्मं चन त्यजो न द्रासदभि तं गुरु ।
यस्मा उ शर्म सप्रथ आदित्यासो अराध्वमनेहसो व ऊतयः
सुऊतयो व ऊतयः ।७
युष्मे देवा अपि ष्मसि युध्यन्त इव वर्मसु ।
यूयं महो न एनसो यूयमर्भादुरुष्यतानेहसो व ऊतयः
सुऊतयो व ऊतयः ।८
अदितिर्न उरुष्यदितिः शर्म यच्छतु ।
माता मित्रस्य रेवतो ऽर्यम्णो वरुणस्य चानेहसो व ऊतयः
सुऊतयो व ऊतयः ।९
यद्देवाः शर्म शरण यद्भद्रं यदनातुरम् ।
त्रिधातु यद्वरूथ्यं तदस्मासु वि यन्तनानेहसो व ऊतयः
सूऊतयो व ऊतयः ।१० ८

हे आदित्यो ! तुम्हारा धन अत्यन्त कष्ट साध्य है । तुम शीघ्र गमन द्वारा जिस यजमान पर अनुग्रह करते हो वह यजमान हो जाता है । तुम्हारे रक्षात्मक आयुध श्रेष्ठ है उन्हें पाकर भय नहीं रहता ।६।

हे आदित्यो ! जिसे तुम सुख देते हो वह क्रोध रहित रहता हुआ दुःख से भी बचा रहता है। तुम्हारे रक्षात्मक आयुध श्रेष्ठ हैं, उनसे उपद्रव की आशङ्का नहीं रहती।७। हे आदित्यो ! कवच की रक्षा में जैसे वीर रहते हैं, वैसे ही हम तुम्हारी रक्षा में रहेंगे। तुम हमको कम या अधिक अनिष्टों से रहित करो। तुम्हारे रक्षात्मक आयुध श्रेष्ठ हैं उनसे उपद्रव का भय नहीं रहता।८। अदिति हमको सुख दें वह हमारा मङ्गल करें वह मित्र, वरुण अर्यमा की माता, अदिति धन से सम्पन्न हैं तुम्हारी रक्षायें श्रेष्ठ हैं, उन्हें प्राप्त कर उपद्रव नहीं रहता।९। हे आदित्यो ! तुम हमको रोग-रहित सुववेनीय सुख दो, तुम्हारे रक्षा श्रेष्ठ हैं, उनके प्राप्त होने पर किसी प्रकार के उपद्रव का भय नहीं रहता।१०। (८)

आदित्या अव हि ख्यताधि कूलादिव स्पशः।
सुतीर्थमर्वतो यथानु नो नेषथा सुगमनेहसो व ऊतयः
सुऊतयो व ऊतयः।११
नेह भद्रं रक्षस्विने नावयै नोपया उत।
गवे च भद्रं धेनवे वीराय च श्रवस्यते ऽनेहसो व ऊतयः
सुऊतयो व ऊतयः।१२
यदाविर्यदपीच्यं देवासो अस्ति दुष्कृतम्।
त्रिते तद्विश्वमाप्त्य आरे अस्मद् दधातनानेहसो व ऊतयः
सुऊतयो व ऊतयः।१३
यच्च गोषु दुष्ष्वप्न्यं यच्चास्मे दुहितर्दिवः।
त्रिताय तद्विभावर्याप्त्याय परा वहानेहसो व ऊतयः
सुऊतयो व ऊतयः।१४
निष्कं वा घा कृणवते स्रजं वा दुहितर्दिवः।
त्रिते दुष्ष्वप्न्यं सर्वमाप्त्ये परि दद्मस्यनेहसो व ऊतयः
सुऊतयो व ऊतयः।१५।९

हे आदित्यों ! किनारे के नीचे पदार्थों को जैसे मनुष्य देखता है वैसे ही ऊपर के तुम हमको देखो। जैसे घोड़े को रमणीक घाट पर

ले जाते हैं, वैसे ही हमको सुन्दर स्थान प्राप्त कराओ, तुम्हारे रक्षा साधन श्रेष्ठ हैं उनके रहते किसी उपद्रव का भय नहीं रहता ।११। हे आदित्यो ! हमारी हिंसा करने की इच्छा वाले सुखी न हों । गौ, पशु, और अन्न की कामना वाले हम सुखी हों । तुम्हारे रक्षात्मक साधन उत्तम है । उनको पाकर किसी उपद्रव का भय नहीं रहता ।१२। हे आदित्यो ! प्रकट या अप्रकट पाप मुझे कोई भी प्राप्त न हो ! मुझसे इन्हें दूर ही रखो । तुम्हारे रक्षात्मक साधन श्रेष्ठ हैं, तुम्हें प्राप्त करने पर कोई उपद्रव नहीं होता ।१३। हे सूर्य पुत्री उषे ! हमारी गौओं के दुःस्वप्न को दूर करो । तुम्हारे रक्षा साधन श्रेष्ठ हैं, उन्हें पाकर उपद्रव का भय नहीं रहता ।१४। हे उषे ! जो मालाकार में दुःस्वप्न है, उसे पृथक करो । तुम्हारे रक्षा साधन श्रेष्ठ है, उन्हें प्राप्तकर लेने पर किसी प्रकार के उपद्रव का भय नहीं रहता ।१५।   (६)

यदन्नाय तदपसे तं भागमुपसेदुषे ।
त्रिताय च द्विताय चो षो दुष्ष्वप्न्य वहानेहसो व ऊतयः
सुऊतयो व ऊतयः ।१६

यथा कलां यथा शफं यथ ऋणं संवयामसि ।
एवा दुष्ष्वप्न्यं सर्वमाप्त्ये सं नयामस्यनेहसो व ऊतयः
सुऊतयो व ऊतयः ।१७

अजैष्माद्यासनाम चाभूमानागसो वयम् ।
उषो यस्माद् दुष्ष्वप्न्यादभेष्माप तदुच्छत्वनेहसो व ऊतयः
सुऊतयो व ऊतयः ।१८।१८

हे उषे ! स्वप्न में अन्न पाने जैसे दुःस्वप्न के पाप को दूर करो । तुम्हारे रक्षा साधन श्रेष्ठ हैं, उन्हें पाकर किसी प्रकार के उपद्रव का डर नहीं रहता ।१६। जैसे यज्ञ में दान के लिए विविध वस्तुये क्रमसे देने योग्य होती हैं, जैसे ऋण धीरे-धीरे चुकाया जाता है, वैसे ही हम सब दुःस्वप्न को क्रम से दूर कर देंगे ।१७। आज हम पाप से रहित होंगे, आज हमारा कल्याण होगा, आज हम विजय प्राप्त करेंगे । हे

उषे ! हम दुःस्वप्न से भयभीत है, तुम्हारे श्रेष्ठ साधन को पाकर किसी प्रकार के उपद्रव का भय नहीं रहता ।१८।   (१०)

सूक्त ४८

(ऋषि—प्रगाथः काण्वः । देवता—सोमः । छन्द—त्रिष्टुप् जगती)

स्वादोरभक्षि वयसः सुमेधा स्वाध्यो वरिवोवित्तस्य ।
विश्वे यं देवा उत मर्त्यासो मधु ब्रुवन्तो अभि संचरन्ति ।१
अन्तश्च प्रागा अदितिर्भवास्यवयाता हरसो दैव्यस्य ।
इन्दविन्द्रस्य सख्यं जुषाणः श्रौष्टीव धुरमनु राय ऋध्याः ।२
अपाम सोमममृता अभूमागन्म ज्योतिरविदाम देवान् ।
किं नूनमस्मान् कृणवदरातिः किमु धूर्तिरमृत मर्त्यस्य ।३
शं नो भव हृद आ पीत इन्दो पितेव सोम सूनवे सुशेवः ।
सखेव सख्य उरुशंस धीरः प्र ण आयुजीवसे सोम तारीः ।४
इमे मा पीता यशस उरुष्यवो रथं न गावः समनाह पर्वसु ।
ते मा रक्षन्तु विस्रसश्चरित्रादुत मा स्रामाद्यवयन्विन्दवः ।५।११

मैं श्रेष्ठ बुद्धि उत्तम कर्म और अध्ययन से सम्पन्न हूँ । मैं अत्यन्त पूजनीय स्वादिष्ट अन्न का स्वाद ले सकूं । विश्वेदेवा और मनुष्य इस अन्न को सेवनीय कहकर ग्रहण करते हैं ।१। हे सोम! तुम हृदय प्रवेश में जाते ही । तुम देवताओं को क्रोध रहित करते हो तुम इन्द्र से संख्य भाव पाकर, अश्व के समान हमारे धन को वहन करो ।२। हे सोम ! तुम अमृतत्व वाले हो । हम तुम्हारा पान करके ही अमर होंगे । फिर हम स्वर्ग में जाकर देवताओं को जानेंगे । मैं मनुष्य हूँ, हिंसक शत्रु मेरा क्या कर सकेगा ।१३। हे सोम ! पुत्र के लिए पिता के समान सुखकारी तुम पान करनेपर प्रसन्नता-दायक होओ । मेधावी प्रशंसित सोम ! तुम अधिक जीवन के निमित्त हमारी आयु-वृद्धि करो ।४। जैसे अश्वों को रथ में बाँधा जाता है, वैसे ही पान किए जाने पर यह सोम मेरे प्रत्येक अवयव को कर्मों के साथ बाँध दे । यह सोम मुझे

रोगों से बचावें और मुझे आवरण होन न होने दें ।५। (११)
अग्नि न मा माथितं सं दिदीपः प्र चक्षय कृणुहि वस्यसो नः ।
अथा हि ते मद आ सोम मन्ये रेवाँ इव प्र चरा पुष्टिमच्छ ६
इषिरेण ते मनसा सुतस्य भक्षीमहि पित्र्यस्येव रायाः ।
सोम राजन् प्र ण आयूंषि तारीरहानीव सूर्यो वासराणि ।७
सोम राजन् मृलया नः स्वस्ति तव स्मसि व्रत्यास्तस्य विद्धि ।
अलर्ति दक्ष उत मन्युरिन्द्रो मा नो अर्यो अनुकामं परा दाः ।८
त्वं हि नस्तन्वः सोम गोपा गात्रेगात्रे निषसत्था नृचक्षाः ।
यत् ते वयं प्रमिनाम व्रतानि स नो मूल सुषखा देव वस्यः ।९
ऋदूदरेण सख्या सचेय यो मा न रिष्येद्धर्यश्व पीताः ।
अय यः सोमो न्यधाय्यस्मे तस्मा इन्द्रं प्रतिरमेम्यायुः ।१०।१२

हे सोम ! पान कर लेने पर कर लेने पर प्रदीप्त अग्नि के समान ही मुझे तेजस्वी बनाओ । मुझपर अनुग्रह करते हुए धनदो । मैं तुम्हारे हर्ष की याचना करता हूँ, अतः धन द्वारा पुष्टि को प्राप्त करो ।३। हम पैतृक धन के समान ही इस सुसंस्कृत सोम को पीयेंगे । हे सोम ! जैसे सूर्य दिनों की वृद्धि करते हैं, वैसे ही तुम मेरी आयुकी वृद्धि करो ।७। हे सोम ! मृत्यु से रक्षित करते हुए हमको सुख दो । हम व्रती तुम्हारे ही है इसलिए हमको जानो । हे इन्द्र हमारा शत्रु बहुत बढ़गया है, वह क्रोध में भरा हुआ जा रहा है, इनके दण्ड से मेरी रक्षा करो ।८। हे सोम ! तुम हमारे देह की रक्षा करने वालेहो । तुम कर्म प्रेरकों को देखने वाले हो । तुम सब अङ्गों में व्याप्त होते हो । तुम्हारे कार्यों में हमारे द्वारा विघ्न उपस्थित किये जाने पर भी तुम हमारे अन्नवान् मित्र होकर हमारा मङ्गल करो ।९। हे सोम ! तुम मित्ररूप से मेरे शरीर में मिलते हो इसलिए कोई व्याधि उत्पन्न न करना । पान करने के पश्चात् मुझे हिंसित मत करना । हे इन्द्र ! मेरे उदर में गया हुआ यह सोम चिरकाल तक प्रभावकारी रहे ।१०। (१२)

अप त्या अस्थुरनिरा अभीवा निरत्रसन् तमिषीचीरभैषुः ।
आ सोमो अस्माँ अरुहुद्विहाया अगन्म यत्र प्रतिरन्त आयुः ।११
यो न इन्दुः पितरो हृत्सु पीतो ऽमर्त्यो मर्त्याँ आविवेश ।
तस्मै सोमाय हविषा विधेम मृलीके अस्य सुमतौ स्याम ।१२
त्वं सोम पितृभिः संविदानो ऽनु द्यावापृथिवी आ ततन्थ ।
तस्मै त इन्दो हविषा विधेम वयं स्याम पतयो रयीणाम् ।१३
त्रातारो देवा अधि वोचता नो मा नो निद्रा ईशत मोत जल्पिः।
वयं सोमस्य विश्वह प्रियासः सुवीरासो विदथमा वदेम ।१४
त्वं नः सोम विश्वतो वयोधास्त्वं स्वर्विदा विशा नृचक्षाः ।
त्वं न इन्द ऊतिभिः सजोषाः पाहि पश्चातादुत वा पुरस्तात्
।१५।१३

बलवती होती हुई व्याधियाँ शरीर में कम्पन करती हैं, अतः वह असाध्य पीड़ायें मुझसे दूर रहें। इस महान् सोम को पीने से आयु वृद्धि होती है। हम मनुष्य इस सोमका ही सामीप्य प्राप्त करेंगे ।११। हे पितरो ! जो सोम पीने के पश्चात् हमारे हृदयों में प्रतिष्ठित हुआ है उसी सोम का हव्य द्वारा सेवन करते हुई हम इसके द्वारा सुन्दर बुद्धि में रहेंगे ।१२। हे सोम ! तुम पितरों से संयुक्त होकर आकाश और पृथिवी का विस्तार करते हो। हम हवियों से तुम्हारी सेबा करते हुए धनवान् हो जायेंगे ।१३। हे देवताओ ! हमसे मधुर वाणी बोलो। हम दुःस्वप्न के वश में पड़े। हम सोम के प्रिय होते हुए सुन्दर स्तोत्रों का मधुर उच्चारण करे और निन्दा करने वाले शत्रु कभी हमारी निन्दा न कर सके ।१४। हे सोम ! तुम स्वर्ग के देने वाले हो, सर्वदर्शी हो और सब ओर अन्नदान करते हो। तुम हमारे शरीर में प्रविष्ट होकर प्रसन्नता पूर्वक अपनी रक्षात्मक शक्ति के द्वारा सामने से और पीठ की ओर से हमारी रक्षा करो ।१५। (१३)

॥ अथ बालखिल्यम् ॥

सूक्त ४९

(ऋषि–प्रस्कण्वः काण्वः। देवता–इन्द्रः। छन्द–बृहती पंक्ति)

अभि प्र: वा सुराधसमिन्द्रमर्च यथा विदे ।
यो जरितृभ्यो मघवा पुरूवसुः सहस्रेणेव शिक्षति ।१
शतानीकेव प्र जिगाति धृष्णुया हन्ति वृत्राणि दाशुषे ।
गिरेरिव प्र रसा अस्य पिन्विरे दत्राणि पुरुभोजसः ।२
आ त्वा सुतास इन्दवो मदा य इन्द्र गिर्वणः ।
आपो न वज्रिन्नन्वोक्यं सरः पृणान्ति शूर राधसे ।३
अनेहसं प्रतरणं विवक्षणं मध्वः स्वादिष्ठमीं पिब ।
आ यथा मन्दसानः किरासि नः प्र क्षुद्रेव त्मना धृषत् ।४
आ नः स्तोममुप द्रवद्धियानो अश्वो न सोतृभिः ।
यं ते स्वधावन् त्स्वदयन्ति धेनव इन्द्र कण्वेषु रातयः ।५ १४

हे स्तोताओं ! शोभन-धन इन्द्र की अभिमुख कर पूजन करो वे स्तुति करने वालों को सहस्रों प्रकार के धन प्रदान करते हैं।१। शत सैन्यों के अधिपति के समान इन्द्र गर्व सहित गमन करते हैं। हवि देने वालों के हित के लिए वे मेव को विदीर्ण करते हैं। उनको दिया गया सोम से पर्वत के सोम के समान ही हृष्टिप्रद है। इन्द्र अनेकों के रक्षक हैं।२। हे इन्द्र ! हर्षदायक सोम तुम्हारे लिए ही संस्कारित हुआ है। हे वज्रिन् ! जल अपने आश्रय स्थान सरोवर को पूर्ण करता है, वैसे ही यह सोम तुम्हें पूर्ण करता हैं।६। हे इन्द्र ! तुम स्वर्ग के देने वाले, पालन और पाप रहित इस मधुर रस को पीओ। इसकी शक्ति से हर्षित होकर क्षुद्रा नामक दान देने वाली के समान तुम इच्छित प्रदान करते हो।४। हे अन्नवान् इन्द्र ! तुमने कण्व गोत्रियों को जो हर्षप्रद दान किया था, वह दान स्तोत्र को मधुर करने वाला है। अभिषव-कर्त्ताओं द्वारा आहूत होकर तुम उस स्तोत्र की ओर शीघ्रता से आगमन करो।५।

उग्रं न वीरं नमसोप सेदिम विभूतिमक्षितावसुम् ।

उद्रीव वज्रिन्नवतो न सिञ्चते क्षरन्तीन्द्र धीतयः ।६
यद्ध नूनं यद्वा यज्ञे यद्वा पृथिव्यामधि ।
अतो नो यज्ञमाशुभिर्महेमत चग्र उग्रेभिरा गहि ।७
अजिरासो हरयो ये त आशवो वाता इव प्रसक्षिणः ।
येभिरपत्यं मनुषः परीयसे येभिर्विश्वं स्वर्दृशे ।८
एतावतस्त ईमह इन्द्र सुम्नस्य गोमतः ।
यथा प्रावो मघवन् मेध्यातिथिं यथा नीपातिथिं धने ।९
यथा कण्वे मघवन् त्रसदस्यवि यथा पक्थे दशव्रजे ।
यथा गोशर्ये असनोर्ऋजिश्वनीन्द्र गोमद्धिरण्यवत् ।१०।१५

इन्द्र अक्षय धन से सम्पन्न, पराक्रमी और विभूति रूप है, हम उन्हें नमस्कारु करते हुए प्राप्त करेंगे । हे वज्रिन् ! जैसे जल से पूर्ण कूप खेतों को सींचता है, वैसे हमारे सब स्तोत्र तुम्हें सींचते हैं ।६। हे इन्द्र ! तुम यज्ञ के समय पृथिवी में अथवा जहाँ भी हो, वहीं से अपने शीघ्र गमन करने वाले हर्यश्व सहित हमारे इस यज्ञ स्थान में आगमन करो ।७। हे इन्द्र ! तुम्हारे हर्यश्व शत्रुओं को जीतने वाले तथा द्रुतगामी हैं तुम उन्हीं के द्वारा संसार के सब पदार्थों को देखने के लिए गमन करते हो ।८। हे इन्द्र ! गौ से सम्पन्न धन की याचना करता हूँ। तुमने मेधातिथि और नोपा तिथि को धन के द्वारा रक्षा की थी ।९। हे इन्द्र ! तुम्हीं ने त्रसदस्यु, ऋजिस्वा, गोशर्य, कण्व, पक्थ और दशवज्र आदि स्तोताओ को गौओं और सुवर्ण से सम्पन्न श्रेष्ठ धन प्रदान किया था ।१०।   (१५)

सूक्त ५०

(ऋषि—प्रस्कण्वः काण्वः । देवता—इन्द्र । छन्द—वृहती, पंक्ति)

प्र सु श्रुतं सुराधसमर्चा शक्रमभिष्टये ।
यः सुन्वते स्तुवते काम्यं वसु सहस्रेणेव मंहते ।१
शतानीका हेतयो अस्य दुष्टरा इन्द्रस्य समिषो महीः ।

गिरिर्ण भुज्मा मघवत्सु पिन्वते यदीं सुता अमन्दिषुः ।२
यदी सुतास इन्दवोऽभि प्रियममन्दिषुः ।
आपो न धायि सवनं म आ वसो दुघाइवोप दाशुषे ।३
अनेहसं वो हवमानमूतये मध्वः क्षरन्ति धीतयः ।
आ त्वा वसो हवमानास इन्दव उप स्तोत्रेषु दधिरे ।४
आ नः सोमे स्वध्वर इयानो अत्यो न तोशते ।
यं ते स्वदावन् त्स्वदन्ति गूर्तयः पौरे छन्दयसे हवम् ।५।१६

हे इन्द्र ! तुम सुन्दर धन से सम्पन्न एवं दान में प्रसिद्ध हो। हे स्तोता ! वह इन्द्र सहस्रों प्रकार से उपभोग्य धन प्रदान करते हैं, अतः उन्हीं इन्द्र के सैकड़ों अस्त्र हैं, यह इन्द्र के ही अन्न से प्रकट होते हैं। जब इन्द्रको संस्कारित सोम हर्षयुक्त करता है, तब वह पर्वत के समान उपभोग्य पदार्थों को देते हुए धनी यजमानों को सन्तुष्ट करते है ।१। जब सोम से इन्द्र प्रसन्न हुए तब गौओं के समान हविदाता के लिए जल स्थित हुआ ।२। हे ऋत्विजो ! आहूत किये गये इन्द्र को यह सभी कर्मः तुम्हारे निमित्त मधु से सींचते हैं, हे इन्द्र ! स्तोत्र किए जाने के समय सोम को तुम्हारे अभिमुख रखते हैं ।४। अश्व के समान जाने वाले इन्द्र श्रेष्ठ यज्ञ में निष्पन्न सोम से प्रेरित है। हे इन्द्र ! तुम्हारे स्तोताओं ने इस सोम को स्वादिष्ट बनाया। तुम पुरु-पुत्र के आह्वान को सुनो ।१६।

प्र वीरमुग्रं विविचिं धनस्पृतं विभूतिं राधसो महः ।
उद्रीव वज्रिन्नवतो वसुत्वना सदा पीपेथ दाशुषे ।६।
यद्ध नूनं परावति यद् वा पृथिव्यां दिवि ।
युजान इन्द्र हरिभिर्महेमत ऋष्व ऋष्वेभिरा गहि ।७
रथिरासो हरयो ये ते अस्रिध ओजो वातस्य पिप्रति ।
येभिर्नि दस्युं मनुषो निघोषयो येभिः स्वः परीयसे ।८
एतावतस्ते वसो विद्याम शूर नव्यसः ।
यथा प्राव एतशं कृत्व्ये धने यथा वशं दशव्रजे ।९

यथा कण्वे मघवन् मेधे अध्वरे दीर्घनीथे दमूनसि ।
यथा गोशर्ये असिषासो अद्रिवो मयि गोत्रं हरिश्रियम् ।१०।१७

इन्द्र महान् विभक्ति युक्त पराक्रमी विकराल और प्रसन्नता प्रदान करने वाले हैं । हम उनकी स्तुति करते हैं । हे वज्रिन् ! जल से पूर्ण कूप के समान महान धन सहित आकर हविदाता के सुख के निमित्त इस सोम को पीओ ।६। हे इन्द्र ! तुम पृथिवी में स्वर्ग में दूर या पास कहीं भी हो, वहीं से अपने हर्यश्व युक्त रथ में आगमन करो ।७। हे इन्द्र तुम्हारे रथ को खीचने वाले अश्व अहिंसित और वायु के समान वेगवान् हैं । तुमने इनकी ही सहायता से सब पदार्थों को व्याप्त किया, दैत्यों का वध किया और मनु को प्रसिद्ध किया है ।८। हे इन्द्र ! तुम्हारे सब धनों को हम जानते हैं । तुमने एतश और दशवज्र की धन के निमित्त रक्षा की ।९। हे वज्रिन् ! शत्रु के नाश की कामना करने वाले दीर्घजीवी और गोशर्य की यज्ञ में जिस प्रकार रक्षा की थी जैसे अश्वों सहित आकर हमारी रक्षा करों ।१०। (१७)

सूक्त ५१

(ऋषि—श्रुष्टिगुः । देवता—इन्द्रः । छन्द—बृहती, पंक्तिः)

यथा मनौ सांवरणौ सोममिन्द्रापिबः सुतम् ।
नीपातिथौ मघवन् मेध्यातिथौ पुष्टिगौ श्रुष्टिगो सचा ।१
पार्षद्वाणः प्रस्कण्वं समसादयच्छयानं जिव्रिमुद्धितम् ।
सहस्राण्यसिषासद् गवामृषिस्त्वोतो दस्यवे वृकः ।२
य उक्थेभिर्न विन्धते चिकिद्य ऋषिचोदनः ।
इन्द्रं तमच्छा वद नव्यस्या मत्यरिष्यन्तं न भोजसे ।३
यस्मा अर्कं सप्तशीर्षाणमानृचुस्त्रिधातुमुत्तमे पदे ।
स त्विमा विश्वा भुवनानि चिक्रददादिज्जनिष्ट पौंस्यम् ।४
यो नो दाता वसूनामिन्द्रं तं हूमहे वयम् ।
विद्मा ह्यस्य सुमतिं नवीयसीं गोमति व्रजे ।५।१८

हे इन्द्र ! सावर्णि मनु की प्रार्थना पर जैसे तुमने शोधित सोम को

पिया था और शीघ्रगामी गौ वाले मेधातिथि और नीपातिथि के लिये भी सोम पिया था, उसी प्रकार आज भी सोम पान करो ।१। हे इन्द्र जब पार्षद्वाण प्रसुस वृद्ध प्रस्कव को पक्षी के समान ऊपर बैठा दिया था, तब तुमको रक्षाओं द्वारा उन्हें बचाया और सहस्र गौओंकी रक्षा की ।२। जो उक्थों से प्राप्त होते हैं, ऋषियों की प्रेरणा से जो सबके जानने वाले हैं, जो रक्षा देने वाले हैं, उन इन्द्र के निमित्त अभिनव स्तोत्र उच्चारित किया जाता है, उन इन्द्र ने बल को उत्पन्न करते हुए विश्व को शब्द से युक्त बनाया ।४। हम उन धनदाता इन्द्र की कृपा बुद्धि को जानते हैं इसलिए उन्हें आहूत करते हैं। हे इन्द्र! हम गौओं से पूर्ण गोष्ठ के स्वामी हों ।५।

(१८)

यस्मै त्वं वसो दानाय शिक्षसि स रायस्पोषमश्नुते ।
तं त्वा वयं मघवन्निन्द्र गिर्वणः सुतावन्तो हवामहे ।६
कदाचन स्तरीरसि नेन्द्र सश्चसि दाशुषे ।
उपोपेन्नु मघवन् भूय इन्नु ते दानं देवस्य पृच्यते ।७
प्र यो ननक्षे अभ्योजसा क्रिविं वधैः शुष्णं निघोषयन् ।
यदेदस्तम्भीत् प्रथयन्नमूं दिवमादिज्जनिष्ट पार्थिवः ।८
यस्यायं विश्व आर्यो दासः शेवधिपा अरिः ।
तिरश्चिदर्ये रुशमे पवीरयि तुभ्येत् सो अज्यते रयिः ।९
तुरण्यवो मधुमन्तं घृतं श्चुतं विप्रासो अर्कमानृचुः ।
अस्मे रयिः पप्रथे वृष्ण्यं शवोऽस्मे सुवानास इन्दवः ।१०।१९

हे इन्द्र ! तुम जिसे देना चाहते हो, वही तुमसे धन युक्त रक्षा प्राप्त करता है। तुम्हारे इसी प्रभाव के कारण हम सोमाभिषव करने वाले तुम्हें आहूत करते हैं ।६। हे इन्द्र ! तुम देवता हो, तुम रचना से रहित कभी नहीं होते। तुम्हारा दान बारम्बार आकर मिलता है। तुम इस हविदाता यजमान से सुसंगत होओ ।७। जिन इन्द्र ने अपने बल के शुष्ण को मारकर कूप में भरा, जिन्होंने आकाश को आकृष्ट किया और जिन्होंने पृथ्वी के सब पदार्थों को प्रकट किया ।८। जिनके

धनकी रक्षा करने वाले सब स्तोता हैं जो श्वेत पवीरु के अभिमुख होते हैं, वे धन देने वाले इन्द्र तुम्हारे साथ सुसंगत होते हैं ।९। विद्वान् ब्राह्मण मधु-कृत से सम्पन्न पूजाके मन्त्रों को पढ़ते हैं । इसके लिए धन बल और सोम रस प्रसिद्धि को प्राप्त होता है ।१०।   (१९)

सूक्त ५२

(ऋषि—आयु: काण्वः । देवता—इन्द्र, । छन्द—बृहती, पंक्ति)

यथा मनो इन्द्र विवस्वति सोमं शक्रापिबः सुतम् ।
यथा त्रिते छन्द्र जुजोषस्यायौ मादयसे सचा ।१
पृषध्रे मध्ये मातरिश्वनीन्द्र सुवाने अमन्दथा ।
यथा सोमं दशशिप्रे दशोण्ये स्यूमरश्मावृजूनसि ।२
य उक्था केवला दधे यः सोमं धृषितापिबत् ।
यस्मै वि णुस्त्रीणि पदा विचक्रम उप मित्रस्य धर्मभिः ।३
यस्य त्वमिन्द्र स्तोमेषु चाकनो वाजे वाजिञ्छतक्रतो ।
तं त्वा वयं सुदुकामिव गोदुहो जुहूमसि श्रवस्यवः ।
यो नो दाता स नः पिता महाँ उग्र ईशानकृत् ।
अयामन्नुग्रो मघवा पुरूवसुर्गोरश्वस्य प्र दातु नः ।५।२०

हे इन्द्र ! प्राचीन काल में तुमने विवस्वान मनु का सोम पिया था और त्रित के मन को हर्षित किया था तथा मुझ आयु के साथ हर्षयुक्त हुए थे ।१। जैसे तुम मातरिश्वा के पृषध्र अभिषव मे हर्षयुक्त होते हो और दशशिप्त के सोम को पीते हो ।२। जो निर्भीक होकर सोम पीते हैं, जो उक्थों को स्वीकार करते हैं, जिनके प्रति भ्रातृत्वमय कर्तव्य की पूर्ति के लिए विष्णुने तीन बार पद-प्रहार किया ।३। हे शतकर्मा इन्द्र! तुम जिससे यज्ञ में स्तुति की कामना करते हो, उस यज्ञ में हम अन्न की कामना से, दोहनकर्त्ता जैसे गौओंको बुलाता हैं, वैसेही तुम्हें आहूत करते हैं ।४। वह इन्द्र हमको देने वाले पिता है,वे ऐश्वर्य के करने वाले एवं पराक्रमी हैं । वही विकरालकर्मा और महान इन्द्र हमको गौ,अश्व आदि प्रदान करें ।५।   (२०)

यस्मै त्वं वसो दानाय मंहसे स रायस्पोषमिन्वति ।
वसूयवो वसुपतिं शतक्रतुं स्तोमैरिन्द्रं हवामहे ।६
कदा चन प्र युच्छस्युभे नि पासि जन्मनी ।
तुरीयादित्य हवन त इन्द्रियमा तस्थावमृतं दिवि ।७
यस्मै त्वं मघवन्निन्द्र गिर्वणः शिक्षो शिक्षसि दाशुषे ।
अस्माकं गिर उत सुष्टुतिं वसो कण्ववच्छृणुधी हवम् ।८
अस्तावि मन्म पूर्व्यं ब्रह्मेन्द्राय वोचत ।
पूर्वीऋतस्य बृहतीरनूषत स्तोतुर्मेधा असृक्षत ।९
समिन्द्रो रायो बृहतीरधूनुत सं क्षोणी समु सूर्यम् ।
सं शुक्रासः शुचयः सं गवाशिरः सोमा इन्द्रममन्दिषुः ।१०।२१

हे इन्द्र ! तुम्हारी देने की इच्छा होने पर ही धन का रक्षण प्राप्त होता है । स्तोतागण धनकी कामना करके धनपति और प्रजापति इन्द्र को आहूत करते हैं ।६। हे आदित्य ! तुम्हारा आह्वान सूर्य मण्डल में पहुँचता है, तुम कभी-कभी भ्रम में पड़कर दोनों प्रकार के प्राणियों का पोषण करने वाले हो जाते हो ।७। हे इन्द्र ! तुम स्तवनीय, धनवान और दाता हो । हम दाता को धन दो । तुमने जैसे कण्व के स्तोत्रों को सुना था, वैसे ही हमारे स्तोत्रोंको सुनो ।८। हे स्तोता ! इन्द्रके निमित्त प्राचीन स्तोत्रों का उच्चारण करो । प्राचीन स्तुतियों को कहो और अपनी बुद्धि को तीव्र करो ।९। इन्द्र ने आकाश, पृथिवी सूर्य उज्जवल पदार्थ और धनों को प्रेरण किया है । इन इन्द्र को गव्य मिश्रित सोम ने भले प्रकार तृप्त किया था ।१०।

सूक्त ५३ (१२)

(ऋषि—मेध्यः काण्वः । देवता—इन्द्रः । छन्द—बृहती: पंक्तिः)

उपमं त्वा मघोनां ज्येष्ठं च वृषभाणाम् ।
पूर्भित्तमं मघवन्निन्द्र गोविदमीशानं राय ईमहे ।१
य आयुं कुत्समतिथिग्वमर्दयो वावृधानो दिवेदिवे ।
तं त्वा वयं हर्यश्वं शतक्रतुं वाजयन्तो हवामहे ।२

आ नो विश्वेषां रसं मध्वः सिञ्चन्त्वद्रयः।
ये परावति सुन्विरे जनेष्वा ये अर्वावतीन्दवः।३
विश्वा द्वेषांसि जहि चाव चा कृधि विश्वे सन्वन्त्वा वसु।
शीष्टेषु चित्ते मदिरासो अंशवो यत्रा सोमस्य तृम्पसि।४।२२

हे इन्द्र ! तुम कामनाओं की वर्षा करने वाले देवताओं में बड़े शत्रुपुरों के ध्वंसक, धनवान एवं सच्चे ईश्वर हो। में धन की कामना से तुम्हारी स्तुति करता हूँ।१। जिन इन्द्र ने नित्यप्रति बढ़ते हुए, कुत्स और अतिथिग्व को बचाया उन हर्यश्व वाले इन्द्र को हम अन्न की कामना वाले यजमान आहूत करते हैं।२। दूर या पास जहाँ सोम को अभिषुत किया जाता हैं उन सब सोमों का रस हमारे पाषाण द्वारा कुटे जाने पर निकल कर बाहर आवे।३। हे इन्द्र ! सोम पीकर तुम जिस स्थान पर हृष्ट होते हो, वहाँके शत्रुओं को हराकर नष्ट कर देते हो। यह सोम तुम्हारे हर्ष के लिए हैं, यह उप भोग्य हो।४। (२२)

इन्द्र नेदीय एदिहि मितमेधाभिरूतिभिः।
आ शतम शंतमाभिरभिष्टिभिरा स्वापे स्वापिभिः।५
आजितुरं सत्पतिं विश्वचर्षणिं कृधि प्रजास्वाभगम्।
प्र सू तिरा शचीभिर्ये त उक्थिनः कृतुं पुनत आनुषक्।६
यस्ते साधिष्ठोऽवसे ते स्याम भरेषु ते।
वयं होत्राभिरुत देवहूतिभिः ससवांसो मनामहे ७
अहं हि ते हरिवो ब्रह्म वाजयुराजिं यामि सदोतिभिः।
त्वामिदेव तममे समश्वयुर्गव्युरग्रे मथीनाम्।८।२३

हे इन्द्र ! तुम हमारा मंगल करने वाले निकटस्थ बन्धु हो, तुम अतीव बृद्धि, काम्य धन और कल्याण करने वाले रक्षा-साधनों सहित हमारे पास आगमन करो।५। हे स्तोताओ ! सज्जनों के रक्षक, भुवनों के रक्षक, भुवनों के ईश्वर और क्षिप्रकारी, प्रजाओं में व्याप्त इन्द्र की पूजा करो। वे इन्द्र कर्मों के सुन्दर फलों के देने वाले हैं, वे हमारे यज्ञ

का सम्पादन करें ।६। हे इन्द्र ! रक्षा के लिए हम तुम्हारे ही आश्रित हैं। तुम्हारे पास जो सर्वश्रेष्ठ धन है, वह हमें प्रदान करो। युद्ध के अवसर भी हम तुम्हारी स्तुति करते हुए तुम्हें बुलावेंगे ।७। हे हर्यश्व इन्द्र ! मैं अन्न, गौ और अश्व की कामना से तुम्हारी स्तुति करता हूँ और तुम्हारे द्वारा रक्षित होकर रणक्षेत्र में जाता हूँ और भय प्राप्त होने पर तुम्हें शत्रुओं के मध्य प्रतिष्ठित करता हूँ ।८। (२३)

सूक्त ५४

(ऋषि—मातरिश्वः काण्वः देवता—इन्द्रः विश्वेदेवाः। छन्द—वृहती पंक्ति)

एतत् त इन्द्र वीर्यं गीर्भिर्गृणन्ति कारवः।
ते स्तोभन्त ऊर्जमावन् घृतश्चुतं पौरासो नक्षन् धीतिभिः ।१
नक्षन्त इन्द्रमवसे सुकृत्यया येषां सुतेषु मन्दसे।
यथा संवर्तें अमदो यथा कृश एवास्मे इन्द्र मत्स्व ।२
आ नो विश्वे सजोषसो देवासो गन्तनोप नः।
वसवो रुद्रा अवसे न आ गमञ्छृण्वन्तु मरुतो हवम् ।३
पूषा विष्णुर्हवनं मे सरस्वत्यवन्तु सप्त सिन्धवः।
आपो वातः पर्वतासो वनस्पतिः शृणोतु पृथिवी हवम् ।४।२४

हे इन्द्र ! स्तोताओं ने तुम्हारी स्तुति से बल प्राप्त किया था। प्रजाओं ने अपने कर्मसे तुम्हें व्याप्त किया था। स्तोतागण तुम्हारे बल का सर्वथा पान करते हैं ।१। हे इन्द्र ! जिनके अभिषुत सोम द्वारा तुम हर्षयुक्त होते हो, वे यजमान अपने कार्यसे तुम्हें व्याप्त करते हैं। जिस प्रकार तुमने सम्वर्त और कृश पर कृपा की थी, वैसे ही कृपा मुझ पर करो ।२। सब देवता हमारे अभिमुख हों। ये हम पर समान रूप से प्रसन्न होते हुए आवें। वसु, रुद्र और मरुद्गण हमारी रक्षा के लिए स्तुतियों को सुनें ।३। विष्णु, पूषा, सात नदियाँ, सरस्वती, वनस्पति, जलः वायु और पर्वत सब मेरे यज्ञ की रक्षा करें और पृथिवी भी मेरे स्तोत्र का श्रवण करें ।४। (२४)

यदिन्द्र राधो अस्ति ते माघोनं मघवत्तम ।
तेन नो बोधि सधमाद्यो वृधे भगो दानाय वृत्रहन् ।५
आजिपते नृपते त्वमिद्धि नो वाज आ वक्षि सुक्रतो ।
वीती होत्राभिरुत देववीतिभिः ससवांसो वि शृण्विरे ।६
सन्ति ह्यर्य आशिष इन्द्र आयुर्जनानाम् ।
अस्मान् नक्षस्व मघवन्नुपावसे धुक्षस्व पिप्युषीमिषम् ।७
वयं त इन्द्र स्तोमेभिर्विधम त्वमस्माकं शतक्रतो ।
महि स्थूरं शशयं राधो अह्रयं प्रस्कण्वाय नि तोशय ।८।२५

हे वृत्रहन्ता इन्द्र ! तुम अपने धन के सहित हर्षित होकर हमें देने के लिए आगे आओ ।५। हे राजन् ! तुम हमको रणभूमि ले से चलो । स्तोत्र और यज्ञ के समय देवगण भक्षण के लिए सुसंगित करते कहे जाते हैं ।६। इन्द्र के पास मनुष्यों की आयु और समृद्धि का आशीर्वाद हैं । हे इन्द्र ! तुम हमें पुष्ट करने वाला अन्न दो ।७। हे इन्द्र ! तुम हमारे ही । स्तुतियों से हम तुम्हारी उपासना करेंगे । तुमने प्रस्कण्व की रक्षा के लिए स्थूल और समृद्ध धन दिया है ।८। (२५)

सूक्त ५५

(ऋषि–ध्यशः काण्वः । देवता–प्रस्कण्वस्य दानस्तुतिः । छन्द–गायत्री, अनुष्टुप्)

भूरीदिन्द्रस्य वीर्यं व्यख्यमभ्यायति । राधस्ते दस्यवे वृक ।१
शतं श्वेतास उक्षणो दिवि तारो न रोचन्ते ।
मह्ना दिवं न तस्तभुः ।२
शतं वेणूञ्छतं शुनः शतं चर्माणि म्लातानि ।
शतं मे बल्बजस्तुका अरुषीणां चतुःशतम् ।३
सुदेवाः स्थ काण्वायना वयोवयो विचरन्तः ।
अश्वासो न चङ्क्रमत ।४
आदित् साप्तस्य चर्किरन्नानूनस्य महि श्रवः ।
श्यावीरतिध्वसन् पथश्चक्षुपा चन संनशे ।५।२६

इन्द्र राक्षसों के लिए व्याघ्र के समान हैं । हम इनके असंख्य कार्यों को जानते है । हे इन्द्र ! तुम्हारा धन हमारे अभिमुख होता हैं

।१। आकाश में तारों के दमकने के समान सौ-सौ वृष शोभित होते हुए अपनी महिमा से स्वर्ग को स्तब्ध करते हैं ।२। सौ श्वान, सौ वेणु सौ म्लात, चर्म, सौ बल्वजस्तक और चार सौ अरुषी हैं ।३। हे कण्व ऋषिवो ! तुम सब अन्नों में रमते हुए और अश्वों के समान बार-म्बार गमन करते हुए सुन्दर देव सम्पन्न हों गए हो ।४। सप्त व्याहृतियों से सम्पन्न इन्द्र के लिए महान् अन्न पृथक होता है। काले वर्ण के मार्ग का उल्लंघन करने पर वह नेत्रों से दिखाई पड़ता है ।५। (२६)

सूक्त ५६

(ऋषि-पृषध्रः काण्वः । देवता-प्रस्कण्वस्य दानस्तुतिः, वग्निसर्यौ । छन्द-गायत्री, पक्ति)

प्रति ते दस्यवे वृक राधो अदर्श्यह्रयम् । द्यौर्न प्रथिना शवः ।१
दश मह्यं पौतक्रतः सहस्रा दस्यवे वृकः । नित्याद्रायो अमंहत ।२
शतं मे गर्दभानां शतमूर्णावतीनाम् । शतं दासाँ अति स्रजः ।३
तत्रो अपि प्राणीयत पूतक्रतायै व्यक्ता । अश्वानामिन्न यथ्याम।४
अचेत्यग्निश्चिकितर्हव्यवाट् स सुमद्रथः ।
अग्निः शुक्रेण शोचिषा बृहत् सूरो अरोचत
दिवि सूर्यो अरोचत ।५।२७

राक्षसों के लिए व्याघ्र रूप इन्द्र ! तुम्हारा धन महान है तुम्हारी सेना आकाश के समान महिमामयी हैं ।१। राक्षसोंको व्याघ्र होने वाले इन्द्र ! तुम्हारा धन नित्य है, उसमें से मुझे दस सहस्र प्रदान करो ।२। हे इन्द्र ! मुझे एक-एक सौ भेड़े, गधे और दास प्रदान करो ।३। जो पुरुष सुन्दर बुद्धि वाले हैं उन्हीं के पास अश्व समूह के समान यह प्रकट धन पहुँचता है ।४। अग्नि प्रकट हो गये । वे मेधावी सुन्दर रथ वाले और हवियों के वहन करने वाले हैं। जैसे सूर्य मण्डल में सूर्य सुशोभित होते हैं, वैसे ही अग्नि बिराट और गतिमान होते हुए सुशोभित होते हैं ।५। (२७)

सूक्त ५७

(ऋषि–मेध्यः काण्वः । देवता–अश्विनौ । छन्द–त्रिष्टुप्)

युवं देवा क्रतुना पूर्व्येण युक्ता रथेन तविषं यजत्रा ।
आगच्छतं नासत्या शचीभिरिदं तृतीयं सवनं पिबाथः ।१
युवां देवास्त्रय एकादशासः सत्याः सत्यस्य दद्दशे पुरस्तात् ।
अस्माकं यज्ञं सवनं जुषाणा पातं सोममश्विना दीद्यग्नी ।२
पनाय्यं तदश्विना कृतं वां वृषभो दिवो रजसः पृथिव्याः ।
सहस्रं शंसा उत ये गविष्टौ सर्वां इत् तां उप याता पिबध्यै ।३
अयं वां भागो निहितो यजत्रेमा गिरो नासत्योप यातम् ।
पिबतं सोमं मधुमन्तमस्मे प्र दाश्वांसमवतं शचीभिः ।४।२८

हे अश्विनीकुमारो ! प्राचीन निर्मित्त रथ पर आरूढ़ होकर यज्ञ में आगमन करो । तुम दिव्य अपने कर्म की शक्ति से ही तीसरे सवन में रहते हो ।१। तैंतीस देवता सत्य रूप वाले हैं । वे यज्ञ के अभिमुख होते हैं । हे अश्विनीकुमारों ! तुम आकाश पृथिवी और अन्तरिक्ष में यथेष्ट वर्षा करते हो ।२। मैंने तुम्हारे लिए ही यह स्तुति की है । सहस्रों स्तुति करने वालों, गौ-सेवकों और यज्ञ कर्म वालों के आह्वान पर सोम पीने के लिये आओ ।३। हे अश्विनी कुमारो ! तुम यहाँ आगमन करो । तुम्हारा यज्ञ भाग यहाँ रखा है । हविदाता को अपनी रक्षाद्वारा रम गया । और मधुर सोम-रस को पीओं ।४। (२८)

सूक्त ५८

(ऋषि–मेध्य, काण्वः । देवता–विश्वेदेवा ऋत्विजो वा । छन्द-त्रिष्टुप्)

यमृत्विजो वहुधा कल्पयन्तः सचेतसो यज्ञमिमं वहन्ति ।
यो अनूचानो ब्राह्मणो युक्त आसीत् का स्वित् तत्र यजमानस्य संवित् ।१
एक एवाग्निर्बहुधा समिद्ध एकः सूर्यो विश्वमनु प्रभूतः ।
एकैवोषा सर्वमिदं वि भात्येकं वा इदं वि बभूव सर्वम् ।२
ज्योतिष्मन्तं केतुमन्तं त्रिचक्रं सुखं रथं सुषदं भूरिवारम् ।
चित्रामघा यस्य योगेऽधिजज्ञे तं वां हुवे अति रिक्तं पिबध्यै ।३२९

विभिन्न कल्पनाओं द्वारा ऋत्विजो ने इस यज्ञ कार्य का सम्पादन किया है। स्तोत्र न कहने पर भी स्तोता कहा जाये उसके सम्बन्ध में यजमान क्या जानता है ? ।१। एक अग्नि अनेक कर्म वाले हैं, एक सूर्य स्नान भेद से अनेक होते है, उषा उन सबके आगे आती है। यह सब एक ही हुए हैं ।२। अग्नि देवता ज्योतिरूप, धुम्रकेतु एवं सुखकारी हैं । उन्हे सोम-पान के लिए इस यज्ञमें आहूत करता हूँ। उनके प्राप्त होने पर दिव्य धन मिलता है ।३। (२५)

सूक्त ५९

(ऋषि-सुपर्णः काण्वः । देवता-इन्द्रावरुणी । छन्द-जगती, त्रिष्टुप्)

इमानि वां भागधेयानि सिस्रत इन्द्रावरुणा प्र महे सुतेषु वाम् ।
यज्ञेयज्ञे ह सवना भुरण्यथो यत् सुन्वते यजमानाय शिक्षथः ।१
निष्षिध्वरीरोषधीराप आस्तामिन्द्रावरुणा महिमानमाशत ।
या सिस्रतू रजसः पारे अध्वनो ययोः शत्रुर्नकिरादेव ओहते ।२
सत्यं तदिन्द्रावरुणा कृशस्य वां मध्य ऊर्मि दुहते सप्त वाणीः ।
ताभिर्दाश्वांसमवतं शुभस्पती यो वामदब्धो अभि पाति चित्तिभि ।३
घृतप्रुषः सौश्या जीरदानवः सप्त स्वसारः सदन ऋतस्य ।
या ह वामिन्द्रावरुणा घृतश्चुतस्ताभिर्धत्तं यजमानाय शिक्षतम् ।४।३०

हे इन्द्रावरुण ! इस सोमाभिषव में तुम्हें आहूत करता हूँ। तूम अपने इस भाग को स्वीकार करो। सोम वाल यजमान को अभीष्ट देते हुए सब घरों में सोम को पुष्ट करो ।१। इन्द्र और वरुण अन्तरिक्ष को लाँघने वाले मार्ग से जाते हैं। देव द्वेषी कोई भी व्यक्ति उनसे शत्रुता करने में समर्थ नहीं है। उनके प्रभाव से जल औषधि गुण से सम्पन्न होते हैं ।२। हे इन्द्रावरुण ! सप्तवाणी कृष ऋषि के सोम का तुम्हारे निमित्त दोहन करती है। तुम शुभ कर्म करने वालों के रक्षक हो। जो व्यक्ति अपने कर्म द्वारा तुम्हें प्रसन्न करता है, तुम उसी हविदाता यज

मान की रक्षा करो। यथेष्ट देने वाली सात रश्मियाँ यज्ञ में अभीष्ट प्रदान करती है।३। हे इन्द्रावरुण जो तुम्हें सींचती हैं, उनके लिए यज्ञ धारण करते हुए तुम मजमान को अभीष्ट दो।४। (३०)

अवोचाम महते सोभगाय सत्यं त्वेषाभ्यां महिमानमिन्द्रियम्।
अस्मान् त्स्विन्द्रावरुणा घृतश्चुतस्त्रिभिः साप्तेभिरवतं शुभस्पती।५
इन्द्रावरुणा यदृषिभ्यो मनीषां वाचो मतिं श्रुतमदत्तमग्रे।
यानि स्थानान्यसृजन्त धीरा यज्ञं तन्वानास्तपसाभ्यपश्यम्।६
इन्द्रावरुणा सौमनसमदृप्तं रायस्पोषं यजमानेषु धत्तम्।
प्रजां पुष्टिं भूतिमस्मासु धत्तं दीर्घायुत्वाय प्र तिरतं न आयुः।७।३१

हम इन्द्र और वरुण से सौभाग्य प्राप्त करने के लिए उनकी यथार्थ महिमा का बखान करें। हम घृत सींचने वालों की वे इन्द्रावरुण इक्कीस कार्यो द्वारा हमारी रक्षा करें। क्योंकि वे सभी शुभ कर्मों के स्वामी है।५। हे इन्द्रावरुण ! तुमने पूर्वकालीन ऋषियों की जो बुद्धि, बल, वाणी, श्रुत और स्तुति दी है, उन सबको हम इस यज्ञ में तपके द्वारा देख लेंगे।६। हे इन्द्रावरुण ! जो धन अहङ्कार नहीं बढ़ाता मन को ही सन्तुष्ट करता है, उसे इस यजमान को दो। हमको सन्तान, धन और समृद्धि देते हुए हमारे दीर्घ जीवन के लिए आयु की रक्षा करो।७। (३१)

॥ इति बालखिल्यम् ॥

सूक्त ६०

(ऋषि–भर्गः प्रगाथः। देवता–अग्निः। छन्द–बृहती, पंक्ति)

अग्न आ याह्यग्निभिर्होतारं त्वा वृणीमहे।
आ त्वामनक्तु प्रयता हविष्मती यजिष्ठं बर्हिरासदे।१
अच्छा हि त्वा सहसः सूनो अङ्गिरः स्रुचश्चरन्त्यध्वरे।
ऊर्जो नपातं घृतकेशमीमहेऽग्निं यज्ञेषु पूर्व्यम्।२

अग्ने कविर्वेधा असि होता पावक यक्ष्यः ।
मन्द्रो यजिष्ठो अध्वरेष्वीड्यो विप्रेभिः शुक्र मन्मभिः ।३
अद्रोघमा वहोशतो यविष्ठ्य देवाँ अजस्र वीतये ।
अभि प्रयांसि सुधिता वसो गहि मन्दस्व धीतिभिर्हित। ।४
त्वमित् सप्रथा अस्यग्ने त्रातर्ऋतस्भविः ।
त्वां विप्रासः समिधान दीदिव आ विवासन्ति वेधस ।५।३२

हे अग्ने ! होता मानकर हम तुम्हारा वरुण करते हैं । तुम अन्य अग्नियो सहित आगमन करो । अर्ध्वयुओं द्वारा बिछाई हुई श्रेष्ठ कुशाओंपर प्रतिष्ठित कर हम तुम्हारा पूजन करें ।१। हे अङ्गिरा श्रेष्ठ अग्ने ! तुम बल से उत्पन्न हो । तुम्हारी प्राप्ति के लिए स्रुक गमन करती है । हम अत्यन्त देदीष्यमान पुरातन अग्नि की स्तुति करते हैं ।२। हे अग्ने ! तुम फलों का सम्पादन करने वाले हो । यज्ञ में विद्वान् ब्राह्मण तुम प्रसन्नताप्रद तेजस्वीकी स्तुति करते हैं ।३। हे सदा तरुण-तम अग्ने ! देवगण मुझे चाहते हैं, क्योंकि मैं द्रोह रहित हूँ । तुम उन देवताओं को हवि सेवन करने के लिए यहाँ लाओ । तुम सुन्दर वासप्रद हो, इन हविरन्न के पास आकर स्तुतिबों से हर्ष को प्राप्त होओ ।४। हे अग्ने ! तुम हमारी रक्षा करने वाले विद्वान प्रदीप्त और विस्तृत हो । यह स्तुति करने वाले सुन्दर मन्त्रों से तुम्हारी सेवा करते हैं ।५।

(२२)

शोचा शोचिष्ठ दीदिहि विशे मयो रास्व स्तोत्रे महा असि ।
देवानां शर्मन् मम सन्तु सूरयः शत्रूषाहः स्वग्नयः ।६
यथा चिद् वृद्धमतसमग्ने संजूर्वसि क्षमि ।
एवा दह मित्रमहो यो अस्मध्रुग् दुर्मन्मा कश्च वेनति ।७
मा नो मर्ताय रिपवे रक्षस्विने माघशंसाय रीरधः ।
अस्रेधद्भिस्तरणिभिर्यविष्ठ्य शिवेभिः पाहि पायुभिः ।८
पाहि नो अग्न एकया पाह्युत द्वितीयया ।
पाहि गीर्भिस्तिसृभिरूर्जां पते पाहि चतसृभिर्वसो ।९

हे अग्ने ! तुम प्रज्वलित होओ। हे पावक ! स्तोता के लिए तथा प्रजाओं के लिए कल्याण दो। वह स्तोता देवताओं का दिया हुआ सुख पावें और शत्रुओं को जीतने वाले बनें।६। हे मित्र-पूजक स्तोताओ! तुम जैसे शुष्क काष्ठ को भस्म करते हो वैसे ही अग्नि की पूजा द्वारा हमारे वैरियों और पाप बुद्धि वाले हिंसकको भस्म करो।७। हे अग्ने ! हमारे बलवान् हिंसकों के अधीन न करो। जो हमारा बुरा चाहते हैं, उनके वश में हमको मत दे देना ! हे अग्ने ! तुम तरुणतम हो, अपने सुखकारी एवं उद्धार करने वाले रक्षा साधनों से हमारे रक्षक होओ।८। हे अग्ने हमको एक दो या तीन ऋको से रक्षित करो चार ऋकों से हमारी रक्षा करो।९। सब देवताओं और अदानियों से हमारी रक्षा करो। तुम हमारे निकटतम बन्धु हो। रणक्षेत्र में हमारी रक्षा करो। हम यज्ञ के लिए और ऐश्वर्य प्राप्ति के लिए तुम्हारा आश्रय ग्रहण करेंगे।१। (३३)

पाहि विश्वस्माद्रक्षसो अराव्णः प्र स्म वाजेषु नोऽव।
त्वामिद्धि नेदिष्ठं देवतातय आपिं नक्षामहे वृधे।१०।३३
आ नो अग्ने वयोवृधं रयिं पावक शंस्यम्।
रास्वा च न उपामाते पुरुस्पृहं सुनीती स्वयशस्तरम्।११
येन वंसाम पृतनासु शर्धतस्तरन्तो अर्य आदिशः।
स त्वं नो वर्ध प्रयसा शचीवसो जिन्वा धियो वसुविदः।१२
शिशानो वृषभो यथाग्निः शृङ्गे दविध्वत्।
तिग्मा अस्य हनवो न प्रतिधृषे सुजम्भः सहसो यहुः।१३
नहि ते अग्ने वृषभ प्रतिधृषे जम्भासो यद्वितिष्ठसे।
स त्वं नो होतः सुहुतं हविष्कृधि वंस्वा नो वार्या पुरु।१४
शेषे वनेषु मात्रोः सं त्वा मर्तास इन्धते।
अतन्द्रो हव्या वहसि हविष्कृत आदिद् देवेषु राजसि।१५।३४

हे पावक ! हमको अन्न की वृद्धि करने वाला यशपूर्ण धन दो। तुम हमारे निकटतम मित्र और धन देने वाले हो। अतः अनेकों द्वारा

ग्रहण करने योग्य अत्यन्त यश प्रदान करने वाला धन हमको दो ।२। जिस प्रकार बाण फेंक कर मारने वाले शत्रुओंसे बचते हुए हम उन्हें मार सकें, ऐसा धन दो । तुम अपनी सुन्दर मतिके द्वारा वास देने वाले हो । तुम हमें अन्न बढ़ाओ । जिस कर्म से धन प्राप्त हो सके उस कर्म को दृढ़ करो ।२। बैल के समान अपने सींग रूप ज्वाला को बढ़ाते हुए अग्नि अपना सिर कम्पित करते हैं । उनके तीक्ष्ण हनु का निवारण करने में कोई समर्थ नहीं । वे बलके पुत्र एवं सुन्दर दांत वाले हैं ।१३। हे अग्ने ! तुम वृष्टिकारक हो । तुम प्रदीप्त होते हो,तब तुम्हें कोई रोक नहीं सकता । तुम होतारूप से हमारी हवियों को व्याप्त करने वाले हो । हमको वरण योग्य धन प्रदान करो ।१४। हे अग्ने! तुम दो अरणि रूप माताओं में विद्यमान हो । तुम मनुष्यों के द्वारा प्रवृद्ध होते हो । तुम प्रसाद-रहित होते हुए हमारी हवि को देवताओं के पास पहुँचाओं और फिर उन देवताओं में बैठकर सुशोभित होओ ।१५। (३४)

सप्त होतारस्तमिदीलते त्वा ग्ने सुत्यजमह्रयम् ।
भिनत्स्यद्रि तपसा वि शोचिषा प्राग्ने तिष्ठ जनाँ अति ।१६
अग्निमग्निं वो अध्रिगुं हुवेम वृक्तबर्हिषः ।
अग्निं हितप्रयसः शश्वतीष्वा ऽऽहोतारं चर्षणीनाम् ।१७
केतेन शर्मन् त्सचते सुषामण्यग्ने तुभ्यं चिकित्वना ।
इषण्यया नः पुरुरूषमा भर वाजं नेदिष्ठमूतये ।१८
अग्ने जरितर्विश्पतिस्तेपानो देव रक्षसः ।
अप्रोषिवान् गृहपतिर्महाँ असि दिवस्पायुर्दुरोणयुः ।१९
मा नो रक्ष आ वेशीदाघृणीवसो मा यातुर्यातुमावताम् ।
परोगव्यूत्यनिरामप क्षुधमग्ने सेध रक्षस्विनः ।२०।३५

हे अग्ने ! तुम इच्छित के देने वाले और प्रदीप्त हो । सात होता तुम्हारा स्तवन करते हैं । तुम अपने सन्तापक तेज से मेघ को विदीर्ण करते हो । हे अग्ने हमको लाँघ कर आगे बढ़ो ।१६। हे स्तोताओ ! तुमने कुश उखाड़ लिया, हव्य सम्पन्न किया और हम अग्नि को आहूत

करते हैं। वह अग्नि सब यजमानों के होता है तथा कर्मके धारण करने वाले सभी लोकों में समान रूप से अवस्थित रहते हैं।१७। हे अग्ने! सुखदायक यज्ञ में सन्तानवान मनुष्य के सहित यजमान तुम्हारी स्तुति करता है। तुम हमारी रक्षा के लिए विभिन्न प्रकार के अन्नों सहित यहाँ आओ।१८। हे अग्ने! तुम स्तुति के योग्य हो। तुम प्रजाओ के रक्षक और राक्षसों को सन्तानप्रद हो। तुम यजमान के घर की रक्षा करते हुए उसका कभी त्याग नहीं करते। तुम महान्हो।१९। हे अग्ने! हमारे शरीर में पाप रूप राक्षस न घुस बैठे। पिशाचादि भी प्रवेश न कर सके। उन क्रूरकर्मा राक्षसों, पिशाच आदि को तथा निर्धनता को भी हमारे पास मत आने देना।२०। (३५)

सूक्त ६१

(ऋषि–भर्गः प्रागाथ। देवता–इन्द्रः। छन्द-बृहती, पंक्तिः)

उभयं शृणवच्च न इन्द्रो अर्वागिदं वचः।
सत्राच्या मघवा सोमपीतये धिया शविष्ठ आ गमत्।१
तं हि स्वराजं वृषभं तमोजसे धिषणे निष्टतक्षतुः।
उतोपमानां प्रथमो नि षीदसि सोमकामं हि ते मनः॥२
आ वृषस्व पुरूवसो सुतस्येन्द्रान्धसः।
विद्मा हि त्वा हरिवः पृत्सु सासहिमधृष्टं चिद् दधृष्वणिम्।३
अप्रामिसत्य मघवन् तथेदसदिन्द्र क्रत्वा यथा वशः।
सनेम वाजं तव शिप्रिन्नवसा मक्षू चिद्यन्तो अद्रिवः॥४
शग्ध्यूषु शचीपत इन्द्र विश्वभिरूतिभिः।
भगं न हि त्वा यशसं वसुविदमनु शूर चरामसि।५।३६

हे इन्द्र! हमारे स्तुति बचनों को श्रवण करो। वह इन्द्र हमारे कर्मों से आकर्षित होकर सोम पीने के लिए यहाँ आगमन करें।१। आकाश-पृथ्वी ने इन्द्र को बल के निमित्त संस्कृत किया था। हे इन्द्र! तुम देवताओं में प्रमुख होकर इस वेदी पर प्रतिष्ठित होओ, क्योंकि तुम्हारा मन सोम की कामना कर रहा हैं।२। हे इन्द्र! तुम अपने

उदार में सोमको सींचो । हम यह जानते हैकि तुम रणक्षेत्र में शत्रुओं को पराजित करने वाले और स्वयं किसी के वश में न पड़ने वाले हो ।३। हे इन्द्र ! यथार्थं हो तुम हिंसित नही होते । हम जिस कर्म द्वारा धन पा सकें वहीं कर्म हमें प्राप्त हों। हे वज्रिन् ! तुम्हारे द्वारा पोषित हम अन्न-सेवन करते हुए, शत्रुओं को शीघ्र ही भगा देंगे ।४। हे इन्द्र! तुम अपने सब रक्षा साधनों सहित इच्छित फल दो । तुम अत्यन्त यश वाले और धनेश्वर हो । हम तुम्हारी उपासना भले प्रकार करते हैं ।५।

(२६)

पौरो अश्वस्य पुरुकृद् गवामस्युत्सो देव हिरण्ययः ।
नकिर्हि दानं परिमर्धिषत् त्वे यद्यद्यामि तदा भर ।६
त्वं ह्येहि चेरवे विदा भगं वसुत्तये ।
उद् वावृषस्व मघवन् गविष्टय उदिन्द्राश्वमिष्टये ।७
त्वं पुरू सहस्राणि शतानि च यूथा दानाय मंहसे ।
आ पुरंदरं चकृम विप्रवचस इन्द्रं गायन्तोऽवसे ।८
अविप्रो वा यदविधद्विप्रो वेन्द्र ते वचः ।
स प्र ममन्दत् त्वाया शतक्रतो प्राचामन्यो अहंसन ।९
उग्रबाहुर्म्रक्षकृत्वा पुरंदरो यदि मे शृणवद्धवम् ।
वसूयवो वसुपतिं शतक्रतुं स्तोमैरिन्द्रं हवामहे ।१०।३७

हे इन्द्र ! तुम गौओं की वृद्धि करने वाले, घोड़ों को बढ़ाने वाले और सुवर्ण जैसे वर्ण वाले हो । तुम हमारे लिए जो कुछ देना चाहते हो, उसे कोई नष्ट नहीं कर सकता । अतः मैं तुमसे जो कुछ माँगता हूँ उसे लेकर यहाँ आओ ।६। हे इन्द्र ! आओ, अपने उपासक को धन-दान के निमित्त श्रेष्ठ धन दो । मैं गौओं और अश्वो की भी कामना करता हूँ अतः यह सब मुझे प्रदान करो ।७। हे इन्द्र ! तुम पुरों की हजारों गौएँ दानशील यजमान को प्रदान करते हो । हम उन पुरों को ध्वस्त करने वाले इन्द्र की स्तुति करते हुए उन्हें यहाँ ले आवेंगे ।८। हे सैकड़ो कर्म वाले इन्द्र ! तुम अजेय और युद्ध में अहङ्कार करने वाले हों । जो विद्वान् अथवा मूर्ख भी तुम्हारी उपासना करता हैं, वह

तुम्हारी कृपा प्राप्त करके सुखी हो जाता है ।६। हे इन्द्र ! तुम राक्षसों के हिंसकों पुरों से ध्वंसक और उग्रबाहु हो । यदि वे इन्द्र मेरे स्तोत्रको सुनें तो मैं उनका धन की कामना से आह्वान करूँगा ।१०। (३८)

न पापासो मनामहे नारायासो न जल्हवः ।
यदिन्निवन्द्रं वृषण सचा सुते सखायं कृणवामहै ।११
उग्रं युयुज्म पृतनासु सासहिमृणकातिमदाभ्यम् ।
वेदा भृमं चित् सनिता रथीतमो वाजिनं यमिदू नशत् ।१२
यत इन्द्र भयामहे ततो नो अभयं कृधि ।
मघवञ्छग्धि तव तन्न ऊतिभिर्वि द्विषो वि मृधो जहि ।१३
त्वं हि राधस्पते राधसो महः क्षयस्यासि विधतः ।
तं त्वा वय सघवन्निन्द्र गिर्वणः सुतावन्तो हवामहे ।१४
इन्द्रः स्पलुत वृत्रहा परस्पा नो वरेण्यः ।
स नो रक्षिषच्चरमं स मध्यमं स पश्चात् पातु नः पुरः ।१५।३८

हम इन्द्र को अग्नि रहित, निर्धन और अब्रह्मचारी नहीं मानते । हम उनके लिए सोमको संस्कृत करके उन्हें अपना सखा बनावेंगे ।११। इन्द्र का स्तोत्र ऋण के समान भलदायक है । वह रथ के स्वामी अश्वों में अत्यन्त वेगवाले अश्व को जानते हैं । वह अनेक यजमानों में हमको हो प्राप्त हुए हैं । हम उन शत्रु-विजेता इन्द्र को प्रतिष्ठित करेंगे ।१२। हे इन्द्र ! जो हिंसक हमको भय दिखाता है उसके भय से हमारी रक्षा करो । तुम हमको अभय देने के लिए अपने रक्षा साधनों द्वारा हमारे हिंसक शत्रुओं को मार डालो ।१३। हे इन्द्र ! तुम धन के स्वामी, उपासकों के घरों को समृद्ध करने वाले एवं स्तुत्य हो । सोम का अभिषव करने के पश्चात् हम तुम्हें आहूत करते हैं ।१४। इन्द्र वृत्र के मारने वाले, सबके जानने वाले, पालक और वरण करने योग्य हैं । वे हमारे छोटे-बड़े मध्य के पुत्रों की रक्षा करें । पीठ की ओर से या सामने से भी वे हमारे रक्षक हों ।१५। (३८)

त्वं नः पश्चादधरादुत्तरात् पुर इन्द्र नि पाहि विश्वतः ।
आरे अस्मत् कृणुहि दैव्यं भयमारे हेतीरदेवीः ।१६
अद्याद्या श्वःश्व इन्द्र त्रास्व परे च नः ।
विश्वा च नो जरितृन् त्सत्पते अहा दिवा नक्तं च रक्षिषः ।१७
प्रभङ्गी शूरो मघवा तुवीमघः संमिश्लो वीर्याय कम् ।
उभा ते बाहू वृषणा शतक्रतो नि या वज्रं मिमिक्षतुः ।१८।३९

हे इन्द्र ! चारों दिशाओं से उपस्थित होने वाले भयों से हमको बचाओ । राक्षस या देवताओं के भय को भी हमसे दूर करो ।१६। हे इन्द्र ! हम तुम्हारे स्तोता हैं और तुम साधुजनों की रक्षा करने वाले हो । आज-कल परसों और पूरे दिन तुम हमारी रक्षा करने वाले होओ ।१७। यह इन्द्र ! अत्यन्त एश्वर्यवान् है, वह सबसे मेल करते हैं । हे शतकर्मा इन्द्र ! तुम्हारे कामनाओं के देने वाले दोनों बाहु वज्र को ग्रहण करें ।१०।

सूक्त ६२

(ऋषि—प्रगाथः काण्वः । देवता—इन्द्रः । छन्द, बृहती)

प्रो अस्मा उपस्तुतिं भरता यज्जुजोषति ।
उक्थैरिन्द्रस्य माहिनं वयो वर्धन्ति सोमिनो भद्रा इन्द्रस्य रातयः१
अयुजो असमो नृभिरेकः कृष्टीरयास्यः ।
पूर्वीरति प्र वावृधे विश्वा जातान्योजसा भद्रा इन्द्रस्य रातयः।२
अहितेन चिदर्वता जीरदानुः सिषासति ।
प्रवाच्यमिन्द्र तत् तव वीर्याणि करिष्यतो भद्रा इन्द्रस्य रातयः।३
आ याहि कृणवाम त इन्द्र ब्रह्माणि वर्धना ।
येभिः शविष्ठ चाकनो भद्रमिह श्रवस्यते भद्रा इन्द्रस्य रातयः ।४
धषतश्चिद् धृषन्मना कृणोषीन्द्र यत् त्वम् ।
तीव्रैः सोमैः सपर्यतो नमोभिः प्रतिभूषतो भद्रा इन्द्रस्य रातयः।५
अव चष्ट ऋचीषमो ऽवतां इव मानुषः ।
जुष्टी दक्षस्य सोमिनः सखायं क्रणुते युजं भद्रा इन्द्रस्य रातयः
।६।४०

हे स्तोता ! सेवा करने वाले इन्द्र की स्तुति करो । उनके अन्न

का उक्थों के द्वारा प्रवधित किया जाता है और उनको दिया हुआ धन मङ्गल करने वाला होता है ।१। देवताओं में प्रमुख इन्द्र प्राचीन प्रथा को लाँघकर आगे बढ़ते हैं, उनका दान मङ्गलकारी है ।२। वे शीघ्र देने वाले इन्द्र आनन्द की कामना करते हैं। हे इन्द्र ! तुम सामर्थ्य के देने वाले हो, तुम्हारी महिमा प्रशंसा के योग्य है और तुम्हारा दान कल्याणों का दे। वाला है ।३। हे इन्द्र ! हम तुम्हारे उत्साह को बढ़ाने वाले स्तोत्रों का उच्चारण करते हैं, अतः यहाँ आओ। तुम अन्न की कामना करने वाले स्तोता का कल्याण चाहते हो। हे महाबली इन्द्र ! तुम्हारा दान कल्याण प्रदान करने वाला है ।४। हे इन्द्र ! जो यजमान सोम का अभिषव करके नमस्कारों द्वारा तुम्हारा पूजन करता है, तुम उसे अपरिमिय फल प्रदान करतेहो। तुम्हारा दान कल्याणकारी है ।५। हे इन्द्र ! जैसे मनुष्य कूप को देखता है वैसे ही हम तुम्हारी स्तुतियोंसे आर्कषित होकर तुमको देख रहे हो। तुम सोम सम्पन्न यजमान के रक्षक हो। तुम्हा।ा दान कल्याणकारी है ।६।   (४०)

विश्वे त इन्द्र वीर्यं देवा अनु क्रतुं ददुः ।
भुवो विश्वस्य गोपतिः पुरुष्टुत भद्रा इन्द्रस्य रातयः ।७
गृणे तदिन्द्र ते शव उपमं देवतातये ।
यद्धंसि वृत्रमोजसा शचीपते भद्रा इन्द्रस्य रातयः ।८
समनेव वपुष्यतः कृणवन्मनुषा युगा ।
विदे तदिन्द्रश्चेतनमध श्रुतो भद्रा इन्द्रस्य रातयः ।९
उज्जातमिन्द्र ते शव उत् त्वामुत् तव क्रतुम् ।
भूरिगो भूरि वावृधुर्मघवन् तव शर्मणि भद्रा इन्द्रस्य रातयः ।१०
अहं च त्वं च वृत्रहन्त्सं युज्याव सनिभ्य आ ।
अरातीवा चिदद्रिवोऽनु नौ शूर मंसते भद्रा इन्द्रस्य रातयः ।११
सत्यामिद् वा उ तं वयमिन्द्रं स्तवाम नानृतम् ।
महाँ असुन्वतो वधो भूरि ज्योतीषि सुन्वतो भद्रा इन्द्रस्य रातयः
।१२।४१

हे इन्द्र ! तुम्हारे वीर्य और बुद्धि के अनुसार ही सब देवता वीर्यवान् और बुद्धिमान होते हैं। तुम प्रसिद्ध स्तुतियों के अधीश्वर तथा अनेकों द्वारा स्तुत हो तुम्हारा मन कल्याणकारी है।७। हे इन्द्र ! यज्ञ के निमित्त मैं तुम्हारे उपमा योग्य बलकी प्रशंसा करता हूँ। तुमने अपने ही बल से वृत्र को मारा था। उन इन्द्र का दान कल्याणकारी है।८। जैसे रूप की कामना वाले पुरुष को प्रेम प्रदर्शित करने वाली पत्नी अपने वश में कर लेती है, वैसे ही इन्द्र सब प्राणियों को वश में करते हैं। सम्वत्सर आदि रूप काल को इन्द्र ही बताते हैं। उन इन्द्रका दान कल्याणकारी हैं।९। हे इन्द्र ! पशुओं से सम्पन्न यजमान तुम्हारे द्वारा प्रदत्त सुख को भोगते हैं, वे तुम्हारे बल को बढ़ाते हैं, तुम्हारी बुद्धिको बढ़ाकर तुम्हें भी प्रवृद्ध करते हैं। तुम्हारा दान कल्याणकारी है।१०। हे इन्द्र! तुम वज्रधारी एवं वृत्रहन्ता हो। अदानशील भी तुम्हारे दान की सराहना करते हैं। हमको जब तक धन न मिले,तब तक हम तुमसे मिलते रहें। तुम्हारा दान कल्याणकारी है।११। हम इन्द्र की सत्य प्रशंसा ही करते हैं, असत्य नही करते। यज्ञ-हीन पुरुषों को इन्द्र बहु-संख्या में नष्ट करते हैं। यह अभिषवकर्त्ता को प्रकाश देते हैं, उनका दान कल्याणकारी हैं।१२। (१२)

सूक्त ६३

(ऋषि—प्रगाथ—काण्वः। देवता—इन्द्रः देवा। छन्द—अनुष्टुप्, गायत्री, त्रिष्टुप्)

स पूर्व्यो महानां वेनः क्रतुभिरानजे। यस्य द्वारा मनुष्पिता देवेषु धिय आनजे।१। दिवो मान नोत्सदन् त्सोमपृष्ठासो अद्रयः। उक्था ब्रह्म च शस्या।२। विद्वाँ अङ्गिरोभ्य इन्द्रो गा अवृणोदप। स्तुषे तदस्य पौंस्यम्।३। स प्रत्नथा कविवृध इन्द्रो वाकस्य वक्षणि। शिवो अर्कस्य होमन्यस्मत्रा गन्त्ववसे।४। आदू नु ते अनु क्रतुं स्वाहा वरस्य यज्यवः। श्वात्रमर्का अनूषतेन्द्र गोत्रस्य

दावने ।५। इन्द्रे विश्वानि वीर्या कृतानि कर्वानि च । यमर्का अध्वरं विदुः ।६।४२

इन्द्र पूजनीय कर्मों द्वारा तेजस्वी हैं । देवताओं में स्थित पिता मनु ने इन्द्र की प्राप्ति के साधनों को खोजा । वे प्रमुख इन्द्र उन साधनों से आते हैं ।१। सोम के अभिषव कर्म वाले पाषाणों ने इन्द्र का त्याग नहीं किया । उनकी प्राप्ति के लिए उक्थों और स्तोत्रों का उच्चारण करना ही साध्य हैं ।२। इन्द्र ने अङ्गिराओं के लिए गौओं को उत्पन्न किया, मैं इन्द्र के उस पराक्रम की प्रशंसा करता हूं ।३। इन्द्र विद्वानों के बढ़ाने वाले हैं वे होता के कार्यों का निर्वाह करते हैं । सोम की आहुति के समय वह इन्द्र हमारी रक्षा के निमित्त आवें ।४। हे इन्द्र ! यज्ञपति अग्नि के लिए स्वाहाकार करने वाले, तुम्हारा ही यश गाते हैं। स्तुति करने वाले शीघ्र धन देने के निमित्त तुम्हारा ही स्तोत्र करते हैं ।५। समस्त कर्म इन्द्र में ही निहित हैं, स्तुति करने वाले विद्वान् इन्द्र का अहिंसक बताते हैं ।६। (४२)

यत् पाञ्चजन्यया विशेन्द्रे घोषा असृक्षत । अस्तृणाद्बर्हणाविपो ऽर्यो मानस्य स क्षयः ।७। इयमु ते अनुष्टुतिश्चकृषे तानि पौंस्या । प्रावश्चक्रस्य वर्तनिम् ।८ अस्य वृष्णो व्योदन उरु क्रमिष्ट जीवसे । यवं न पश्व आ ददे ।९। दद्धाना अवस्यवो युष्माभिर्दक्षपितरः । स्याम मरुत्वतो वृधे ।१०। बलुत्वियाय धाम्न ऋक्वभिः शूर नोनुमः । जेषामेन्द्र त्वया युजा ।११। अस्मे रुद्रा मेहना पर्वतासो वृत्रहत्ये भरहूतौ सजोषाः । यः शंसते स्तुवते धायि पज्र इन्द्रज्येष्ठा अस्मां अवन्तु देवाः ।१२।४३

इस इन्द्र के लिए जब चारों वर्ण स्तुति करते हैं, तब इन्द्र अपने बल से शत्रुओं को मारते हैं। स्तोत्र की पूजा के आश्रय स्थान इन्द्र ही हैं ।७। हे इन्द्र ! तुमने जो पराक्रम किये हैं, उन्हीं की प्रशंसा है । तुम इस चक्र के मार्ग की रक्षा करो ।८। इन्द्र की वृष्टि के द्वारा विविध अन्न प्राप्त कर लेने पर सब प्राणी अपने विविध कर्मों में लगते हैं और सब मनुष्य, पशुओं के समान हो जों जाते हैं ।९। हम रक्षा की कामना

करने वाले स्तोता इन्द्र के हैं। हे ऋत्विजों ! तुम्हारे यत्न से मरुत्वान् इन्द्र को प्रवृद्ध करने के लिए हम अन्नवान् हो जायेंगे ।१०। हे इन्द्र ! तुम यज्ञ-काल में स्वयं तेजस्वी होते हो। हम तुम्हारी सहायता से ही विजय प्राप्त कर सकेंगे। अतः मन्त्रों द्वारा तुम्हारी स्तुति करेंगे। ।११। युद्ध काल में आह्वान पर शक्ति सम्पन्न वृत्रहन्ता इन्द्र स्तोता और यजमान के समीप वेग से आते हैं, वह इन्द्र ही देवताओं में ज्येष्ठ हैं, वह हमारे रक्षक हों ।१२। (४३)

सूक्त ६४

(ऋषि–प्रगाथः काण्वः । देवता–इन्द्रः । छन्द–गायत्री)

उत् त्वा मन्दन्तु स्तोमाः कृणुष्व राधो अद्रिवः। अव ब्रह्मद्विषो जहि ।१। पदा पणींरराधसो नि बाधस्व महाँ असि। नहि त्वा कश्चन प्रति ।२। त्वमीशिषे सुतानामिन्द्र त्वमसुतानाम्। त्वं राजा जनानाम् ।३। एहि प्रेहि क्षयो दिव्याघोषञ्चर्षणीनाम्। पृणासि रोदसी ।४। त्यं चित् पर्वतं गिरिं शतवन्तं सहस्रिणम्। वि स्तोतृभ्यो रुरोजिथ ।५। वयमु त्वा दिवा सुते वयं नक्तं हवामहे। अस्माकं काममा पृण ।६।४६

हे इन्द्र ! यह स्तुतियाँ तुम्हें हर्षित करें। तुम वज्रधारीहो अतः स्तुतियों से द्वेष करने वालोंको नष्ट करते हुए, हमको धन प्रदान करो ।१। अदानशील और अयाज्ञिकों को पांवों से कुचलो। हे इन्द्र! तुम्हारा प्रतिद्वन्दी कोई नहीं हैं। तुम महानहो ।२। हे इन्द्र! तुम निष्पन्न तथा अनिष्पन्न दोनों प्रकारके स्वामी और प्रजाओं के राजा हो ।३। हे इन्द्र! इस यज्ञ मण्डप को शब्दान करते हुए जाओ। तुम आकाश पृथिवी को वृष्टि जल से तृप्त करते हो ।४। हे इन्द्र ! तुमने सौ प्रकार के जल वाले तथा असीम जल वाले मेघों का खण्डन किया है ।५। हे इन्द्र ! सोमाभिषव होने पर दिन और रात्रि में भी हम तुम्हें आहूत करते है। तुम हमारी कामना को पूर्ण करो ।६। (४६)

क्व स्य वृषभो युवा तुविग्रीवो अनानतः। ब्रह्मा कस्तं सपर्यति ।७। कस्य स्वित् सवनं वृषा जुजुष्वां अव गच्छति। इन्द्रं

क उ स्विदा चके ।८। कं ते दाना असक्षत वृत्रहन् कं सुवीर्या । उक्थे क उ स्विदन्तमः।६। अयं ते मानुषे जने सोमः पूरुषु सूयते । तस्येहि प्र द्रवा पिब ।१०। अयं ते शर्यणावति सुयोमायामधि प्रियः । आर्जीकीये मदिन्तमः ।११। तमद्य राधसे महे चारुं मदाय घृष्वये । एहीमिन्द्र द्रवा पिब ।४२।४५

वे सदा तरुण, विशाल स्कन्द वाले, वृष्टिदाता इन्द्र कहाँ हैं ? इस समय कौन उनकी रक्षा कर रहा है ? ।७। इन्द्र प्रसन्न होने पर आते हैं । उनकी स्तुति करने वाला ज्ञान किस यजमान को है ? ।८। हे इन्द्र सुन्दर वीर्यवाले स्तोत्र तुम्हारी सेवा करते हैं, यजमान-प्रदत्त दान भी तेरी सेवा करता है । रणक्षेत्रमें कौन सा योद्धा तुम्हारा सामीप्य प्राप्त करेगा ? ।३। मैं तुम्हारे निमित्त ही सोमको अभिषुत कर रहा हूँ, तुम उसके पास आगमन करो । शीघ्र आकर उस सोमरस का पान करो ।१०। हे इन्द्र ! सोम तृण से सम्पन्न पुष्कर, सुषोमा और व्यास आदि नदियों के किनारे तुम्हें अधिक शक्ति देता हैं ।११। हे इन्द्र ! तुम हमको देने और शत्रु का नाश करने के निमित्त शक्तियुक्त होने के लिये उस रमणीय सोम को पीओ । हे इन्द्र ! इस सोमपात्रकी ओर शीघ्रता से गमन करो ।१२।   (४५)

सूक्त ६५

(ऋषिसप्रगाथः काण्वः । देवता-इन्द्रः । छन्द-गायत्रो)

यदिन्द्र प्रागपागुदङ् न्यग्वा हूयसे नृभिः । आ याहि तुयमाशुभिः ।१। यद्वा प्रस्रवणे दिवो मादयासे स्वर्णरे । यद्वा समुद्रे अन्धसः ।२। आ त्वा गीर्भिर्महामुरुं हुवे गामिव भोजसे । इन्द्र सोमस्य पीतये ।३। आ त इन्द्र महिमानं हरयो देव ते महः । रथे वहन्तु बिभ्रतः ।४। इन्द्र गृणीष न स्तुषे महां उग्र ईशानकृत् । एहि नः सुतं पिब ।५। सुतावन्तस्त्वा वयं प्रयस्वन्तो हवामहे । इद नो वर्हिरासदे ।६।४६

हे इन्द्र ! तुमको सब दिशाओं के मनुष्य आहूत करते हैं, अतः अपने अपने द्वारा शीघ्र आगमन करो ।१। हे इन्द्र ! तुम अन्न के

अपादान अंतरिक्ष में अमृत के सींचने वाले स्वर्ग में तथा पृथिवी पर भी शक्तियुक्त होते हो ।२। हे इन्द्र ! मैं स्तुतियों के द्वारा तुम्हारा आह्वान करता हूँ। मैं तुम्हें सोम पीने और भोग्य प्रदान करने के लिए धेनु के समान आहूत करता हूँ, क्योंकि तुम महान हो ।३। रथके संयुक्त अश्व तुम्हारी महिमा और तेज को लेकर यहाँ आगमन करें।४ हे इन्द्र ! तुम स्तुतियों द्वारा पूजित होतेहो तुम महान कर्म वाले एवं ऐश्वर्यों के करने वाले हो । अत यहाँ आकर सोम-पान करो ।:। हम अन्नवान् और सोमवान्, यजमान, अपने कुशों पर विराजमान होने के लिए तुम्हें आहूत करते हैं ।७। (४६)

यच्चिद्धि शश्वतामसीन्द्र साधारणस्त्वम् । त्वं त्वा वयं हवामहे ।७। इदं ते सोम्यं मध्वधुक्षन्नद्रिभिर्नरः । जुषाण इन्द्र तत् पिब ।८। विश्वां अर्यो विपश्चितो ऽति ख्यस्तूयमा गहि । अस्मे धेहि श्रवो बृहत् ।९। दाता मे पृषतीनां राजा हिरण्यवीनाम् । मा देवा मघवा रिषत् ।१०। सहस्रे पृषतीनामधि श्चन्द्र बृहत् पृथु । शुक्रं हिरण्यमा ददे ।११। नपातो दुर्गहस्य मे सहस्रेण सुराधसः । श्रवो देवेष्वक्रत ।१२।४७

हे इन्द्र ! तुम अनेक यजमानोंके लिए साधारणतः प्राप्त हो, अतः हम तुम्हें आहूत करते हैं ।७। सोम रूप मधु का हम अध्वर्यु अभिषव करते हैं । ह इन्द्र ! तुम प्रसंन होते हुए उसका पानकरो ।८। हे इन्द्र! तुम ईश्वर हो । तुम सब स्तोताओं को लांघकर शीघ्र यहाँ आगमन करो । हमको महान अन्न दो ।९। इन्द्र सुवर्ण और गौओं के स्वामी है वे हमारे ईश्वर है । हे देवताओ ! इन्द्र की कोई हिंसा न कर सके ।१०। में प्रसंनता करने वाले, विस्तृत और स्वच्छ स्यर्णको ग्रहण करता हूँ ।११। मैं रक्षा-सहित, सङ्कट ग्रस्त हूँ । मेरे मनुष्य अपरिमित धनोंके स्वामी हों । देवताओं को प्रसनता से यश मिलता है ।१२।

सूक्त ६६

(ऋषिःकलि प्रगाथः । देवता—इन्द्रः । छंद—बृहती, पंक्ति, अनुष्टुप्)
तरोभिर्वो विदद्वसुमिन्द्रं सबाध ऊतये ।

बृहदायन्तः सुतसोमे अध्वरे हुवे भरं न कारिणम् ।१
न यं दुध्रा वरन्ते न स्थिरा मुरो मदे सुशिप्रमन्धसः ।
य आदृत्या शशमानाय सुन्वते दाता जरित्र उक्थ्यम् ।२
यः शक्रो मृक्षो अश्व्यो यो वा कीजो हिरण्ययः ।
स ऊर्वस्य रेजयत्यपावृतिमिन्द्रो गव्यस्य वृत्रहा ।३
निखातं चिद्यः पुरुसभृतं वसूदिद्वपति दाशुषे ।
वज्री सुशिप्रो हर्यश्व इत् करदिन्द्रः क्रत्वा यथा वशत् ।४
यद्वावन्थ पुरुष्टुत पुरा चिच्छूर, नृणाम् ।
वयं तत् त इन्द्र स भरामसि यज्ञमुक्थं तुरं वचः ।५।४८

हे ऋत्विजो ! जो इन्द्र वेगवान् घोड़ों के द्वारा आकर धन देते हैं, उनके लिए साम-गान द्वारा प्रसंन करते हुए पूजो। जो व्यक्ति कुटुम्ब का हितैषी और पालन करने वाला होता है, उसे बुलाये जाने के समान ही मैं सोमाभिषव वाले यज्ञ में इन्द्र को आहूत करता हूँ ।१। उन सुन्दर जवड़े वाले इन्द्र के लिए अत्यन्त क्रूरकर्मा एवं विकराल श[illegible] भी रोक नहीं सकते। उन्हें मनुष्य भी रोकने में समर्थ नहीं है। जो यजमान सोम के अभिषव द्वारा इन्द्र को प्रसंन करते हैं, उन्हें वे ऐश्वर्य देते हैं ।२। इन्द्र अश्व-विद्या में पारङ्गत, सेव्य, हिरण्यमय और अद्भुत हैं तथा वह अनेक गौओं के समूहों को अपने वश में करते हुए
अद्भुत हैं तथा वह अनेक गौओं के समूहों को अपने वश में करते हुए
कम्पित करते हैं ।३। यजमान के निमित्त जो इन्द्र भूमि पर उत्पन्न एवं संग्रहीत धनों को उन्नत करते हैं, वह हर्यश्व इन्द्र सुन्दर जबड़े वाले हैं। वे अपनी इच्छा के अनुसार कर्म-सम्पादन करते हैं ।४। इन्द्र बहुतों द्वारा आहूत हैं। हे इन्द्र ! तुमने अपने प्राचीन स्तोता पर जो इच्छा प्रकट की थी, उसे हम पूर्ण करते हैं। यज्ञः इउक्थ, या वाणी जो कुछ भी हो, हम तुम्हें देते हैं ।५।   (४२)

सचा सोमषु पुरुहूत वजिवो मदाय द्युक्ष सोमपाः ।
त्वमिद्धि ब्रह्मकृते काम्यं वसु देष्ठः सुन्वते भुवः ।६
वयमेनमिदा ह्यो ऽपीपेमेह वज्रिणम् ।
तस्मा उ अद्य समना सुतं भरा ऽऽनूनं भूषत श्रुते ।७

वृकश्चिदस्य वारण उरामथिरा वयुनेषु भूषति ।
सेमं नः स्तोमं जुजुषाण आ गहीन्द्र प्र चित्रया धिया ।८
कदू न्व स्याकृतमिन्द्रस्यास्ति पौंस्यम् ।
केनो नु कं श्रोमतेन न शुश्रुवे जनुषः परि वृत्रहा ।९
कदू महीरधृष्टा अस्य तविषीः कदु वृत्रघ्नो अस्तृतम् ।
इन्द्रो विश्वान् बेकनाटाँ अहर्दृश उत क्रत्वा पणीरभि ।१०।४९

हे इन्द्र ! तुम वज्रधारी, बहुतों के द्वारा पूजित, सोम पीने वाले और स्वर्ग के स्वामी हो । तुम सोम के संस्कारित होने पर शक्ति से सम्पन्न होओ । अभिषव कर्त्ता के लिए तुम्हीं धन प्रदान करने वाले होओ ।६। हम उन इन्द्रके लिए आज और कल सोम से हर्षित करेंगे । वह इन्द्र हमारी स्तुति को सुनकर आगमन करें । उनके लिए संस्कृत सोम को यहाँ लाकर रखो ।७। चोर सब पथिकों का नाश करने वाला होते हुए भी इन्द्र को हिंसित नही कर सकता । हे इन्द्र ! तुम कर्म के द्वारा प्रसन्न होते हुए यहाँ आगमन करो ।८। ऐसा कोई भी पराक्रम नहीं जिसे इन्द्र ने नहीं किया, उसका वृत्रहनन कार्य तो प्रसिद्ध हैं ही ।९। इन्द्र का पौरुष सदा ही धर्षक हुआ । जिसे इन्द्र ने मारना चाहा उसे कोई भी बचा न सका । वे इन्द्र इन सब लोभियों को सदा अभिभूत करते हैं ।१०। (४९)

वय घा ते अपूर्व्येन्द्र ब्रह्माणि वृत्रहन् ।
पुरूतमासः पुरुहूत वज्रिवो भृतिं न प्र भरामसि ।११
पूर्वीश्चिद्धि त्वे तुविकूर्मिन्नाशसो हवन्त इन्द्रोतयः ।
तिरश्चिदर्यः सवना वसो गहि शविष्ठ श्रुधि मे हवम् ।१२
वय घा ते त्वे इद्विन्द्र विप्रा अपि ष्मसि ।
नहि त्वदन्यः पुरुहूत कश्चन मघवन्नस्ति मर्डिता ।१३
त्व ना अस्या अमतेरुत क्षुधो ऽभिशस्तेरव स्पृधि ।
त्व न ऊती तव चित्रया धिया शिक्षा शचिष्ठ गातुवित् ।१४
सोम इद्वः सुतो अस्तु कलयो मा बिभीतन ।
अपेदेष ध्वस्मायति स्वय घैषो अपायति ।१५।५०

हे इन्द्र ! तुम वज्रधारी और वृत्र के मारने वाले हो। तुम हमारे वेतन भोगियों के समान नवीन स्तोत्र करते हैं।११। हे इन्द्र ! तृप्त कर्मा हो। तृप्त में हमारी रक्षायें और आशायें व्याप्त हैं। स्तोतागण तुम्हें आहूत करते है, इसलिए शत्रुओं के सभी सवनोंका उल्लंघन करते हुए हमारे यज्ञ में आगमन करो और हमारे आह्वान को सुनो।१२। हे इन्द्र ! हम स्तोता तुम्हारे ही हैं। तुम बहुत बार पूजित हुए हो, हमें तुम्हारे अतिरिक्त अन्य कोई भी सुख देने वाला दिखाई नहीं देता।१३। हे इन्द्र ! हमको इस दरिद्रता, भूख और निन्दा के चंगुल से छुड़ाओ। हमारे लिए अपने अद्भुत कर्म और रक्षा-साधनों द्वारा अभीष्ट पदार्थ दो।१४। तुम्हारे निमित्त सोम संस्कारित किया जाय। हे कलि ऋषि के पुत्रो ! भयभीत न होओ। यह दैत्यादि तो स्वयं दूर जा रहे हैं (१५)

सूक्त ६७

(ऋषि—मत्स्यः सांमदो मान्यो वा मैत्रावरुणिरुणिर्वहवो व मत्स्या जालनद्धाः। देवता—आदित्यः। छन्द—गायत्री)

त्यान् नु क्षत्रियाँ अव आदित्यान् याचिषामहे। सुमृलीकाँ अभिष्टये।१। मित्रो नो अत्यंहतिं वरुणः पर्षदर्यमा। आदित्यासो यथा विदुः।२। तेषां हि चित्रमुक्थ्यं वरूथमस्ति दाशुषे। आदित्यानामरंकृते।३। महि वो महतामवो वरुण मित्रार्यमन्। अवांस्या वृणीमहे।४। जीवान् नो अभि धेतनाऽऽदित्यासः पुरा हथात्। कद्ध-स्थ हवनश्रुतः।५।५१

अभीष्ट फल पाने और बाधाओं से पार होने के लिए हमक्षात्र-धर्म वाले आदित्यों से रक्षा करने की प्रार्थना करते हैं।१। मित्र, वरुण अर्यमा और सभी आदित्य कठिन कार्यों के ज्ञाता हैं, वे हमें पाप से बचावें।२। इन आदित्यों के पास प्रशंसनीय धन है। उनका वह धन हविदाता पुरुष पाते हैं।३। हे देवताओं ! हविदाता की रक्षा करने वाले तुम महान हो। हम तुमसे रक्षा की याचना करते हैं।४। हे आदित्यो ! हम जालमें बंधे होने पर भी अभी जीवित है। तुम हमारी मृत्यु के पूर्व ही अभिमुख होओ।५। (५)

यद्वः श्रान्ताय सुन्वते वरूथमस्ति यच्छर्दिः । तेना नो अधि वोचत । ६। अस्ति देवा अंहोरुर्वस्ति रत्नमनागसः । आदित्या अद्भुतैनसः ।७। मा नः सेतुः सिषेदयं महे वृणक्तु नस्परि । इन्द्र इद्धि श्रुतो बशी ।८। मा नो मृचा रिपूणां वृजिनानामविष्यवः । देवा अभि प्र मृक्षत ।९। उत त्वामदिते मह्यह देव्युप ब्रुवे । सुमृलीकामभिष्टये ।१०।५२

अभिषव वाले यजमान को जो वरणीय धन प्रदान करते हो उसके द्वारा हमको सुखी करो ।३। हे देवताओ ! पाप कर्म वाला व्यक्ति पापी है उसके रमणीय कल्याण वाला मनुष्य धर्मात्मा कहा जाता है । तुम पाप रहित हो, अतः हमारी कामना पूर्ण करो ।७। इन्द्र सबको वशीभूत करने वाले हैं । वह हमें जाल में न बाँधे ।८। हे देवताओ ! हमको मुक्त करो । हमको हिंसक शत्रुओंके जाल में मत डालो ।९। हे अदिति। तुम महिमामयी और सुखदात्री हो । मैं अभीष्ट पाने के लि तुम्हारी स्तुति करता हूँ ।१०। (५२)

पर्षि दीने गभीर आँ उग्रपुत्रे जिघांसतः । माकिस्तोकस्य नो रिषत् ।११। अनेहो न उरुव्रज उरूचि वि प्रसर्तवे । कृधि तोकाय जीवसे ।१२। ये मूर्धानः क्षितीनामदब्धासः स्वयशसः । व्रता रक्षन्ते अद्रुहः ।१३। ते न आस्नो वृकाणामादित्यासो मुमोचत । स्तेनं बद्धमिवादिते ।१४। अपो षु ण इयं शरुरादित्या अप दुर्मतिः । अस्मदेत्वजघ्नुषी ।१५।५३

हे देवो ! हमको सब ओर से रक्षित करो । हिंसाकारी का जाल हमारे पुत्र की हिंसा न करे ।११। हे अदिति ! हमारे पुत्र को जीवित रखने के लिए हम पाप रहित की रक्षा करो १२। हे आदित्यो ! तुम सुन्दर यश वाले हिंसक, अहिंसक और द्रोह-रहित रहकर हमारे कर्मोंके रक्षक बनते हो ।१३। हे आदित्यो ! हिंसकों द्वारा चोरके समान पकड़े गये हम तुमसे रक्षा मांगते हैं ।१४। हे आदित्यो ! यह जाल हमारी हिंसा में समर्थ न हों, इसे दूर करो । कुबुद्धिको भी हमसे दूर करो ।१५। (५३)

शश्वद्धि वः सुदानव आदित्या ऊतिभिर्वयम् । पुरा नूनं बुभुज्महे ।१६। शश्वन्तं हि प्रचेतसः प्रतियन्तं चिदेनसः । देवाः

कृणुथ जीवसे ।१७। तत् सु नो नव्यं सन्यस आदित्या यन्मुमोचति। बन्धाद्बद्धमिवादिते ।१८। नास्माकमस्ति तत् तर आदित्यासो अतिष्कदे। यूयमस्मभ्य मूलत ।१९। मा नो हेतिर्विवस्वतः आदित्याः कृत्रिमा शरुः पुरा नु जरसो वधीत् ।२०। वि षु द्वेषो व्यंहतिमादित्यासो वि संहितम्। विष्वग्वि वृहता रपः ।२१।५४।

हे आदित्य ! तुम्हारा दान सुन्दर है। तुम्हारी रक्षामें रहकर हम विविध सुखों को प्राप्त करेंगे ।१६। हे आदित्यों ! जो क्रूरकर्मा पापी हमारी और बारम्बार आता है, उसे हमारी रक्षा के लिए दूर हटाओ ।८। हे आदित्यो ! जैसे बंधें हुए पुरुष को खोलने पर बंधन उसे छोड़ देता है वैसे ही तुम्हारी कृपासे जो हमें मुक्त करताहै वह हमारी स्तुति के योग्य है ।१८। हे आदित्यो ! हम तुम्हारे समान वेग वाले नहीं हैं। वह वेग हमको छुड़ा सकता है,अतः हमको सुख दो ।१६। हे आदित्यो ! सूर्य के आयुध के समान यह कृत्रिम जाल हम जैसे निर्बलों की हिंसा न करे ।८। हे आदित्यो ! वैरियों और पापियों को मारो। जाल को दष्ट करो। पाप को दूर करो ।२१। (५४)

सूक्त ६८

(ऋषि—प्रियमेधः । देवता—इन्द्र, ऋक्षाश्वमेधयोर्दानस्तुतिः।
छन्द—अनुष्टुप्, गायत्री)

आ त्वा रथं यथोतये सुम्नाय वर्तयामसि। तुविकूर्भिमृतीषहमिन्द्र शविष्ठ सत्पते ।१। तुविशुष्म तुविक्रतो शचीवो विश्वया मते। आ पप्राथ महित्वना ।२। यस्य ते महिना महः परि ज्यायन्तमीयतुः। हस्ता वज्रं हिरण्ययम् ।३। विश्वानरस्य वस्पतिमनानतस्य शवसः। एवैश्च चर्षणीनाभूती हुवे रथानाम् ।४। अभिष्टये सदावृधंस्वर्मीलहेषु यं नरः। नाना हवन्त ऊतये ।५।

हे सत्य के अधीश्वर, हे इन्द्र ! तुम बहुत कर्मों वाले हो,तुम हिंसा करने वालों को भगाते हो । हम तुम्हें रक्षा रूप सुख के निमित्त बुलाते हैं ।१। हे इन्द्र ! तुम अत्यन्त पराक्रमी, मेधावी, पूज्य एवं बहुकर्मा हो । तुमने अपनी संसार व्यापिनी महिमा के द्वारा ही संसार को पूर्ण किया हैं ।२। हे इन्द्र ! तुम महान हो तुम्हारे दोनों हाथ पृथिवी में व्याप्त स्वर्जित वज्र को पकड़ते हैं ।३। मैं बल के स्वामी और शत्रुओं को और क्रोध पूर्वक जाने वाले इन्द्र को उनको मरुत् रूप सेना सहित तथा रथ सहित आहूत करता हूँ ।४। जिन्हें रक्षा के लिए नेतागण अनेक प्रकारसे आहूत करते हैं । उन सतत प्रवृद्ध इन्द्रको सहायताके लिए आहूत करता हूँ ।५। (१)

परोमात्रमृचीषममिन्द्रमुग्रं सुराधसम् । ईशान चिद्वसूनाम्।६ तंतमिद्राधसे मह इन्द्रं चोदामि पीतये । यः पूर्व्यामनुष्टुतिमीशे कृष्टीनां नृतुः ।७। न यस्य ते शवसान सख्यमानश मर्त्यः नकिः शवांसि ते नशत् ।८। त्वोतासस्त्वा युजा ऽप्सु सूर्ये महद्धनम् । जयेम पृत्सु वज्रिवः ।९। तं त्वा यज्ञेभिरीमहे तं गीर्भिर्गिर्वणस्तम । इन्द्र यथा चिदाविथ वाजेषु पुरुमाय्यम् ।१०।२

जो इन्द्र धनवान् सुन्दर, विस्तृत और स्तुतियों द्वारा परिमित है उन्हें आहूत करता हूँ ।६। नेता, यज्ञके मुख पर स्थित, स्तुतियोंके सुनने वाले इन्द्र को धन के निमित्त सोम पीने को बुलाता हूँ ।७। हे इन्द्र ! मनुष्य तुम्हारे बल को व्याप्त नहीं कर सकता और तुम्हारी मित्रता को भी नहीं घेर सकता है ।८। हे वज्रिव ! तुम्हारी रक्षा में रहते हुए हम जलमें स्नान के निमित्त और सूर्य-दर्शनके निमित्त रणक्षेत्र में असीमित धन पाते हुए तुम्हारा अनुग्रह मानेंगे ।९। हे इन्द्र ! तुम स्तुतियों द्वारा प्रशंसित हो । जिस प्रकार तुम संग्राम में हमारी रक्षा कर सको उसी प्रकार करने की हम स्तोता तुमसे प्रार्थना करते हैं ।१०।२

यस्य ते स्वादु सख्यं स्वाद्वी प्रणीतिरद्रिवः । यज्ञो वितन्त

साध्य: ।११। उरु णस्तन्वे तन् उरु क्षयाय नस्कृधि। उरु णो यन्धि जीवसे ।१२। उरुं नृभ्य उरुं गव उरुं रथाय पन्थाम्। देववीतिं मनामहे ।१३। उप मा षड् द्वाद्वा नरः सोमस्य हर्ष्या। तिष्ठन्ति स्वादुरातयः ।१४। ऋज्राविन्द्रोत आ ददे हरी ऋक्षस्य सूनवि। आश्वमेधस्य रोहिता ।१५।३

हे वज्रिन् ! तुम्हारा मित्र भाव मधुर है,तुम्हारा धन आदि सुस्वादु तथा विस्तृत हैं ।११। हे इन्द्र ! हमारे पुत्र पौत्रादि को अभीष्ट धन दो, हमारे सुन्दर निवासके लिए आवश्यक धन प्रदान करो, हमारे जीवनके लिए इच्छित सम्पत्ति दो ।१२। हे इन्द्र ! मनुष्यों और गौओं का हित करने की हम तुमसे प्रार्थना करते हैं, हमारे रथके लिए सुन्दर मार्ग दो और हमारे यज्ञ-कर्मको सम्पन्न करो ।१३। सोम से सम्पन्न हर्षके कारण उपभोग्य धनसे सम्पन्न हुए छः नेताओं में से दो-दो हमारे समीप आगमन करते हैं ।१४। ऋक्ष के पुत्र से दो हरित् वर्ण वाले, अश्वमेध के पुत्र से दो रोहित वर्ण वाले और इन्द्रोत नामक राजपुत्र से दो सरलता पूर्वक गमन करने वाले घोड़ों को मैंने प्राप्त किया है ।१५।

सुरथाँ आतिथिग्वे स्वभीशूँराक्षे। आश्वमेधे सुपेशसः ।१६। षलश्वाँ आतिथिग्व इन्द्रोते वधूमतः। सचा पूतक्रतौ सनम् ।१७। ऐषु चेतद्वृषण्वत्यन्तर्ऋज्रेष्वरुषी। स्वभीशुः कशावती ।१८। न युष्मे वाजबन्धवो निनित्सुश्चन मर्त्यः। अवद्यमधि दीधरत्। ।१९।४

उस अतिथिग्व पुत्र इन्द्रोत से सुन्दर रथ से युक्त घोड़ों को प्राप्त किया। ऋक्ष पुत्र से सुन्दर लगामों वाले तथा अश्वमेध के पुत्र से भी दो सुन्दर अश्व मैंने प्राप्त किये ।११। श्रेष्ठ कर्म वाले इन्द्रोतसे घोड़ियों सहित छः अश्वों को ऋक्ष पुत्र और अश्वमेध पुत्र द्वारा प्रदत्त अश्वों के सहित प्राप्त किया है ।७। इन घोड़ों में सेचन समर्थ अश्वों वाली सुन्दर लगामों से सम्पन्न घोड़ियाँ भी सम्मिलित हैं ।१८। हे राजाओं तुम

अन्नदान करने वाले हो, निन्दा करने वाले पुरुष भी तुम्हारी निन्दा करने में समर्थ नहीं होते ।१६।

सूक्त ६९

(ऋषि—प्रियमेधः । देवता—इन्द्रः, विश्वेदेवाः, वरुण । छन्द—अनुष्टुप्)
उष्णिक्, गायत्री, पंक्ति, वृहती)

प्रप्र वस्त्रिष्टुभमिषं मन्दद्वीरायेन्दवे ।
धियो वो मेधसातये पुरंध्या विवासति ।१
नदं व ओदतीनां नदं योयुवतीनाम् ।
पतिं वो अघ्न्यानां धेनूनामिषुध्यसि ।२
ता अस्य सूददोहसः सोमं श्रीणन्ति पृश्नयः ।
जन्मन् देवानां विशस्त्रिष्वा रोचने दिवः ।३
अभि प्र गोपतिं गिरेन्द्रमर्च यथा विदे । सुनुं सत्यस्य सत्पतिम् ।४
आ हरयः ससृज्रिरे ऽरुषीरधि बर्हिषि । यत्राभि सनवामहे ।५।५

हे अध्वर्यो ! इन्द्र वीरोंमें साहस उत्पन्न करते हैं, उनके लिए अन्न संगृहीत करो । वह प्रजा से युक्तकर्म के द्वारा यज्ञका फल पाने के लिए तुम्हें समर्थ करते हैं ।१। इन्द्र उषाओं को उत्पन्न करते हैं, बह अहिंसा-योग्य गौओं के स्वामी हैं । यजमान दूध देने वाली उन गौओं से उत्पन्न होने वाले रस की कामना करते है ।२। जो गौयें देवताओं के उत्पत्ति स्थान और सूर्य के प्रिय धाम स्वर्ग में जा सकती है, जिनके दूध से कूप भर जाता है वे गौयें इन्द्र के लिए तीनों सवनों मे अपना दूध सोम में मिलाती है ।३। हे इन्द्र ! तुम साधुओं के पालन करने वाले, गौओं के स्वामी और यज्ञके पुत्र रूप हो । वह इन्द्र यज्ञके अभीष्ट को जिस प्रकार समझ सकें, उसी प्रकार उन्हें पूजो ।४। हे हयश्व ! तुम वेगवान होकर इन्द्र को हमारे कुश पर उतार दो । हम उनकी स्तुति करने की कामना करते हैं ।५।

(५)

इन्द्राय गाव आशिरं दुदुह्रे वज्रिणे मधु। यत् सीमुपह्वरेविदत्।६

उद्यद्ब्रध्नस्य विष्टपं गृहमिन्द्रश्च गन्वहि ।
मध्वः पीत्वा सचेवहि त्रिः सप्त सख्युः पदे ।७
अर्चत प्रार्चत प्रियमेधासो अर्चत ।
अर्कन्तु पुत्रका उत पुरं न धृष्णवर्चत ।८
अव स्वराति गर्गरो गोधा परि सनिष्वणत् ।
पिङ्गन परि चनिष्कददिन्द्राय ब्रह्मोद्यतम् ।९
आ यत् पतन्त्येन्यः सुदुघा अनपस्फुरः ।
अपस्फुरं गृभायत सोममिन्द्राय पातवे ।१०।६

जब इन्द्र पास में स्थित सोम की सब ओर से इच्छा करते हैं, तब गौयें सोम में मिलाने के लिए दूध देती हैं ।६। जब इन्द्र और मैं सूर्य मण्डल में जावें तब सूर्यके इक्कीस स्थानों में हम मधुर सोम रस पीकर मिलें ।७। हे अध्वर्युओ ! इन्द्र का पूजन करो । हे प्रियमेध के वंशजो ! जैसे पुरों को नष्ट करने वाले इन्द्र को पूजा जाता है, वैसे ही पूजो ।८। रणभेरी भयङ्कर घोष कर रही है । गोधा शब्दवान् है, पीली ज्याचीत्कार उठी है, अतः इन्द्रकी स्तुति करो ।९। जब श्वेत वर्ण वाली नदियां अत्यन्त बढ़ती हैं, उस समय अत्यन्त गुण वाले सोम का इन्द्र के पीने के लिएयहाँ लाओ ।१०। (६)

अपादिन्द्रो अपादग्निर्विश्वे देवा अमत्सत ।
वरुण इदिह क्षयत् तमापो अभ्यनूषत वत्सं संशिश्वरीरिव ।११
सुदेवो असि वरुण यस्य ते सप्त सिन्धवः ।
अनुक्षरन्ति काकुदं सूर्म्यं सुषिरामिव ।१२
यो व्यर्तीँरफाणयत् सुयुक्ताँ उप दाशुषे ।
तक्वो नेता तदिद्वपुरुपमा यो अमुच्यत ।१३
अतीदु शक्र ओहत इन्द्रो विश्वाअति द्विषः ।
भिनत् कनीन ओदनं पच्यमानं परो गिरा ।१४
अर्भको न कुमारको ऽधि तिष्ठन् नवं रथम् ।
स पक्षन्महिषं मृगं पित्रे मात्रे विभुक्रतुम् ।१५

आ तू सुशिप्र दंपते रथं तिष्ठा हिरण्ययम् ।
अध द्युक्षं सचेवहि सहस्रपादमरुषं स्वस्तिगामनेहसम् ।१६
तं घेमित्था नमस्विन उप स्वराजमासते ।
अर्थं चिदस्य सुधितं यदेतव आवर्तयन्ति दावने ।१७
अनु प्रत्नस्यौकसः प्रियमेधास एषाम् ।
पूर्वामनु प्रयतिं वृक्तबर्हिषो हितप्रयस आशत ।१८।७

इन्द्र ने सोम पिया, अग्निने भी पिया, विश्वेदेवा भी पीकर तृप्तहो गये । इस घर में वरुण रहे । सवत्सा गौयें जैसे अपने वत्स के प्राप्ति शब्दवती होती हैं, वैसे ही उक्थ वरुण की स्तुति करते हैं ।११। वरुण तुम श्रेष्ठ देवता हो रश्मियाँ जैसे सूर्य के सामने जाती है, वैसे ही गङ्गा आदि सातों नदियाँ तुम्हारे तालु पर गिरती हैं ।१२। जो इन्द्र रथ में यक्त अश्वों की यजमान के पास छोड़ते हैं, जो सभीसे मार्ग प्राप्त करते हैं वे इन्द्र यज्ञ में जाते समय सबमें प्रमुख होते हैं ।१३। इन्द्र शत्रुओंको लाँघने में समर्थ हैं, वे सब वैरियों का उल्लंघन करते हैं और अ ने शब्द द्वारा मेघ को विदीर्ण कर डालते हैं ।१४। यह इन्द्र नवीन रथ पर प्रतिष्ठित होते हैं । यह बहुत से कर्म वाले इन्द्र मेघ को वर्षाकारक बनाते हैं ।१५। हे रथाधिपति इन्द्र ! तुम सुन्दर तनु वाले हो, तुम अपने पवित्र एवं स्वर्णिम रथ पर आरूढ़ होओ तब हमदोनों भेंट करेंगे ।१६। उन तेजस्वी इन्द्र की अन्न से सम्पन्न यजमान सेवा करते हैं, फिर धन मिलता है ।१७। उन इन्द्र के प्राचीन स्थान को प्रियमेध के वंशजों ने पाया और कुश बिछाकर हव्य को रखा ।१८। (७)

सूक्त ७० (आठवाँ अनुवाक)

(ऋषि-पुरुहन्मा । देवता-इन्द्र । छन्द-बृहती, पंक्ति, उष्णिक्, अनुष्टुप्)

यो राजा चर्षणीनां याता रथेभिरध्रिगुः ।
विश्वासां तरुता पृतनानां ज्येष्ठो यो वृत्रहा गृणे ।१
इन्द्रं तं शुम्भ पुरुहन्मन्नवसे यस्य द्विता विधर्तरि ।
हस्ताय वज्रः प्रति धायि दर्शतो महो दिवे न सूर्यः ।२

नकिष्टं कर्मणा नशद्यश्चकार सदावृधम् ।
इन्द्रं न यज्ञैर्विश्वगूर्तमृभ्वसमधृष्टं धृष्ण्वोजसम् ।३
अषालहमुग्रं पृतनासु सासहिं यस्मिन् महीरुरुज्रयः ।
सं धेनवो जायमाने अनोनवुर्द्यावः क्षामो अनोनवुः ।४
यद्दद्याव इन्द्र ते शतं शतं भूमीरुत स्युः ।
न त्वा वज्रिन् त्सहस्रं सुर्या अनु न जातमष्ट रोदसी ।५।८

जो इन्द्र सबके स्वामी, सब सेनाओं के उद्धारक, सर्वत्र गमनशील, रथगामी, वृत्रहन्ता और ज्येष्ठ हैं, मैं उन्हीं इन्द्र की स्तुति करता हूँ ।१। अपनी रक्षा के लिए इन्द्र का पूजन करो । वे उग्र और उदार दोनों प्रकार के स्वभाव वाले हैं उनके द्वारा धारण किया जाने वाला वज्र सूर्य के समान तेजस्वी है ।२। जो यजमान, पूज्य, प्रवृद्ध और यजनीय इन्द्र को अपने अनुकूल करते हैं, उनके अतिरिक्त अन्य व्यक्ति उन्हें नहीं घेर सकते ।३। मैं उन शत्रुजेता, पराक्रमी इन्द्र की स्तुति करता हूँ । उसके प्रकट होते ही वेगवती गौओं ने तथा आकार और पृथिवी ने भी उनकी स्तुति की थी ।४। हे इन्द्र ! सौ आकाश एक होकर भी तुम्हारी बराबरी नहीं कर सकते, सो पृथिवी भी तुम्हारा माप नहीं कर सकतीं और सौ सूर्य भी तुम्हें आकाश नही दे सकते । आकाश-पृथिवी और जो कुछ इस लोकमें उत्पन्न हुआ है वह सब मिलकर भी तुम्हारी समानता नहीं कर सकते ।५।

आ पप्राथ महिना वृष्ण्या वृषन् विश्वा शविष्ठ शवसा ।
अस्माँ अव मघवन् गोमति व्रजे वज्रिञ्चित्राभिरूतिभिः ।६
न सीमदेव आपदिषं दीर्घायो मर्त्यः ।
एतग्वा चिद्य एतशा युयोजते हरी इन्द्रो युयोजते ।७
तं वो महो महाय्यमिन्द्रं दानाय सक्षणिम् ।
यो गाधेषु य आरणेषु हव्यो वाजेष्वस्ति हव्यः ।८
उदू षु णो वसो महे मृशस्व शूर राधसे ।
उदू षु मह्यै मघवन् मघत्तय उदिन्द्र श्रवसे महे ।९

त्वं न इन्द्र ऋतयुस्त्वानिदो नि तृम्पसि ।
मध्ये वसिष्व तुविनृम्णोर्वोर्नि दासं शिश्नथो हथैः ।१०।६

हे इन्द्र ! तुम अत्यन्त बली, वज्रधारी और धनवानहो । तुम यजमान को इच्छित फल देते हो । हमारी गौओं के लिए तथा हमारे लिये रक्षक होओ ।६। हे इन्द्र ! जो रथ मे श्वेत वर्णके दो घोड़ों को जोड़ता है इन्द्र उसीके निमित्त दोनों हर्यश्व युक्त करते हैं । देवताओ से विमुख मनुष्य उनसे अन्न प्राप्त नहीं करता ।७। हे ऋत्विजों ! इन्द्र की पूजा करो जल प्राप्ति के लिये उनका आह्वान करो, निम्न स्थल की प्राप्ति के लिये अथवा युद्ध में भी इन्द्र को ही आहूत करो ।८। इन्द्र ! तुम हमको धन प्राप्ति के निमित्त उन्नत करो महान् धन द्वारा यश प्रदान करने की इच्छा करो ।९। हे इन्द्र ! तुम यज्ञ की कामना वाले हो, तुम अपने निन्दक के धन का अपहरण करके प्रसन्न होते हो । तुम हमारी रक्षा के लिए अपना आश्रय दो । अपने वज्र से शत्रुओं का हनन करो ।१०।   (९)

अन्यव्रतममानुषमयज्वानमदेवयुम् ।
अव स्वः सखा दुधुवीत पर्वतः सुघ्नाय दस्युं पर्वतः ।११
त्व न इन्द्रासां हस्ते शविष्ठ दावने ।
धानानां न सं गृभायास्मयुर्द्विः सां गृभायास्मयुः ।१२
सखायः क्रतुमिच्छत कथा राधाम शरस्य ।
उपस्तुतिं भोजः सूरियो अह्रयः ।१३
भूरिभिः ममह ऋषिभिर्बर्हिष्मद्भिः स्तविष्यसे ।
यदित्थमेकमेकमिच्छर वत्सान् परादद ।१४
कर्णगृह्या मघवा शौरदेव्यो वत्सं नस्त्रिभ्य आनयत् ।
अजां सूरिर्न धातवे ।१५ १०

हे इन्द्र ! तुम्हारे मित्र रूप पर्वत यज्ञ-रहित और देवताओं से द्वेष करने वाले को स्वर्गसे नीचे गिराते है ।११। हे इन्द्र! तुम बलवान् हो । जैसे भुने हुए जौ को हाथमें लेते हैं, वैसे ही हमें देने को गौओं को हाथ में लो । तुम हमारी कामना करने वाले हो, अधिक कामना करते हुए

ऐसा करो ।१२। हे सखाओ ! इन्द्र के लिए कर्म करो। इन्द्र, शत्रुओं का भक्षण करने वाले हैं, उनका पतन कभी नहीं होता ।१३। हे इन्द्र ! तुम्हारी हविदाता स्तोता स्तुति करते हैं । तुम उन स्तोताओं को बत्स प्रदान करते हो ।१४। यह इन्द्र धनवान हैं, यह इन्द्र, हिंसक, शत्रुओं से प्राप्त हुई गौओं और बछड़ों को हमारे पास उसी प्रकार लावे, जिस प्रकार बकरी का स्वामी बकरी को पकड़ कर लाता है ।१५। (१०)

सूक्त ७१

(ऋषि—सुदीतिपुरुमीहलौ तयोर्वान्यतरः। देवता—अग्निः।
छन्द—गायत्री, बृहती)

त्वं नो अग्ने महोभिः पाहि विश्वस्या अरातेः। उत द्विषो मर्त्यस्य ।१। नहि मन्युः पौरुषेय ईशे हि वः प्रियजात । त्वमिदसि क्षपावान् ।२। स नो विश्वेभिर्देवेभिरूर्जो नपाद्भद्रशोचे । रयिं देहि विश्ववारम् ।३। न तमग्ने अरातयो मर्तं युवन्त रायः। यं त्रायसे दाश्वांसम् । यं त्रायसे दाश्वांसम् ।४। यं त्वं विप्र मेधसाता वग्रे हिनोषि धनाय । स तवोती गोषु गन्ता ।५।११

हे अग्ने! अदानियों द्वारा प्राप्त धनसे तुम पालन करो और शत्रुओं से हमारी रक्षा करो ।१। हे अग्ने तुम रात्रि में अत्यन्त प्रकाशमान होते हो मनुष्यों का क्रोध तुम्हारे कार्य में बाधक नहीं हो सकता ।२। हे अग्ने ! तुम अत्यन्क तेजस्वी हो, सब देवताओं के सहित हमको वरण करने योग्य धन प्रदान करो ।३। हे अग्ने! तुम जिस हविदाता की रक्षा करते हो, उनको अदानशील व्यक्ति हानि नहीं पहुँचा सकते ।४। हे अग्ने ! तुम जिस यजमान को धन लाभ के लिए यज्ञ-कर्म में प्रेरित करते हो, वह गौओं से सम्पन्न होता है ।५। (११)

त्वं रयिं पुरुवीरमग्ने दाशुषे मर्ताय । प्र णो नय वस्यो अच्छ ।६ उरुष्या णो मा परा दा अघायते जातवेदः। दुराध्ये मर्ताय ।७ अग्ने माकिष्टे देवस्य रातिमदेवो युयोत । त्वमीशिषे वसूनाम् ।८

सा नो वस्व उप माश्यूर्जो नपान्माहिनस्य। सखेवसो जरितृभ्य:।९
अच्छा न: शीरशोचिषं गिरो यन्तु दर्शतम् ।
अच्छा यज्ञासो नमसा पुरुवसूं पुरूवसुं पुरुप्रशस्तमूतये ।१०।१२

हे अग्ने ! तुम हविदाता के लिए बहुत-से वीरों से सम्पन्न धन दो और निवास के योग्य घरमें प्रतिष्ठित करो ।६। हे अग्ने! हमको हिंसित करने वाले शत्रुओं के हाथ में सौंपो । तुम हमारी रक्षा करो ।८। हे अग्ने ! तुम ज्योतिर्मान् हो । देवताओं से विमुख कोई भी व्यक्ति तुम्हें धन देने से नहीं रोक सकता ।८। हे अग्ने! तुम हम स्तोताओं को महान् ऐश्वर्य दो क्योंकि तुम सुन्दर वासदाता हो ।९। हमारी स्तुतियाँ अग्नि की ओर गमन करें । यज्ञ की रक्षा के लिए सब हवियों से युक्त होकर यह स्तोत्र अग्नि की ओर गमन करने वाले हो ।१०। (१३)

अग्नि सूनुं सहसो जातवेदसं दानाय वार्याणाम् ।
द्विता यो भूदमृतो मर्त्येष्वा होता मन्द्रतमो विशि ।११
अग्नि वो देवयज्यया ऽग्नि प्रयत्यध्वरे ।
अग्निं धीषु प्रथममग्निमर्वत्यग्नि क्षैत्राय साधसे ।१२
अग्निरिषां सख्ये ददातु न ईशे यो वार्याणाम् ।
अग्नि तोके तनये शश्वदीमहे वसुं सन्तं तनूपाम् ।१३
अग्निमीलिष्वावसे गाथाभि: शीरशोचिषम् ।
अग्नि राये पुरुमीलह श्रुतं नरो ऽग्नि सुदीतये छर्दि: ।१४
अग्नि द्वेषो योतवै तो गृणीमस्यग्नि शं योश्च दातवे ।
विश्वासु विक्ष्वविते हव्यो भुवद्वस्तुर्ऋषूणाम् ।१५।१३

सभी स्तुतियाँ अग्नि की ओर गमन करें । वे अग्नि मनुष्यों में रहते हुए भी अमर हैं । वह यज्ञ के सम्पादन करने वाले तथा शक्ति प्रदान करने वाले हैं ।११। हे यजमानों ! मैं देव पूजन के लिए अग्नि की स्तुति करता हूँ । यज्ञ के आरम्भ-काल में, अनुष्ठानके समय बन्धुत्व प्राप्ति और क्षेत्र प्राप्ति पर अग्नि का पूजन करता हूँ ।१२। हम अग्निके मित्र हैं और अग्नि अपने धन के स्वामी हैं, वे हमको अन्न प्रदान करें

हम अपने पुत्र और पौत्रके लिए भी यथेष्ट धन माँगते हैं।१३। रक्षाकी कामना करते हुए तुम अग्नि को स्तुति करो। उनको ज्वाला भस्म करने वाली है। सभी यजमान उनकी स्तुति करते हैं, अतः तुम भी अग्निकी स्तुति करो और उनसे वासप्रद धरभी माँगो।१४। हम शत्रुओं से मुक्ति पाने के लिए अग्नि की प्रार्थना करते हैं, अग्नि राजाके समान तथा वासदाता हैं, उनसे सुख और अभय पाने के लिए उनका आह्वान करते हैं। ५।

सूक्त ७२

(ऋषि–हर्यतः प्रयागः देवता–अनिर्दवीदि वा। छन्द—गायत्री)

हविष्कृणुध्वमा गमदध्वर्यु र्वनते पुनः। विद्वाँ अस्य प्रशासनम्।१। नि तिग्मभभ्यंशु सीदद्धोता मनावधि। जुषाणो अस्य सख्यम्।२। अन्तरिच्छन्ति तं जने रुद्रं परो मनीषया। गृभ्णन्ति जिह्वया ससम्।३। जाभ्यतीतपे धनुर्वयोधा ‹यरुहद्वनम्। दृषदं जिह्वयावधीत्।४। चरन् वत्सो रुशन्निह निदातारं न विन्दते। वेति स्तोतव अम्ब्यम्।५।१४

हे अध्वर्यो ! तुम हवि लाओ अग्नि प्रकट होगये। वह अध्वर्यु यज्ञ में हवि देना जानते हैं।१। इस यजमान को अग्नि से मित्रता हैं, क्योंकि वे तीक्ष्ण ज्वालाओं वाले अग्नि के पास बैठते हैं।२। यजमान को अभीष्ट सिद्धि के लिए वे अध्वार्यु अग्नि को सामने स्थापित करते हैं और स्तुति द्वारा अग्नि को ग्रहण करते हैं।३। अन्न देने वाले अग्नि सबको लांघते हैं, वे अन्तरिक्ष का उल्लंघन करते और मेघ का हनन करते हैं। वे जलपर भी आरूढ़ होते हैं।४। हे उज्वल वर्ण वाले अग्नि बच्चे के समान चंचल हैं। वे द्वेषी को प्राप्त नहीं होते। स्तुति करने वाले के सामीप्य की इच्छा करते हैं।५। (१४)

उतो न्वस्य यन्महदश्वावद्योजनं बृहत्। दामा रथस्य ददृशे।६। दुहन्ति सप्तैकामुप द्वा पञ्च सृजतः। तीर्थे सिन्धोरधि स्वरे।७। आ दशभिर्विवस्वत इन्द्रः कोशमचुच्यवीत्। खेदया त्रिवृता दिवः।८। परि त्रिधातुरध्वरं जूर्णिरेति नवीयसी। मध्वा

होतारो जञ्जते ।८। सिञ्चन्ति नमसावतमुच्चाचक्रं परिज्मानम् । नीचीनवारमक्षित् ।१०।१५

इन अग्नि को जोड़ने वाली अश्व सम्पन्न महिमामय रथ की एक रस्सी है ।६। सिन्धु तट पर ऋत्विज दोहन करते हैं । इनमें दो प्रस्थाता अन्य पांच को ग्रहण करते हैं ।८। यजमान की दश उँगलियों से पूजित इन्द्र ने मेघ से तीन किरणों के द्वारा जय-वर्षा की ।८। वेगवान् तथा तीन वर्ण वाले अग्नि शिखा सहित यज्ञ में गमन करते हैं । अध्वर्यु उनको मधु से पूजते हैं ।६। चक्र से युक्त, प्रकाश सम्पन्न, अक्षय और अग्नि पर झुके भुके हुए अध्वर्यु घृत सींचते हैं ।१५।   (१५)

अभ्यारमिदद्रयो निषिक्तं पुष्करे मधु । अवतस्य विसर्जने।११ गाव उपावतावतं मही यज्ञस्य रप्सुदा । उभा कर्णा हिरण्यया१२ आ सुते सिञ्चत श्रियं रोदस्योरभिश्रियम् । रसा दधीत वृषभम् ।१३। ते जानत स्वमोक्यं सं वत्सासो न मातृभिः । मिथो नसन्त जामिभिः ।१४। उप स्रक्वेषु बप्सतः कृण्वते धरुणं दिवि । इन्द्रे अग्ना नमः स्वः ।१५।१६

जब अध्वर्यु अग्नि की विसर्जन करते हैं तब विशाल पात्र में मधु सींचते हैं ।११। हे गौओं ! मन्त्रों द्वारा दूधकी आवश्यकता होनेपर तुम अग्नि का सामीप्य प्राप्त करो । उसके दोनों कान स्वर्ण और रजत के है ।१२। हे अध्वर्युओं ! आकाश-पृथिवी के आश्रित, मिश्रणके योग्य दूध को सींचों, फिर बकरी के दूध में अग्निकी स्थापना करो । ।१३। गौओं ने अपने आश्रय दाता अग्नि को जान लिया । शिशुओं ने अपनी माता से मिलने के समान ही गौयें अपने बन्धुओं से मिलती हैं, ।१४। शिखाके द्वारा भरण किया हुआ अग्नि का अन्न इन्द्र और अग्नि दोनों को पुष्ट करता है । वह अन्न अन्तरिक्ष क भी पालन करता है । अतः इन्द्राग्नि की अन्न अर्पित करो ।१५।   (१६)

अधुक्षत् पिप्युषोमिषमूर्जं सप्तपदोमरिः । सूर्यस्य सप्त रश्मिभिः ।१६। सोमस्य मित्रावरुणोदिता सूर आ ददे । तदातु-

रुस्य भेषजम् ।१७। उतो न्वस्य यत् पदं हर्यतस्य निधान्यम् । क्षां जिह्वयातनत् ।१८।१७

गमनशील वायु और चञ्चलता वाणीसे सूर्यकी सात रश्मियों द्वारा बढ़े हुए अन्न-रस को अध्वर्यु प्राप्त करता है ।१६। मित्रावरुण सूर्योदय के समान सोम को ग्रहण करते हैं, वे हमारे लिए हितकारी भेषज के समान हैं ।१७। हर्यंत ऋषि का स्थान यज्ञ के लिए उपयुक्त है अपनी ज्वालाओं के द्वारा अग्नि वहीं से स्वर्ग को व्याप्त करते हैं ।१८। (१७)

सूक्त ७३

(ऋषि–गोवदन अत्रेय: सप्तर्दाघ्रर्वा । देवता—अश्विनौ ।
छन्द—गायत्री)

उदीराथामृतायते युञ्जाथामश्विना रथम् । अन्ति षद्भूतु वामव: ।१। निमिषश्चिज्जवीयसा रथेना यातमश्विना । अन्ति षद्भूतु वामव: ।२। उप स्तृणीतमत्रये हिमेन धर्ममश्विना । अन्ति षद्भूतु वामव: ।३। कुह स्थ: कुह जग्मथु: कुह श्येनेव पेतथु: । अन्ति षद्भूतु वामव: ।४। यदद्य कर्हि कर्हि चिच्छुश्रूयातमिमं हवम् । अन्ति षद्भूतु वामव: ।५।१८

हे अश्विनीकुमारो ! मुझ यज्ञ की कालना वाले के निमित्त उदय को प्राप्त होओ ! तुम्हारे रक्षा-साधन हमारे पास टिकें, इसलिए तुम अपने रथ को जोड़ो ।१। हे अश्विनीकुमारों ! अत्यन्त वेग वाले रथ के द्वारा आगमन करो तुम्हारे रक्षा-सामर्थ्य हमारे निकटवर्ती हों ।२। हे अश्विनीकुमारो ! अत्रि के निमित्त अग्नि के दहन स्वभाव को हिम के द्वारा रोको । तुम्हारी रक्षा-शक्ति हमारे पास आवे ।३। हे अश्विद्वय ! तुम कहाँ हो ? वाजके समन्न कहाँ उतरते हो? तुम्हारी रक्षक शक्तियाँ हमारे पास रहें ।४। हे अश्विद्वय ! तुम हमार आह्वान को कब और कहाँ सुनोगे ? तुम्हारी रक्षायें हमारे निकट रहें । । (१८)

अश्विना यामहूतमा नेदिष्ठं याम्याप्यम् । अन्ति षद्भूतु वामव: ।६। अवन्तमत्रये गृहं कृणुतं युवमश्विना । अन्ति षद्भूतु वामव: ।७। वरेथे अग्निमातपो वदते वल्ग्वत्रये । अन्ति षद्भूतु

वासव: ।८। प्र सप्तवध्रिराशसा धारामग्नेरशायत । अन्ति षद्-भूतु वामव: ।९। इहा गतं वृषण्वसू शृणुतं म इमं हवम् । अन्ति षद्भूतु वामव: ।१०।१९

मैं अत्यन्त आह्वनीय अश्विनीकुमारो के पास जाता हूँ । उनके बांधवों के पास जाता है । हे अश्विद्वय ! तुम्हारी रक्षायें हमारे पास रहें ।६। हे अश्विद्वय ! तुमने अत्रि की रक्षा के लिए घर बताया था तुम्हारी रक्षायें हमें प्राप्त हों ।७। हे अश्विनीकुमारो ! अत्रि तुम्हारी लिए सुन्दर स्तोत्र करने वाले हैं उनको अग्निके दहन स्वभाव से रक्षित करो । तुम्हारी रक्षायें हमको प्राप्तहों ।८। हे अश्विद्वय! तुम्हारी स्तुति के प्रभाव से महर्षि सप्तवध्रि ने अग्नि ज्वाला की मजूषा से निकालकर फिर उसी में शयन करा दिया था । तुम्हारी रक्षायें हमें प्राप्त हों ।९। हे अश्विद्वय ! तुम धनवान् और वृष्टिप्रद हो,यहाँ आकर हमारे स्तोत्र सुनो । तुम्हारी रक्षायें हमें प्राप्त हो ।१९। (१९)

किमिदं वां पुराणवज्जरतोरिव शस्यते । अन्ति षद्भूतु वामव: ।११। समानं वां सजात्यं समानो बन्धुरश्विना । अन्ति षद्भूतु वामव: ।१२। यो वां रजांस्यश्विना रथो वियाति रोदसी अन्ति षद्भूतु वामव: ।१३। आ नो गव्येभिरश्व्यैः सहस्रैरुप गच्छतम् । अन्ति षद्भूतु वामव: ।१४। मा नो गव्येभिरश्व्यैः सहस्रेभिरति ख्यतम् । अन्ति षद्भूतु वामव: ।१५। अरुणप्सुरुषा अभूदकर्ज्योतिर्ऋतावरी । अन्ति षद्भूतु वामव: ।१६। अश्विना सु विचाकशद्वृक्षं परशुमाँ इव । अन्ति षद्भूतु वामव: ।१७। पुरं न धृष्णवा रुज कृष्णवा बाधितो विशा । अन्ति षद्भूतु वामव: ।१८।२०

हे अश्विद्वय ! तुम्हें अत्यन्त वृद्धावस्था प्राप्त व्यक्ति के समान ही बारम्बार क्यों आहूत करना होता है ! तुम्हारी रक्षायें हमे प्राप्त हों । ।११। हे अश्विद्वय ! तुम दोनों समान जन्मा । हो तुम्हारे बन्धु भी समान हैं । तुम्हारी रक्षायें हमें प्राप्त हों ।१२। हे अश्विद्वय ! तुम्हारा रथ आकाश-पृथिवी तथा अन्य सभी लोकोंमें विचरण करताहै । तुम्हारी

रक्षायें हमारे पास रहें।१३। हे अश्विद्वय ! असंख्य गौ अश्वादि के सहित हमारे पास आगमन करो। तुम्हारी रक्षाये हमें प्राप्त हों।१४। हे अश्विद्वय ! इन असीम गौ और अश्वों के दान को रोकना मत। तुम्हारी रक्षायें हमें प्राप्त हों।१५। हे अश्विनीकुमारो ! उषा उज्वल वर्ण वाली, यज्ञ से सम्पन्न और ज्योतिको प्रकट करने वाली है तुम्हारी रक्षायें हमें प्राप्त हों।१६। जैसे कुल्हाड़े वाला पुरुष वृक्ष को काटने में समर्थ होता है, वैसे ही ज्योतिर्मान् आदित्य अन्धकार को नष्ट करते हैं। मैं अश्विनीकुमारों का आह्वान करती हूँ, उनकी रक्षायें हमें प्राप्त हो।१७। हे सप्तवध्रि ! तुम कृष्ण मंजूषा में थे। फिर तुमने उसे पुर के समान भस्म कर दिया। तुम्हारी रक्षायें हमें प्राप्त हों।१८। (२०)

सूक्त ७४

(ऋषि-गोपावन आत्रेयः। देवता-अग्नि, श्रुतवर्ण आर्क्षस्य दानस्तुति। छन्द–अनुष्टुप, गायत्री)

विशोविशो वो अतिथि वाजयन्तः पुरुप्रियम्।
अग्नि वो दुर्य वचः स्तुषे शूषस्य मन्मभिः।१
यंजनासो हविष्मन्तो मित्रं न सर्पिरासुतिम् प्रशंसन्तिप्रशस्तिभिः
पन्यांसं जातवेदसं वो देवतात्युद्यता। हव्यान्यैरयद्दिवि।३
आगन्म वृत्रहन्तमं ज्येष्ठमग्निमानषम्।
यस्य श्रुतर्वा बृहन्नार्क्षो अनीक एधते।४
अमृतं जातवेदसं तिरस्तमांसि दर्शतम्। घृताहवनमीड्यम्।५।२१

हे ऋत्विजो ! यजमानो ! तुम अन्न की कामना से प्राणीमात्र के अतिथि और अनेकों के प्रिय अग्नि का स्तुतियों द्वारा पूजन करो। मैं तुम्हारे मङ्गल श्रेष्ठ स्तोत्र और गम्भीर बाणी का प्रयोग करता हूँ।१। जिन अग्नि के निमित्त घृत की आहुति घृतकी आहुति दी जाती है और हविदान और स्तुतियोसे प्रसन्न किया जाता है।२। जो जातधन अग्नि स्तोता की प्रशंसा करते हुए यज्ञ में प्रदत्त हव्य को स्वर्ग में पहुँचाते हैं।३। जिस अग्नि की ज्वालाओं ने महान् श्रुतर्वा और ऋक्ष पुत्रकी वृद्धि

की, वे मनुष्योंके हितैषी और पापियोंको नष्ट करने वाले हैं। मैं उन्हीं अग्नि की शरण को प्राप्त हूँ।४। अग्नि स्तुति के योग्य, जातधन और अविनाशी है। उनको घृत की आहुतियाँ दी जाती है। यह अन्धकार का नाश करते हैं।५।　(२१)

सबाधो यं जना इमे ऽग्निं हव्येभिरीलते। जुह्वानासो यतस्रुचः ६
इयं ते नव्यसी मतिरग्ने अधाय्यस्मदा।
मन्द्र सुजात सुक्रतो ऽमूर दस्मातिथे।७
सा ते अग्ने शंतमा चनिष्ठा भवतु प्रिया। तया वर्धस्व सुष्टुतः।८
सा द्युम्नैर्द्युम्निनी बृहदुपोप श्रवसि श्रवः। दधीत वृत्रतूर्ये।९।
अश्वामिद्गां रथप्रां त्वेषमिन्द्रं न सत्पतिम्।
यस्य श्रवांसि तूर्वथ पन्यंपन्यं च कृष्टयः।१०।१२

यह काम्य पुरुष अपने यज्ञमें स्रुक ग्रहण करके हवि देते हुए अग्नि की स्तुति करते हैं।६। हे अग्ने! तुम सुन्दर जन्म वाले, दर्शनीय एवं मेधावी हो हम तुम्हारी पूजा करते हैं।७। हे अग्ने! हमारी यह स्तुति तुमको सुख देने वाली, प्रिय तथा अन्नसे सम्पन्न हो। तुम उसके द्वारा वृद्धि को प्राप्त होओ।८। हे अग्ने! यह यथेष्ट अन्न वाली स्तुति रण-क्षेत्र में अन्न पर एकत्र करने वाली हो।९। जो अग्नि अपने बल द्वारा शत्रु के अन्न-धन को नष्टकर देते हैं, उन रथादि से सम्पन्न करने वाले अग्नि का वेगवान् अश्व और सत्य के स्वामी इन्द्र के समान पूजन किया जाता है।१०।

यं त्वा गोपवनो गिरा चनिष्ठदग्ने अङ्गिरः। स पावक श्रुधी हवम् ११। यं त्वा जनास ईलते सबाधो वाजसातये। स बोधि वृत्रतूर्ये।१२। अह हुवान आर्क्षे श्रुतर्वणि मदच्युति।
शर्धांसीव स्तुकाविनां मृक्षा शीर्षा चतुर्णाम्।१३
मां चत्वार आशवः शविष्ठस्य द्रवित्नवः।
सुरथासो अभि प्रयो वक्षन् वयो न तुग्र्यम्।१४
सत्यमित् त्वा महेनदि परुष्ण्यव देदिशम्।
नेमापो अश्वदातरः शविष्ठादस्ति मर्त्यः।१५।२३

इन्द्र ने अरों के समान ही रस्सी से एक साथ ही उन्हें खींच लिया और राक्षसों को मार कर बुद्धि को प्राप्त हुए।३। इन्हीं इन्द्र ने सोम-रस से भरे हुए तीस पात्रों को एक साथ ही पी लिया।४। ब्राह्मणों को बढ़ाने के लिए इन्द्र ने अन्तरिक्ष में मेघ को चीर डाला।५। (२९)

निराविध्यद्गिरिभ्य आ धारयत् पक्वमोदनम्। इन्द्रो बुन्दं स्वाततम्।६। शतब्रध्न इषुस्तव सहस्रपर्ण एक इत्। यमिन्द्र चकृषे युजम्।७। तेन स्तोतृभ्य आ भर नृभ्यो नारिभ्यो अत्तवे। सद्यो जात ऋभुष्ठिर।८। एता च्यौत्नानि ते कृता वर्षिष्ठानि परीणसा। हृदा वीड्वधारयः।९। विश्वेत् ता विष्णुराभरदुरुक्रमस्त्वेषितः। शतं महिषान् क्षीरपाकमोदनं वराहमिन्द्र एमुषम्।१०। तुविक्षं ते सुकृतं सूमयं धनुः साधुर्बुन्दो हिरण्ययः। उभा ते बाहू रण्या सुसंस्कृत ऋदूपे चिदृदूवृधा।११।३०

इन्द्र ने वृहद वाण से मेघ को विदीर्ण किया और मनुष्य के लिए पके हुए अन्न की कल्पना की।६। हे इन्द्र! तुम्हारे वाण में सौ फल सहस्र पात्र हैं। यही वाण तुम्हारा सहायक है।७। हे स्तोताओ! तुम उत्पन्न होते ही स्थिरहो। पुत्रों और स्त्रियों के सेवनार्थ उसी बाण से प्रचुर धन दो।८। हे इन्द्र! तुम्हीं ने इन विशाल एवं विस्तृत पर्वतों का निर्माण किया। उन्हें स्थिर रूप से धारण करने वाले होओ।९। हे इन्द्र! तुम्हारे जल को विष्णु देते हैं, वह विष्णु तुम्हारी प्रेरणा से आकाश में घूमते हैं। तुमने ही पशु, दूध, अन्न और जल के अपहरण कर्त्ता मेघ को भी प्रदान किया।१०। हे इन्द्र! तुम्हारा बाण सुवर्ण निर्मित्त है। तुम्हारा धनुष सुख देने वाला और अनेकबाण फेंकने वाला है। तुम्हारी भुजायें सुन्दर और यज्ञ को बढ़ाने वाली हैं।११। (३०)

सूक्त ७९

(ऋषि—कुरसुतिः काण्वः। देवता—इन्द्रः। छन्द—गायत्री, वृहती)

पुरोलाशं नो अन्धस इन्द्र सहस्रमा भर। शता च शूर

गोनाम् ।१। आ नो भर व्यञ्जनं गामश्वमभ्यञ्जनम् । सचा मना हिरण्यया ।२। उत नः कर्णशोभना पुरूणि धृष्णवा भर । त्वं हि शृण्विषे वसो ।३। नकीं वृधीक इन्द्र ते न सुषा न सुदा उत । नान्यस्त्वच्छूर वाघतः ।४। नकीमिन्द्रो निकर्तवे न शक्र परिशक्तवे । विश्वं शृणोति पश्यति ।५।३१

हे इन्द्र ! इस पुरोडास को ग्रहण करते हु, हमको सौ गौयें प्रदान करो ।१। हे इन्द्र ! तुम हमको गौ, अश्व बैल और सुन्दर सुवर्ण के आभूषण प्रदान करो ।२। तुम सुन्दर धन देने वाले और शत्रुओं को नष्ट करने वाले हो । तुम हमको बहुत से कुण्डलादि अलङ्कार दो ।३। हे इन्द्र! तुम्हारे अतिरिक्त अन्य कोई वृद्धिकारक नहीं है । तुम्हारे अतिरिक्त युद्धक्षेत्र में अन्य कोई टिक नहीं सकता । तुम्हारे अतिरिक्त कोई श्रेष्ठ दाता तथा ऋत्विजों का कोई नेता भी नहीं है ।४। इन्द्र किसी से पराजित नहीं होते, वह किसी का अपमान भी नहीं करते । वह सबके दृष्टा और सुनने वाले हैं ।५। (३१)

स मन्युं मर्त्यानामदब्धो नि चिकीषते । पुरा निदश्चिकीषते ।६। क्रत्व इत् पूर्णमुदरं तुरस्यास्ति विधतः । वृत्रघ्नः सोमपान्वः ।७। त्वे वसूनि संगता विश्वा च सोम सौभगा । सुदात्वपरिह्वता ।८। त्वामिद्यवयुर्मम कामो गव्युर्हिरण्ययुः । त्वामश्वयुरेषते ।९। तवेदिन्द्राहमाशसा हस्ते दात्रं चना ददे । दिनस्य वा मघवन् त्समृतस्य वा पूधि यवस्य काशिना ।१०।३२

मनुष्य इन्द्र की हिंसा नही कर सकते । वह निन्दा से पूर्व ही निन्दा को मार देते है । उनके हृदयमें क्रोध के लिए किंचित् भी स्थान नही है ।५। सोम पीने वाले, वृत्रहन्ता इन्द्र का उपासकों के कर्म द्वारा ही पेट भरता है ।७। हे इन्द्र ! तुम सब धनों से सम्पन्न हो, सभी सौभाग्य तुम में निहित हैं । सुन्दर दान में कुटिलता नहीं होती ।८। हे इन्द्र ! मेरा मन जो, अश्व और स्वर्ण की कामना करता हुआ तुम्हारे पास पहुँचता है ।९। हे इन्द्र ! मैं इस दरांत को तुम्हारी कामनाओं से

ही ग्रहण करता हूँ । तुम संग्रह किये लौ से मुट्ठी के द्वारा सम्पूर्ण आशाओं को पूर्ण करो ।१०।   (३२)

सूक्त ७६

(ऋषि-कृत्नुरभार्गवः । देवता-सोम, । छन्द-गायत्री, अनुष्टुप्)

अयं कृत्नुरगृभीतो विश्वजिदुद्भिदित् सोमः । ऋषिर्विप्रः काव्येन ।१। अभ्यूर्णोति यन्नग्नं भिषक्ति विश्वं यत् तुरम् । प्रेमन्धः ख्यन्निः श्रोणो भूत् ।२। त्वं सोम तनूकृद्भ्यो द्वेषोभ्योऽन्यकृतेभ्यः । उरु यन्तासि वरूथम् ।३। त्वं चित्ती तव दक्षैर्दिव आ पृथिव्या ऋजीषिन् । यावीरघस्य चिद् द्वेषः ।४। अर्थिनो यन्ति चेदर्थं गच्छानिद्ददुषो रातिम् । ववृज्युस्तृष्यतः कामम् ।५।३३

यह ऋषि मेधावी, कवि और सोम का अभिषव करने वाले हैं। यह विश्वजित् और उद्भिद नामके सोम-यागों को सम्पन्न कर चुके हैं ।१। सोम रोगी को निरोग करते, नंगे-की लच्छिादित करते, पंगु को गमन शक्ति देते और सन्नद्ध रहने वाले को दर्शन शक्ति देते हैं ।२। हे सोम ! शरीर को दुर्बल बनाने वाली व्याधियोंसे तुम रक्षा करने वाले हो ।३। हे ऋजीषवान् सोम ! तुम अपने बल-बुद्धि द्वारा द्यावापृथिवी से और हमारे यहाँ से शत्रु के दुष्ट कर्मों को दूर करो ।४। धन की कामन वाले पुरुष यदि धनवान् के पास जाँय तो दान से प्राप्त धन द्वारा याचक की इच्छा पूर्ण होती है ।५।   (३४)

विदद्यत् पूर्व्यं नष्टमुदीमृतायुमीरयत् । प्रेमायुस्तारीदतीर्णम् ।६। सुशेवो नो मृलयाकुरदृप्तक्रतुरवातः । भवा नः सोम शं हृदे ।७। मा नः सोम सं वाविजो मा वि बीभिषथा राजन् । मा नो हार्दि त्विषा वधीः ।८। अवयत् स्वे सधस्थे देवानां दुर्मतीरीक्षे । राजन्नप द्विषः सेध मीढ्वो अप स्रिधः सेध ।९।३४

प्राचीन धन प्राप्त करने के समय यज्ञ काम्य पुरुष को प्रेरणा दी जाती है और यज्ञ द्वारा दीर्घायु प्राप्त की जाती है ।६। हे सोम ! तुम हमारे लिए सुखकारी एवं कल्याणप्रद हो, तुम निश्चय एवं यज्ञ का

सम्पादन करने वालेहो ।७। हे सोम ! तुम हमारे अङ्गों को कम्पित न करना हमको भय मत देना और हमको नष्ट मतकर देना ।८। हे सोम! शत्रुओं को भगाओ । हिंसकों का वध करो । तुम्हारे गृह मे कुबुद्धि प्रविष्ट न हो ।६। (३४)

सूक्त ८०

(ऋषि—एलद्यूनौधसः । देवता—इन्द्रः, देवाः । छन्द—गायत्री)

नह्यन्यं बलाकरं मर्डितारं शतक्रतो । त्वं न इन्द्र मृलय ।१। यो नः शश्वत पुराविथाअमृध्रो वाजः सातये । सत्व न इन्द्रमृलय ।२। किमङ्ग रध्रचोदनः सुन्वानस्यावितेदसि । कुवित् स्विन्द्र णः णकः ।३। इन्द्र प्र णो रथमव पश्चाच्चित् सन्तमद्रिवः । पुरस्तादेनं मे कृधि ।४। हन्तो नु किमाससे प्रथमं नो रथं कृधि । उपमं वाजयु श्रवः ।५।३५

हे इन्द्र ! मैं तुम्हारे अतिरिक्त अन्य देवना का इतना सत्कार नहीं करता. अतः मुझे सुख प्रदान करो ।१। जिन इन्द्र ने अन्न के लिए हमारी रक्षा की वह इन्द्र हमारा सदैव मङ्गल करें ।२। हे इन्द्र ! तुम अभिषवकारी का पालन करते हो, अतः हमको यथेष्ट धन दो और उपासक को कर्म में प्रवृत्त करो ।३। हे इन्द्र ! बज्रिन् ! हमारे पीछे जो रथ खड़ा है उसकी रक्षा करते हुए सामने ले आओ ।४। हे इन्द्र ! तुम शत्रुओं के संहारक हो । इस समय मौन किसलिए हो? हमारे रथ को उत्कृष्ट करो । हमारे अभीष्टे अन्न तुम्हारे पास ही है ।५। (३५)

अवा नो वाजयुं रथं सुकरं ते किमित् परि । अस्मान् त्सु जिग्युषस्कृधि ।६। इन्द्र दृह्यस्व पूरसि भद्रा त एति निष्कृतम् । इयं धीर्ऋत्वियावती ।७। मा सीमवद्य आ भागुर्वी काष्ठा हितं धनम् । अपावृक्ता अरत्नयः ।८ तुरीयं नाम यज्ञियं यदा करस्तदुश्मसि । आदित् पतिर्न ओहसे ।९। अवीवृधद्वो अमृता अमन्दीदेकद्यूर्देवा उत याश्च देवीः । तस्मा उ राधः कृणुत प्रशस्तं प्रातर्मक्षू धियावसुर्जगम्यात् ।१०।३६

हे अग्ने ! तुमने ऋषि गोपवन की स्तुति सुन कर अन्न प्रदान दिया था। तुम युद्ध करने वाले और सर्वत्र गमनशील हो। गोपवन की स्तुति को श्रवण करो।११। हे अग्ने ! बाधा प्राप्त पुरुष अन्न की कामना से तुम्हारी स्तुति करते हैं। तुम कर्मक्षेत्र में चैतन्य होओ।१२। ऋक्षपुत्र श्रुतर्वा शत्रु के अहङ्कार का खण्डन करने वाले हैं, उनके द्वारा बुलाये जाने पर उनके दिए चार घोड़ों के रोम वाले शिरोंको मैं अपने हाथ से धो रहा हूँ।१३। उन श्रुतर्वा के चारों अश्व श्रेष्ठ रथ में संयुत होकर अश्विनीकुमारों को चार नौकाओं-द्वारा तुग्र-पुत्र भुज्य को वहन करने के समान अन्न वहन करते हैं।१४। हे परुष्णी नदी, हे जल ! मैं यथार्थ ही कहता हूँकि इन महाबली श्रुतर्वा से अधिक अश्व दान कोई भी नहीं कर सकता।१५। (२३)

सूक्त ७५

(ऋषि—विरूपः । देवता—अग्निः । छन्द—गायत्री)

युक्ष्वा हि देवहूतमाँ अश्वाँ अग्ने रथीरिव। नि होता पूर्व्यः सदः।१। उत नो देव देवाँ अच्छा वाचो विदुष्टरः। श्रद्विश्वा वार्या कृधिः।२। त्वं ह यद्यविष्ठ्य सहसः सूनवाहुत। ऋतावा यज्ञियो भुवः।३। अयमग्निः सहस्रिणो वाजस्य शतिनस्पतिः। मूर्धा कवी रयीणाम्।४। तं नेमिमृभवो यथा ऽऽनमस्व सहूतिभिः। नेदीयो यज्ञमङ्गिरः।५।२४

हे अग्ने ! देवताओं को लाने के लिए वेगवान् अश्वो को सारथि के समान योजित करो। तुम होता हो अतः मुख्य रूप से विराजमान होओ।१। हे अग्ने ! देवताओं के सामने हमें विद्वानों में श्रेष्ठ बताते हुये तुम ग्रहणीय हव्यको उनके पास पहुँचाओ।२। हे बलोत्पन्न अग्ने ! तुम सत्य से सम्पन्न और अनुष्ठान के योग्य हो।३। यह अग्नि शिखा वाले मेधावी, धनों के स्वामी और सौ तथा सहस्र प्रकार के अन्नों के ईश्वर हैं।४। हे अग्ने ! तुम गमनशील हो ऋभुगण द्वारा रथ नेमि को लाने के समान आहूत देवताओं सहित यज्ञ को ले आओ।५। (२४)

तस्मै नूनमभिद्यवे वाचा विरूप नित्यया। वृष्णे चोंदस्व सुष्टुतिम् ।६। कमु ष्विदस्य सेनया ऽग्नेरपाकचक्षसः। पणिं गोषु स्तरामहे ।७। मा नो देवानां विशः प्रस्नातीरिवोस्राः। कृशं न हासुरघ्न्याः ।८। मा नः समस्य दूढयः परिद्वेषसो अंहतिः। ऊर्मिर्न नावमा वधीत् ।९। नमस्ते अग्न ओजसे गृणन्ति देव कृष्टयः। अमैरमित्रमर्दय ।१०।२५

हे ऋषि ! जो अग्नि कामनाओं के वर्षण और वाणी द्वारा संतुष्ट होने वाले हैं, उनकी स्तुति करो ।६। इन विशाल नेत्र वाले अग्नि की ज्वाला से हम गायों की प्राप्ति के लिए किसी पणि को मारेंगे ? ।७। पयस्विनी गौओं को कोई नहीं त्यागता, गौयें अपने बछड़ों को नहीं त्यागती, वैसे ही अग्निभी हमारा त्याग न करें क्योंकि हम देवताओंके सेवक है ।८। समुद्र की लहरें नौका को रोकती हैं, उस प्रकार शत्रुओं की कुबुद्धि हमें रोकने वाली न हो ।९। हे अग्ने ! तुम अपने बल से शत्रुओं को नष्ट करो। तुम्हारे बलका पीनेके लिए हम तुम्हें नमस्कार करते हैं ।१०। (२५)

कुवित् सु नो गविष्टये ऽग्ने संवेषिषो रयिम्। उरुकृदुरु णस्कृधि ।११। मा नो अस्मिन् महाधने परा वर्ग्भारभृद्यथा। मा नो अस्मिन् महाधने परा वर्ग्भारभृद्यथा। संवर्गं सं रयिं जय ।१२। अन्यमस्मद्भिया इयमग्ने सिषक्तु दुच्छुना। वर्धा नो अमवच्छवः ।१ । यस्यायुषन्नमस्विनः शमीमदुर्मखस्य वा। त घेदग्निर्वृधावति ।१४। परस्या अधि संवतो ऽवराँ अभ्या तर। यत्राहमस्मि ताँ अव ।१५। विद्मा हि ते पुरा वयमग्ने पितुर्यथावसः। अधा ते सुम्नमीमहे ।१६।२६।

हे अग्ने ! गौयें प्राप्त करने के लिए अभीष्ट प्रदान करो। हे समृद्ध अग्ने। हमको ऐश्वर्यवान् बनाओ ।११। हे अग्ने शत्रुओं द्वारा धन नष्ट हो रहा हैं, हमारी समृद्धि के लिए उस पर अधिकार करो। हमको इस युद्ध में त्याग मत देना ।१२। हे अग्ने ! स्तुति न करने वालों के लिए ही बिघ्न उपस्थित हों। हम तुम्हारे बल वाले वेग को बढ़ावें ।३। जो

पुरुष यज्ञादि कर्मों में अग्नि की नमस्कारों द्वारा पूजा करता है, अग्नि उसके पासही गमन करते हैं ।१४। हमारी सेनाओं का शत्रुओं से पृथक करो । मैं जिस सेनाओं के मध्य हूँ, उनकी रक्षा करो ।१५। हे अग्ने ! प्राचीन के समान हम तुम्हारे रक्षा साधनों को जानते हैं, तुम रक्षक हो । हम तुमसे सुख माँगते हैं ।१६।   (२६)

सूक्त ७६

(ऋषि—कुरुसुतिः काण्वः । देवता—इन्द्रः । छन्द—गायत्री)

इनं नु मायिन हुव इन्द्रमीशानमोजसा । मरुत्वन्तं न वृञ्जसे१ अयमिन्द्रो मरुत्सखा वि वृत्रस्याभिनच्छिरः । वज्रेण शतपर्वणा ।२। वावृधानो मरुत्सखेन्द्रो वि वृत्रमैरयत् । सृजन् त्समुद्रिया अपः ।३। अयं ह येन वा इदं स्वर्मरुत्वता जितम्। इन्द्रेण सोमपीतये ।४। मरुत्वन्तमृजीषिणमोजस्वन्तं विरप्शिनम् । इन्द्रं गीर्भिर्हवामहे ।५। इन्द्रं प्रत्नेन मन्मना मरुत्वन्तं हवामहे । अस्य सोमस्य पीतये ।६।२७

शत्रु को मारने के लिए इन्द्र को आहूत करता हूँ, वे मरुत्वान् अपने ही बल से सबके ईश्वर हैं ।१। मरुद्गण को साथ लेकर इन्हीं इन्द्र ने अपने सौ पर्वों वाले वज्र के वृत्र का शिर पृथक् किया ।२। इन्द्र ने मरुद्गण की सहायता से पुत्र को चीर डाला और उन्होंने अन्तरिक्ष में जल प्रकट किया ।३। जिन ने मरुद्गण सहित सोम पीने के लिए स्वर्ग पर अधिकार किया, यह वही है ।४। मरुत्वान् इन्द्र सोमसम्पन्न, ओज सम्पन्न और महान् हैं। हम स्तुति करते हुए आहूत करते हैं ।५। हम मरुत्वान् इन्द्र को सोम पीने के लिए प्राचीन स्तुतियों के द्वारा आहूत करते हैं ।६।   (२७)

मरुत्वाँ इन्द्र मीढ्वः पिबा सोमं शतक्रतो । अस्मिन् यज्ञे पुरुष्टुत ।७। तुभ्येदिन्द्र मरुत्वते सुताः सोमासो अद्रिवः । हृदा हूयन्त उक्थिनः ।८। पिबेदिन्द्र मरुत्सखा सुतं सोमं दिविष्टिषु ।

वज्रं शिशान ओजसा ।९। उत्तिष्ठन्नोजसा सह पीत्वी शिप्रे अवेपय: सोममिन्द्र चमू सुतम् ।१०। अनु त्वा रोदसी उभे क्रक्षमाणमकृपेताम्। इन्द्र यद्दस्युहाभव: ।११। वाचमष्टापदीमहं नवस्रक्तिमृतस्पृशम् । इन्द्रात् परि तन्वं ममे ।१२।२८

हे इन्द्र ! तुम अनेकों द्वारा बुलाये गये फलों की वर्षा करने वाले और सैंकड़ों कर्मों वाले हो । तुम मरुदगण सहित इस यज्ञ ने आकर सोम पिओ ।७। हे वज्रिन् ! इस सोमको तुम्हारे और मरुद्गण के लिये शोधित किया है । फिर यह उक्थों से स्तुति करने वाले विद्वान् श्रद्धा सहित तुम्हें आहूत करते हैं ।८। हे मरुदगण के सखा इन्द्र ! तुम इस स्वर्गदायक यज्ञ में सोम-पान करते हुए बलि सहित खड़े होकर अपने ठोड़ी को कम्पित करो ।१०। हे इन्द्र ! तुम शत्रुओं का वध करने वाले हो । जब तुम राक्षसों को मारते हो, तब आकाश-पृथ्वी दोनों तुम्हारी रक्षा करते हैं ।११। चार दिशाओ,चार कोणों और आदित्य सहित यश को स्पर्श करने वाला स्तोत्र भी इन्द्र से न्यून हैं । इन्द्र के लिए मैं उस स्तोत्र को करता हूँ ।१२। (२८)

सूक्त ७७

(ऋषि–कुरुसुतिः काण्व, । देवता–इन्द्रः । छन्द–गायत्री, बृहती, पंक्ति)

जज्ञानो नु शतक्रतुर्वि पृच्छदिति मातरम् । क उग्रा: के ह शृण्विरे ।१। आदी शवस्यब्रवीदौर्णवाममहीशुवम् । ते पुत्र सन्तु निष्ठुर: ।२। समित् तान् वृत्रहाखिदत् खे अराँ इव खेदया । प्रवृद्धो दस्युहामवत् ।३। एकवा प्रतिधापिबत् साकं सरांसि त्रिशतम् । इन्द्रः सोमस्य काणुका ।४। अभि गन्धर्वमतृणदबुध्नेषु रज:स्वा । इन्द्रो ब्रह्मभ्य इडढधे ।५।२९

उत्पन्न होते ही अनेक कर्म वाले इन्द्र ने अपनी माता से पूछा कि कौन प्रसिद्ध और पराक्रमी है ? ।१। माता ने उत्तर दिया कि–'ऊर्णनाभ, अपीशुभ, आदि कितने ही हैं, उन्हें पार लगाना चाहिए ।२। वृत्रहन्ता

हमारी और हमारी सन्तानों की रक्षा करो ।३। हे बलोत्पन्न अग्ने ! तुम शत्रुओं का सामना करने वाले हो मैं तुम्हारा किस स्तोत्र से स्तव करूँ ।४। हे बलोत्पन्न अग्ने ! हम तुम्हें यजमान की इच्छा के अनुसार हव्य प्रदान करेंगे । मैं तुम्हारे लिए कब नमस्कार करूँगा ? ।५। (५)

अधा त्वं हि नस्करो विश्वा अस्मभ्यं सुक्षितोः वाजद्रविणसो गिरः ।६। कस्य नूनं परीणसो धियो जिन्वसि दपते । गोषाता यस्य ते गिरः।७। तं मर्जयन्त सुक्रतुं पुरोयावानमाजिषु। स्वेषु क्षयेषु वाजिनम् ।८। क्षेति क्षेमेभिः साधुभिर्नकिर्यं घ्नन्ति हन्ति यः । अग्ने सुवीर एधते ।९।६

हे अग्ने ! हमारे सब स्तोत्रों को घर धन अन्न से सम्पन्न करो ।६। हे गार्हपत्याग्ने ! तुम इस समय किसके कर्म को सफल कर रहे हो ? तुम्हारे स्तोत्र धन प्रदान करने वाले हैं ।७। यह अग्नि बलवान्, रथ में अग्रगण्य, सुन्दर मति वाले हैं । अपने गृह में यजमान इन्हें पूजते हैं ।८। हे अग्ने ! जो मनुष्य तुम्हारी रक्षाओं सहित अपने गृहमें निवास करता है, उसकी हिंसा कोई नहीं कर सकता । वह शत्रु का हिंसक होता हुआ, सुन्दर पुत्र पौत्रादि से सम्पन्न होकर बुद्धि होकर वृद्धि को प्राप्त होता है ।९। (६)

सूक्त ८५

(ऋषि-कृष्ण, । देवता-अश्विनी । छन्द-गायत्री)

आ मे हवं नासत्या ऽश्विना गच्छतं युवम् । मध्वः सोमस्य पीतये ।१। इमं मे स्तोममश्विनेमं मे शृणुत हवम् । मध्वः सोमस्य पीतये ।२। अयं वां कृष्णो अश्विना हवते वाजिनीवसू । मध्वः सोमस्य पीतये ।३। शृणुतं जरितुर्हव कृष्णस्य स्तुवतो नरा । मध्वः सोमस्य पीतये ।४। छर्दिर्यन्तमदाभ्यं विप्राय स्तुवते नरा । मध्वः सोमस्य पीतये ।५।,

हे अश्विनीकुमारो ! मेरा आह्वान सुनकर मेरे यज्ञ में हर्षप्रद सोम के पास जाओ ।१। हे अश्विद्वय ! इस हर्ष प्रावयक सोम को पीने

के लिए मेरे स्तोत्र रूप आह्वान को सुनो ।२। हे अश्विद्वय ! तुम अन्न धनसे सम्पन्न हो । मैं कृष्ण ऋषि तुम्हें हर्षप्रदायक सोमके लिए आहूत करता हूँ ।३। हे अश्विद्वय ! हर्षप्रदायक सोमको पीनेके लिए मुझ कृष्ण का आह्वान सुनो ।४। हे अश्विद्वय ! मुझे विद्वान स्तोता कृष्ण ऋड़िके लिए हर्ष प्रदायक सोम के निमित्त घर दो ।५। (७)

गच्छतं दाशुषो गृहमित्था स्तुवतो अश्विना । मध्वः सोमस्य पीतये ।६। युञ्जाथां रासमं रथे वीड्वङ्गे वृषण्वसू । मध्वः पीतये ।७। त्रिवन्धुरेण त्रिवृता रथेना यातमश्विना । मध्वः सोमस्य पीतये ।८। नू मे गिरो नासत्या ऽश्विना प्रावतं युवम् । मध्वः सोमस्य पीतये ।६।८

हे अश्विद्वय ! मुझ हविदाता के घर में हर्षप्रदायक सोम को पीने के लिए आगमन करो ।६। हे अश्विनीकुमारो ! हर्ष प्रदायक सोम के लिए दृढ़ अवयव वाले रथ में अश्व संयुक्त करो ।७। हे अश्विद्वय ! तीन फलकों वाले त्रिकोण रथ पर प्रदायक सोम को पीने के लिए आओ ।८। हे अश्विद्वय ! मेरी स्तुति रूप वाणी के प्रति सोम पीने के लिए शीघ्र आगमन करो ।६। (६)

सूक्त ८६

(ऋषि–कृष्णो विश्वको वा कार्ष्णिः । देवता–अश्विनौ । छन्द–जगती)

उभा हि दस्रा भिषजा मयोभुवोभा दक्षस्य वचसो वभूवथुः। ता वां विश्वको हवते तनूकृथे मा नो वि यौष्टं सख्या मुमोचतम् ।१। कथा नूनं वां विमना उप स्तवद्युवं धियं ददथुर्वस्यइष्टये । ता वां विश्वको हवते तनूकृथे मा नो वि यौष्टं सख्या मुमोचतम् ।२। युवं हि ष्मा पुरुभुजेममेधतुं विष्णाप्वे ददथुर्वस्यइष्टये । ता वां विश्वको हवते तनूकृथे मा नो वि यौष्टं सख्या मुमोचतम् ।३ उत त्यं वीरं धनसामृजीषिणे दूरे चित् सन्तमवसे हवामहे । यस्य स्वादिष्ठा सुमतिः पितुर्यथा मा नो वि यौष्टं सख्या मुमोचतम् ।४। ऋतेन देवः सविता शमायत ऋतस्य शृङ्गमुर्विया वि

पप्रथे । ऋतं सासाह महि चित् पृतन्यतो मा नो वि यौष्टं सख्या मुमोचतम् ।।१

हे अश्विद्वय ! तुम दर्शनीय और सुखकारी हो । दश की स्तुति के समय तुम उपस्थित थे । मैं विश्वक तुम्हें सन्तान के निमित्त आहूत करता हूँ । हमारे बन्धुत्वको नष्ट मत करो । अश्वों को लगाम से खोल दो । । हे अश्विद्वय ! प्राचीन काल में विमना ऋषि ने तुम्हारी स्तुति की थी और विमना को धन प्राप्त कराने का तुमने विचार किया था । मैं विश्वक तुम्हें आहूत करता हूँ । हमारा बन्धुत्व पृथक् न हो । अश्वों की लगाम से खोल दो ।२। हे अश्विद्वय ! तुमने अनेक का पालन किया है मेरे पुत्र विष्णुवायु की कामना पूर्ति के लिए तुमने धन दिया था, वैसे ही मैं विश्वक तुम्हें सन्तानके निमित्त आहूत करताहूँ हमारा बंधुत्व पृथक् न हो, अश्वों की लगाम से खोल दो । हे अश्विद्वय ! सोम से सम्पन्न विष्णुवायु तुम्हें आहूत करते हैं मेरे समान उनके स्तोत्र भी मधुर है । तुम हमारी मित्रता को दूर न करो ।४। हे अश्विनीकुमारो ! सत्य से सूर्य अपनी किरणों को समेटते हैं, फिर रश्मि समूह को फैलाते है । वही सूर्य सेना-सम्पन्न शत्रु को हराते हैं । सत्य के द्वारा हमारा बन्धुत्व स्थिर रहे । घोड़ों की लगाम पृथक् करो ।५। (६)

सूक्त ८७

(ऋषि-कृष्णो द्युम्नीको वा वासिष्ठः प्रियमेधो वा । देवता-अश्विनौ छन्द-वृहती, पंक्तिः)

द्युम्नी वां स्तोमो अश्विना क्रिविर्न सेक आ गतम् ।
मध्वः सुतस्य स दिवि प्रियो नरा पातं गौराविवेरिणे ।१
पिबतं धर्मं मधुमन्तमश्विना ऽऽबर्हिः सीदतं नरा ।
ता मन्दमाना मनुषो दुरोण आ नि पातं वेदसा वयः ।२
आ वां विश्वाभिरूतिभिः प्रियमेधा अहूषत ।
या वर्तिर्यातमुप वृक्तबर्हिषो जुष्टं यज्ञं दिविष्टिषु ।३
पिबतं सोमं मधुमन्तमश्विना ऽऽबर्हिः सीदतं सुमत् ।

ता वावृधाना उप सुष्टुतिं दिवो गन्तं गौराविवेरिणम् ।४
आ नूनं यातमश्विना ऽश्वेभिः प्रुषितप्सुभिः ।
दस्रा हिरण्यवर्तनी शुभस्पती पातं सोममृतावृधा ।५
वयं हि वां हवामहे विपन्यवो विप्रासो वाजसातये ।
ता वल्गू दस्रा पुरुदंससा धिया ऽश्विना श्रुष्ट्या गतम् ६।१०

हे अश्विनीकुमारो ! यह द्युम्नीक ऋषि नामक स्तोता यज्ञ में संस्कारित हर्ष प्रदायक सोम को छानने वाला है। वर्षा ऋतु में जैसे कुयें पर्ण हो जाते हैं, वैसे पूर्ण होकर आगमन करो और जैसे हरिण तालाब आदि का पानी पीते हैं, वैसे ही तुम सोम को पीओ ।१। हे अश्विनीकुमारों। तुम इस रस युक्त सिंचित सोम का पान करो। इस यज्ञ में प्रतिष्ठित होते हुए तुम हवियों सहित सोम को पीओ ।२। हे अश्विनीकुमारो ! जिस यजमानने तुम्हारे लिए कुश को विस्तृत किया है, उसके द्वारा सम्पन्न हवि के निमित्त प्रातःकाल ही आगमन करो। यह यजमाय तुम्हें सब रक्षण-शक्तियों सहित आहूत करते हैं ।३। हे अश्विद्वय ! इस रसमय सोम को पीकर कुशों पर विराजमान होओ। फिर जैसे श्वेत हरण ताल की ओर गमन करते हैं, वैसे ही बढ़ते हुए तुम हमारी स्तुतियों की ओर आगमन करो ।४। हे अश्विद्वय ! तुम अपने अश्वों के सहित आगमन करो। तुम दोनों स्वर्णिम रथयुक्त, जल रक्षक और यज्ञ-वर्द्धक हो। यहाँ आकर सोम पीओ ।५। हे अश्विनी-कुमारो ! हम स्तुति करने वाले ब्राह्मणहैं। तुम अनेकों कर्म वाले तथा सुन्दरता से गमन करने वाले हो। हम तुम्हें अन्न के लिए आहूत करते है। तुम हमारे स्तोत्रों के प्रति शीघ्र आगमन करो।६। (७)

सूक्त ८८

(ऋषि—नोधा। । देवता—इन्द्रः । छन्द—वृहती, पंक्तिः)

तं वो दस्ममृतीषहं वसोर्मन्दानमन्धसः ।
अभि वत्सं न स्वसरेषु धेनव इन्द्रं गीर्भिर्नवामहे ।१
द्युक्षं सुदानुं तविषीभिरावृतं गिरिं न पुरुभोजसम् ।

हे इन्द्र ! अन्न की कामना वाले हमारे रथ की रक्षा करो। तुम हमें रणक्षेत्र में विजय प्राप्त कराओ ।६। हे इन्द्र ! तुम पुर के समान दृढ़ होओ। तुम यज्ञको सम्पन्न करने वाले हो। कल्याणकारी यज्ञ-कर्म तुम्हारी और गमन करताहै ।७। हमारे पास निन्दनीय व्यक्ति न आवे। सभी दिशाओं में व्याप्त धन के स्वामी हो। हमारे शत्रु नष्ट हो जाय ।८। हे इन्द्र ! तुम्हारे यज्ञात्मक चतुर्थ नामके वरण करते ही हमने उस की इच्छा की थीं। तुम्हारी रक्षा और पालन करने वाले हो।९। हे अबिनाशी देवताओ ! एतद्यु ऋषि तुमको पत्नियों सहित तृप्त करते हैं तुम हमको बहुत सा धन प्रदान करो। कर्म-प्रेरक इन्द्र प्राप्त सेवामें ही पधारे ।१०। (३६)

सूक्त ८१ (नौवाँ अनुवाक)

(ऋषि—कुसीदी कण्वः। देवता—इन्द्रः। छन्द—गायत्री)

आ तू न इन्द्र क्षुमन्तं चित्रं ग्राभं सं गृभाय। महाहस्तो दक्षिणेन ।१। विद्मा हि त्वा तुविकूर्मि तुविदेष्णं तुवीमघम्। तुविमात्रमवोभिः ।२। नहि त्वा शूर देवा न मर्तासो दित्सन्तम्। भीमं न गां वारयन्ते ।३। एतो न्विन्द्रं स्तवामेशानं वस्वः स्वराजम्। न राधसा मर्धिषन्नः ।४। प्र स्तोषदुप गासिषच्छ्रवत् साम गीयमानम्। अभि राधसा जुगुरत् ।५।३७

हे इन्द्र ! तुम वृहद् हाथ वाले हो अतः हमारे दान के निमित्त ग्रहणीय दिव्य धन को दाहिने हाथ में लो ।१। हे इन्द्र ! तुम अनेक कर्म वाले बहुत से दान वाले, असीमित धन वाले और महती रक्षाओं वाले हो ।२। हे इन्द्र ! तुम जब दान में तत्पर होते हो तब देवता, मनुष्य आदि कोईभी तुम्हें रोक नहीं सकते ।३। हे मनुष्यो! इन्द्र दीप्यमान धन के ईश्वर हैं, यहाँ आकर इन्द्र की स्तुति करो। वह अपने धन से अन्य धनियों के समान बाधा देने वाले न हों ।४। हे स्तोताओ! तुम्हारी स्तुति की इन्द्र प्रशंसा करें और सोम गान को सुनें। वे धनसे सम्पन्न होते हुए हमारे ऊपर कृपा करें ।५। (३७)

आ नो भर दक्षिणेनाऽभि सव्येन प्र मृश । इन्द्र मा नो वसोर्निर्भाक् ।६। उप क्रमस्वा भर धृषता धृष्णो जनानाम् । अदाशूष्टरस्य वेदः ।७। इन्द्र य उ नु ते अस्ति वाजो विप्रेभिः सनित्वः । अस्माभिः सु तं सनुहि ।८। सद्योजुवस्ते वाजा अस्मभ्य विश्वश्चन्द्राः वशैश्च मक्षू जरन्ते ।६।३८

हे इन्द्र ! तुम हमारे निमित्त आओ । हमें दोनों हाथों से दो । हमें धनहीन मत बनाओ ।६। हे इन्द्र ! तुम धन की ओर गमन करो । जो मनुष्य अदातशील है उसके धन को लाकर हमें दो ।७। हे इन्द्र ! ब्राह्मणों द्वारा यजनीय धन तुम्हारा ही है । जब हम उसकी याचना करें तभी हमको दो ।८। हे इन्द्र! तुम्हारा अन्न सबको पुष्ट करने वाला हैं, वह शीघ्र ही हमारे पास आवे । हमारे स्तोंता विविध कामनाओं वाले होकर तुम्हारी स्तुति करते हैं ।६। (३८)

सूक्त ८२

(ऋषि—कुसीदी काण्वः । देवता—इन्द्रः । छन्द—गायत्री)

आ प्र द्रव परावतो ऽर्वावतश्च वृत्रहन् । मध्वः प्रति प्रभर्मणि ।१। तीव्राः सोमास आ गहि सुतासो मादयिष्णवः । पिबा दधृग्यथोचिषे ।२। इषा मन्दस्वादु ते ऽरं वराय मन्यवे । भुवत् त इन्द्र शं हृदे ।३। आ त्वशत्रवा गहि न्युक्थानि च हूयसे । उपमे रोचने दिवः ।४। तुभ्यायमद्रिभिः सुतो गोभिः श्रीतो मदाय कम् । प्रसोम इन्द्र हूयते ।५।१

हे वृत्रहन्ता इन्द्र ! तुम इस यज्ञ के हर्ष प्रदायक सोम के लिए दूर या पास जहाँ कहीं हो, वहीं से आओ ।१। हर्ष प्रदायक सोम का अभिषव किया गया है । हे इन्द्र ! यहाँ आकर उसका पान करों ।२। हे इन्द्र ! सोम रूप अन्न के द्वारा प्रसन्न होओ । उसको शक्ति शत्रु को भगाने वाले क्रोध को उत्पन्न करे । यह सोम तुम्हारे हृदय को मंगलकारी हो ।३। हे इन्द्र ! शीघ्र आगमन करो । स्वर्ग में निवास करने वाले देवताओं के तेज से प्रकाशित यज्ञ में तुम उक्थों द्वारा आहूत किये

जा रहे हो ।४। हे इन्द्र ! पाषण से यह सोम अभिषुत हुआ है, दुग्धादि मे मिश्रित करके उसे तुम्हारी प्रसन्न के लिए होम रहे हैं।३। (१)

इन्द्र श्रुधि सु मे हवमस्मे सुतस्य गोमतः। वि पीतिं तृप्ति-मश्नुहि ।६। य इन्द्र चमसेष्वा सोमश्चमूषु ते सुतः। पिबेदस्य त्वमीशिषे ।७। यो अप्सु चन्द्रमा इव सोमश्चमूषु ददृशे। पिबे-दस्य त्वमीशिषे ।८। यं ते श्येनः पदाभरत् तिरो रजांस्यस्पृतम्। पिबेदस्य त्वमीशिषे ।९।२

हे इन्द्र ! हमारे अभिषुत सोम का पान करो। यह गव्यादि से मिश्रित हैं, तुम इसके द्वारा तृप्ति को प्राप्त होओ। हे इन्द्र ! तुम मेरे आह्वान को सुनो।६। हे इन्द्र ! चमस और चमू नामक पात्रोंमें स्थित सोम को पान करो।७। हे इन्द्र ! तुम ईश्वर हो। चन्द्रमा के समान उज्ज्वल सोम जल में है, उसका पान करो।८। हे इन्द्र ! गायत्री पक्षी का रूप धारण कर सोम के रक्षक गन्धर्वों का तिरस्कार करती हुई ले आई थी, तुम उस सोम का दोनों सवनों में पान करो।९। (३)

सूक्त ८३

(ऋषि-कुसीदी काण्वः। देवता-विश्वेदेवाः। छन्द-गायत्री)

देवानामिदवो महत् तदा वृणीमहे वयम्। वृष्णामस्मभ्यमूतये ।१। ते नः सन्तु युजः सदा वरुणो मित्रो अर्यमा। वृधासश्च प्रचे-तसः।२। अति नो विष्पिता पुरु नौभिरपो न पर्षथ। यूयमृतस्य रथ्यः।३। वामं नो अस्त्वर्यमन् वामं वरुण शंस्यम्। वामं ह्या-वृणीमहे ।४। वामस्य हि प्रचेतस ईशानासो रिशादसः। नेमा-दित्या अवस्य यत् ।५।३

हे देवताओं ! अपनी रक्षा की कामना, करते हुए हम तुम्हारी अभीष्ट वर्षिणी रक्षाओं को माँगते हैं।१। हे विश्वेदेवा ! वरुण, प्रिय अर्यमा हमारे सहायक होते हुए हमारी वृद्धि करें।२। हे देवताओ ! जैसे नाव जल से पार करती हैं वैसे ही हमें शत्रुकी विशाल सेनाओं से पार करो।३। हे अर्यमा ! हे वरुण ! यजनीय और प्रशंसनीय धन

हमारे पास हो। धन के लिए तुमसे याचना करते हैं।४। हे देवताओ! तुम सेवनीय धनों में स्वामी हो। तुम्हारा धन हमारे पास आवे।१। (३)

वयमिद्वः सुदानवः क्षियन्तो यान्तो अध्वन्ना। देवा वृधाय हूमहे।६। अधि न इन्द्रैषां विष्णो सजात्यानाम्। इता मरुतो अश्विना।७। प्र भ्रातृत्वं सुदानवो ऽध द्विता समान्या। मातुर्गर्भे भरामहे।८। ययं हि ष्ठा सुदानव इन्द्रज्येष्ठा अभिद्यवः। अधा चिद्व उत ब्रुवे।९।४

हे देवो! हम मार्ग में या गृह में जहाँ भी हैं, वही पर तुम्हें अन्न हमारे समान मनुष्यों में केवल हमारे यहाँ ही आगमन करो।७। हे देवताओं! तुम्हारा दान सुन्दर है। हम पहिले तुम्हें प्रकट करेंगे और फिर तुम्हारे दो-दो करके साथ जन्म लेने वाले बन्धुत्व को भी कहेंगे।८। हे देवो! तुम में इन्द्र ज्येष्ट हैं, तुम सब हमारे यज्ञ में प्रतिष्ठित होओ। फिर हम तुम्हारी स्तुति करते हैं।९। (४)

सूक्त ८४

(ऋषि—उशना काव्यः। देवता—अग्निः। छन्द—गायत्री)

प्रेष्ठं वो अतिथिं स्तुषे मित्रमिव प्रियम्। अग्निं रथं न वेद्यम्।१। कविमिव प्रचेतसं यं देवासो अध द्विता। नि मर्त्येष्वादधुः।२ त्वं यविष्ठ दाशुषो नॄँः पाहि शृणुधी गिरः। रक्षा तोकमुत त्मना।३। कया ते अग्ने अङ्गिर ऊर्जो नपादुपस्तुतिम्। वराय देव मन्यवे।४। दाशेम कस्य मनसा यज्ञस्य सहसो यहो। कदु वोच इदं नमः।५।५

मैं तुम्हारे निमित्त मित्र और अतिथि के समान प्रिय और रथ के समान वहन करने वाले अग्नि का पूजन करता हूँ।१। देवताओं ने महान् ज्ञामी के समान जिन अग्नि को दो प्रकार से प्रतिष्ठित किया है, मैं उनका स्तव करता हूँ।२। अग्ने! इन मनुष्यों की स्तुति सुनते हुए

क्षुमन्तं वाज शतिनं सहस्रिण मक्षू गोमन्तमीमहे ।२
न त्वा बृहन्तो अद्रयो वरन्त इन्द्र वीलवः ।
यद्दित्ससि स्तुवते मावते वसु नकिष्टदा मिनाति ते ।२
योद्धासि क्रत्वा शवसोत दंसना विश्वा जाताभि मज्मना ।
आ त्वायमर्क ऊतये ववर्तति यं गोतमा अजीजनन् ।४
प्र हि रिरिक्ष ओजसा दिवो अन्तेभ्यस्परि ।
न त्वा विव्याच रज इन्द्र पार्थिवमनु स्वधां ववक्षिथ ।५
नकिः परिष्टिर्मघवन् मघस्य ते यद्दाशुषे दशस्यसि ।
अस्माकं बोध्युचथस्य चोदिता मंहिष्ठो वाजसातये ।६।११

गौयें अपने बछड़े को गोष्ठ में बुलाती हैं, वैसे ही हम शत्रु हन्ता, दुःख शमनकर्त्ता सोमपाल से सम्पन्न होंने वाले तथा दर्शनीय इन्द्र को स्तोत्र पूर्वक आहूत करते हैं ।१। इन्द्र अनेकों का पालन करने वाले,बल से आच्छादित, श्रेष्ठ दानी, स्वर्ग के निवासी हैं। हम उनसे पुत्रादि, संतान माँगते हैं ।२। हे इन्द्र ! यह विशाल पर्वत भी तुम्हारे कर्म में बाधक नहीं हों सकते । तुम मुझ स्तोताको जो धन देना चाहते हो,उसे अन्य कोई रोक नहीं सकता ।३। हे इन्द्र ! तुम अपने बज्रसे शत्रुओंका संहार कर्म करते हो । मैं स्तोता देव पूजक हूँ । अपनी रक्षा कामना करता हुआ मैं तुम्हारी शरण प्राप्त करता हूँ । तुम्हें गौतमों ने प्रकट किया है ।४। हे इन्द्र ! तुम आकाश से भी बड़े हो पृथिवी तुम्हारी समानता नहीं कर सकती । हमारा अन्न प्राप्त करने की कामना करते हुए आओ ।५ हे इन्द्र ! तुम जिस हविदाता को धन देते हो, उसमें बाधक कोई नहीं होता । तुम हमारे स्तोत्र को समझते हुए धन को प्रेरित करने वाले और अत्यन्त दान वाले होओ ।६। (१०)

सूक्त ८९

(ऋषि–नृमेधपुरुमेधौः । देवता–इन्द्रः । छन्द–बृहती, अनुष्टुप्)

बृहदिन्द्राय गायत मरुतो वृत्रहंतमम् ।
येन ज्योतिरजनयन्नृतावृधो देवं देवाय जागृवि ।१
अपाधमदाभिशस्तीरशस्तिहा ऽथेन्द्रो द्युम्न्याभवत् ।
देवास्त इन्द्र सख्याय येमिरे बृहद्भानो मरुद्गण ।२
प्र व इन्द्राय बृहते मरुतो ब्रह्मार्चत ।
वृत्रं हनति वृत्रहा शतक्रतुर्वज्रेण शतपर्वणा ।३
अभि प्र भर धृषता धृषन्मनः श्रवश्चित् ते असद् बृहत् ।
अर्षन्त्वापो जवसा वि मातरो हनो वृत्रं जया स्वः ।४
यज्जायथा अपूर्व्य मघवन् वृत्रहत्याय ।
तत् पृथिवीमप्रथयस्तदस्तभ्ना उत द्याम् ।५
तत् ते यज्ञो अजायत तदर्क उत हस्कृतिः ।
तद्विश्वमभिभूरसि यज्जातं यच्च जन्त्वम् ।६
आमासु पक्वमैरय आ सूर्यं रोहयो दिवि ।
घर्मं न सामन् तपता सुवृक्तिभिर्जुष्टं गिर्वणसे बृहत् ।७।१२

हे मरुद्गण ! इन्द्र के पवित्र गुणों को गाओ । विश्वेदेवताओं ने तेजस्वी इन्द्र को इस गान से चैतन्य और सूर्य रूपसे ज्योतिष्मान किया था । इन्द्र स्तोत्र रहित पुरुषों के नाशक हैं, इन्होंने शत्रुओंके हिंसा कर्मों को नष्ट कर दिया । उसके पश्चात् इन्द्र यशस्वी हुए । हे मरुत्वान इन्द्र तुम्हारी मैत्री को देवताओं ने स्वीकार कर लिया है ।२। हे मरुदगण ! महान इन्द्र की स्तुति करो । उन सैकड़ों कर्म वाले इन्द्र ने सौ पर्ववाले वज्र से वृत्रको मारा था ।३। इन्द्र ! जब तुम शत्रुको मारने के लिए प्रस्तुत होते हो तब तुम्हारे पास बहुत सा अन्न होता है । अतः हमको सुंदर धन प्रदान करो । हमारे मातृ-भूत जल पृथिवी की ओर प्रवाहित हों । तुम स्वर्ग पर अधिकार करो और जल के रोकने वाले वृत्र का वध करो ।४। हे इन्द्र ! तुम ऐश्वर्यवान् हो । तुम,जब वृत्र को मारने के लिए ही प्रकट हुए तब तुमने पृथिवी को स्थिर किया और आकाश को ऊपर ही रोक दिया था ।५। उस समय सुंदर यज्ञ और

हर्ष दाता मन्त्रों की तुम्हारे निमित्त उत्पत्ति हुई, तब तुमने सब जगत को वश में किया ।७। हे इन्द्र ! तुमने कच्चे दूध वाली गौओंके दूध को परिपक्व किया और सूर्य को आकाश पर चढ़ाया । उन इन्द्र को सोम यान द्वारा प्रवृद्ध करो । वे स्तुतियों का सेवन करने वाले हैं ।८। (१२)

सूक्त ९०

(ऋषि–नृमेध पुरुमेधी: । देवता–इन्द्र: । छन्द–बृहती, पंक्ति)

आ नो विस्वासु हव्य इन्द्रः समत्सु भूषतु ।
उप ब्रह्माणि सवनानि वृत्रहा परमज्या ऋचीषमः ।१
त्वं दाता प्रथमो राधसामस्यसि सत्य ईशानकृत् ।
तुविद्युम्नस्य युज्या वृणीमहे पुत्रस्य शवसो महः ।२
ब्रह्मा त इन्द्र गिर्वणः क्रियन्ते जनतिद्भुता ।
इमा जुषस्व योजनेन्द्र या ते अमन्महि ।३
त्वं हि सत्यो मघवन्ननानतो वृत्रा भूरि न्यृञ्जसे ।
स त्वं शविष्ठ वज्रहस्त दाशुषेऽर्वाञ्चं रयिमा कृधि ।४
त्वमिन्द्र यशा अस्यृजीषी शवसस्पते ।
त्वं वृत्राणि हंस्यप्रतीन्येक इदनुत्ता चर्षणीधृता ।५।
तमु त्वा नूनमसुर प्रचेतसं राधो भागमिवेमहे ।
महीव कृत्तिः शरणा त इन्द्र प्र ते सुम्ना नो अश्नवन् ।६।१३

इन्द्र सभी संग्रामों में आहूत करने योग्य हैं, वे हमारे स्तोत्र के आश्रित हों । उनकी प्रत्यंचा कभी नहीं टूटती, वे वृत्रहन्ता स्तुतियों द्वारा अभिमुख किये जाते हैं ।१। हे इन्द्र ! तुम सब धन दाताओं में प्रमुख हो । हम स्तोताओं का धन से सम्पन्न करो । हम तुम्हारे धन के आश्रय की कामना करते हैं ।२। हे इन्द्र ! तुम हमारे यथार्थ स्तोत्रों से सुसङ्गत होओ उनका सेवन करो । हमारे द्वारा उच्चारित मन्त्रों को ग्रहण करते हुए प्रसन्न होओ ।३। हे इन्द्र ! तुम सत्य रूपहो । तुम धन वान् हो, तुम किसी के वश में नहीं पड़ते । तुमने अनेक राक्षसों को

मारा है। हविदाता जिस प्रकार धन प्राप्त कर सकें वैसा करो।४। हे इन्द्र! तुम सोम के द्वारा तेजस्वी हुए हो। तुमने अकेले ही अजेय दैत्यों को वज्र से नष्ट किया।५। हे इन्द्र! तुम बलवान और श्रेष्ठज्ञानी हो। पैतृक धन-भाग पाने वालों के समान हम तुमसे ही धन माँगते हैं। तुम्हारे यश के अनुरूप ही स्वर्गलोक में तुम्हारा निवास स्थान है। हम तुम्हारे कल्याणों में निःशङ्क रहें। (१)

सूक्त ९१

(ऋषि—अपालात्रेयी। देवता—इन्द्र। छन्द—पंक्ति, अनुष्टुप्)

कन्या वारवायती सोममपि स्रुताविदत्।
अस्तं भरन्त्यब्रवीदिन्द्राय सुनवै त्वा शक्राय सुनवै त्वा।१
असौ य एषि वीरको गृहगृहं विचाकशत्।
इमं जम्भसुतं पिब धानावन्तं करम्भिणमपूपवन्तमुक्थिनम्।२
आ चन त्वा चिकित्सामोऽधि चन त्वा नेमसि।
शनैरिव शनकैरिवेन्द्रायिन्दो परि स्रव।३
कुविच्छकत् कुवित् करत् कुविन्नो वस्यसस्करत्।
कुवित् पतिद्विषो यतीरिन्द्रेण संगतामहै।४
इमानि त्रीणि विष्टपा तानीन्द्र वि रोहय।
शिरस्ततस्योर्वरामादिदं म उपोदरे।५
असौ च या न उर्वरादिमां तन्वं मम।
अथो ततस्य यच्छिरः सर्वा ता रोमशा कृधि।६
खे रथस्य खेऽनसः खे युगस्य शतक्रतो।
अपालामिन्द्र त्रिष्पूत्व्यकृणोः सूर्यत्वचम्।७।१४

स्नान के निमित्त जल की ओर गमन करती हुई कन्या ने इन्द्र की प्रसन्नता के लिए सोम को पाया। उसने सोम से कहा—मैं तुम्हें सामर्थ्यवान् इन्द्र के लिए निष्पन्न करती हूँ।१। हे इन्द्र! तुम प्रत्येक घर में जाने वाले, अत्यन्त तेजस्वी और वीर हो। तुम उक्थों से युक्त पुरोडाशादि का तथा अभिषुत सोम का सेवन करो।२। हे इन्द्र! हम

तुम्हें जानना चाहती हैं। इस समय हम तुमको प्राप्त नहीं करती। हे सोम ! तुम इन्द्र के लिए धीरे और फिर वेग से प्रवाहित होओ।३। वह हमको और आपान को पूजाके लिए सुन्दर वाणी से सम्पन्न करें। वह इन्द्र हमको अनेक बार धन दें। हम अनेक करें। हम पति द्वारा त्यागी जाने से यहाँ आकर इन्द्र से मिलेंगी।४। हे इन्द्र ! मेरे पिता के मस्तक, खेत और मेरे उदर के पास वाले स्थान, इन तीनोंको उत्पादन शक्ति दो।५। मेरे पिता के मरुस्थल रूप खेत, पिता का केश रहित मस्तक और मेरे शरीर को उर्बर बनाते हुए उन्हें रोम वाले करो।६। वे इन्द्र सैकड़ों कर्म वाले हैं, इन्होंने अपने रथ के बड़े छेदों गाड़ी के छेदों और जोड़ों को अपनयन द्वारा शुद्ध करके अपालाको सूर्यके समान तेजस्विनी बना दिया।७। (१४)

सूक्त ९२

(ऋषि–श्रुतकण, सुकक्षो वा। देवता–इन्द्रः। छन्द–अनुष्टुप् गायत्री)

पान्तमा वो अन्धस इन्द्रमभि प्र गायत। विश्वासाहं शतक्रतुं मंहिष्ठं चर्षणीनाम्।१। पुरुहूतं गाथान्यं सनश्रुतम्। इन्द्र इति व्रवीतन।२। इन्द्र इन्नो महानां दाता वाजानां नृतुः। महाँ अभिज्ञ्वा यमत्।३। अपादु शिप्रचन्धसः सुदक्षस्य प्रहोषिणः। इन्दोरिन्द्रो यवाशिरः।४। तम्वभि प्रार्चतेन्द्रं सोमस्य पीतये। तदिद्धचस्य वर्धनम्।५।१५

ऋत्विजो ! सोम वाले इन्द्र की स्तुति करो। वे सबको वश में करने वाले, सैकड़ों कर्म वाले और सबसे अधिक धन प्रदान करने वाले हैं।१। तुम अनेकों द्वारा आहूत, अनेकों से स्तुत, गायन के पात्र देवता को सनातन इन्द्र कहो।२। इन्द्र हमको धन देने वाले, अन्नदाता और सबके नचाने वाले हैं। वे महान् हमारे अभिमुख आकर धनप्रदान करें।३। सुन्दर मुकुटधारी इन्द्र ने जौ से युक्त सोम का भले प्रकार पान किया।४। यह सोम इन्द्र को बढ़ाने वाला है, अतः सोम पीने के लिए इन्द्र से प्रार्थना करो।५। (१५)

अस्य पीत्वा मदानां देवो देवस्यौजसा । विश्वाभि भुवना भुवत् ।४। त्यमु वः सत्रासाहं विश्वासु गीर्ष्वायतम् । आ च्यावयस्यूतये।७। युध्मं सन्तमनर्वाणं सोमपामनपच्युतम् । नरमवार्यक्रतम् ।८ः शिक्षा ण इन्द्र राय आ पुरु विद्वाँ ऋचीषम । अवा नः पार्ये धने ।९। अतश्चिदिन्द्र ण उपा ऽऽयाहि शतवाजया । इषा सहस्रवाजया ।१०।१६

यह इन्द्र सोम के हर्षदायक रस का पान कर बली होते और सब लोकों को वश में कर लेते हैं ।६। हे स्तोताओ ! तुम्हारे स्तोत्रों द्वारा प्रवृद्ध और विश्व के नचाने वाले इन्द्र को ही अपनी रक्षाके लिए आहुत करो ।७। इन्द्र के कर्मों में कोई बाधक नहीं हो सकता । उन्हें कोई हिंसित नही कर सकता क्योंकि वे सोम पीने वाले, सबके नेता और राक्षसों के लिए दुर्धर्ष हैं ।८। हे इन्द्र ! तुम मेधावी और स्तुतियों द्वारा सम्बोधनीय हो । शत्रु से छीनकर हमको अनेक बार धन प्रदान करो । शत्रु के उस धन से हमारा पालन करो ।९। हे इन्द्र ! तुम स्वर्ग से ही सहस्रों गुणा अन्न और बलों के सहित यहाँ आओ ।१०।

अयाम धीवतो धियो ऽर्वद्भिः शक्र गोदरे । जयेम पृत्सु वज्रिवः ।११। वयमु त्वा शतक्रतो गावो न यवसेष्वा । उक्थेषु रणयामसि ।१२। विश्वा हि मर्त्यत्वना ऽनुकामा शतक्रतो । अगन्म वज्रिन्नाशसः ।१३। त्वे सु पुत्र शवसो ऽवृत्रन् कामकातयः । न त्वामिन्द्राति रिच्यते ।१४। स नो वृषन् त्सनिष्ठया सं घोरया द्रवित्न्वा । धियाविड्ढि पुरन्ध्या ।१५।१६

हे इन्द्र ! हम कर्मवान हैं । संग्राम में विजय प्राप्त करने के लिए हम कर्म करेंगे और घोड़ों के द्वारा युद्ध को जीतेंगे ।११। गौओं का स्वामी जैसे घाससे गौओं को तृप्त करता है वैसे ही हे इन्द्र! हम तुम्हें उक्थादिके द्वारा हर प्रकार तृप्त करते हैं ।१२। हे शतकर्मा इन्द्र ! सब संसार ही कुछ न कुछ कामना करता है, उसी प्रकार हम भी धनादि की कामना करते हैं ।१३। हे इन्द्र ! अभीष्ट के प्रति आसक्त हुए पुरुष

ही तुमको आश्रित करते हैं, अतः कोई भी देवता तुम्हारा उल्लंघन नहीं कर सकते ।११। हे इन्द्र ! सबके अतिरिक्त तुम ही अधिक धन देने हो । तुम धनसे हमाराभी पालन करो, क्योंकि तुम अनेकोंका पालन करने में समर्थ हो और विकराल शत्रुओं को भी नष्ट कर देते हो ।१५।

(१७)

यस्ते नूनं शतक्रतविन्द्र द्युम्नितमो मदः । तेन नूनं मदे मदेः ।१६। यस्ते चित्रश्रवस्तमो य इन्द्र वृत्रहन्तमः । य ओजोदातमो मदः ।१७। विद्मा हि यस्ते अद्रिवस्त्वादत्तः सत्य सोमपाः । विश्वासु दस्म कृष्टिषु ।१८। इन्द्राय मद्वने सुतं परि ष्टोभन्तु नो गिरः । अर्कमर्चन्तु कारवः ।१९। यस्मिन् विश्वा अधि श्रियो रणन्ति सप्त संसदः । इद्रं सुते हवामहे ।२०।१८

हे इन्द्र ! प्राचीन काल में हमने जिस सोमको तुम्हारे लिए संस्कृत किया था, उसके द्वारा हर्षित हुए हमें आज भी हर्ष प्रदान करो ।१६। हे इन्द्र ! तुम्हारा मद विभिन्न यशों से सम्पन्न हैं इसलिए हमने जिस सोम का अभिषव किया है वह सर्वाधिक बलप्रद और पापनाशक है ।१७। हे वज्रिन् ! हे सोमपाये ? तुमने जो धन सब मनुष्यों को दे रखा है, हम उसे ही जानते हैं ।१८। हमारे स्तोत्र इन्द्र के हर्ष के लिए सोम की स्तुति करने वाले, सोम की भले प्रकार पूजा करें ।६। जिन इन्द्रमें सभी तेज विद्यमान हैं, जिन्हें सात होता सोम देने के लिए तत्पर रहते हैं, सोम के संस्कृत होने पर हम उन इन्द्र को आहूत करते हैं ।२०।

(१८)

त्रिकद्रुकेषु चेतनं देवासो यज्ञमत्नत । तमिद्वर्धन्तु नो गिरः ।२१। आ त्वा विशन्त्विन्दवः समुद्रमिव सिन्धवः । न त्वामिन्द्राति रिच्यते ।२२। विव्यक्थ महिना वृषन् भक्षं सोमस्य जागृवे । य इन्द्र जठरेषु ते ।२३। अरं त इन्द्र कुक्षये सोमो भवतु वृत्रहन् । अरं धामभ्य इन्दवः ।२४। अरमश्वाय गायति श्रुतकक्षो अरं गवे । अरमिन्द्रस्य धाम्ने ।२५। अरं हि ष्मा सुतेषु णः सोमेष्विन्द्र भूषसि । अरं ते शक्र दावने ।२६।१९

हे देवताओं ! तुमने त्रिकद्रुक के लिए ज्ञान का साधन करने वाले यज्ञ को विस्तृत किया, हमारे स्तोत्र उस यज्ञ को बढ़ावे ।२१। नदियाँ जैसे समुन्द्र में प्रवेश करती है, वैसे ही यह सोम तुम्हारे शरीर में प्रवेश करे हे इन्द्र ! तुम्हारा कोई उल्लंघन नहीं कर सकता ।२२। हे इन्द्र ! तुम अभीष्ट पूरक और चैतन्य हो । तुम अपने बल से सोम को व्याप्त करते हो वह सोम तुम्हारे पेटमें पहुँचाता है ।२३। हे इन्द्र ! यह सिंचित होने वाला सोम तुम्हारे देह में यथेष्ट रूप से पहुँचे ।२४। श्रुतकक्ष से अश्व पाने के लिए इन्द्र के गृह का गुण गाता हूँ ।२५। हे इन्द्र ! सोम अभिषुत होने पर वह तुम्हारे लिए यथेष्ट हो,तुम धन देने वाले हो ।२६।

(१९)

पराकात्ताच्चिदद्रिवस्त्वां नक्षन्त नो गिरः । अरं गमाम ते वयम् ।२७। एवा ह्यसि वीरयुरेवा शूर उत स्थिरः । एवा ते राध्यं मनः ।२८। एवा रातिस्तुवीमघ विश्वेभिर्धायि धातृभिः । अधा चिदिन्द्र मे सचा २९। मो षु ब्रह्मेव तन्द्रयुर्भुवो वाजानां पते । मत्स्वा सुतस्य योमतः ।३०। मा न इन्द्राभ्यादिशः सूरो अक्तुष्वा यमन् । त्वा युजा वनेम तत् ।३१। त्वयेदिन्द्र युजा वयं प्रति ब्रुवीमहि स्पृधः । त्वमस्माकं तव स्मसि ।३२। त्वामिद्धि त्वायवो ऽनुनोनुवतश्चरान् । सखाय इन्द्र कारवः ।३३।२०

हे वज्रिन् ! यदि तुम दूर हो तो भी हमारे स्तोत्र तुम्हारे पास पहुँचे जिससे हम स्तोता तुमसे धन पा सकेंगे ।२७। हे इन्द्र ! तुम वीर कर्म से सम्पन्न हो । तुम वीरों की कामना करते हो । हम तुम्हारे मन के उपासक हों ।२८। हे इन्द्र ! तुम धन से सम्पन्न हो । तुम मेरी सहायता करो । सभी यजमानों के पास तुम्हारा धन है ।२९। हे इन्द्र ! तुम अन्न के स्वामी हो । तुम निद्रा मग्न स्तोता के समान मत हो जाना । तुम दुग्ध मिश्रित सोम को पीकर हर्ष प्राप्त करना ।३०। हे इन्द्र ! बाण फेंकने वाले राक्षस रात्रि में हमको बाधा न दें । हम तुम्हारी सहायता से उन्हें मारेंगे ।३१। हे इन्द्र ! हम तुम्हारी सहायता से शत्रुओं को भगा देंगे, क्योंकि हम स्तोता तुम्हारे ही हैं ।३२। हे इन्द्र ! तुम्हारी

कामना करने वाले बन्धु रूप स्तोता बारम्बार स्तुतियाँ करते हुए तुम्हें पूजते हैं। ३। (२०)

सूक्त ९३

(ऋषि–सुकक्षः। देवता–इन्द्र, ऋभवश्चः। छन्द–गायत्री)

उद्घेदभि श्रुतामघं वृषभं नर्यापसम्। अस्तारमेषि सूर्य ।१। नव यो नवतिं पुरो बिभेद बाह्वोजसा। अहिं च वृत्रहावधीत् ।२। स न इन्द्रः शिवः सखा ऽश्वावद्गोमद्यवमत्। उरुधारेव दोहते ।३। यदद्य कच्च वृत्रहन्नुदगा अभि सूर्य। सर्वं तदिन्द्र ते वशे ४। यद्वा प्रवृद्ध सत्पते न मरा इति मन्यसे। उतो तत् सत्यमित् तव ।५।२१।

हे इन्द्र ! तुम यशस्वी, धन सम्पन्न, अभीष्ट पूरक हो। तुम यजमान के चारो ओर प्रकट होते हो । जिन इन्द्र ने असुरों के निन्यानवे पुरों को तोड़ा और मेघ को विदीर्ण किया ।२। वे इन्द्र हमारे लिए गौ, अश्व, जौ आदि से सम्पन्न धन का पयस्विनी गौओं के समान दोहन करें ।३। हे सूर्यात्मक इन्द्र ! सभी पदार्थ सामने प्रकट हुए हैं। यह अखिल विश्व तुम्हारे वश में है ।४। हे इन्द्र ! तुम अपने को अविनाशी मानते हो, यह बात यथार्थ ही है ।५। (२१)

ये सोमासः परावति ये अर्वावति सुन्विरे। सर्वाँस्ताँ इन्द्र गच्छसि ।६। तमिन्द्रं वाजयामसि महे वृत्राय हन्तवे। स वृषा वृषभो भुवत् ।७। इन्द्रः स दामने कृत ओजिष्ठः स मदे हितः। द्युम्नी श्लोकी स सोम्यः ।८। गिरा वज्रो न संभृतः सबलो अनपच्युतः। ववक्ष ऋष्वो अस्तृतः ।९। दुर्गे चिन्नः सुगं कृधि गृणान इन्द्र गिर्वणः। त्वं च मघवन् वशः ।१०।२२

जो सोम पास या दूर कही भी उत्पन्न हुए हैं,तुम उन सबके अभिमुख होते हो ।६। हम वृत्र नाश के लिए इन्द्र को ही बली बनायें। हे इन्द्र ! तुम अभीष्ट प्रदान करने वाले हो ।७। धन दान के निमित्त ही इन इन्द्रको प्रजापति ने रचा है। वे सोमके पात्र यशस्वी, और ओजस्वी

हैं ।८। स्तुतियों से प्रवृद्ध हुए इन्द्र धन आदि ... वहन करने में तत्पर होते हैं ।९। हे इन्द्र ! जब तुम हम पर अनुग्रह करते हो तब दुर्गम पथ को भी सुगम कर देते हो। १०।　　　　(२२)

यस्य ते नू चिदादिशं न मिनन्ति स्वराज्यम् । न देवो नाध्रिगुर्जनः ।११। अधा ते अप्रतिष्कुतं देवी शुष्मं सपर्यतः । उभे सुशिप्र रोदसी ।१२। त्वमेतदधारयः कृष्णासु रोहिणीषु च । परुष्णीषु रुशत् पयः ।१३। वि यदहेरध त्विषो विश्वे देवासो अक्रमुः । विदन्मृगस्य ताँ अमः ।१४। आदु मे निवरो भुवद्वृत्रहा-दिष्ट पौंस्यम् । अजातशत्रुरस्तृतः ।१५।२३

हे इन्द्र ! तुम्हारे बल और शासन को आज तक कोई हिंसा नहीं कर सका । देवता और रणकुशल वीर भी तुम्हारा नाश नहीं कर सके ।११। हे इन्द्र ! आकाश और पृथिवी दोनो ही तुम्हारे दुर्धर्ष बल को पूजते हैं ।१२। हे इन्द्र ! तुम कृष्ण या लोहित वर्ण वाली गौओं को उज्ज्वल दूधसे पूर्ण करते हो ।१३। जब सभी देवता वृत्र के डर से भाग खड़े हुए और उसके तेज के सामने न रुक सके उस समय इन्द्र ने ही वृत्र को मारा । इन्होंने ही अपने पौरुष से उसे जीता ।१४-१५।

श्रुतं वो वृत्रहन्तमं व शर्धं चर्षणीनाम् । आ शुषे राधसे महे ।१६। अया धिया च गव्यया पुरुणामन् पुरुष्टुत । यत् सोमेसोम आभवः ।१७। बोधिन्मना इदस्तु नो वृत्रहा भूर्यासुतिः । शृणोतु शक्र आशिषम्।१८। कया त्वं न ऊत्याऽभि प्र मन्दसे वृषन् । कयां स्तोतृभ्य आ भर ।१९। कस्य वृषा सुते सचा नियुत्वान् वृषभो रणत् । वृत्रहा सोमपीतये ।२२।२४

हे ऋत्विजो ! उस वृत्रहन्ता इन्द्र को स्तुति करने के पश्चात् मैं तुम्हें इच्छित धन प्रदान करूँगा ।१६। हे इन्द्र ! तुम अनेकों द्वारा अनेकों नामों से पूजे गये हो । तुम प्रत्येक सोम पान में जाते हो तब हम गौओं की कामना वाली बुद्धि से युक्त होते हैं ।१७। हे इन्द्र ! तुम हमारी इच्छाओं को जानो । हमारे आह्वान को सुनो ।१८। हे इन्द्र ! तुम कामनाओं की वर्षा करने वाले हो । तुम किस सेवा द्वारा हम

स्तोताओं को धन देते हुए हर्षित करोगे ? ।१९। हे वृत्रहन्ता, काम्य-वर्षक, मरुत्वान् इन्द्र सोम पान के लिए किस यज्ञ में रमण करते हैं ? ।२०। (२४)

अभी षु णस्त्वं रयिं मन्दसानः सहस्रिणम्। प्रयन्ता बोधि दाशुषे ।२१। पत्नीवन्तः सुता इम उशन्तो यन्ति वीतये। अपां जग्मिर्निचुम्पुणः ।२२। इष्टा होत्रा असृक्षतेन्द्रं वृधासो अध्वरे। अच्छावभृथमोजसा ।२३। इह त्या सधमाद्या हरी हिरण्यकेश्या। वोलहामभि प्रयो हितम् ।२४। तुभ्य सोमाः सुमा इमेस्तीर्णं बर्हिर्विभावसो। स्तोतृभ्य इन्द्रमा वह ।२५।२५

हे इन्द्र ! हविदाता को नियुक्त करने वाले हो। अतः हर्ष प्राप्त होने पर हमको सहस्रों ऐश्वर्य प्रदान करो ।२१। इस जलयुक्त सोम का अभिषव किया गया है। इन्द्र की कामना करता हुआ सोम इन्द्र की ओर गमन करता है। जब इन्द्र उसे पी लेते हैं तब वह हर्षित करता है ।२२। यज्ञ के बढ़ाने वाले सात होता यज्ञ की समाप्ति पर इन्द्र का विसर्जन करते हैं ।३। इन्द्र के स्वर्ण केश वाले हर्यश्व इन्द्र के साथ ही हर्षयुक्त होने वाले हैं। यह इन्द्र को अन्न की ओर लेकर आवें ।४। हे अग्ने ! यह सोम तुम्हारे लिए संस्कृत हुआ है, यहाँ कुशों का आसन भी बिछा दिया है, अतः सोम पानार्थ इन्द्र को आहूत करो ।२५। (२५)

आ ते दक्षं वि रोचना दधद्रत्ना वि दाशुषे। स्तोतृभ्य इन्द्रमर्चत ।२६। आ ते दधामीन्द्रियमुक्था विस्वा शतक्रतो। स्तोतृभ्य इन्द्र मृलय ।२७। भद्रंभद्रं न आ भरेषमूर्जं शतक्रतो। यदिन्द्र मृलयासि नः ।२८। स नो विश्वान्या भर शुवितानि शतक्रतो। यदिन्द्र मूलयासि नः ।२९। त्वामिद्वृत्रहन्तम सुतावन्तो हवामहे। यदिन्द्र मृलयासि नः ।३०।२६

हे यजमानों ! हविदान के लिए इन्द्र तुम्हें धन दें। स्तोताओं को इन्द्र रत्नादि प्रदान करें। अतः इन्द्र की स्तुति करो ।२६। हे इन्द्र ! तुम्हारे निमित्त सुवीर्य सोम और सुन्दर स्तोत्रों को सम्पादित करते हैं, तुम स्तोताओं को सुख दो ।२७। हे इन्द्र ! तुम हमको सुख देना चाहते

हो तो अन्न और बल के सहित हमारा मङ्गल करो ।२७। हे इन्द्र ! तुम कल्याण करना चाहते हो तो सभी सुखों को यहाँ ले जाओ ।२६। हे इन्द्र ! तुम हमें सुखी करना चाहते हो अतः हम संस्कृत सोम से सम्पन्न होकर तुम्हें आहूत करते हैं ।३०। (२७)

उप नो हरिभिः सुतं याहि मदानां पते । उप नो हरिभिः सुतम् ।३१। द्विता यो वृत्रहन्तमो विद इन्द्रः शतक्रतुः उप नो हरिभिः सुतम्।३२। त्वं हि वृत्रहन्नेषां पाता सोमानामसि । उप-नों हरिभिः सुतम् ।३३। इन्द्र इषे ददातु न ऋभुक्षणमृभुं रयिम्। वाजी ददातु वाजिनम् ।३४।२७

हे इन्द्र ! अपने हर्यश्वों से हमारे सोमके समीप आगमन करो ।३१ इन्द्र, वृत्रहन्ता, सैकड़ों कर्म वाले और सर्वश्रेष्ठ हैं, वे दो तरह जाने जाते हैं । हे इन्द्र हमारे सोम के समीप आगमन करो ।३२। हे इन्द्र ! तुम सोम के पीने वाले हो अतः हर्यश्यों के सहित हमारे सोम के पास आगमन करो ।३३। जो ऋभु अविनाशी और अन्न प्रदान करने वाले है, इन्द्र उन्हें और इनके वाज नामक भ्राता को हमें दें । (२७)

सूक्त ६४ [दसवाँ अनुवाक]

(ऋषि–बिन्दुः पूतदक्षा वा । देवता–मरुतः । छंद–गायत्री)

गौर्धयति मरुतां श्रवस्युर्माता मघोनाम् । युक्ता वह्नी रथा-नाम् ।१। यस्या देवा ऊपस्थे व्रता विश्वे धारयन्ते । सूर्यमासा दृशे कम्।२। तत् सुनोविश्वे अर्य आ सदा गृणन्ति कारवः। मरुतः सोमपीतये ।३। अस्ति सोमो अयं सुतः पिवन्त्यस्य मरुतः । उत स्वराजो अश्विना ।४। पिबन्ति मित्रो अर्यमा तना पूतस्य वरुणः। त्रिवधस्थस्य जावतः।५। उतो न्यस्य जोषमां इन्द्रः सुतस्य गोमतः प्रातर्होतेव मत्सति ।६।२८

मरुद्गण की माता धेनु अपने पुत्रों को सोम पिलाती है, वह पूज्य धेनु मरुदगण को रथ में लगाती और अन्न की कामना करती हैं ।१। सभी देवता गौ के अङ्क में निवास करते हुए अपने कर्मों में लगते हैं

सूर्य, चंद्रमा भी इनके पास रहते हुए सब लोकों को प्रकाशित करते है ।२। हमारे स्तुति करने वाले विद्वान सोम पीने के लिए मरुद्गण से निवेदन करते हैं ।३। मरुद्गण और अश्विनीकुमार यह अभिषुत सोमरस को आकर पीवें ।४। मित्र, अर्यमा वरुण छन्ने द्वारा छने हुए और तीन स्थानों में स्थापित इस सोमको पीवे ।५। अभिषुत और दुग्धादि मिश्रित सोम को इन्द्र प्रातः सवन में होता के समान प्रशंसा करते हैं ।६। (२८)

कदत्विषन्त सूरयस्तिर आप इव स्निधः । अर्षन्ति पूतदक्षसः ।७। कद्वो अद्य महानां देवानामवो वृणे । त्मना च दस्मवर्चसाम् ।८। आ ये विश्वा पार्थिवानि पप्रथन् रोचना दिवः । मरुतः सोमपीतये ।९। त्यान् नु पूतदक्षसो दिवो वो मरुतो हुवे । अस्य सोमस्य पीतये ।१०। त्यान् नु ये वि रोदसी तस्तभुर्मरुतो हुवे । अस्य सोमस्य पीतये ।११। त्यं नु मारुतं गणं गिरिष्ठां वृषणं हुवे। अस्य सोमस्य पीतये ।१२।२९

मेधावी मरुदगण वक्र की गति से कब प्रकट होगे ? वह शत्रुओं का नाश करने वाले, हमारे यज्ञ में कब आगमन करेंगे ? ।७। हे मरुद्गण ! तुम तेजस्वी, महान और दीप्त हो, मैं तुम्हें कब पुष्ट करूँगा? ।८। जिन मरुद्गण ने पृथिवी के सब पदार्थों और आकाश की ज्योतियों को समृद्ध किया है, मैं उन्हें सोम पीने के लिए आहूत करता हूँ । ।९। हे मरुद्गण ! तुम शुद्ध बल वाले हो । सोम को शीघ्र पीने के लिये मैं तुम्हें आहूत करता हूँ ।१०। जिन मरुद्गण ने आकाश पृथिवी को स्थिर किया है, मैं उन्हें सोम पीने के लिए आहूत करता हूँ ।११। जो मरुद्गण पर्वत पर अवस्थित, वृष्टि जल से सम्पन्न और सब ओर विस्तृत है, मैं उन्हें सोम पीने के लिए आहूत करता हूँ ।१०। (२९)

सूक्त ९५

(ऋषि-तिरश्चीः । देवता-इन्द्रः । छंद-त्रिष्टुप्)

आ त्वा गिरो रथीरिवाऽस्थुः सुतेषु गिर्वणः ।

अभि त्वा समनूषतेन्द्र वत्स न मातरः ।१
आ त्वा शुक्रा अचुच्यवुः सुतास इन्द्र गिर्वणः ।
पिवा त्वस्यान्धस इन्द्र विश्वासु ते हितम् ।२
पिबा सोमं मदाय कमिन्द्र श्येनाभृतं सुतम् ।
त्वं हि शश्वतीनां पती राजा विशामसि ।३
श्रुधी हवं तिरश्च्या इन्द्र यस्त्वा सपर्यति ।
सुवीर्यस्य गोमतो रायस्पूर्धि महाँ असि ।४
इन्द्र यस्ते नवीयसीं गिरं मन्द्रामजीजनत् ।
चिकित्विन्मनसं धियं प्रत्नामृतस्य पिप्युषीम् ।५।२०

हे इन्द्र ! तुम स्तुत्य हो। हमारे स्तोत्र रथीके समान तुम्हारी ओर जाते हैं। गायें अपने बछड़ों को देखकर जैसे शब्द करती है, वैसे सोम के अभिषुत होने पर हमारे स्तोत्र तुम्हारा स्तव करते हैं।१। हे इन्द्र ! तुम स्तुत्य हो। पात्र स्थित सोम तुम्हारी ओर गमन करे। तुम इस सोम रस का पान करो। चरु पुरोडाश आदि यहाँ सब ओर स्थित हैं।२। हे इंद्र ! पक्षी रूप वाली देवी इस सोम को स्वर्ग से लाई थी, तुम सब देवताओं और मरुतों के स्वामी, उस सोम रस को पीओ।३। हे इन्द्र ! हवि द्वारा पूजन करने वाले मुझ तिरश्ची का आह्वान सुनो तुम हमको सुंदर पुत्र, गौ आदि से सम्पंन धन देकर हमको ऐश्वर्यवान बनाओ।४। तुम्हारे लिए नवीस स्तोत्र जिस यजमान ने रचा है उसकी रक्षा के लिए अपने वृद्धिकारक, सत्य से ओत-प्रोत और सनातन कार्यों को करो।५।

तमु ष्टवाम यं गिर इन्द्रमुक्थानि वावृधुः ।
पुरूण्यस्य पौंस्या सिषासन्तो वनामहे ।६
एतो न्विन्द्रं स्तवाम शुद्धं शुद्धेन साम्ना ।
शुद्धैरुक्थैर्वावृध्वांसं शुद्ध आशीर्वान् ममत्तु ।७।
इन्द्र शुद्धो न आ गहि शुद्धः शुद्धाभिरूतिभिः ।
शुद्धो रयिं नि धारय शुद्धो ममद्धि सोम्यः ।८

इन्द्र शुद्धो हि नो रयिं शुद्धो रत्नानि दाशुषे ।
शुद्धो वृत्राणि जिघ्नसे शुद्धो वाजं सिषाससि ।९।३१

जिन इंद्र ने हमारे स्तोत्र और उक्थ को बढ़ाया है, हम उनका स्तव करते हैं। उनके अनेक बलों को उपभोग करने के लिये उनसे मागेगें ।६। हे ऋषियो ! यहाँ आओ साम-याग और उक्थों द्वारा हम इन्द्र की पूजा करेंगे और निष्पन्न सोम के द्वारा इन्द्र को हर्षित करेंगे। ।७। हे इन्द्र ! तुम पवित्र हो। अपने रक्षा साधनों और मरुद्गण के सहित आगमन करो। तुम सोम-पीने के पात्र हो अतः यहाँ आकर हर्ष युक्त होओ और हमको धन में प्रतिष्ठित करो ।८। हे इन्द्र ! तुम पवित्र हों। हमको धन प्रदान करो हविदाता को भी रत्नादि धन दो। हे वृत्रहन्ता ! तुम हमको अन्न प्रदान की कामना करते हो तुम पवित्र हो ।९। (३१)

सूक्त ९६

(ऋषि–तिरश्चीद्युताने वा मारुतः। देवता–इन्द्रः, मरुतश्च, इन्द्रा-बृहस्पती। छंद त्रिष्टुप्, पंक्ति)

अस्मा उवास आतिरन्त याममिन्द्राय नक्तमूर्म्याः सुवाचः ।
अस्मा आपो मातरः सप्त तस्थुर्नृभ्यस्तराय सिन्धवः सुपाराः।१
अतिविद्धा विथुरेणा चिदस्त्रा त्रिः सप्त सानु संहितो गिरीणाम्।
न तद्देवो न मर्त्यस्तुतुर्याद्यानि प्रवृद्धो वृषभश्चकार ।२
इन्द्रस्य वज्र आयसो निमिश्ल इन्द्रस्य बाह्वोर्भूयिष्ठमोजः ।
शीर्षन्निन्द्रस्य क्रतवो निरेक आसन्नेषन्त श्रुत्या उपाके ।३
मन्ये त्वा यज्ञियं यज्ञियानां मन्ये त्वा च्यवममच्युतानाम् ।
मन्ये त्वा सत्वनामिन्द्र केतुं मन्ये त्वा वृषभं चर्षणीनाम् ।४
आ यद्वज्रं बाह्वोरिन्द्र धत्से मदच्युतमहये हन्तवा उ ।
प्र पर्वता अनवन्त प्र गावः प्र ब्रह्माणो अभिनक्षन्त इन्द्रम् ।५।३२

उषाओ ने इन्द्र के भय से अपनी गति को तीव्र किया है। इन्द्र के लिए सब सब रात्रियाँ आगामी रात्रियों के लिए सुन्दर वाणी वाली

होती है । गङ्गा आदि सती नदियां इन्द्र के लिए सर्वव्यापिनी होती हुई सरलता से पार लगाने वाली होती हैं ।१। इन्द्र के बिना ही किसी की सहायता प्राप्त किए इक्कीस पर्वतोंको विदीर्ण किया । उन अभीष्टदाता इन्द्र के जैसा पराक्रम कोई भी मनुष्य नही कर सकते ।२। इन्द्र का लौह वज्र उनके वलवान् हाथसे सुशोभित हैं । इन्द्र जब संग्राम में जाते हैं, तब उनके शिर पर मुकुट आदि रहते हैं इन्द्र के आदेश के लिए सब उनके सम्मुख उपस्थित होते हैं ।३। हे इन्द्र ! तुम यज्ञ पात्र हो, तुम पर्वतों को तोड़ने वाले हो, तुम सेनाओं में विजय पताका रूप हो और तुम मनुष्यों को इच्छित प्रदान करते हो ऐसा में समझता हूँ ।४। हे इन्द्र ! जब तुम वृत्र के हननार्थ वज्र ग्रहण करते हो, तुम शत्रुओं का अहङ्कार नष्ट करते हो जब मेघ और जल शब्दवान् होते हैं, तब इन्द्र के चारों ओर स्थित स्तोतागण इन्द्र का पूजन करते हैं ।५। (३२)

तमु ष्टवाम य इमा जजान विश्वा जातान्यवराण्यस्मात् ।
इन्द्रेण मित्रं दिधिषेम गीर्भिरुपो नमोभिर्वृषभं विशेम ६
वृत्रस्य त्वा श्वसथादीषमाणा विश्वे देवा अजहुर्ये सखायः ।
मरुद्भिरिन्द्र सख्यं ते अस्त्वथेमा विश्वाः पृतना जयासि ।७
त्रिः षष्टिस्त्वा मरुतो वावृधाना उस्रा इव राशयो यज्ञियासः।
उप त्वेमः कृधि नो भागधेयं शुष्मंत एना हविषा विधेम ।८
तिग्ममायुधं मरुतामनीकं कस्त इन्द्र प्रति वज्रं दधर्ष ।
अनायुधासो असुरा अदेवाश्चक्रेण ताँ अप वप ऋजीषिन् ।९
मह उग्राय तवसे सुवृक्ति प्रेरय शिवतमाय पश्वः ।
गिर्वाहसे गिर इन्द्राय पूर्वीर्धेहि तन्वे कुविदङ्ग वेदत् ।१०।३३

जिन इन्द्र के पश्चात् सब संसार उत्पंन हुआ, जिन इन्द्र ने सब प्राणियों की रचना की, उन इन्द्र को स्तुति के द्वारा ही हम अपना सखा बनायेंगे । हम उन अभीष्ट के देने वाले इंद्र को नमस्कार द्वारा अपने अभिमुख करेंगे ।६। हे इंद्र ! जो विश्वेदेवा तुम्हारे मित्र हुए थे, वृत्र के श्वास लेने ही डर कर भाग खड़े हुए उन्होंने तुम्हें अकेला

ही छोड़ दिया। अब तुमने मरुद्गणसे मित्रताकी तब तुमने शत्रु सेनाओं पर विजय प्राप्त की।७। हे इन्द्र ! मरुदगण ने गौओंके समूह के समान एकत्र होकर तुम्हें बढ़ाया था। इसलिए वे उपास्य हुए। हम उन्हीं इन्द्र का आश्रय लेंगे। हे इन्द्र ! तुम हमको महान बल प्रदान करो। हम भी तुम्हारे लिए शत्रु-नाशक शक्ति प्रदान करेंगे।८। हे इन्द्र ! तुम्हारी सेना वह मरुदगण हैं। तुम्हारे आयुध तीक्ष्ण है। तुम्हारे वज्र को व्यर्थ करनेमें समर्थ कौन है ! हे सोमवान् इन्द्र! देवताओं के विद्वेषी राक्षसों को चक्र से नष्ट कर डालो।।हे स्तोताओ ! उन अत्यन्त पराक्रमी इन्द्र की पशु-प्राप्ति के लिए स्तुति करो। इन्द्र स्तुतियों के पात्र है, यह हमारे पुत्र के लिए अथेष्ट प्रेरित करें।१०।

उक्थवाहसे विभ्वे मनीषां द्रुणा न पारमीरया नदीनाम्।
नि स्पृश धिया तन्वि श्रुतस्य जुष्टतरस्य कुविदङ्ग वेदत्।११
तद्विविड्ढ यत् त इन्द्रो जुजोषत् स्तुहि सुष्टुतिं नमसा विवास।
उप भूष जरितर्मा रुवण्यः श्रावया वाचं कुविदङ्ग वेदत्।१२
अव द्रप्सो अंशुमतीमतिष्ठदियानः कृष्णो दशभिः सहस्रैः।
आवत् तमिन्द्रः शच्या धमन्तमप स्नेहितीर्नृमणा अधत्त।१३
द्रप्समपश्यं विषुणे चरन्तमुपह्वरे नद्यो अंशुमत्याः।
नभो न कृष्णमवतस्थिवांसमिष्यामि वो वृषणो युध्यताजौ।१४
अध द्रप्सो अंशुमत्या उपस्थेऽधारयत् तन्वं तित्विषाणः।
विशो अदेवीरभ्याचरन्तीर्बृहस्पतिना युजेन्द्रः ससाहे।१५।३४

हे स्तोताओ ! इन्द्र मन्त्रों द्वारा प्रकट होते हैं, उनकी निमित्त नदी से पार करने वाली नाव के समान स्तुति करो। वह इन्द्र हमको धन दें और हमारे पुत्रको भी धन-प्राप्ति करावें।११। हे स्तोताओं। इन्द्रके लिए सुन्दर स्तुति करो। वह जो कामना करते हैं वैसा करो। तुम अपनी दरिद्रता के लिए शोक न करे, स्वस्थ मन से इन्द्र की स्तुति करो वह तुम्हें यथेष्ट धन प्रदान करेंगे।१२। कृष्णासुर अपने दश सहस्र सैनिकों के सहित अंशुमती के किनारे निवास करता था, उसे अपनी

बुद्धि के बल से इन्द्र ने प्राप्त कर लिया और मनुष्यों का हित करने के लिए इन्द्र ने उसकी सेनाओं को नष्ट कर दिया ।१३। उस समय इन्द्र ने कहा था।—'कृष्णासुर को मैंने देख लिया है, वह अंशुमती के तटपर बने खारों में घूमता है । हे कामनाओं के देने वाले मरुदगण ! मेरी इच्छा है कि तुम संग्राम मे उसे मार डालो ।१४। अंशुमती के किनारे द्रुत गामी कृष्णासुर तेजस्वी होकर रहता है । उसके सहित, उसकी सब सेना को इन्द्र ने बृहस्पति की सहायता से मार डाला ।१५। (३४)

त्व ह त्यत् सप्तभ्यो जायमानो ऽशत्रुभ्यो अभवः शत्रुरिन्द्र ।
गूलहे द्यावापृथिवी अन्वविन्दो विभुमद्भ्यो भुवनेभ्यो रण धा.।१६
त्वं ह त्यदप्रतिमानमोजो वज्रेण वज्रिन् धृषितो जघन्थ ।
त्व शुष्णस्यावातिरो वधत्रैस्त्वं गा इन्द्र शच्येदविन्दः ।१७
त्वं ह त्यद्वृषभ चर्षणीनां घनो वृत्राणां तविषो बभूथ ।
त्व सिन्धूँरसृजस्तस्तभानान् त्वमपो अजयो दासपत्नीः ।१८
स सुक्रतु रणिता यः सुतेष्वनुत्तमन्युर्यो अहेव रेवान् ।
य एक इन्नर्यपांसि कर्ता स वृत्रहा प्रतीदन्यमाहुः ।१९
स वृत्रहेन्द्रश्चर्षणीधृत् तं सुष्टुत्या हव्यं हुवेम ।
स प्राविता मघवा नोऽधिवक्ता स वाजस्य श्रवस्यस्य दाता ।२०
स वृत्रहेन्द्र ऋभुक्षाः सद्यो जज्ञानो हव्यो बभूव ।
कृण्वन्नपांसि नर्या पुरूणि सोमो न पीतो हव्यः सखिभ्यः ।२१।३५

हे इन्द्र ! तुम परम पराक्रमी हो । तुमने उत्पन्न होते ही कृष्ण वृत्र, मणि, शुष्ण, शुम्बर, नमुचि आदि सात असुरों से शत्रुता की थी तुमने अन्धकारसे पूर्ण आकाश-पृथिवी को व्याप्त किया था । तुम मरुद सहित लोक-कल्याण के लिए आनन्द को धारण करते हो ।१६। हे इन्द्र ! तुमने रण-कुशल होते हुए शुष्ण के भीषण बल को अपने वज्रसे नष्ट कर दिया । राजर्षि कुत्सके लिए तुमने ही उसे औंधे मुख गिराकर मार दिया और तुम्हीं ने अपने पराक्रम से गौओं को प्रकट किया ।१७। हे इन्द्र! तुम मनुष्यों को प्राप्त होने वाले उपद्रवों को दूर करने के लिए ही बृद्धि को प्राप्त हुए हो । रोकी हुई नदियों को तुमने ही प्रवाहित

करने को मुक्त किया, फिर दस्युओं द्वारा वश किए जमको तुमने अधिकार में कर लिया।१८। वे सुन्दर बुद्धि वाले इन्द्र संस्कारित सोम को पीने के लिए उत्साहित होते हैं। यह दिन के समान ऐश्वर्यशाली है। इनके क्रोध को सह सकने की सामर्थ्य किसी में नहीं है। वे वृत्रहन्ता और सब शत्रु-सेनाओं को नष्ट करन वाले हैं।१९। इन्द्र मनुष्यों को पालन करने वाले, आह्वान के पात्र और वृत्रहन्ता हैं। हम उन्हें अपने यज्ञमें सुन्दर स्तुतियों द्वारा आहूत करते हैं। वह ऐश्वर्यवान हमारे रक्षक और यश प्रदान करने वाले हैं।२०। उत्पन्न होतेही इन्द्र अह्वान के पात्र हो गये। उन्होंने वृत्र को मारा और मनुष्यों के हित के लिए अनेक कार्य किये। इसलिए वह मित्रों द्वारा आह्वानके पात्र हुए।२१।

(३५)

सूक्त ९७

(ऋषि—रेभः काव्यपः। देवता—इन्द्रः। छन्द—बृहती अनुष्टुप् जगती)

या इन्द्र भुज आभरः स्वर्वां असुरेभ्यः।
स्तोतारमिन्मघवन्नस्य वर्धय ये च त्वे वृक्तबर्हिषः।१
यमिन्द्र दधिषे त्वमश्वं गां भागमव्ययम्।
यजमाने सुन्वति दक्षिणावति तस्मिन् तं धेहि मा पणौ।२
य इन्द्र सस्त्यव्रतो ऽनुष्वापमदेवयुः।
स्वैः ष एवैर्मुमुरत् पोष्यं रयिं सनुतर्धेहि तं ततः।३
यच्छक्रासि परावति यदर्वावति वृत्रहन्।
अतस्त्वा गीर्भिर्द्युगदिन्द्र केशिभिः सुतवां आ विवासति।४
यद्वासि रोचने दिवः समुद्रस्याधि विष्टपि।
यत् पार्थिवे सदने वृत्रहन्तम यदन्तरिक्ष आ गहि।५।३६

हे इन्द्र! तुमने राक्षसों से जो उपभोग्य धन प्राप्त किया है उससे स्तोता को पोषण करो। हे सुख सम्पन्न इन्द्र! यह कुश तुम्हारे लिए बिछाये गये हैं।१। हे इन्द्र! तुम्हारे पास गौ, अश्व आदि स्थाई धन है वह सब इस सोमाभिषवकर्त्ता और दक्षिणादाता यजमान को प्रदान करो। तुम अपने उस धन का पणि जैसे अयाज्ञिक को मत देना।२।

हे इन्द्र! देवताओंकी कामना न करने वाला जो अनाचारी उन्मत्त होता है, वह अपने ही कर्म से अपनी सम्पत्ति को नष्ट कर डालेगा । तुम उसे कर्म से रहित स्थान में स्थापित करो ।३। हे इन्द्र ! तुम वृत्र जैसे भयङ्कर शत्रुओंके संहारक हो । तुम्हें दूर या पास जहाँ भी हो, वहींसे इस स्तोत्र से सोम-सम्पन्न यजमान यज्ञ में बुलाता है ।४। हे इन्द्र ! तुम दमकते हुए सूर्य मण्डलमें निवास करते हो । तुम पृथिवी, अन्तरिक्ष या समुद्र में जहाँ कहीं भी हो, वहीं से आगमन करो ।५। (३६)

स नः सोमेषु सोनपाः सुतेषु शवसस्पते ।
मादयस्व राधसा सूनृतावतेन्द्र राया परीणसा ।६।
मा न इन्द्र परा वृणग्भवा नः सधमाद्यः ।
त्वं न ऊती त्वमिन्न आप्यं मा न इन्द्र परा वृणक् ।७
अस्मे इन्द्र सचा सुते नि षदा पीतये मधु ।
कृधी जरित्रे मघवन्नवो महदस्मे इन्द्र सचा सुते ।८
न त्वा देवास आशत न मर्त्यासो अद्रिवः ।
विश्वा जातानि शवसाभिभूरसि न त्वा देवास आशत ।९
विश्वाः पृतना अभिभूतरं नरं सजूस्ततक्षुरिन्द्रं जजनुश्च राजसे।
क्रत्वा वरिष्ठं वर आमुरिमुतोग्रमोजिष्ठं तवस तरस्विनम् ।१०।३७

हे बल के स्वामी इन्द्र ! तुम सोम-पान करने वाले हो । तुम सोम का अभिषुत होने पर बल साधन रूप अन्न देकर हमें सन्तुष्ट करो ।६। हे इन्द्र ! हमारा त्याग न करना । तुम हमारे साथ सोम पीकर हर्ष को प्राप्त होओ । तुम हो हमारे निकटस्थ बन्धु हो, अतः हमको अपनी रक्षा में स्थित करो, हमारा त्याग मत कर देना ।७। हे इन्द्र ! सोम के अभिषुत होने पर इन हर्षदायक सोम को पीने के लिए हमारे साथ बैठो और इस स्तोता को अपनी दृढ़ रक्षा दो ।८। हे वज्रिन ! कोई भी देवता या मनुष्य तुम्हें व्याप्त नहीकर सकता । तुमने अपने बल से सभी पापियों को वशीभूत किया हुआ है ।९। शत्रुओं को जीतने वाले इन्द्र को सब सेनायें आयुध आदि से सुसज्जित करती हैं । स्तोतागण

यज्ञ में सूर्यात्मक इन्द्र को प्रकट करते हैं। वह इन्द्र कर्म से बली, शत्रु-संहारक, उग्र, प्रवृद्ध वेगवान् और तेजस्वी है। धन से निमित्त सब स्तोता उनका स्तव करते हैं।१०। (३७)

समी रेभासो अस्वरन्निन्द्रं सोमस्य पीतये।
स्वर्पतिं यदीं वृधे धृतव्रतो ह्योजसा समूतिभिः ॥११
नेमिं नमन्ति चक्षसा मेषं विप्रा अभिस्वरा।
सुदीतयो वो अद्रुहो ऽपि कर्णे तरस्विनः समृक्वभिः।१२
तमिन्द्रं जोहवीमि मघवानमुग्रं सत्रा दधानमप्रतिष्कुतं शवांसि।
मंहिष्ठो गीर्भिरा च यज्ञियो ववर्तद्राये नो विश्वा सुपेथा कृणोतु वज्री।१३
त्वं पुर इन्द्र चिकिदेना व्योजसा शविष्ठ शक्र नाशयध्यै।
त्वद्विश्वानि भुवनानि वज्रिन् द्यावा रेजेते पृथिवी च भीषा।१४
तन्म ऋतमिन्द्र शूर चित्र पात्वपो न वज्रिन् दुरिताति पर्षि भूरि।
कदा न इन्द्र राय आ दशस्येर्विश्वप्स्न्यस्य स्पृहयाय्यस्य राजन्।१५।३८

रेभ नामक ऋषि ने सोम पीने के लिए इन्द्र का आह्वान किया था। जब इन्द्र को प्रवृद्ध करने के लिए स्तोत्र किये जाते हैं, तब तुष्टि और बल के द्वारा इन्द्र उन्हें प्राप्त होते हैं।११। कश्यप वंशी रेभ इन्द्र को देखते ही प्रणाम करते हैं, विद्वज्जन उन भेड़ के समान इन्द्र की पूजा करते हैं, हे स्तोताओं! तुम अत्यन्त तेजस्वी हो अतः इन्द्रके कानों में अपने स्तुति मन्त्रोंको गुंजित करो।१२। मैं सत्य बल वाले, धनेश्वर विकराल और दुर्धर्ष इन्द्र को आहूत करता हूँ। वे वज्रधारी हमारे धन प्राप्ति के मार्गों को सरल करे और हमारी स्तुतियों से यज्ञ में आवें।१३। हे इन्द्र! तुम शत्रु को नष्ट करने में समर्थ हो। तुम ही अपने बल से शम्बर के पुरों को नष्ट करने के कर्मको जानते हों। हे वज्रिन्! तुम्हारे भय से आकाश और पृथिवी भी काँपते हैं।१४। हे इन्द्र! तुम बलवान् हो। तुम्हारे सत्य द्वारा मेरी रक्षा हो। हे वज्रिन्! जैसे

मल्लाह जल से पार करता है वैसे ही मुझे पापों से पार करो । तुम हमारे लिए विभिन्न रूप वाला अभीष्ट धन कब दोगे ।१५। (९७)

सूक्त ९८

(ऋषि—नृमेधः । देवता—इन्द्रः । छन्द—उष्णिक्)

इन्द्राय साम गायत विप्राय बृहत् । धर्मकृते विपश्चिते पनस्यवे।१ त्वमिन्द्राभिभूरसि त्वं सूर्यमरोचयः । विश्वकर्मा विश्वदेवो महाँ असि ।२। विभ्राजञ्ज्योतिषा स्वरगच्छो रोचनं दिवः । देवास्त इन्द्र सख्याय येमिरे ।३। एन्द्र नो गधि प्रियः सत्राजिदगोह्यः । गिरिर्न विश्वतस्पृथुः पतिर्दिवः ।४। अभि हि सत्य सोमपा उभे बभूथ रोदसी । इन्द्रासि सुन्वतो वृधः पतिर्दिवः ।५। त्वं हि शश्वतीनामिन्द्र दर्ता पुरामसि । हन्ता दस्योर्मनोर्वृधः पतिर्दिवः ।६।१

हे उद्गाताओ ! स्तोत्र की कामना करने वाले मेधावी इन्द्र के लिये वृहती स्तोत्र को गाओ ।१। हे इन्द्र ! तुम शत्रुओं को वश में करने वाले सबके देवता, सबसे बढ़े हुए और जगत् के रचयिता हो । तुमने ही आदित्य को अपने तेज से प्रकाशमान किया है ।२। हे इन्द्र ! तुम ज्योति के द्वारा सूर्य को प्रकाशमान करते हो । तुम्हारी मित्रता के लिए सभी देवता उत्सुक हुए थे तुमने ही स्वर्ग को देदीप्यमान किया था ।३। हे इन्द्र ! तुम सब महान् व्यक्तियों को भी वश में करने वाले हो । तुम्हें कोई छिपा नहीं सकता । तुम सर्वव्याप्त और स्वर्ग के अधिपति हो । हमारे यहाँ आगमन करो ।४। हे सोम पाये ! तुमने आकाश पृथिवी को जीता है, तुम स्वर्ग के स्वामी हो । अभिषवकर्ता तुम्हारी कृपा से ही वृद्धि को प्राप्त होते हैं ।५। हे इन्द्र ! तुम शत्रुओं के अनेक नगरों को ध्वंस करने वाले हो । तुम शत्रुओं को नष्ट करने में समर्थ हो । तुम यजमानों के बसाने वाले और स्वर्ग के स्वामी हो ।६। (१)

अधा हीन्द्र गिर्वण उप त्वा कामान् महः ससृज्महे । उदेव यन्त उदभिः ।७

वार्ण त्वा यव्याभिर्वर्धन्ति शूर ब्रह्माणि।
वावृध्वांसं चिदद्रिवो दिवेदिवे।८
युञ्जन्ति हरी इषिरस्य गाथयोरौ रथ उरुयुगे।
इन्द्रवाहा वचोयुजा।९
त्वं न इन्द्रा भरँ ओजो नृम्णं शतक्रतो विचर्षणे।
आ वीरं पृतनाषहम्।१०
त्वं हि नः पिता वसो त्वं माता शतक्रतो वभूविथ।
अधा ते सुम्नमीमहे।११
त्वां शुष्मिन् पुरुहूत वाजयन्तमुप ब्रुवे शतक्रतो।
स नो रास्व सुवीर्यम्।१२।२

हे इन्द्र ! तुम स्तुतियों के पास हो। जैसे क्रीड़ा के लिए जल उछाला जाता है, जैसेही हम तुम्हारे लिये सुन्दर स्तोत्र प्रेरित करते हैं।७। हे वज्रिन् ! जैसे नदियाँ जल के स्थान को विस्तृत करती हुई बढ़ती हैं, वैसे ही बढ़ते हुए स्तोता तुम्हें नित्य प्रति स्तोत्रों से बढ़ाते हैं।८। इन्द्र के दो घोड़ों वाले रथ में कथन मात्र से युक्त होने वाले दो हरिद् अश्व इन्द्रका वहन करते हैं। स्तोता उन्हें स्तोत्रों द्वारा सयोजित करते है।९। हे इन्द्र ! तुम शत्रु को पराक्रमी सेना के विजेता, रण कुशल एवं अनेक कर्म बाले हौ। तुम हमको धन और बल प्रदान करो।१०। हे इन्द्र ! तुम हमारे लिए पिता के समान रक्षक और माता के समान पुष्ट करने वाले होओ। फिर हम तुमसे अपने लिए सुख माँगेंगे।११। हे इन्द्र ! तुम अनेकों द्वारा बुलाये गये हो। मैं भी तुम्हारी स्तुति करता हूँ मुझे वीर्यवान् ऐश्वर्य प्रदान करो।१२।   (२)

सूक्त ९९

(ऋषि—नृमेधः। देवता—इन्द्रः। छन्द—बृहती, पंक्तिः)

त्वामिदा ह्यो नरोऽपीप्यन् वज्रिन् भूर्णयः।
स इन्द्र स्तोमवाहसामिह श्रुध्युप स्वसरमा गहि।१

मत्स्वा सुशिप्र हरिवस्तदीमहे त्वे आ भूषन्ति वेधसः ।
तव श्रवांस्युपमान्युक्थ्या सुतेष्विन्द्र गिर्वणः ।२
श्रायन्त इव सूर्यं विश्वेदिन्द्रस्य भक्षत ।
वसूनि जाते जनमान ओजसा प्रति भाग न दीधिम ।३
अनर्शरातिं वसुदामुप स्तुहि भद्रा इन्द्रस्य रातयः ।
सो अस्य कामं विधतो न रोषति मनो दानाय चोदयन् ।४
त्वमिन्द्र प्रतूर्तिष्वभि विश्वा असि स्पृधः ।
अशस्तिहा जनिता विश्वतूरसि त्वं तूर्य तरुष्यतः ।५
अनु ते शुष्मं तुरयन्तमीयतुः क्षोणी शिशुं न मातरा ।
विश्वास्ते स्पृधः श्नथयन्त मन्यवे वृत्रं यदिन्द्र तूर्वसि ।६
इत ऊती वो अजरं प्रहेतारमप्रहितम् ।
आशुं जेतारं हेतारं रथीतममतूर्तं तुग्र्यावृधम् ।७
इष्कर्तारमनिष्कृतं सहस्कृतं शतमूतिं शतक्रतुम् ।
समानमिन्द्रमवसे हवामहे वसवानं वसूजुवम् ।८।३

हे वज्रिन् ! हवियों से पालन करने वाले नेताओं ने तुम्हें सोम पिलाया है, तुम इस यज्ञ में हम स्तोताओ की प्रार्थना सुनो और यहाँ आओ ।१। हे इन्द्र ! तुम्हारे उपासक सोम की अभिषुत करते हैं: उसे पीकर हर्ष प्रदान करो। अभिषव के पश्चात् तुम्हारे अन्न विस्तृत हों हम तुम्हारी स्तुति करते हैं ।२। हे यजमानो! सूर्यकी आश्रित रश्मियाँ सूर्य की कामना करती है वैसे ही तुम भी सुर्य के समस्त धनों को कामना करो। इन्द्र के सब प्रकार के धनों को हम पैतृक सम्पत्ति के समान प्राप्त करेंगे ।३। इन्द्र पाप-शुन्य व्यक्ति को धन देते हैं, उनका दान कल्याणका वहन करने वाला है। सेवक की आशाको नष्ट न करते हुए वह उसे इच्छित प्रदान करते हैं ।४। हे इन्द्र ! तुम शत्रुओं के लिये विघ्न रूप हो। तुम उनकी सेनाओं को वश में करते हो। तुम दैत्यों का नाश करमे वाले एवं महान् ।५। हे इन्द्र ! माता जैसे बालक के पीछे चलती है, वैसे ही आकाश-पृथिवी तुम्हारे बल को हिंसित करने

वाले शत्रुओं के पीछे चलते हैं। तुम शत्रु के मारने वाले हो, इसलिए युद्ध करने वाली सब सेनायें तुम्हारे क्रोध से भयभीत होती है।६। इन्द्र श्रेष्ठ रथी हैं। वे गमनशील जलवर्द्धक: शत्रु-प्रेरक और अहिंसक है। उन्हें अपनी रक्षा के लिए आगे बढ़ाओ।७। शत्रुओं के शोधक, अन्य द्वारा वश में आने वाले, सैकड़ों यज्ञ वाले तथा धन को आच्छादित करने वाले इन्द्र को अपनी रक्षा की कामना करते हुए आहूत करते हैं।८।   (३)

सक्त १००

(ऋषि—नेमो भार्गव:। देवता—इन्द्र:। वाक्—त्रिष्टुप, जगती अनुष्टुप्)

अयं त एमि तन्वा पुरस्ताद्विश्वे देवा अभि मा यन्ति पश्चात्।
यदा मह्यं दीधरो भागमिन्द्राऽऽदिन्मया कृणवो वीर्याणि।१
दधामि ते मधुनो भक्षमग्रे हितस्ते भाग: सुतो अस्तु सोम:।
असश्च त्वं दक्षिणत: सखा मे ऽधा वृत्राणि जघनाव भूरि।२
प्र सु स्तोमं भरत वाजयन्त इन्द्राय सत्यं यदि सत्यमस्ति।
नेन्द्रो अस्तीति नेम उ त्व आह क ईं ददर्श कमभि ष्टवाम।३
अयमस्मि जरित: पश्य मेह विश्वा जातान्यभ्यस्मि मह्ना।
ऋतस्य मा प्रदिशो वर्धयन्त्यादर्दिरो भुवना दर्दरीमि।४
आ यन्मा वेना अरुहन्नृतस्यँ एकमासीनं हर्यतस्य पृष्ठे।
मनश्चिन्मे हृद आ प्रत्यवोचदचिक्रदञ्छिशुमन्त: सखाय:।५
विश्वेत् ता ते सवनेषु प्रवाच्या या चकर्थ मघवन्निन्द्र सुन्वते।
पारावतं यत् पुरुसंभृतं वस्वपावृणो: शरभाय ऋषिबन्धवे।६।४

हे इन्द्र! शत्रु पर विजय पाने के लिये मैं अपने पुत्र के सहित तुम्हारे आगे-आगे चल रहा हूं। सब देवता मेरे पीछे चल रहे हैं। हे इन्द्र! मुझे पराक्रम दो, क्योंकि तुम शत्रु के धन का भाग मुझे देना चाहते हो।१। हे इन्द्र! यह हर्ष प्रदायक सोम तुम्हारे लिये देता हूँ, यह तुम्हारे हृदय में व्याप्त हो। तुम मेरे मित्र होते हुए दाँयें हाथ के

समान होओ' फिर हम दोनो मिलकर राक्षसों को नष्ट कर देंगे ।१। हे रण्यकांक्षियों ! तुम इन्द्र की सत्ता को सत्य मानते हो तो उनके लिए सत्य रूप सोम कहो । भृगु कुलोत्पन्न नेम ऋषि कहते हैं कि इन्द्र किसी का नाम नही है, इन्द्र को किसी ने भी नही देखा, फिर हम किसका स्तव करें ।३। हे स्तुति करने वाले नेम ऋषि ! मैं इन्द्र तुम्हारे समीप आ गया, मैं अपनी महिमा से विश्व को अभिभूत करता हूँ । सत्य यज्ञ के देखने वाले मुझे बढ़ाते हैं । मैं सब लोकों का निवारण करने वाला हूँ ।४। जब यज्ञ की कामना वालों ने मुझे अकेले ही स्वर्ग पर आरूढ़ किया था, तब उन्हीं के मन ने मुझे सन्देश दिया कि मेरे पुत्रवान स्नेही मेरे निमित्त रुदन कर रहे हैं ।५। हे इन्द्र ! इन याज्ञिकों के हित में तुमने जो कार्य किए हैं वे सब वर्णन के योग्य हैं । अपने मित्र ऋषि शरभ के लिए तुमने परावत् का धन छीन कर दिया ।६।   (४)

प्र नूनं धावता पृथङ्‌ नेह यो वो अबावरीत् ।
नि षी वृतस्य मर्मणि वज्रमिन्द्रो अपीपतत् ।७
मनोजवा अयमान आयसीमतरत् पुरम् ।
दिवं सुपर्णो गत्वाय सोमं वज्रिण आभरत् ।८
समुद्रे अन्तः शयत उद्ना वज्रो अभीवृतः ।
भरन्त्यस्मै संयत पुरःप्रस्रवणा बलिम् ।९
यद्वाग्वदन्त्यविचेतनानि राष्ट्री देवानां निषसाद मन्द्रा ।
चतस्र ऊर्जं दुदुहे पयांसि क्व स्विदस्या। परमं जगाम ।१०
देवीं वाचमजनयन्त देवास्तां विश्वरूपाः पशवो वदन्ति ।
सा नो मन्द्रेषमूर्जं दुहाना धेनुर्वागस्मानुप सुष्टुतैतु ।११
सखे विष्णो वितरं वि क्रमस्व द्यौर्देहि लोकं वज्राय विष्कभे ।
हनाव वृत्रं रिणचाव सिन्धूनिन्द्रस्य यन्तु प्रसवे विसृष्टाः ।१२।५

हे इन्द्र ! तुम्हें व्याप्त न करते हुए शत्रु पर तुमने वज्र से प्रहार किया ।७। वेगवान गरुड़ लौहमय पुर के समीप गये और इन्द्र के लिए

सोम लेकर चले गये।८। तुम्हारा वज्र जल से ढका हुआ समुद्र में शयन करता है, उस वज्र के लिए युद्धाकांक्षी शत्रु अपने प्राणों का उपहार प्रस्तुत करते हैं।९। जब यज्ञ में राष्ट्रों और देवताओं को प्रसन्न करने वाला स्तोत्र प्रतिष्ठित होता है तब अन्न और जलका दोहन होता है। उसमें जो श्रेष्ठ वाक् है वह किधर गमन करता है ? ।१०। जिस ओजस्विनी वाणीको देवगण दीप्त करते हैं, उसी वाणीको पशु बोलता है। अन्न रस प्रदात्री गौ के समान वह आनन्ददायिनी वाणी हमारे द्वारा स्तुत होती हुई हमको प्राप्त हो।११। हे आकाश ! वज्र के जाने के लिए मार्ग दो, हे विष्णो ! तुम अधिक पांव फैलाओ। मैं तुमसे मिलकर वृत्रको मारता हुआ नदियों को ले जाऊँगा। वह नदियाँ इन्द्र की आज्ञा से प्रवाहबती हों।१२। (२)

सूक्त १०१

(ऋषि-जमदग्निमार्गः। देवता-मित्रावरुणौः मित्रावरुणावादित्याश्च आदित्याः अश्विनौ, वायुः, उषाः, सूर्यप्रभा वा, पवमानः, गौ। छन्द-बृहती, पंक्ति, गायत्री, अनुष्टुप्)

ऋधगित्था स मर्त्यः शशमे देवतातये।
यो नूनं मित्रावरुणावभिष्टय आचक्रे हव्यदातये।१
वर्षिष्ठक्षत्रा उरुचक्षसा नरा राजाना दीर्घश्रुत्तमा।
ता बहुता न दंसना रथर्यतः साकं सूर्यस्य रश्मिभिः।२
प्र यो वां मित्रावरुणाऽजिरो दूतो अद्रवत्। अयःशीर्षा मदेरघुः।३
न यः संपृच्छे न पुनर्हवीतवे न संवादाय रमते।
तस्मान्नो अद्य समृतेरुरुष्यतं बाहुभ्यां न उरुष्यतम्।४
प्र मित्राय प्रार्यम्णे सचथ्यमृतावसो।
वरूथ्यं वरुणे छन्द्यं वचः स्तोत्रं राजसु गायत।५।६

जो विद्वान मित्रावरुण का हविदाता यजमान के लिए संबोधित करता है, वह यथार्थ में यज्ञ के लिए हव्य संस्कृत करता है।१। मित्रा-वरुण अत्यन्त मेधावी, महान बली, सुन्दर दर्शनीय और देता है। वे

सूर्य रश्मियों से दोनों बाहुओं के समान कर्मों में लाते हैं ।२। हे मित्रा-वरुण ! तुम्हारे सामने जाने वाला गमनशील यजमान देव-दूत होता हैं। वह सुवर्ण से सुसज्जित सोम वाला हर्ष प्रदायक सोम को प्राप्त करता है ।३। हे मित्रावरुण ! बारम्बार पूछने पर बारम्बार आमन्त्रित करने पर और बारम्बार कहने पर भी जो शत्रु प्रसन्न न हो, उसके आक्रमण और बाहुबल से हमारी रक्षा करो ।४। हे स्तोताओ ! मित्र देवता के लिए मण्डप में उत्पन्न होने वाले स्तोत्र को गाओ । अर्यमा और वरुण को प्रसन्न करने वाला यश-गान करो । मित्र आदि तीनोंकी स्तुति करो ।५।

ते हिन्विरे अरुणं जेन्यं वस्वेकं पुत्रं तिसृणाम् ।
ते धामान्यमृता मर्त्यानामदब्धा अभि चक्षते ।६
आ मे वचांस्युद्यता द्युमत्तमानि कर्त्वा ।
उभा यातं नासत्या सजोषसा प्रति हव्यानि वीतये ।७
रातिं यद्वामरक्षसं हवामहे युवाभ्यां वाजिनीवसू ।
प्राचीं होत्रां प्रतिरन्तावितं नरा गृणाना जमदग्निना ।८
आ नो यज्ञं दिविस्पृशं वायो याहि सुमन्मभिः ।
अन्तः पवित्र उपरि श्रीणानो ऽयं शुक्रो अयामि ते ।९
वेत्यध्वर्युः पथिभी रजिष्ठैः प्रति हव्यानि वीतये ।
अधा नियुत्व उभयस्य नः पिब शुचिं सोमं गवाशिरम् ।१०।७

आकाश, पृथिवी और अन्तरिक्ष इन तीनों के लिये देवगण सूर्य रूप एक पुत्र देते हैं और वे अविनाशी देवता मनुष्योंके स्थान पर दृष्टि रखते हैं ।६। हे अश्विनीकुमारो ! मेरे द्वारा उच्चारित ओजस्विनी वाणीके प्रति हवि सेवनार्थ आगमन करो ।७। हे अन्न सम्पन्न अश्विनी-कुमारो ! तुम्हारे पाप रहित दान की हम याचना करेंगे । तब तुम जमदग्नि से आहूत होते हुये आगमन करना ।८। हे वायो ! पवित्रता में आश्रित उज्ज्वल सोम तुम्हारे लिये ही रखा है । तुम हमारे स्वर्ग को छूने वाले यज्ञ में सुन्दर स्तोत्र के प्रति आगमन करना ।९। हे वायो !

यह अध्वर्यु तुम्हारे सेवन के लिये हवि लेता हुआ अत्यन्त सरल मार्ग से तुम्हें प्राप्त करना है, इसलिये तुम दोनों प्रकार के सोमों को पियो ।१०। (७)

बण्महाँ असि सूर्य बलादित्य महाँ असि ।
महस्ते सतो महिमा पनस्यते ऽद्धा देव महाँ असि ।११
वट् सूर्य श्रयसा महाँ असि सत्रा देव महाँ असि ।
मह्ना देवानामसुर्यः पुरोहितो विभु ज्योतिरदाभ्यम् ।१२
इयं या नीच्यर्किणीं रूपा रोहिण्या कृता ।
चित्रेव प्रत्यदर्श्यायत्यन्तर्दशसु वाहुषु ।१३
प्रजा ह तिस्रो अत्याणमीयुर्न्यन्या अर्कमभितो विविश्रे ।
बृहद्ध तस्थौ भुवनेष्वन्तः पवमानो हरित आ विवेश ।१४
माता रुद्राणां दुहिता वसूनां स्वसादित्यानाममृतस्य नाभिः ।
प्र नु वोचं चिकितुषे जनाय मा गामनागामदितिं वधिष्ट ।१५
वचोविद वाचमुदीरयन्तो विश्वाभिर्धीभिरुपतिष्ठमानाम् ।
देवीं देवेभ्यः पर्येयुषीं गामा मावृक्त मर्त्यो दभ्रचेताः ।१६।८

हे आदित्य ! तुम यथार्थ ही महान् हो । तुम्हारी महिमा अत्यन्त यशवती हैं ।११। हे सूर्य ! तुम अपनी महिमा से प्रवृद्ध हुए हो, यह असत्य नहीं है । तुम शत्रुओं के नाशक और देवताओं के हितैषी हो, यह बात यथार्थ है । तुम्हारा महान तेज हिंसित नहीं हो सकता ।१२। वह रूपवती उषा नीचे की ओर मुख करके सूर्यकी महिमा से ही प्रकट हुई है । यह विश्व की दशों दिशाओं में आगमन करती हुई चितकबरी गऊ के समान दर्शनीय हैं ।१३। तीन प्रजायें बाँध कर चली गयी । अन्य प्रजायें अग्नि की आश्रित हुयीं, तब वायु दिशाओं में प्रविष्ठ हुए और सूर्य महान होकर लोकों पर छा गये ।१४। जो गौ देवी आदित्यों की भगिनीः रुद्रों की जननी, वसुओं की पुत्री और पयस्विनी है उसकी हिंसा मत करना । यह बात मैंने मेधावी मनुष्यों से कही थी ।१५। प्रकाश से सम्पन्न वाणी के देने वाली, देवता के निमित्त मुझे पहिचानने

वाली, स्तोत्रों के साथ ही उपस्थित होने वाली गौ रूपिणी देवी को अल्प बुद्धि वाला मनुष्य ही हिंसित कर सकता है ।१६। (८)

सूक्त १०२

(ऋषि-प्रयोगो भार्गव अग्निर्वा पावको बार्हस्पत्यः अथवाग्नो गृहपति-यविष्ठौ सहसः सुतौतयोर्वान्यतरः । देवता-अग्निः । छन्द-गायत्री)

त्वमग्ने दृहद्वयो दधासि देव दाशुषे । कविर्गृहपतिर्युवा ।१
स न ईलानया सह देवाँ अग्ने दुवस्युवा । चिकिद्विभानवा वह।२
त्वया ह स्विद्युजा वयं चोदिष्ठेन यविष्ठ्य अभि ष्मो वाजसा-तये ।३। और्वभृगुवच्छुचिमप्रवानवदा हुवे । अग्निं समुद्रवाससम् ।४। हुवे वातस्वनं कविं पर्जन्यक्रन्द्यं सहः । अग्निं समुद्रवाससम् ।५।६

हे अग्ने ! तुम गृह रक्षक मेधावी नित्य युवा और यजमान को यथेष्ट अन्न देने वाले हो ।१। हे अग्ने ! तुम जानने वाले होकर हमारी वाणी से देवताओं को यहाँ लाओ, क्योंकि हम तुम्हारी सहायता से अन्न प्राप्ति के लिये शत्रुओं को वशीभूत करेंगे ।३। और्व, भृगु और अप्वान ऋषियों के समान मैं भी समुद्रमें स्थित अग्नि को आहूत करता हूँ ।४। मेघ के समान गर्जनशील, वायु के समान शब्दवान्, समुद्र में शयन करने वाले, बली, मेधावी और अग्नि को आहूत करता हूँ ।५। (६)

आ सवं सवितुर्यथा भगस्येव भुजिं हुवे । अग्निं समुद्रवास-सम् ।६। अग्निं वो वृधन्तमध्वराणां पुरूतमम् । अच्छा नप्त्रे सह-स्वते ।७। अयं यथा न आभुवत् त्वष्टा रूपेव तक्ष्या । अस्य क्रत्वा यशस्वतः ।८। अयं विश्वा अभि श्रियो ऽग्निर्देवेषु पत्यते । आ वाजैरुप नो गमत् ।९। विश्वेषामिह स्तुहि होतॄणां यशस्तमम् । अग्निं यज्ञेषु पूर्व्यम् ।१०।१०

भग देवता के भोग के समान और सूर्य के उदित होते के समान समुद्र में शयन करने वाले अग्नि को आहूत करता हूँ ।६। हे ऋत्विजो ! मनुष्यों के मित्र, प्रवृद्ध अहिंसनीय और बलवान् अग्नि की ओर गमन

करो ।७। हम अग्नि के ज्ञान से यश प्राप्त करेंगे, क्योंकि यह अग्नि हमको कर्म में लगाते हैं। अग्नि ही देवताओं में सब मनुष्यों की सम्पत्ति पाते हैं। वह अग्नि अन्न के सहित हमारे यहाँ आगमन करे।६। हे स्तोता ! सब होताओं में श्रेष्ठ और यज्ञ में अग्नि का पूजन करो ।१०।

शीरं पावकशोचिषं ज्येष्ठो यो दमेष्वा । दीदाय दीर्घश्रुत्तमः ।११। तमर्वन्तं न सानसिं गृणीहि विप्र शुष्मिणम् । मित्रं न यात यज्जनम् ।१२। उप त्वा जामयो गिरो देदिशतीर्हविष्कृतः । वायोरनीके अस्थिरन् ।१३। यस्य त्रिधात्ववृतं बर्हिस्तस्थावसंदिनम् । आपश्चिन्नि दधा पदम् ।१४। पदं देवस्य मीलहुषो ऽनाधृष्टाभिरूतिभिः । भद्रा सूर्य इवोपदृक् । ५।११

देवताओं में मुख्य और अत्यन्त मेधावी अग्नि यज्ञकर्ता यजमानों के घर में प्रज्वलित होते हैं, उन पवित्र तेज वाले अग्नि की पूजा करते ।११। हे स्तोता ! अग्नि बलवान् शत्रु-हन्ता, भोग्य, मेधावी और मित्र रूप हैं, तुम उनकी स्तुति करो।१२। हे अग्ने ! भगिनियों के समान यजमानों के स्तोत्र तुम्हारा पूजन करते हुए तुम्हें वायु के निकट प्रतिष्ठित करते हैं।१३। जिन अग्नि के तीन कुश है, उन अग्नि में जल भी आश्रित होता है।१४। अग्नि कामनाओं की वर्षा करने वाले और प्रकाश से सम्पन्न है। उनका स्थान भोग के योग्य तथा सुरक्षित है। सूर्य के समान ही उनकी दृष्टि भी कल्याण देने वाली है।१५। (११)

अग्ने घृतस्य धीतिभिस्तेपानो देव शोचिषा । आ देवान् वक्षि यक्षि च।१६। त त्वाजनन्त मातरः कविं देवासो अङ्गिरः । हव्यवाहं वाहममर्त्यम् ।१७। प्रचेतसं त्वा कवे ऽग्ने दूतं वरेण्यम् । हव्यवाहं नि षेदिरे ।१८। नहि मे अस्त्यघ्न्या न स्वधितिर्वनन्वति । अथैताद्दृग्भरामि ते ।१६। यदग्ने कानि चिदा ते दारूणि दध्मसि । ता जुषस्व यविष्ठ्य २०। यदत्युपजिह्विका यद्वम्रो अतिसर्पति ।

सर्वं तदस्त ते घृतम् ।२१। अग्निमिन्धानो मनसा धिय सचेत मर्त्यः । अग्निमीघे विवस्वभिः ।१२।१२

हे अग्ने ! तुम्हारी प्रवृद्धि के साधन रूप घृत भण्डार से पुष्ट होते हुए तुम अपनी ज्वालाओं से देवता का आह्वान करो ।१६। हविदाता मेधावी, अविनाशी और सनातन अग्नि को देवगण रूपी मातओं ने प्रकट किया ।१७। हे अग्ने ! तुम्हारे चारों ओर देवगण विराजमान होते हैं, क्योंकि तुम मेधावी वरुण करने योग्य दूत और हवियों के वहन करने वाले हो ।१८। हे अग्ने मेरे पास गौ का अभाव है, काष्ठ को काटने वाला कुल्हाड़ा भी मेरे पास नहीं है । यह सब मैंने तुम्हें ही दे दिया ।१८। हे अग्ने ! मैं जब तुम्हारे निमित्त कोई कर्म करता हूँ तब तुम कटे हुए काष्ठ का सेवन करते हो ।२०। जो काष्ठ तुम्हारी ज्वालाओं से जल जाते हैं, अथवा जो काष्ठ जलने से बच जाते हैं, हे अग्ने ! वे सभी काष्ठ तुम्हारे निमित्त घृत के समान हो जाय ।२१। काष्ठ के द्वारा अग्नि की प्रज्वलित करने वाला पुरुष कर्म करता है तब ऋत्विग्गण अग्नि को प्रवृद्ध करते हैं ।२२। (१२)

सूक्त १०३

(ऋषि—सोभरिः काण्वः । देवता—अग्निः अग्निमंरुतश्च ।
छन्द—बृहती, पंक्तिः गायत्री, उष्णिक्; अनुष्टुप्)

अदर्शि गातुवित्तमो यस्मिन् व्रतान्यादधुः ।
उपो षु जातमार्यस्य वर्धनमग्निं नक्षन्त नो गिरः ।१
प्र दैवोदासो अग्निर्देवाँ अच्छा न मज्मना ।
अनु मातरं पृथिवीं वि वावृते तस्थौ नाकस्य सानवि ।२
यस्माद्रेजन्त कृष्टयश्चर्कृत्यानि कृण्वतः ।
सहस्रसां मेधसाताविव त्मनाऽग्निं धीभिः सपर्यत ।३
प्र यं राये निनीषसि मर्तो यस्ते वसो दाशत् ।
स वीरं धत्ते अग्न उक्थशंसिनं त्मना सहस्रपोषिणम् ।४

स ह्लहे चिदभि तृणत्ति वाजमर्वता स धत्ते अक्षित्ति श्रवः ।
त्वे देवत्रा सदा पुरूवसो विश्वा वामानि धीमहि ।५।१३

जयमानों द्वारा किए हुए सब कर्म जिस अग्नि में व्याप्त होते हैं, वे अग्नि विस्तृत मार्ग वाले हैं। उन अग्नि के प्रकट होने पर हमारी स्तुतियां उनकी ओर गमन करती है ।१। उन अग्नि का दिबोदास ने आह्वान किया था, तब वे अपनी माता पृथिवी के सामने देवताओं के लिए हवि-वाहक कर्म में नहीं लगे। दिबोदास के बल पूर्वक बुलाये जाने के कारण, वह अग्नि स्वर्ण के समीप हो रह गये ।२। हे मनुष्यो ! यह अग्नि सहस्रों धनों के देने वाले हैं। जो मनुष्य कर्म नहीं करते, वे कर्मवान के वश में रहते हैं, इसलिए यज्ञ-रूप कर्ममें अग्नि की परिचर्या करो ।४। हे अग्ने ! तुम सुंदर निवास करते हो। तुम जिसे धन दान के लिए प्रेरित करते हो, वह पुरुष तुम्हें हवि प्रदान करता हुआ सहस्रों प्रकार से सेवा करने वाले पुत्र को पाता है ।४। हे अग्ने ! हे घनेश ! तुम्हारे लिए हवि देने वाला यजमान शत्रु के दृढ़ नगर को तोड़कर उसके अंन को नष्ट करता हुआ महान धन धारण करता है। हम भी तुमको हवि देकर तुम्हारे धनों को प्राप्त करेंगे ।५। (१३)

यो विश्वा दयते वसु होता मन्द्रो जनानाम् ।
मधोर्न पात्रा प्रथमान्यस्मै प्र स्तोमा यन्त्यग्नये ।६
अश्वं न गीर्भी रथ्यं सुदानवो मर्मृज्यन्ते देवयवः ।
उभे तोके तनये दस्म विश्पते पर्षि राधो मघोनाम् ।७
प्र मंहिष्ठाय गायत ऋताव्ने बृहते शुक्रशोचिषे ।
उपस्तुतासो अग्नये ।८
आ वसते मघवा वीरवद्यशः समिद्धो द्युम्न्याहुतः ।
कुविन्नो अस्य सुमतिर्नवीयस्यच्छा वाजेभिरागमत् ।९
प्रेष्ठमु प्रियाणां स्तुह्यासावातिथिम् । अग्निं रथानां यमम् ।१०।१४

देवाह्वाक, मङ्गलमय, अंनदाता अग्नि के लिए हर्षकारी सोम के पात्र सदा प्रस्तुत करते हैं ।६। हे अग्ने ! तुम लोकों के पालन करने वाले और दर्शनीय हो। देवताओं की कामना वाले यजमान अपनी

सुंदर स्तुति से तुम्हारी सेवा करते हैं। हे अग्ने ! तुम हमारे पुत्रादि के लिये धनवान् बनाने वाला धन प्रदान करो ।७। हे स्तोताओं ! अग्नि यज्ञ से सम्पंन, प्रदीप्त तेज से युक्त और सर्वश्रेष्ठ दान के देने वाले हैं, उनकी स्तुति करो ।८। अग्नि वीर के समान प्रतापी, धन और अंन से महान और आहूत किये जाने पर यशस्वी अंन देने वाले हैं। उनकी अंनवती वृद्धि यहाँ आगमन करे ।६। हे स्तोता ! अग्नि पूज्य अतिथि प्रिय से भी प्रिय और रथों को नियत्रित करने वाले हैं, उन अग्नि की स्तुति करो ।१०। (१४)

उदिता यो निदिता वेदिता वस्वा यज्ञियो ववर्तति ।
दुष्टरा यस्य प्रवणे नोर्मयो धिया वाज सिषासतः ।११
मा नो हृणीतामतिथिर्वसुरग्निः पुरुप्रशस्त एषः ।
यः सुहोता स्वध्वरः ।१२
मो ते रिषन्ये अच्छोक्तिभिवसो ऽग्ने केभिश्चिदेवैः ।
कीरिश्चिद्धि त्वामीट्टे दूत्याय रातहव्यः स्वध्वरः ।१३
आग्ने याहि मरुत्सखा रुद्रेभिः सोमपीतये ।
सोभर्या उप सुष्टुति मादयस्व स्वर्णरे ।१४।१५

जो अग्नि सुने हुए और प्रकट धन को लाते हैं, जिनकी महती ज्वालायें नीचे की ओर जाती हुई समुद्र की लहरों के समान विकराल है, हे स्तोताओ ! उस अग्निका स्तव करो ।११। वे अग्नि देवताओं का आह्वान करने वाले हैं,बहुतों द्वारा स्तुत और सुंदर यज्ञ वाले हैं। वह अतिथि रूप अग्नि हमारे यहाँ आते हुए, किसी के द्वारा न रुकें ।१२। हे अग्ने ! स्तुतियों से जो मनुष्य तुम्हारा अनुग्रह पानेकी तुम्हारी परिचर्या करते हैं, वे मनुष्य हिंसित न हो। यह हविदाता स्तोता इन श्रेष्ठ यज्ञ में तुम्हारी पूजा करता है ।१३। हे अग्ने ! हमारे इस यज्ञ से अपने प्रिय मरुद्गण के सहित आकर सोम पान करो। हे अग्ने! मुझ सौभरि के सुन्दर स्तोत्रों के सामने आकर सोम से हर्षयुक्त होओ ।१४। (१५)

॥ इति अष्टमं मण्डलम् समप्तम् ॥

।। अथ नवम् मण्डलम् ।।

सूक्त १ (प्रथम अनुवाक)

(ऋषि–मधुच्छंदा । देवता–पवमानः सोमः । छंद–गायत्री)

स्वादिष्ठया मदिष्ठया पवस्व सोम धारया। इन्द्राय पातवे सुतः ।१। रक्षोहा विश्वचर्षणिरभि योनिमयोहतम् । द्रुणा सधस्थमासदत् ।२। वरिवोधातमो भव मंहिष्ठो वृत्रहन्तमः । पर्षि राधों मघोनाम् ।३। अभ्यर्ष महानां देवानां वीतिमन्धसा । अभि वाजमुत श्रवः ।४। त्वामच्छा चरामसि तदिदर्थं दिवेदिवे । इन्द्रो त्वे न आशसः ।५।१६

हे सोम ! अभिषुत होने पर सुस्वादु होकर तुम अपनी हर्षप्रदायक धाराओं सहित इंद्र के लिए निचुडो ।१। यह सोम असुरों के नाशक हैं । यह लोहे द्वारा पिस कर कलश में जाते और अभिषव वाले स्थान पर स्थित होते हैं ।२। हे सोम ! तुम अपने दान द्वारा वृत्र को नष्ट करो और धनवान् शत्रुओं का धन प्राप्त कराओ ।३। हे सोम ! तुम अन्न के सहित देव यज्ञ की ओर गमन करो । तुम महिमावान् हो, अतः अन्न बल से सम्पन्न करो ।४। हे सोम ? हम तुम्हारी नित्यप्रति परिचर्या करते हैं ।५। (१६)

पुनाति ते परिस्रुत सोमं सूर्यस्य दुहिता। वारेण शश्वता तना ।६। तमीमण्वीः समर्य आ गृभ्णन्ति योषणो दश । स्वसारः पार्ये दिवि।७। तमीहिन्वन्त्यग्रुवो धमन्ति बाकुरं दृतिम्। त्रिधातु वारणं मधु । ८। अभीममघ्न्या उत श्रीणन्ति धेनवः शिशुम् । सोममिन्द्राय पातवे ।९। अस्येदिन्द्रो मदेष्वा विश्वा वृत्राणि जिघ्नते । शूरो मघा च मंहते ।१०।१७

हे सोम ? सूर्य-पुत्री श्रद्धा तुम्हारे रस को बढ़ाती हुई छन्ने से नित्य छानती है ।६। सोम छानने के समय भगनियों के समान दश उँगलियाँ रूपी स्त्रियाँ, सोम को सबसे पहले पकड़ती हैं ।७। उङ्गलियों द्वारा सम्पादित सोम रूप मधु तीन स्थानों में अवस्थित होता है

और शत्रुओं का नियामक बनाता है । । अहिस्य गौयें वत्स के समान इस सोम को इन्द्र के पीने के लिए दूध से शोषित करती है ।६। सोम को पीकर हर्षयुक्त हुए इन्द्र शत्रुओं का संहार करते हुए यजमानों को धन प्रदान करते हैं ।१ । (१७)

सूक्त २

(ऋषि–मेधातिथिः । देवता–पवमानः सोमः । छन्द–गायत्री)

पवस्व देववीरति पवित्रं सोम रंह्या । इन्द्रमिन्द्रो वृषा विश।१। आ वच्यस्व महि प्सरो वृषेन्द्रो द्युम्नवत्तमः । आ योनि धर्णसिः सदः ।२। अधुक्षत प्रियं मधु धारा सुतस्य वेधसः । अपो वसिष्ट सुक्रतुः ।३। महान्तं त्वा महीरन्वापो अर्षन्ति सिन्धवः । यद्गोभिर्वासयिष्यसे ।४। समुद्रो अप्सु मामृजे विष्टम्भो धरुणो दिवः । सोमः पवित्रे अस्मयुः ।५।१८

हे सोम ! तुम देवताओं की कामना वाले होकर छन्ने से टपको । हे इन्द्र ! तुम सोम के मध्य प्रतिष्ठित होओ ।१। हे सोम ! तुम अत्यन्त यशस्वी कामनाओं के वर्षक और धारक हो । तुम अपने स्थान पर स्थित होते हुए, जल का प्रेरण करो ।२। सोम कामनाओं का देने वाला है उसकी धारा मधुर रस का दोहन करती हैं । सुन्दर गुण वाले सोम जल को अपना सा बना लेते हैं ।३। हे सोम ! जब तुम गोरस से ढक जातेहो तब जल तुम्हारे अभिमुख होता है ।४। यह सोम स्वर्ग का धारण करते हुए उसे स्तब्ध करते हैं । यह हमारी कामना करते हुए जल में शुद्ध होते हैं, इनसे मधुर रस प्रकट होता है ।५। (१८)

अचिक्रदद्वृषा हरिर्महान् मित्रो न दर्शतः । सं सूर्येण रोचते ।६। गिरस्त इन्द ओजसा मर्मृज्यन्ते अपस्युवः । याभिर्मदाय शुम्भसे ।७। तं त्वा मदाय घृष्वय उ लोककृत्नुमीमहे । तव प्रशस्तयो महीः ।८। अस्मभ्यमिन्दविन्द्रयुर्मध्वः पवस्व धारया । पर्जन्यो वृष्टिमाँ इव ।९। गोषा इन्दो नृषा अस्यश्वसा वाजसा उत । आत्मा यज्ञस्य पूर्व्यः ।१०।१९

ये हरे रङ्ग वाले, काम्यवर्द्धक, मित्र के समान उपकारी सोम सूर्य के साथ गुण प्रवृद्ध होते हुए शब्द करते हैं ।६। हे सोम ! तुमको जिन स्तुतियों से हर्ष प्रदायक बनाया जाता है, वे स्तुतियां तुम्हारे ही बल से शुद्ध होती हैं ।७। हे सोम! सोम शत्रुओं का मर्दन करने की कामना वाले यजमान के लिए श्रेष्ठ लोक को रचा है। तुम्हारी महिमा भी महान् है। हम तुमसे हर्षक की प्रार्थना करते हैं ।८। हे सोम ! तुम इन्द्र की कामना करते हुए वृष्टि सम्पन्न मेघ के समान वर्षक होकर अपने मधुर रसको हमारे अभिमुख करो ।९। हे सोम ! यज्ञकर्म के तुम प्राचीन कालीन प्राण हो, तुम हमको गौ, अश्व पुत्रादि तथा अन्न दो ।१०।

(१९)

सूक्त ३

(ऋषि–शुनशेपः । देवता–पवमानः सोमः । छन्द–गायत्री)

एष देवो अमर्त्यः पर्णवीरिव दीयति । अभि द्रोणान्यासदम् ।१। एष देवो विपा कृतो ऽति ह्वरांसि धावति । पवमानो अदाभ्यः ।२। एष देवो विपन्युभिः पवमान ऋतायुभिः । हरिर्वाजाय मृज्यते ।३। एष विश्वानि वार्या शूरो यन्निव सत्वभिः । पवमानः सिषासति ।४। एष देवो रथर्यति पवमानो दशस्यति । आविष्कृणोति वग्वनुम् ।५।२०

द्रोण कलश में प्रतिष्ठित होने के लिए यह अमृत्व गुण वाले सोम, पक्षी के समान अभिमुख गमन करते हैं ।१। अँगुलियों द्वारा निचोड़े हुए सोम शुद्ध होकर गगन करते है ।२। यज्ञ की कामना करने वाले यजमान संग्राम के लिए इन सोमों को सजाते हैं ।३। सोम अपने बलसे जाते हैं और सव धनों के वितरित करने की कामना करते हैं ।४। यह सोम रस की कामना करते और अभीष्ट सिद्ध करते हुए शब्दवान् होते हैं ।५।

(२०)

एष विप्रैरभिष्टुतो ऽपो देवो वि गाहते । दधद्रत्नानि दाशुषे ।६। एषदिवं वि धावति तिरोरजांसि धारया। पवमानः कनिक्रदत् ।७। एषदिवं व्यासरत् तिरो रजांस्यस्पृतः । पवमानः स्वध्वरः।८ एष प्रत्नेन जन्मना देवो देवेभ्यः सुतः । हरिः पवित्रे अर्षति ।९।

एष उ स्य पुरुव्रतो जज्ञानो जनयन्निषः। धारया पवते सुतः ।१०।२१

सब बिद्वजन इस सोम की स्तुति करते हैं, तब यह हविर्वान यजमान को रत्नादि देते हुए जल में निवास करते है ।६। यह सोम स्वर्ग को जाते हुए सभी लोकों पर विजय प्राप्त करते है ।७। यह सोम यज्ञसे सम्पन्न होते हुए सब लोकों को हराकर स्वयं गमन करते हैं ।८। वह हरे रङ्ग के सोम प्राचीन काल से ही देवताओं के लिए संस्कृत होने को छन्ने की ओर गमन करते हैं ।९। यह सोम अनेकों कर्म वाले हैं, अपने जन्म के बाद ही यह संस्कारित होकर धारा रूपमें गिरते और अन्नको उत्पन्न करते हैं।१०। (२१)

सूक्त ४

(ऋषि–हिरण्यस्तूपः । देवता–पवमानः, सोमः । छन्द–गायत्री)

सना च सोम जेषि च पवमान महि श्रवः। अथा नो वस्यसस्कृधि।१। सना ज्योतिःसना स्वर्विश्वा च सोम सौभगा । अथा नो वस्यसस्कृधि ।२। सना दक्षमुन क्रतुमप सोम मृधो जहि। अथा नो वस्यसस्कृधि ।३। पवीतारः पुनीतन सोममिन्द्राय पातवे । अथा नो वस्यसस्कृधि ।४। त्वं सूर्ये न आ भज तव क्रत्वा तवोतिभिः । अथा नो वस्यसस्कृधि ।५।२२

हे पवमान सोम! तुम महान हो हमको जयशील बनाते हो, हमारे लिए कल्याणकारी होओ ।१। हे सोम ! हमको स्वर्ग दो, सौभाग्य और ज्योति दो फिर हमारा कल्याण करो ।२। हे सोम ! हमारे हिंसकों को नष्ट करो हमको कर्मयुक्त बल देते हुए हमारा कल्याण करो ।३। हे सोमाभिषेव कर्त्ताओ ! तुम इन्द्र के लिए सोम को सुसंस्कृत करो और फिर हमको सुख दो ।४। सोम अपनी रक्षासे हमें सूर्य गुण प्राप्त कराओ और फिर हमारा सङ्गल करो ।५। (२२)

तव क्रत्वा तवोतिभिर्ज्योक् पश्येम सूर्यम् । अथा नो वस्यसस्कृधि ।६। अभ्यर्ष स्वायुध सोम द्विबर्हसं रयिम् । अथा नो

वस्यसस्कृधि।७। अभ्यर्षानपच्युतो रयिं समत्सु सासहिः। अथा नो वस्यसस्कृधि ।८। त्वां यज्ञै रवीवृधन् पवमान विधर्मणि । अथा नो वस्यसस्कृधि।९। रयिं नश्चित्रमश्विनमिन्दो विश्वायुमा भर। अथा नो वस्यसस्कृधि ।१०।२

हे सोम ! तुम्हारी रक्षा पाकर हम दीर्घ काल तक सूर्य को देखने वाले होंगे । तुम हमको सुखी करो ।६। हे सोम! तुम्हारी रक्षायें सुन्दर हैं । तुम हमको दिव्य और पार्थिव धन देकर सुखी बनाओ ।७। हे सोम तुम शत्रु को पराभूत करते हो, तो भी तुम स्वयं नहीं बुलाये जाते, देवता ही बुलाये जाते हैं । तुम हमको धन देकर सुखी करो ।८। हे सोम ! यजमान अपनी रक्षा के लिए यज्ञमें वृद्धि करते हैं । तुम हमारा मङ्गल करो ।९। हे इन्द्र ! तुम हमको विविध वर्णवाले अश्वोंसे सम्पन्न ऐश्वर्य प्रदान करो और फिर हमको सुख दो ।१०। (२३)

सूक्त ५

(ऋषि—असितः कश्यपो देवलो वा । देवता—पवमानः, सोमः । छन्द—गायत्री, अनुष्टुप्)

समिद्धो विश्वतस्पतिः पवमानो वि राजति । प्रीणान् वृषा कनिक्रदत् ।१। तनूनपात् पवमानः शृङ्गे शिशानो अर्षति। अन्तरिक्षेण रारजत् ।२। ईलेन्यः पवमानो रयिर्वि राजति द्युमान् । मधोर्धाराभिरोजसा।३। बर्हिः प्राचीनमोजसा पवतानः स्तृणन् हरिः । देवेषु देव ईयते।४। उदातैर्जिहते बृहद् द्वारो देवीर्हिरण्ययीः । पवमानेन सुष्टुताः ।५।२४

कामनाओंकी वर्षा करने वाले पवमान सोम सबसे स्वामी हैं,क्योंकि यह शब्दवान होते हुए देवताओं को प्रसन्न करते हुए बैठते हैं ।१। पवमान और जलके पौत्र सोम, ऊँचे भू-भागमें तेजस्वी होते हुए अन्तरिक्ष में गमन करते हैं ।२। हे सोम तुम इच्छित देने वाले, स्तुतियों के योग्य और तेजस्वी हो । तुम अपनी मधुर धाराओं के सहित सुशोभित

होते हो । हरे रङ्ग के यह सोम यज्ञ के पूर्वाग्र में कुश बिछाते हुए अपने गुणों के द्वारा वेगवान् हैं ।४। पवमान सोम के सहित पूजित होती हुई स्वर्णिम रश्मियाँ दिशा में बढ़ती है ।५। (२४)

सुशिल्पे वृहती मही पवमानो वृषण्यति । नक्तोषासा न दर्शते ।६। उभा देवा नृचक्षसा होतारा दैव्या हुवे । पवमान इन्द्रो वृषा ।७। भारती पवमानस्य सरस्वतीला मही । इमं नो यज्ञमा गमन् तिस्रो देवीः सुपेशसः ।८। त्वष्टारमग्रजां गोपां पुरोयावानमा हुवे । इन्दुरिन्द्रो वृषा हरिः पवमानः प्रजापतिः ।९। वनस्पतिं पवमान मध्वा समङ्ग्धि धारया । सहस्रवल्शं हरितं भ्राजमानं हिरण्ययम् ।१०। विश्वे देवाः स्वाहाकृतिं पवमानस्या गत । वायुर्बृहस्पतिः सूर्यो ऽग्निरिन्द्रः सजोषसः ।११।२५

यह सोम सुन्दर रूप वाली महिमामयी एवं विस्तृत दिन रात्रि का यजन करते हैं । मनुष्यों के दृष्टा और होता दोनों देवताओं का मैं आह्वान करता हूँ । यह सोम कामनाओं की वर्षा करने वाले हैं ।७। हमारे इस यज्ञ में भारती, सरस्वती और इला यह तीनों नदियाँ आगमन करें ।८। मैं उन सबसे पहले उत्पन्न सबसे आगे चलने वाले और प्रजाओं के पालनकर्त्ता त्वष्टादेव को आहूत करता हूँ जो देवताओं में श्रेष्ट अभीष्टवर्षक प्रजापति हैं ।९। हे सोम ! हरी स्वर्णिम और सहस्र शाखा वाली वनस्पति को अपनी मधुर धारा से शोधित करो । ०। हे इन्द्र, अग्नि, वायु, वृहस्पति और विश्वेदेवताओ ! तुम सबके स्वहाकार पास एकत्र होओ ।११।

सूक्त ६

(ऋषि—असितः काश्यपो देवलो वा । देवता—पवमान, सोमः । छन्द—गायत्री)

मन्द्रया सोम धारया वृषा पवस्व देवयुः । अव्यो वारेष्वस्मयुः ।१। अभि त्यं मद्यं मदमिन्दविन्द्र इति क्षर । अभि वाजिनो अर्वतः ।२। अभि त्यं पूर्व्यं मदं सुवानो अर्ष पवित्र आ ।

अभि वाजमुत श्रवः ।३। अनु द्रप्सास इन्दव आपो न प्रवतासरन् । पुनाना इन्द्रमाशत ।४। यमत्यमिव वाजिनं मृजन्ति योषणो दश । वने क्रीलन्तमत्यविम् ।५।२६

हे सोम ! तुम देवताओं की कामना करने वाले और काम्यवर्षक हो । तुम हमको भी चाहते हो । छन्ने में मधुर धारा से निकलते हुए तुम हमारे रक्षक होओ ।१। हे सोम ! तुम हर्षकारी सोम की वर्षा करो और हमको वेगवान् अश्व दो ।२। हे सोम! तुम शुद्ध होकर अपने हर्ष प्रदायक रस सहित छन्ने की ओर गमन करता है, वैसे इन्द्र की ओर द्रुतगतिसे जाता हुआ सोम रस उन्हें हर्षयुक्त करता है ।४। सोम की बलवान् अश्व के समान दस अँगुलियाँ छन्ने को लांघती हुई परिचर्या करती हैं ।५।

त गोभिर्वृषणं रसं मदाय देववीतये । सुतं भराय सं सृज ।६। देवो देवाय धारयेन्द्राय पवते सुतः । पयो यदस्य पीपयत् ।७ आत्मा यज्ञस्य रंह्या सुष्वाणः पवते सुतः । प्रत्नं नि पाति काव्यम् ।८। एवा पुनान इन्द्रयुर्मदं मदिष्ठ वीतये । गुहा चिद्दधिषे गिरः ।९।२७

हे यजमान ! देवताओं के पीने पर हर्ष उत्पन्न करने वाले अभीष्ट पूरक सोम रस को दुग्धादि से मिश्रित करो ।६। इन्द्र के लिए सोम धारा के रूप में गिरते और इन्द्र को व्याप्त करते हैं ।७। यज्ञ के प्राण रूप सोम वेग से क्षरित होते हुए यजमान के लिए कामनाओं के देने वाले हैं ।८। हे सोम ! तुम इन्द्र की कामना करते हुए, उनके पीने के लिए यज्ञ मण्डपसे शब्दवान होओ ।९। (२७)

सूक्त ७

(ऋषि—असितः अश्यपो देवता वा । देवता—पवमानः सोमः । छन्द—गायत्री)

असृग्रमिन्दवः पथा धर्मन्नृतस्य सुश्रियः । विदाना अस्य योजनम् ।१। प्र धारा मध्वो अग्रियो महीरपो वि गाहते । हवि-

हविष्यु वन्द्यः ।२। प्र युजो वाचो अग्रियो वृषाव चक्रदद्वने । सद्माभि सत्यो अध्वरः ।३। परि यत् काव्या कविर्नृम्णा वसानो अर्षति । स्वर्वाजी जिषासति ।४। पवमानो अभि स्पृधो विशो राजेव सीदति । यदीमृण्वन्ति वेधसः ।५ २८

यह सोम इन्द्र के सम्बन्ध को जानते हैं । यह सुन्दर धन से सम्पन्न सोम यज्ञ में शोधित होते हैं ।१। सोम जल में धोये जाते हैं और फिर उनकी धारायें क्षरित होती हैं । यह सब हव्योंमें श्रेष्ठ हैं ।२। यह सोम-रहित सत्य रूप और काम्य-वर्षक हैं । यह यज्ञ मंडल में जलके सहित शब्द करते हैं ।३। धन को ग्रहण करते हुए सोम जब स्तोत्र के ज्ञाता होते हैं तब वे इन्द्र के बल को स्वर्ग में प्रकट करते हैं ।३। जब यह सोम यज्ञकर्त्ता द्वारा प्रेरित किये जाते हैं तब राजा के समान शासक होते हुए यज्ञ के विघ्नों की ओर गमन करते हैं ।५। (२८)

अव्यो वारे परि प्रियो हरिर्वनेषु सीदति । रेभो वनुष्यते मती ।६। स वायुमिन्द्रमश्विना साकं मदेन गच्छति । रणा यो अस्य धर्मभिः ।७। आ मित्रावरुणा भगं मध्वः पवन्त ऊर्मयः । विदाना अस्य शक्मभिः ।८। अस्मभ्यं रोदसी रयिं मध्वो वाजस्य सातये । श्रवो वसूनि सं जितम् ।९।२९

जल में मिलकर भेड़ के बालों पर बैठने वाले सोम शब्दवान होते हुए स्तुतियों का गमन करते हैं ।६। सोम के इस कार्य से हर्षित हुआ पुरुष इन्द्र, वायु और अश्विनीकुमारों को हर्षित मुद्रा में पाता हैं ।७। जिन यजमानों की सोम धारायें मित्रावरुण और भाग देवताको सींचती हैं वे यजमान सोम के गुणों के ज्ञाता होकर सदा सुख को पाते हैं ।८। हे आकाश ! हे पृथिवी ! हमको अन्न, पशु, धन आदि प्रदान करो, जिससे हम हर्षकारी सोम को पा सकें ।९। (२९)

सूक्त ८

(ऋषि—असितः काश्यपो देवलो वा । देवता—पवमानः, सोमः । छन्द—गायत्री)

एते सोमा अभि प्रियमिन्द्रस्य काममक्षरन् । वर्धन्तो अस्य वीर्यम्।१। पुनानासश्चमूषदो गच्छन्तो वायुमश्विना । ते नो धान्तु सुवीर्यम् ।२। इन्द्रस्य सोम राधसे पुनानो हार्दि चोदय । ऋतस्य योनिमासदम् ।३। मृजन्ति त्वा दश क्षिपो हिन्वति सप्त धीतयः। अनु विप्रा अमादिषुः ।४। देवेभ्यस्त्वा मदाय कं सृजानमति मेष्यः सं गोभिर्वासयामसि ।५। ०

यह सोम इन्द्र के बल की वृद्धि करते हैं, और उनके लिए रुचिकर तथा इच्छित रसों को बरसाते हैं ।१। सोम कूटे जाते और चमस में रखे जाते हैं तब ये वायु और अश्विनीकुमारों के प्रति गमन करते हैं । यह देवता हमको सुन्दर कर्म वाला बल दें ।२। हे सोम ! तुम अभीष्ट के अनुरूप होकर यज्ञ मंडप मे इन्द्र को प्रसन्न करने के लिए विराजमान होओ ।३। हे सोम सात होता और दश उंगलियां तुम्हारी सेवा करते हैं और विद्वान तुम्हें हर्षित करते हैं ।४। हे सोम ! तुम भेड़ के बालों और जल में शोधे जाते हो । हम तुम्हें देवताओं के हर्ष के लिए दधि आदि से मिश्रित करेंगे ।८। (३०)

पुनानः कलशैष्वा वस्त्राण्यरुषो हरिः । परि गव्यान्यव्यत।६ मघोन आ पवस्व नो जहि विश्वा अप द्विषः । इन्द्रो सखायमा विश ।७। वृष्टिं दिवः परि स्रव द्युम्नं पृथिव्या अधि । सहो नः सोम पृत्सु धाः ।८। नृचक्षसं त्वा वयमिन्द्रपीतं स्वर्विदम् । भक्षीमहि प्रजामिषम् ।९।३१

शोधित, कलश में सींचा हुआ, हरे रङ्ग वाला उज्जवल सोम दधि आदि को वस्त्र के समान ढकता है ।६। हे सोम ! तुम हम धनवानों के सामने गिरो और हमारे मित्र को प्रसन्न करो । फिर सब शत्रुओं को नष्ट कर डालो ।७। हे सोम ! तुम स्वर्ग से पृथिवीपर वृष्टि करो । संग्राम में हमको स्थिर करते हुए धन और निवास प्रदान करो ।८। हे सोम ! तुम प्रमुख देवों को देखने वाले और सबके जानने वाले हो । जब इन्द्र पी लेते हैं, तब हम तुम्हें पीते हैं । तुम्हारे प्रताप से हम

अन्न और अपत्य से सम्पन्न हों ।६।   (३१)

सूक्त ९

(ऋषि–अहित कश्यपो । देवलों का । देवना–पवमान:, सोम: । छन्द–गायत्री)

परि प्रिया दिव: कविर्वयांसि नप्त्योर्हित: । सुवानो याति कविक्रतु: ।१। प्रप्र क्षयाय पन्यसे जनाय जुष्टो अद्रुहे : वीत्यर्ष चनिष्ठया ।२। स सूनुर्मातरा शुचिर्जातो जाते अरोचयत् । महान् मही ऋतावृधा ।३। स सप्त धीतिभिर्हितो नद्यो अजिन्वदद्रुहः । या एकमक्षि वावृधु: ।४। ता अभि सन्तमस्तृतं महे युवानमा दधु: । इन्दुमिन्द्र तव व्रते ।५।३२

यह सोम अभिषव वाले पाषाण से संस्कृत होकर आकाश के प्रिय पणियों के समान गमन करते हैं । हे सोम ! स्तुति करने वाले देव-सेवक पुरुष के लिए यथेष्ठ अन्न वाली धाराओं सहित आगमन करो ।२ द्यावापृथिवी के पवित्र और महान पुत्र रूप सोम यज्ञ के बढ़ाने वाली इन दोनों को तेज से युक्त करते हैं ।३। सोम नदियों के जल से प्रवृद्ध हुए है, वे सोम उंगली से टकराते हुए सप्त नदियों को हर्षित करते हैं, ।३। हे इन्द्र ! जब उंगलियों ने उस अहिंसित सोम को तुम्हारे दश के लिए ग्रहण किया हैं ।५।   (३३)

अभि वह्निरमर्त्य: सप्त पश्यति वावहि: । क्रिविर्देवीरतर्प-यत्।६। अवा कल्पेषु न: पुमस्तमांसि सोम योध्या । तानि पुनान जघन: ।७। नू नव्यसे नवीयसे सूक्ताय साधया पथ: । प्रत्नवद्रोचया रुच: ।८। पवमान महि श्रवो गामश्वं रासि वीरवत् । सना मेधां सना स्व: ।९।३३

देवताओं को तृप्त करने वाले सोम सात नदियों को देखते हैं और पूर्ण होकर नदियोंको भी पूर्ण करते है ।६। हे सोम ! युद्धाकांक्षी असुरों का नाश करते हुए हमारी रक्षा करो ।७। है सोम ! तुम स्तुति योग्य सूक्त के प्रति शीघ्र आगमन करके स्तोत्रों को दीप्त करो ।८। हे सोम !

तुम हमको अपत्य युक्त धन, गौ अश्व अन्नादि देने वाले हो। अतः यह सब देते हुए हमारे अभीष्ट को पूर्ण करो ।६। (३३)

सूक्त १०

(ऋषि—असितः कश्यपो देवलो वा। देवता—पवमानः सोमः। छन्द—गायत्री)

प्र स्वानासो रथा इवार्ऽवन्तो न श्रवस्यवः। सोमासो राये अक्रमुः ।१। हिन्वानासो रथा इव दधन्विरे गभस्त्योः। भरासः कारिणामिव ।२। राजानो न प्रशस्तिभिः सोमासो गोभिरञ्जते। यज्ञो न सप्त धातृभिः ।३। परि सुवानास इन्दवो मदाय बर्हणा गिरा। सुता अर्षन्ति धारया ।४। आपानासो विवस्वतो जनन्त उषसो भगम्। सूरा अण्वं वि तन्वते ।५।३४

हे सोम ! तुम रथ और अश्व के समान शब्दवान् हो। तुम यजमान के धन की अन्न की कामना करते हुए प्राप्त हो ।१। यज्ञ की ओर रथ के समान जाते हैं। जैसे ढोने वाला व्यक्ति बोझ को बाहु पर धारण करता है, वैसे ही ऋत्विग्गण इन सोमों को अपनी भुजाओं में ग्रहण करते हैं ।२। जैसे राजा को स्तुतियाँ पूर्ण करती हैं, जैसे सात होता यज्ञ को सम्पन्न करते हैं, वैसे ही सोम भी गव्य से पूर्ण होता है। ।३। महिमामयी स्तुति से संस्कृत हुए सोम हर्ष उत्पन्न करने के लिए धाराओं के रूप में गमन करते हैं ।४। यह सोम इन्द्र के स्थान रूप, उषा के भाग्य को जगाने वाले हैं। यह गिरते हुए शब्दवान होते हैं ।५।

अप द्वारा मतीनां प्रत्ना ऋण्वन्ति कारवः। वृष्णो हरस आयवः ।६। समीचीनास आसते होतारः सप्तजामयः। पदमेकस्य पिप्रतः ।७। नाभा नाभिं न आ ददे चक्षुश्चित् सूर्ये सचा। कवेरपत्यमा दुहे ।८। अभि प्रिया दिवस्पदमध्वर्युभिर्गुहा हितम्। सूरः पश्यति चक्षसा ।९।३५

हे स्तोता ! सोम का स्तवन करने वाले, कामनाओं की वर्षा करने वाले पुरुष यज्ञ के द्वार को खोलते हैं ।६। सात बन्धुओं के समान

सोम के स्थान को पूर्ण करने वाले सात होता यज्ञशाला में बैठते हैं।७। यज्ञ के नाभि रूप सोम को मैं अपनी नाभि में स्थित करता हूँ सूर्य में नेत्र के संयत होने के समान मैं कवि सोम को गुणवान बनाता हूँ।८। जो सोम इन्द्र के हृदय प्रवेश में रमता है उसे वे अपने नेत्रों द्वारा देखने में समर्थ है।६।　　　　　　　　　　　　　　　　(३५)

सूक्त ११

(ऋषि—असितः काश्यपो देवलो वा। देवता—पवमानः सोमः। छन्द—गायत्री)

उपास्मै गायता नरः पवमानायेन्दवे। अभि देवाँ इयक्षते।१
अभि ते मधुना पयो ऽथर्वाणो अशिश्रयुः। देवं देवाय देवयु।२।
स नः पवस्व शं गवे शं जनाय शमर्वते शं राजन्नोषधीभ्यः।३
बभ्रवे नु स्वतवसे ऽरुणाय दिविस्पृशे। सोमाय गाथमर्चत।४
हस्तच्युतेभिरद्रिभिः सुतं सोम पुनीतन। मधावा धावता मधु।
।५।२६

हे नेताओ! यह सोम देव-याग की कामना करता है, इसके प्रति आगमन करो।१। हे सोम! तुम्हारे देव कामना वाले रसको अथर्वाओं ने गौ दुग्ध में मिलाकर इन्द्र के लिए रखा है।२। हे सोम! हमारी गौओं, अश्वों, औषधियों और पुत्रों आदि के लिए सुख देने वाले होकर क्षरित होओ।३। हे स्तोताओ! तुम पीले, वरुण, स्वर्ग स्पर्शी सोम के लिए स्तुत करो।४। ऋत्विजो! तुम अभिषुत प्रस्तर से अभिषुत सोम को गोदुग्ध में मिश्रित करो।५।　　　　　　(३६)

नमसेदुप सीदत दध्नेदभि श्रीणीतन। इन्दुमिन्द्रे दधातन।६
अमित्रहा विचर्षणिः पवस्व सोम शं गवे। देवेभ्यो अनुकामकृत्।
इन्द्राय सोम पातवे मदाय परि षिच्यसे। मनश्चिन्मनसस्पतिः।८
पवमान सुवीर्यं रयिं सोम रिरीहि नः। इन्दविन्द्रेण नो युजा।९।३७

ऋत्विजो! सोम के पास जाकर नमस्कार करो और दधि मिश्रित कर इन्द्र के समक्ष रखो।६। हे सोम! तुम शत्रु का संहार करने वाले

हो । तुम देवताओं की इच्छा पूर्ण करते हो हमारी गौ के लिए सुख-पूर्वक क्षरित होओ ।७। हे सोम ! तुम मन को जानने वाले हो । तुम्हें इन्द्र के हर्ष के लिए पात्रों में सींचा जाता है ।८। हे सोम ! तुम इन्द्र को प्रसन्न करते हुए सुन्दर बल सम्पन्न धन प्रदान करो ।५। (३६)

सूक्त १२

(ऋषि—असितः, काश्यपो देवलो वा । देवता—पवमानः, सोमः । छन्द—गायत्री

सोमा असृग्रमिन्दवः सूता ऋतस्य सादने । इन्द्राय मधुमत्तमाः।१ अभि विप्रा अनूषत गावो वत्सं न मातरः । इन्द्रं सोमस्य पीतये ।२। मदच्युत् क्षेति सादने सिन्धोरूर्मा विपश्चित् । सोमो गौरी अधि श्रितः ।३। दिवो नाभा विचक्षणो ऽव्यो वारे महीयते । सोमो यः सुक्रतुः कविः ।४। यः सोमः कलशेष्वां अन्तः पवित्र आहितः । तमिन्दुः परि षस्वजे ।५।३८

यह अत्यन्त मधुर सोम यज्ञ मण्डप में इन्द्र के लिए पूर्ण किया जा रहा है। १। बछड़ों को देखकर गौओं के बोलने के समान, विद्वमज्जन सोम पीने के लिए इन्द्र से कहते हैं ।२। हर्ष प्रदायक सोम नदी की लहरों के और मेधावी सोम वाणी के आश्रित होते हैं ।३। यह सूक्ष्म दर्शक सुन्दर सोम अन्तरिक्ष के नाभिरूप भेड़ के बालों में प्रतिष्ठित होते हैं ।४। छन्ने में निहित सोम और कलश में रखे हुए सोम रूप अंशों में स्वयं प्रविष्ट होते हैं ।५। (३८)

प्र वाचमिन्दुरिष्यति समुद्रस्याधि विष्टपि । जिन्वन् कोशं मधुश्चुतम् ।६। नित्यस्तोयो वनस्पतिर्धीनामन्तः सबर्दुघः । हिन्वानो मानुषा युगा ।७। अभि प्रिया दिवस्पदा सोमो हिन्वानो अर्षन्ति । विप्रस्य धारया कविः ।८। आ पवमान धारय रयिं सहस्रवर्चसम् । अस्मे इन्दो स्वाभुवम् ।९।३९

मेघ को प्रसन्न करने वाले सोम अन्तरिक्ष स्थान रूप छन्ने में शब्द भरते हैं ।६। अमृत का दोहन करने वाले सोम मनुष्यों के कर्मों में एक दिन के लिए रहते हुए प्रसन्न होते हैं ।७। सोम अन्तरिक्ष से प्रेरित

होकर विद्वान द्वारा धारा रूप को प्राप्त होकर प्रिय स्थानों में गमन करते हैं ।८। हे सोम ! हमको अत्यन्त यशस्वी धनसे सम्पन्न घर प्रदान करो ।९।   (२६)

सूक्त १३

(ऋषि—असितः, काश्यपो देवलो वा। देवता—पवमानः सोमः। छन्द—गायत्री)

सोमः पुनानो अर्षति सहस्रधारो अत्यविः। वायोरिन्द्रस्य निष्कृतम् ।१। पवमानमवस्यवो विप्रमभि प्र गायत्। सुष्वाण देववीतये ।२। पवन्ते वाजसातये सोमाः सहस्रपाजसः। गृणाना देववीतये ।३। उत नो वाजसातये पावस्व बृहतीरिषः। द्युमदिन्दो सुवीर्यम् ।४। ते नः सहस्रिणं रयिं पवन्तामा सुवीर्यम्। सुवाना देवास इन्दवः ।५।१

असंख्य धाराओं वाले सोम छन्ने से निकालकर वायु और इन्द्र के पीने के लिए शुद्ध पात्र में गमन करते हैं ।१। हे रक्षा कामना वालो ! तुम देवताओं के पीने के लिए सोम की ओर जाओ ।२। दीर्घवान सोम यज्ञ को सिद्ध करने के लिए और अन्न की प्राप्ति के लिये संस्कृत होते हैं ।३। हे सोम ! हमको अन्न प्राप्त कराने के निमित्त सुन्दर बल देने वाली महिमामयी रस-धारा की वृष्टि करो ।४। यह अभिषुत सोम हमको सहस्रों धन और वीर्य प्रदान करें ।५।   (१)

अत्या हियाना न हेतृभिरसृग्रं वाजसातये। वि वारमव्यमाशवः ।६। वाश्रा अर्षन्तीन्दवोऽभि वत्सं न धेनवः। दधन्विरे गभस्त्योः ।७। जुष्ट इन्द्राय मत्सरः पवमान कनिक्रदत्। विश्वा अप द्विषो जहि ।८। अपघ्नन्तो अराव्णः पवमानाः स्वर्दृशः। योनावृतस्य सीदत ।९।२

जैसे रण-भूमि में जोड़ों को भेजा जाता है उसी प्रकार भेजे गये सोम छन्ने में से निकालकर अन्न की प्राप्ति के निमित्त गमन करते हैं ।६। बछड़ों को देखकर जैसे गौयें शब्द करती हुई जाती है वैसे ही पात्रों की ओर गमन करते हुए सोम भी शब्द करते है। उन सोम को ऋत्विज बाहु पर धारण करते ।७। इन्द्र के लिए यह सोम अत्यन्त प्रिय

है, यह उन्हें हर्ष देता है । हे सोम! तुम शब्द करते हुए सब वैरियों का संहार कर डालो ।८। हे सोम ! अदानियों के नष्ट करने वाले और प्राणियों के देखने वाले हो । तुम इस मण्डप में प्रतिष्ठित होओ ।९।

सूक्त १४

(ऋषि—असितः, काश्यपो देवलो वा । देवता—पवमानः सोमः । छन्द—गायत्री)

परि प्रासिष्यदत् कविः सिन्धोरूर्माबधि श्रितः । कारं विभ्रत् पुरुस्पृहम् ।१। गिरा यदी सबन्धवः पञ्च व्राता अपस्यवः । परिष्कृण्वन्ति धर्णसिम् ।२। आदस्य शुष्मिणो रसे विश्वे देवा अमत्सत । यदी गोभिर्वसायते ।३। निरिणानो वि धावति जहच्छर्याणि तान्वा । अत्रा सं जिघ्नते युवा ।४। नप्तीभिर्यो विवस्वतः शुभ्रो न मामृजे युवा । गाः कृण्वानो न निर्णिजम् ।५।३

इन सोमों के शब्द की अनेकों कामना करते हैं । यह सोम नदी के जलों में आश्रित रहने वाले हैं । यह शब्द करते हुए क्षरित हो रहे हैं ।१। जब पञ्चदेशीय मनुष्य कर्म करने की इच्छा से सोम को स्तुतियों से सजाते हैं तब सोम में गोदुग्ध मिश्रित करके सब देवता उससे हर्ष प्राप्त हैं ।२-३। छन्ने के छिद्रों से निकलते हुये सोम नीचे को दौड़ते हुए सखा इन्द्र के साथ सङ्गति करते हैं ।४। युवा और गमनशील अश्व को जैसे स्वच्छ करते हैं वैसीही अपने लिये गव्यसे मिश्रित करते हुए सोम उपासक की अंगुलियों द्वारा धोये जाते हैं ।५। (३)

अति श्रिती तिरश्चता गव्या जिगात्यण्व्या । वग्नुमियर्ति यं विदे ।६ अभि क्षिपः समग्मत मर्जयन्तीरिषस्पतिम् । पृष्ठा गृभ्णत वाजिनः ।७ परि दिव्यानि मर्मृशद् विश्वानि सोम पार्थिवा । वसूनि याह्यस्मयुः ।८।४

शोधित-सोम गव्य में मिश्रित होने के लिए दौड़ते हुये शब्द करते हैं। मैं उसी सोम को पाऊँगा ।६। शुद्ध करती हुई उङ्गलियाँ सोम से सङ्गति करती हुई बलवान् सोम के पृष्ठ भाग पर आरूढ़ होती हैं ।७।

हे सोम ! सब दिव्य और पार्थिव धनों को लेकर हमारी ओर आगमन करो ।८। (८)

सूक्त १५

(ऋषि-असितः काश्यपो देवलो वा । देवता पवमानः, सोमः । छन्द—गायत्री)

एष धिया यात्यण्व्या शूरो रथेभिराशुभिः । गच्छन्निन्द्रस्य निष्कृतम् ।१। एष पुरू धियायते बृहते देवतातये । यत्रामृतास आसते ।२। एष हितो वि नीयते ऽन्तः शुभ्रावत पथा । यदी तुञ्जन्ति भूर्णयः ।३। एष शृङ्गाणि दोधुवच्छिशीते यूथ्यो वृषा । नृम्णा दधान ओजसा ।४। एष रुक्मिभिरीयते वाजी शुभ्रेभिरंशुभिः । पतिः सिन्धूनां भवन् ।५। एष वसूनि पिब्दना परुषा ययिवाँ अति । अव शादेषु गच्छति ।६। एतं मृजन्ति मर्ज्यमुप द्रोणेष्वायवः । प्रचक्राणं महीरिषः ।७। एतमु त्यं दश क्षिपो मृजन्ति सप्त धीतयः । स्वायुधं मदिन्तमम् ।८।५

उङ्गलियों द्वारा शुद्ध होता हुआ सोम कर्म और जल से शीघ्र ही रथारूढ़ होता हुआ इन्द्र के साथ गमन करता है ।१। जिस यज्ञ स्थानमें देवगण निवास करते हैं उसी यज्ञ में सोम भी बहुत से कर्मों की कामना करता है ।२। हव्य में स्थापित यह सोम हव्य के मार्ग से ही जब आहूत किये जाते है तब अध्वर्यु भी इसे पाते हैं ।३। यह सो शिखरको कम्पित करते हैं । यह अपने ही बल से धनों के धर्त्ता हैं ।४। यह उज्ज्वल रस वाले सोम सभी प्रवाहित रसों के स्वामी होते हुए गमन करते हैं ।५। यह सोम आच्छादनकर्त्ता असुरो के पार जाते हुए उन्हें देखते हैं ।६। इन शोधित सोमों को द्रोण कलशों में निष्पन्न किया जा रहा है । यह सोम अधिक रस से सम्पन्न हैं ।७। दशों उँगलियों और सप्त ऋत्विज सुन्दर सोम को धोकर स्वच्छ कर रहे हैं ।८। (५)

सूक्त १६

(ऋषि-असितः काश्यपो देवलो वा । देवता-पवमानः, सोमः । छन्द—गायत्री)

प्र ते सोतार ओण्यो रसं मदाय घृष्वये । सर्गो न तक्त्येतशः

।१। क्रत्वा दक्षस्य रथ्यमपो वसानमन्धसा। गोषामण्वेषु सश्चिम ।२। अनप्तमप्सु दुष्टरं सोमं पवित्र आ सृज। पुनीहीन्द्राय पातवे ।३। प्र तुनानस्य चेतसा सोमः पवित्रे अर्षति। क्रत्वा सधस्थमासदत्।४। प्र त्वा नमोभिरिन्दव इन्द्र सोमा असृक्षत। महे भराय कारिणः ।५। पुनानो रूपे अव्यये विश्वा अर्षन्नभि श्रियः। शूरो न गोषु तिष्ठति ।६। दिवो न सानु पिप्युषी धारा सुतस्य वेधसः। वृथा। पवित्रे अर्षति ।७। त्वं सोम विपश्चितं तना पुनान आयुषु। अव्यो वारं वि धावसि ।८।३

हे सोम ! तुम आकाश पृथिवी के मध्य शत्रु को परास्त करने वाली शक्ति के लिये प्रकट किये जाकर अश्व के समान भेजे जाते हो ।१। जल को ढकने वाले, अन्नवाश्र और बलवान् सोमके साथ कर्ममें प्रवृत्त उँगलियों को सङ्गत करते हैं ।२। हे अभिषवकर्त्ता ! यह सोम अन्तरिक्ष में शत्रुओं को प्राप्त न होने वाला है। इसे इन्द्र के पीने के निमित्त छन्नेमें डालकर शुद्धकरो ।३। पवित्र सोम स्तुति द्वारा छन्नेमें गमन करते और द्रोण-कलश में निवास करते हैं।४। हे इन्द्र ! नमस्कार वाले स्तोता के द्वारा तेजस्वी हुआ सोम तुम्हें संग्राममें प्रवृत्त करनेके लिये प्राप्त होता है ।५। भेड़ के बालों में सम्पन्न सोम वीर के समान हो गौओं के लाभ वाले कम से लगा है ।६। जैसे अन्तरिक्ष से जल पृथिवी पर गिरता है, वैसे ही सोम की बल उत्पन्न करने वाली धारायें छन्नेमें गिरती हैं।७। हे सोम ! मनुष्यों में जो स्तुति करने वाला होता है उसी की तुम रक्षा करते हो। तुम वस्त्र में छन कर भेड़ के वालों में स्थित होते हो ।८।

(६)

सूक्त १७

(ऋषि—असितः काश्यपो देवलो वा। देवता—पवमान-, सोम।
छन्द—गायत्री)

प्र निम्नेनेव सिन्धवो घ्नन्तो वृत्राणि भूर्णयः। सोमा असृग्रमाशवः ।१। अभि सुवानास इन्दवो वृष्टयः पृथिवीमिव। इन्द्रं सोमासो अक्षरन् ।२। अत्यूर्मिर्मत्सरो मदः सोमः पवित्रे अर्षति।

विघ्नन् रक्षांसि देवयुः ।३। आ कलशेषु धावति पवित्रे परि षिच्यते । उक्थैर्यज्ञेषु वर्धते । । अति त्री सोम रोचना रोहन् न भ्राजसे दिवम् । इष्णन् त्सूर्यं न चोदयः ।५। अभि विप्रा अनूषत मूर्धन यज्ञस्य कारवः । दधानाश्चक्षसि प्रियम् ।६। तमु त्वा वाजिनं नरो धीभिर्विप्रा अवस्यवः । मृजन्ति देवतातये ।७।मधोर्धारामनु क्षर तीव्रः सधस्थमासदः । चारुर्ऋताय पीतये ।८।७

नदियों का जल जैसे निचले भू भागमें जाता है, उसी प्रकार शीघ्रगामी सोम कलश की ओर गमन करते हैं ।१। जैसे वर्षाका ल पृथिवी पर गिरता है, वैसे ही सम्पन्न सोम इन्द्र पर गिरते हैं ।२। अत्यन्त बढ़े हुए सोम असुरोंका संहार करते हुए देवताओं की कामना से छन्ने की ओर जाता हे ।३। कलश को प्राप्त होने के लिये सोम छन्ने में निष्पन्न होते हैं और उक्थों से बढ़ाये जाते हैं ।४। हे सोम ! तुम तीनों लोक पार करते हुए स्वय को प्रकाश देते और सूर्य को प्रेरित करते हो ।५। विद्वान् स्तोता सोम ! अभिषवकर्त्ता और सोम के भी प्रिय होकर स्तुति करते हैं ।६। हे सोम ! विद्वज्जन अन्न की कामना से कर्मके द्वारा तुम्हें संस्कारित करते हैं ।७। हे सोम ! तुम प्रवाहित होते हुए मधुर बनो और यज्ञ स्थान में होने के लिये प्रतिष्ठित होओ ।८। (७)

सूक्त १८

(ऋषि–असित, काश्यपो देवलो वा। देवता–पवमानः, सोमः । छन्द—गायत्री)

परि सुवानो गिरिष्ठाः पवित्रे सोमो अक्षाः । मदेषु सर्वधा असि ।१।त्वं विप्रस्त्वं कविर्मधु प्र जातमन्धसः मदेषु सर्वधा असि ।२।तव विश्वे सजोषसो देवासः पीतिमाशत । मदेषु सर्वधा असि ।३।आ यो विश्वानि वार्या वसूनि हस्तयोर्दधे । मदेषु सर्वधा असि ।४। य इमे रोदसी मही सं मातरेव दोहते । मदेषु सर्वधा असि ।५।परि यो रोदसी उभे सद्यो वाजेभिरर्षति । मदेषु सर्वधा असि ।६। स शुष्मी कलशे वा पुनानो अचिक्रदत् । मदेषु सर्वधा असि ।।७।८

यह सोम पाषाण पर अवस्थित हैं, यही छन्ने में क्षरित होते हैं। हे सोम ! तुम सब के धारण करने वाले हो।१। हे सोम ! तुम ज्ञानी हो। अन्न द्वारा उत्पन्न मधुर रस प्रदान करो,क्योंकि तुम सबके धारक और हर्षयुक्त हो।२। हे सोम ! सब देवता तुम्हें पीते हैं। हर्षोत्पन्न करने वाले पदार्थों में तुम्हीं सबके धारण करने वाले हो।३। ग्रहणीय धनोंको सोम स्तोता को प्राप्त कराते हैं हे सोम ! तुम सबके धारक करने वाले हो।४। हे सोम ! जैसे एक बालक को दो मातायें पालन करें, वैसे ही तुम द्यावा पृथिवी द्वारा पुष्ट होते हो।५। अन्न से सोम आकाश-पृथिवी को व्यापते हैं। हे सोम ! सब हर्ष प्रदायक पदार्थों में सबके धारण करने वाले हो।६। वे वीर्यवान् सोम निष्पन्न होते समय कलश में शब्दवान् हुए थे।७। (८)

सूक्त १६

(ऋषि—असितः काश्यपो देवलो वा। देवता—पवमानः सोमः। छन्द—गायत्री)

यत् सोम चित्रमुक्थ्यं दिव्य पार्थिवं वसु। तन्नः पुनान आ भर।१। युवं हि स्थः स्वर्पती इन्द्रश्च सोम गोपती। ईशाना पिप्यतं धियः।२। वृषा पुनान आयुषु स्तनयन्नधि बर्हिषि। हरिः सन् योनिमासदत्।३। अवावशन्त धीतयो वृषभस्याधि रेतसि। सूनोर्वत्सस्य मातरः।४। कुविद्वृषण्यन्तीभ्यः पुनानो गर्भमादधत्। याः शुक्रं दुहते पयः।५। उप शिक्षापतस्थुषो भियसमा धेहि शत्रुषु। पवमान विदा रयिम्।६। नि शत्रोः सोम वृष्ण्यं नि शुष्मं नि वयस्तिर। दूरे वा सतो अन्ति वा।।७।९

हे सोम ! पृथिवी के और आकाश के जितने धन हैं उन सबको तुम शुद्ध होने पर हमारे लिये प्राप्त कराओ।१। हे सोम! हमारे भाग्य को विस्तृत करो। तुम और इन्द्र दोनोंही गौ पालक और सबके ईश्वर हो।२२। निष्पन्न होने पर यह काम्यवर्षक सोम हरे रङ्ग के होते हुए विस्तृत कुश पर शब्द करते हुए बैठते हैं।३। सोम का माताके समान वसतीवारी आदि सोमके सारत्व को चाहती हैं।४। मिश्रित किये जाने के समय सोमकी कामना वाली वसतवरी को सोम गर्भ देते हैं और इन

जलों से दूध को दुहते हैं ।५। हे सोम ! हमारी जो कामना दूर दिखाई दे रही है उसे निकटस्थ करो । शत्रुओं का डर देते हुए उनके धन को जानने वाले होओ ।७। हे सोम ! तुम दूर या पास कहीं भी हों शत्रुओं के बल को वहीं से आकर नष्ट करो । उनके तेज को भी मिटा डालो ।७। (६)

सूक्त २०

(ऋषि–असितः काश्यपो देवलो वा । देवता–पवमानः सोमः । छन्द–गायत्री)

प्र कविर्देववीतये ऽव्यो वारेभिरर्षति । साह्वान् विश्वा अभि स्पृधः ।१। स हि ष्मा जरितृभ्य आ वाज गोमन्तमिन्वति । पवमानः सहस्रिणम् ।२ परि विस्वानि चेतसा मृशसे पवसे मती। स नः सोम श्रवो विदः ।३। अभ्यर्ष बृहद्यशो मघवद्भ्यो ध्रुवं रयिम् । इषं स्तोतृभ्य आ भर ।४। त्व राजेव सुव्रतोगिरः सोमा विवेशिथ । पुनानो वह्ने अद्भुत ।५। स वह्निरप्सु दुष्टरो मृज्यतानो गर्भस्त्योः । सोमश्चमूषु सीदति ।६। क्रीलुर्मखो न मंहयुपवित्रं सोम गच्छसि । दधत्स्तोत्रे सुवीर्यम् ।७।१०

भेड़ों के बालों के द्वारा यह सोम देवताओं के पीने के लिए गमन करते हैं । यह सब हिंसकों को मारते और शत्रुओंको पराजित करते हैं, ।१ । वहीं सोम स्तुति करने वाले को गौओं से सम्पन्न असीमित अन्न देते हैं ।२। हे सोम ! तुम स्वेच्छापूर्वक सब धनों के दाता हो, हमको भी अन्नादि धन दो । । हे सोम ! तुम महान् यश दो । स्तोताओं को अन्न और हविदाता को धन प्रदान करो ।३। हे सोम ! तुम शोभनकर्मा हो । निष्पन्न हुए तुम हमारी स्तुति की राजा के समान ग्रहण करो । तुम विचित्र गति वाले एवं वहन करने वाले हो ।५। सोम कठिनाई से मथित किये जाते हैं तब वे पात्र में पहुँचाते हैं । वही सोम अन्तरिक्ष में विद्यमान होते हैं ।६। हे सोम ! तुम देने की कामना करते हो । अतः स्तोता को श्रेष्ठ बल देकर छन्ने में क्षरित होते हैं ।७। (१७)

सूक्त २१

(ऋषि–असितः कश्यपो देवलो वा । देवता–पवमानः, सोमः ।
छन्द–गायत्री)

एते धावन्तीन्दवः सोमा इन्द्राय घृष्वयः । मत्सरासः स्वर्विदः ।१। प्रवृण्वन्तो अभियुजः सुष्वये वारिवोविदः । स्वयं स्तोत्रे वयस्कृतः ।२। वृथा क्रीलन्त इन्दवः सधस्थमभ्येकमित् । सिन्धोरूर्मा व्यक्षरन् ।३। एते विश्वानि वार्या पवमानास आशत । हिता न सप्तयो रथे ।४ आस्मिन् पिशङ्गमिन्दवो दधाता वेनमादिशे । यो अस्मभ्यमरावा ।५। ऋभुर्न रथ्यं नवं दधाता केतमादिशे । शुक्राः पवध्वमर्णसा ।६। एत उ त्ये अपीवशन् काष्ठां वाजिनो अक्रत । सतः प्रासाविषुर्मतिम् ।७।११

सोम हर्ष दायक और लोकों का पालन करने वाले हैं, वे इन्द्र की ओर गमन करते हैं ।१। सोम अभिषवके आश्रित होते हुए सबसे मिलते हैं । स्तोता को अन्न और यजमान को धन देते हैं ।२। बसतीवरी को प्राप्त होते हुए सोम द्रोण कलश में गिरकर एकत्र होते हैं ।३। रथ में जुड़े हुए घोड़े जैसे भारवाहक होते हैं, वैसे ही यह निष्पन्न हुये सोम सब धनों का वहन करते हैं ।४। हे सोम ! यजमान की विविध इच्छायें पूरी होने को धन दो, क्योंकि यह यजमान हम ब्राह्मणों को दान देने वाला है ।५। हे सोम ! ऋभुगण जैसे सारथि को चातुर्य देते हैं वैसे ही इस यजमान को बुद्धिदो और जलसे मिलकर उज्ज्वल होते हुए क्षरित होओ ।६। यह सोम यज्ञकाम्य हैं । यजमान की बुद्धि को प्रेरित करने वाले और निवासदाता हैं ।७। (११)

सूक्त २२

(ऋषि–असितः, काश्यपो देवलो वा । देवता–पवमानः सोमः ।
छन्द–गायत्री)

एते सोमास आशवो रथा इव प्र वाजिनः सर्गाः सृष्टा अहेषत ।१। एते वाता इवोरवः हर्जरवः पर्जन्यस्येव वृष्टयः । अग्नेरिव भ्रमा वृथा ।२। एते पूता विपश्चितः सोमासो दध्याशिरः । विपा ध्यानशुर्धियः ।३। एते मृष्टा अमर्त्याः ससृवांसो न शश्रमुः ।

इयक्षन्त: पथो रज। ।४। एते पृष्ठानि रोदसोर्विप्रयन्तो व्यानशु: । उतेदमुत्तमं रज: ।५। तन्तु तन्वानमुत्तममनु प्रवत आशत । उतेदमुत्तमाय्यम् ।६। त्वं सोम पणिभ्य आ वसु गव्यानि धारय: । ततं तन्तुमचिक्रद: ।७।१२।

रणभूमि की ओर रथ और घोड़े जिस प्रकार जाते हैं वैसे ही यह सोम छन्ने के पास पहुँचते हैं ।१। यह सोम वायु मेघ और अग्नि ज्वालाओं के समान सब में व्याप्त हो जाते हैं ।२। शोधित होने पर यह सोम गव्यसे मिश्रित होकर हममें रम जाते हैं ।३। यह सब सोम पवित्र एवं अमृतत्व से युक्त हैं । यह गमन करने ह थकते नहीं हैं, ।४। सभी सोम आकाश-पृथिवी की पीठ पर धूमते हुये स्वर्ग लोक को भी व्याप्त करते हैं ।५। यज्ञ की वृद्धि करने वाले श्रेष्ठ सोम को जल व्याप्त करता है । सोम से यज्ञ श्रेष्ठहो जाता है ।६। हे सोम ! तुम गौ रूप हितकारी धन को प्राणियोंसे ग्रहण करते हो । इस यज्ञकी वद्धि करने वाला शब्द करो ।७। (१२)

सूक्त २३

(ऋषि—असित: कश्यपो देवलो वा । देवता—पवमान: सोम: । छन्द—गायत्री)

सोमा असृग्रमाशवो मधोर्मदस्य धारया । अभि विश्वानि काव्या ।१। अनु प्रत्नास आयव: पदं नवीयो अक्रमु: । रुचे जनन्त सर्यम ।२। आ पवमान नो भराऽर्यो अदाशुषो गयम । कृधि प्रजावतीरिष: ।३। अभि सोमासा आयव: पवन्ते मद्यं मदम् । अभि कोशं मधुश्चुतम ।४। सोमो अर्षति धर्णसिर्दधान इन्द्रियं रसाम । सुवीरो अभिशस्तिपा: ।५। इन्द्राय सोम पवसे देवेभ्य: सधमाद्य: । इन्दो वाजं सिषाससि।६। अस्य पीत्वा मदानामिन्द्रो वृत्राण्यप्रति । जघान जघनच्च नु ।७।१३

यह द्रुतगामी सोम स्तोत्र के समय निष्पन्न किये जाते हैं ।१। प्राचीन सोम नवीन होतें सूर्य को प्रकाशमान बनाते हैं ।२। हे सोम ! तुम निष्पन्न होकर अदानशील का घर हमें प्राप्त कराओ और अपत्य-

युक्त धन प्रदान करो ।३।यह सोम अपने हर्षदायक और मधुस्त्रावी रसों को सींचते है ।४। यह सोम संसार के धारण करने वाले हैं। इन्द्रियोंको पुष्ट करने वाले रस को धारण करते हुए हिंसा से रक्षा करते हुये वीर कर्म से युक्त होते हैं ।५। हे सोम ! तुम यज्ञ के पात्र हो। इन्द्रादि देवताओं के लिये क्षरित होते और हमें अन्न देना चाहतेहो ।६। इन्द्र अलेय हैं। उन्होंने इस अत्यन्त हर्षदायक सोम को पीकर शत्रुओं का वध किया और अब भी उसी प्रकार करते हैं ।७। (१३)

सूक्त २४

(ऋषि—असितः काश्यवो देवलो वा। देवता—पवमानः सोमः। छन्द—गायत्री)

प्र सोमासो अधन्विषुः पवमानास इन्दवः। श्रीणाना अप्सु मृञ्जत ।१। अभि गावो अधन्विषुरापो न प्रवता यतीः। पुनाना इन्द्रमाशत् ।२। प्र पवमान धन्वसि सोमेन्द्राय पातवे। नृभिर्यतो वि नीयसे ।३। त्वं सोम नृमादनः पवस्व चर्षणीसहे। सस्निर्यो अनुनाद्यः ।४ इन्द्रो यदद्रिभिः सुतः पवित्रं परिधावसि। अरमिन्द्रस्य धाम्ने ।५। पवस्व वृत्रहन्तमोक्थेभिरनुमाद्यः। शुचिः पावको अद्भुतः ।६। शुचिः पावक उच्यते सोमः सुतस्य मध्वः। देवावीरघशंसहा ।७।१४

यह सोम दीप्त होकर दुग्धादिमें मिश्रित होते है और जलमें शोधे जाते है ।१। जल जैसे नीचेकी ओर बहता है, वैसेही सोम इन्द्रकी ओर वाहित होते हैं ।२। हे सोम ! निष्पन्न करने पर मनुष्य तुम्हें भेजते हैं, यही तुम्हें इन्द्र के पीने के लिये पहुँचते हो ।३। हे सोम ! तुम शत्रुओंके धर्षक इन्द्रके लिए गिरो। तुम मनुष्योंके लिये हर्ष करने वाले हो ।४। हे सोम ! तुम जब पत्थर से कूटे जाकर छन्ने की ओर गमन करते हो, तब इन्द्र के लिए यथेष्ट होते हों ।५। हे सोम ! तुम इन्द्र के साथ वृत्र-हन्ता हो। तुम उक्थों द्वारा स्तु होतेहुए अद्भुत गुण वाले एवं शोधक बनते हो ।६। सोमरस शोधक बनाये जाते हैं। वे शत्रुओंका नाश करने वाले और देवताओं के हर्षित करने वाले हैं ।७। (१४)

सूक्त २५ (द्वितीय अनुवाक)

(ऋषि–दृहडच्युतः आगस्त्यः । देवता–पवमानः, सोमः । छन्द–गायत्री)

पवस्व दक्षसाधनो देवेभ्यः पीतये हरे । मरुद्भ्यो वायवे मदः ।१। पवमान धिया हितो ऽभि योनिं कनिक्रदत् । धर्मणा वायुमा विश ।२। स देवै शोभते वृषा कविर्योनावधि प्रियः । देववीतमः ।३। विश्वा रूपाण्याविशन् पुनानो याति हर्यतः । यत्रामृतास आसते ।४। अरुषो जनयन् गिरः सोमः पवत आयुषक् । इन्द्रं गच्छन् कविक्रतुः ।५। आ पवस्व मदिन्तम पवित्रं धारया कवे । अर्कस्य योनिमासदम् ।६।१५

हे सोम ! तुम पापनाशक एवं बल साधकहो । तुम मरुद्गण, वायु और देवताओंके लिए सिंचित होंओ । । हे सोम ! तुम शब्द करते हुए अपने स्थान में पहुंचे और वायु के सङ्गति करो ।२। यह सोम अभीष्ट-वर्षी, प्रिय उज्ज्वल वृत्रहन्ता होते हुये देवताओं की कामना वाले होकर शुद्ध होते हैं ।३। यह निष्पन्न स्वच्छ सोम देवताओं के स्थान की ओर गमन करते हैं ।४। सुन्दर सोम शब्द करते हुए गिरते और इन्द्र की प्राप्त होकर मेधावी बन जाते हैं । । सबसे हर्ष प्रदान करने वाले छन्ने को लाँघते हुए धारा रूप होकर इन्द्र से मिलते हैं ।६। (१५)

सूक्त २६

ऋषि—इध्मवाहो दार्ढच्युतः । देवता—पवमान सोमः । छन्द—गायत्री)

तममृक्षन्त वाजिनमुपस्थे अदितेरधि । विप्रासो अण्व्या धिया ।१। तं गावो अभ्यनूषत सहस्रधारमक्षितम् । इन्दुं धर्तारमा दिवः ।२। तं वेधां मेधयाह्यन् पवमानमधि द्यवि । धर्णसिं भूरि-धायसम् ।३। तमह्यन् भुरिजोर्धिया संवसानं विवस्वतः । पतिं वाचो अदाभ्यम् ।४। तं सानवधि जामयो हरिं हिन्वन्त्यद्रिभिः । हर्यतं भूरिचक्षसम् ।५। तं त्वा हिन्वन्ति वेधसः पवमान गिरावृधम् । इन्द्रविन्द्राय मत्सरम् ।६।१६

वेगवान् सोम विद्वानों द्वारा उँगलियों और स्तुतियों द्वारा शोधा

जाता है ।१। बहुत धाराओं वाले सोम को स्वर्ग का धारण कर्त्ता मानती हुई स्तुतियां उनको पूजती हैं ।२। सोम सबके स्वामी, असंख्यकर्मा और सबके धारक हैं। अनके निष्पन्न होनेपर विद्वज्जन स्वर्ग की ओर भेजते हैं ।३। पात्र में प्रतिष्ठित सोम स्तुतियों के स्वामी और अहिंस्य हैं, इन्हें ऋत्विग्गण दशों उँगलियों द्वारा निष्पन्न करते हैं ।४। जिन सोमों को उंगलियाँ ऊपर की ओर प्रेरित करती हैं, वे सोम बहुतों के देखने वाले और रमणीक हैं ।५। हे सोम ! तुम स्तुत, बढ़े हुये और हर्षप्रदान करने वाले हो, ऋत्विग्गण तुम्हें इन्द्र की ओर प्रेरित करते हैं ।६। (१६)

सूक्त २७

(ऋषि—नृमेधः । देवता—पवमानः, सोमः । छन्द—गायत्री)

एष कविरभिष्टुतः पवित्रे अधि तोशते। पुनानो घ्नन्नप स्रिधः ।१। एष इन्द्राय वायवे स्वर्जित् परि षिच्यते। पवित्रे दक्ष-साधनः ।२। एष नृभिर्वि नीयते दिवो मूर्धा वृषा सुतः। सोमो वनेषु विश्ववित् ।३। एष गव्युरचिक्रदत् पवमानो हिरण्ययुः। इन्दुः सत्राजिदस्तृतः।४। एष सूर्येण हासते पवमानो अधि द्यवि। पवित्रे मत्सरो मदः ।५। एष शुष्म्यसिष्यददन्तरिक्षे वृषा हरिः। पुनान इन्दुरिन्द्रमा ।६।३७

यह सोम सब ओर से प्रशंसित हैं। यह छन्ने का उल्लंघन करते हैं। निष्पन्न होने पर यह शत्रुनाशक होजाते हैं ।१। यह सोम अत्यन्त बल देने वाले और विजयशील हैं। इन्हें इन्द्र और वायु के लिये छन्ने में डाला जाता है ।२। यह सोम नाशक के मूर्धा है। मनुष्य इन्हें विभिन्न प्रकार से रखते है। यह सुन्दर जात्रा में रखे हुए सोम सबके जानने वाले और संस्कृत है ।३। निष्पन्न होने पर यह जो शब्द करता है तो यह हमारे लिए गौ और सुवर्ण की कामता करते हैं यह सब शत्रुओं के जीतने वाले दीप्त एवं हिंसा से शून्य हैं ।४। यह हर्षप्रदायक सोम शुद्ध करने वाले हैं पवित्र सूर्य लोक में सूर्य द्वारा छोड़े जाते हैं ।५। यह सोम छन्ना रूप अन्तरिक्ष में गमन करते हुए इन्द्र को प्राप्त

होते हैं। यह हरे वर्ण वाले अभीष्टवर्षक, शोधक और उज्ज्वल है।६। (१७)

सूक्त २८

(ऋषि–प्रियमेधः। देवता—पवमानः सोमः। छन्द–गायत्री)

एष वाजी हितो नृभिर्विश्वविन्मनसस्पतिः। अव्यो वारं वि धावति।१। एष पवित्रे अक्षरत् सोमो देवेभ्यः सुतः विश्वा धामान्याविशन्।२। एष देवः शुभायतेऽधि योनावमर्त्य। वृत्रहा देववीतमः।३। एष वृषा कनिक्रदद्दशभिर्जामिभिर्यतः। अभि द्रोणानि धावति।४। एष सूर्यमरोचयत् पवमानो विचर्षणिः। विश्वा धामानि विश्ववित्।५। एष शुष्म्यदाभ्यः सोमः पुनानो अर्षति। देवावीरघशंसहा।६।१८

पात्र स्थित सोम सब के ज्ञाता, सबके स्वामी और गमनशील होते हुये भेड़ के बालों पर जाते हैं।१। देवताओं के लिए निष्पन्न होने वाले सोम देव-शरीर में प्रविष्ट होने के लिये छन्ने में गमन करते हैं।२। यह सोम देवताओंकी कामना करते हैं और वृत्रहन्ता होते हुये अपने स्थान में प्रतिष्ठित है।३। यह अभीष्टवर्षक उंगलियों से निष्पन्न सोम द्रोण-कलश की ओर गमन करते है।४। सब देखने वाले तेजस्वी सोम सूर्य आदि सब तेजों को शुद्ध करते हैं।५। यह सोम हिंसा के अयोग्य बलवान् पापियों को नष्ट करने वाले देवताओं के पोषक है।६। (१८)

सूक्त २९

(ऋषि–नृमेधः। देवता–पवमानः, सोम। छंद–गायत्री)

प्रास्य धारा अक्षरन् वृष्णः सुतस्यौजसा। देवाँ अनु प्रभूषतः।१। सप्तिं मृजन्ति वेधसो गृणन्तः कारवः गिरा। ज्योतिर्जज्ञान-मुक्थ्यम्।२। सुषहा सोम तानि ते पुनानाय प्रभूवसो वर्धा समुद्र-मुक्थ्यम्।३। विश्वा वसूनि संजयन् पवस्व सोम धारया। इनु द्वेषांसि सध्र्यक्।४। रक्षा सु नो अररुषः स्वनात् समस्य कस्य चित्। निदो यत्र मुमुच्महे।५। एन्दो पार्थिवं रयिं दिव्यं पवस्व

धारया । द्यु मन्तं शुष्ममा भर ।६।१९

यह निष्पन्न सोम वर्षक है । देवताओंको प्रभावित करने वाले यह सोम धारा रूप से गिरते हैं ।१। हे स्तोता ! कर्मवान् अध्वर्यु इस तेजस्वी सोम को संस्कृत करते है ।२। हे ऐश्वर्यवान् सोम ! निष्पन्नकाल में तुम्हारे सुन्दर तेज प्रवृद्ध होते हैं, अतः जल जैसे समुद्रको पूर्ण करता है वैसे ही तुम इस द्रोण-कलश को पूर्ण करो ।३। हे सोम ! सब धनोंको वश में करते हुए धारा रूप से क्षरित होओ सब शत्रुओं को दूर करो ।४। हे सोम ! अदानशील व्यक्तियों और निन्दा करने वालों से हमें बचाओ ।५। हे सोम ! धारा रूपसे गिरते हुए तुम पार्थिव और स्वर्गीय धनों के सहित यशस्वी बल को लेकर आओ ।६। (१९)

सूक्त ३०

(ऋषि—बिन्दुः । देवता—पवमानः सोमः । छंद—गायत्री)

प्र धारा अस्य शुष्मिणो वृथा पवित्रे अक्षरन् । पुनानो वाचमिष्यति ।१। इन्दुर्हियानः सोतृभिर्मृज्यमानः कनिक्रदत् । इयति वग्नुमिन्द्रियम् ।२। आ नः शुष्मं नृषाह्यं वीरवन्तं पुरुस्पृहम् । पवस्व सोम धारया ।३। प्र सोमो अति धारया पवमानो असिष्यदत् । अभि द्रोणान्यासदम् ।४। अप्सु त्वा मधुमत्तमं हरिं हिन्वन्त्यद्रिभिः । इन्दविन्द्राय पीतये ।५। सुनोता मधुमत्तमं सोममिन्द्राय वज्रिणे । चारुं शर्धाय मत्सरम् ।६।२०

सोम की धाराएँ छंने में से निकलती हुई शुद्ध होती हैं उस समय वे शब्द करती है ।१। अभिषव करने वालोंके द्वारा शुद्ध होते हुए बलवान् सोम इन्द्रात्मक शब्द करतेहैं ।२। हे सोम! तुम धारा बनकर गिरो और मनुष्यों को काम्य बल और वीरों से युक्त धन दो ।३। शुद्ध किये जाये हुये यह सोम धारा बनकर छंने को लाँघते हुए कलश को प्राप्त होते है ।४। हे सोम ! तुम हरे रङ्ग और जलों में से अधिक मधुर हो। तुम्हें इन्द्र के पानार्थ पाषाण से मर्दित करते हैं ।५। हे ऋत्विजो ! तुम इस बलकारी और रम्य सोम को इन्द्र के पीने के निमित्त निष्पन्न करो ।६।

(२०)

सूक्त ३१

(ऋषि-गौतमः, । देवता-पवमानः सोमः । छंद-गायत्री)

प्र सोमासः स्वाध्यः पवमानासो अक्रमुः । रयिं कृण्वन्ति चेतनम् ।१। दिवस्पृथिव्या अधि भवेन्दो द्युम्नवर्धनः । भवा वाजानां पतिः ।२। तुभ्यं वाता अभिप्रियस्तुभ्यमर्षन्ति सिन्धवः । सोम वर्धन्ति ते महः ।३। आ प्यायस्व समेतु ते विश्वतः सोम वृष्ण्यम् । मवा वाजस्य सगथे ।४। तुभ्यं गावो घृतं पयो बभ्रो दुदुह्रे अक्षितम् । वर्षिष्ठे अधि सानवि ।५। स्वायुधस्य ते सतो भुवनस्य पते वयम् । इन्दो सखित्वमुश्मसि ।६।२१

यह सुसंस्कृत होते हुए सोम श्रेष्ठकर्मा हैं । यह गमन करते हुए हमको धन प्रदायक हैं ।१। अन्नाधिपति सोम ! तुम आकाश पृथिवी को प्रकाशित करने वाले धन को बढ़ाओ ।२। हे सोम ! वायु तुम्हें तृप्त करते हैं. नदियाँ तुम्हारी ओर गमन करती हुए गुणवान् बनातीहैं ।३। हे सोम ! तुम वायु और जल से बढ़ो । तुम्हें सब ओर से बल प्राप्त हो । तुम युद्धक्षेत्र में अन्नों को जीतो । हे सोम ! गौयें तुम्हारे लिए कभी क्षय न होने वाला दूध और घृत देती हैं तुम ऊँचे स्थानों पर रहते हो ।५। हे लोकपालक सोम ! हम तुम्हारी मित्रता चाहते हैं क्योंकि तुम्हारे आयुध श्रेष्ठ हैं ।६। (२१)

सूक्त ३२

(ऋषि-श्यावाश्व । देवता-पवमानः, सोमः छंद-गायत्री)

प्र सोमासो मदच्युतः श्रवसे नो मघोनः । सुता विदथे अक्रमुः ।१। आदीं त्रितस्य योषणो हरिं हिन्वन्त्यद्रिभिः । इन्दुमिन्द्राय पीतये ।२। आदीं हंसो यथा गणं विश्वस्य वीवशन्मयिम् । अत्यो न गोभिरज्यते ।३। उभे सोमवचाकशन् मृगो न तक्तो अर्षसि । सीदन्नृतस्य योनिमा ।४। अभि गावो अनूषत योषा जारमिव

प्रियम् । अगन्नाजिं यथा हितम् ।५। अस्मे धेहि द्यु मद्यशो मघव-द्भ्यश्च मह्यं च। सनिं मेधामुत श्रवः ।६।२२

हर्ष को सींचने वाले यह सोम हविदाता के यज्ञ में निष्पन्न होकर अन्न के लिए गमन करते हैं ।१। त्रित ऋषि की उँगलियाँ इन्द्र के पीने के लिए हरे रङ्ग वाले सोमको पाषाण से निकलती है ।२। हंस के जल में प्रविष्ट होने के समान सब सोम स्तुति करने वाले के मनमें रहते हैं। यह सोम घृतादि से चिकने होते हैं ।३। हे सोम तुम यज्ञ मण्डप में आश्रित होते हुए मृग के समान आकाश-पृथिवी को देखने वाले होते हो ।४। स्त्री जैसे पुरुष की स्तुति करती है वैसे ही सोम ! तुम अपने हित के लिए लक्ष्य पर पहुँचते हो ।५। हे सोम ! मुझ हबियुक्त स्तोता को बुद्धि, बल, धन, अन्न और यश प्रदान करो ।६। (२२)

सूक्त ३३

(ऋषि—त्रितः । देवता—पवमानः, सोमः । छन्द—गायत्री)

प्र सोमासो विपश्चितो ऽपां न यन्त्यूर्मयः । वनानि महिषा इव ।१। अभि द्रोणानि बभ्रवः शुक्रा ऋतस्य धारया । वाज गोम न्तमक्षरन् ।२। सुता इन्द्राय वायवे वरुणाय मरुद्भ्यः । सोमा अर्षन्त विष्णवे ।३। तिस्रो वाच उदीरते गावो मिमन्ति धेनवः । हरिरेति कनिक्रदत्।४। आभ ब्रह्मीरनूषत यह्वीॠतस्य मातरः। समृ ज्यन्ते दिवः शिशुम् ।५। रायः समुद्रांश्चतुरो ऽस्मभ्यं सोम विश्वतः । आ पवस्व सहस्रिणः ।६।२३

जल की लहरों के समान सोम पात्रों में गमन करते हैं जैसे वृद्ध हरिण वन में प्रविष्ट होते हैं, वैसे ही सोम प्रवेश करते हैं ।१। वे सोम गौओं से युक्त अन्न देते हुए धारा बनकर कलश मे गिरते हैं ।२। इन्द्र, वायु, वरुण, विष्णु और मरुतोंको ओर यह निष्पन्न सोम जाते हैं ।३। तीन स्तुतियाँ प्रकट होती हैं, दुग्ध दुहने के लिए गौयें शब्दवती हुई हैं और यह हरे रङ्ग के सोम शब्द करते हुए कलश में जाते हैं ।४। यज्ञ की माता रूपिणी स्तुतिया स्तोताओं द्वारा उच्चारित की जा रही

हैं उनके द्वारा स्वर्ग लोकके शिशु (सूर्य) के समान सोम दीप्त किए जा रहे हैं ।५। हे सोम ! धनों से सम्पन्न हजारों समुद्रो के स्वामित्व की दिशाओंसे लेकर हमारे पास आगमन करो और हमको अपरिमित कामनायें प्राप्त कराओ ।६। (२३)

सूक्त ३४

(ऋषि—त्रितः देवता—पवमानः सोमः । छन्द–गायत्री)

प्र सुवानो धारया तनेन्दुर्हिन्वानो अर्षति । रुजद्दलहा व्योजसा ।१। सुत इन्द्राय वायवे वरुणाय मरुद्भ्यः । सोमो अर्षति विष्णवे ।२। वृषाण वृषभिर्यतं सुन्वन्ति सोममद्रिभिः । दुहन्ति शक्मना पयः ।३। भुवत् त्रितस्य मर्ज्यो भुवदिन्द्राय मत्सरः । सं रूपैरज्यते हरिः ।४। अभीमृतस्त विष्टपं दुहते पृश्निमातरः । चारु प्रियतमं हविः।५। समेनमह्रुता इमा गिरो अर्षन्ति सस्रुतः। णेनूर्वाश्रो अवीवशत् ।६।२४।

निष्पन्न होने के पश्चात् प्रेरित सोम छन्ने में गिरते हैं और शत्रुओं के दृढ़ नगरो को भी तोड़ डालते हैं ।१। इन्द्र, वरुण, वायु, विष्णु और मरुतों के सामने यह निष्पन्न सोम गमन करते हैं ।२। पाषाण के द्वारा रस को सींचने वाले इस सोम को अध्वर्यु गण निष्पन्न करते हैं । इस प्रकार वे अपने कर्म द्वारा सोम रूप दूध का दोहन करते हैं ।३। त्रित ऋषि द्वारा लाया गया यह सोम हरे रङ्ग का है । इन्द्र के पीने के लिए यह शुद्ध किया जा रहा है ।४। यज्ञ के आश्रय रूप श्रेष्ठ सोम को पृश्नि पुत्र मरुद्गण अपने बल से दुहते हैं ।५। सुन्दर स्तुतियां शब्दवती होती हुई सोममें सङ्गति करती है और शब्द करते हुए सोम भी उन स्तुतियों को चाहते हैं ।६। (२४)

सूक्त ३५

(ऋषि-प्रभुवसुः । देवता–पवमानः, सोमः । छन्द–गायत्री)

आ नः पवस्व धारया पवमान रयिं पृथुम् । यया

ज्योतिर्विदासि नः ।१। इन्दो समुद्रमीखय पवस्य विश्वमेजय । रायो धर्ता न ओजसा ।२। त्वया वीरेण वीरवो ऽभि ष्याम पृतन्यतः । क्षरा णो अभि वार्यम् ।३। प्र वाजमिन्दुरिष्यति सिषासन् वाजसा ऋषिः । व्रता विदान आयुधा ।४। तं गीर्भिर्वाचमीखयं पुनानं वासयामसि । सोमं जनस्य गोपतिम् ।५। विश्वो यस्य व्रते जनो दाधार धर्मण- स्पतेः । पुनास्य प्रभूवसोः ।६।२५

हे सोम ! तुम हमारे चारों ओर धारा रूप से गिरो और हमको यज्ञ से युक्त धन प्रदान करो ।१। हे सोम ! तुम शत्रुओं को कम्पित करने वाले और जलों को प्रेरित करने वालेहो । तुम अपने बलसे हमारे लिए धनोंके धारण करने वाले बनो ।२। हे सोम ! युद्धोद्यत शत्रुओं को हम तुम्हारे बलसे पराभूत करेंगे । तुम हमारे लिए ग्रहणीय धन प्रेरित करो ।३। अन्न, देने वाले, कर्म के ज्ञाता, सबके दृष्टा सोम यजमानके आश्रित होते हुए अन्न प्रेरण करते हैं ।४। मैं उन सोमों की स्तोत्रों द्वारा स्तुति करता हूँ । वे सोम गौओं का पालन करने वाले और स्तुति की परवा करने वाले हैं । हम उसी सोम के आश्रित रहेंगे ।५। यह सोम कर्मों के स्वामी और पवित्र धन वाले हैं । हम उनके अभिषव-कर्म की कामना करते हैं ।६। (२५)

सूक्त ३६

(ऋषि-प्रभुवसुः । देवता—पवमानः सोमः । छन्द—गायत्री)

असर्जि रथ्यो यथा पवित्रे चम्वोः सुतः । कार्ष्मन् वाजी न्यक्रमीत् ।१। स वह्निः सोम जागृविः पवस्व देववीरति । अभि कोशं मधुश्चुतम ।२। स नो ज्योतीषि पूर्व्य पवमान वि रोचय । क्रत्वे दक्षाय नो हिनु । । शुम्भमान ऋतायुभिर्मृज्यमानो गभस्त्योः । पवते वारे अव्यये ।४। स विश्वा दाशुषे वसु सोमो दिव्यानि पार्थिवा । पवतामान्तरिक्ष्या ।५। आ दिवस्पृष्ठमश्वयुर्गव्ययुः सोम रोहसि । वीरयुः शवसस्पते ।६।२६

छन्ने में निष्पन्न हुए सोम रथ में योजित अश्वों के समान दोनों स्रुकों से युक्त होते हुए कर्म से घूमते हैं ।१। हे सोम ! तुम देवताओं

की कामना वाले चैतन्य और वाहक हो । तुम छन्ने को पार करते हुए गिरो ।२। हे सोम ! तुम हमारे लिए स्वर्गादि लोकोंको खोलो और हमें यज्ञादि कर्मो की प्रेरणा दो ।३। यज्ञ की कामना वाले ऋत्विजों द्वारा सुसंस्कृत सोम भेड़ के बालों के छन्ने में शोधे जाते हैं ।४। यह निष्पन्न सोम हवि देने वाले यजमान को पृथिवी आकाश और अन्तरिक्ष के सब धन प्रदान करे । । हे सोम ! स्तुति करने वालों को तुम गौ,अश्व और वीर पुत्र देने की इच्छा करते हुए स्वर्ग की पीठ पर आरूढ़ होओ ।६। (२६)

सूक्त ३७

(ऋषि–रहुगणः । देवता–पवमानः सोमः । छन्द–गायत्री)

स सुतः पीतये वृषाः सोमः पवित्रे अर्षति । विघ्नन् रक्षांसि देवयुः ।१। स पवित्रे विचक्षणो हरिरर्षति धर्णसिः । अभि योंनि कनिक्रदत् ।२। स वाजी रोचना दिवः पवमानो वि धावति । रक्षोहा वारमव्ययम् ।३। स श्रितस्याधि सानवि पवमानो अरोचयत् । जामिभिः सूर्यं सह ।४। स वृत्रहा वृषा सुतो वरिवोविददाभ्यः । सोमो वाजमिवासरत् ।५। स देवः कविनेषितो ऽभि द्रोणानि धावति । इन्दुरिन्द्राय मंहना ।६ २७

इन्द्र आदि देवताओं के पीने के लिए यह सोम अभीष्ट-वर्षक देव-काम्य और असुरहन्ता होते हुए छन्नेमें गिरकर निष्पन्न होतेहैं ।१। सर्व दृष्टा सोम सबके धारक होते हुए छन्ने में गिरते हैं । फिर वह हरे रंग वाले सोम शब्द करते हुए द्रोण-कलश में क्षरित होते हैं ।२। यह क्षरण शील सोम स्वर्ग के प्रदायक बनते हुए मेषलोम निर्मित्त छन्ने को पार कर गिरते हैं ।३। त्रित ऋषि के श्रेष्ठ यज्ञ में पवित्र होते हुए उन सोमों ने अपने महान् तेजों द्वारा सूर्य को ज्योतिर्मान किया ।४। रणभूमि की ओर गमन करते हुए अश्व के समान वृत्रनाशक अहिंसनीय, निष्पन्न और कामनाओं के देने वाले द्रोण-कलश में प्रविष्ट होते हैं ।५। वे सोम विद्वानों द्वारा प्रेरित एवं महान् है । वे इन्द्र की कामना करते हुए द्रोण-कलश में प्रविष्ट होते हैं ।६। (२७)

सूक्त ३८

(ऋषि–रहूगणः । देवता–पवमानः, सोमः । छन्द–गायत्री)

एष उ स्य वृषा रथो ऽव्यो वारेभिरर्षति । गच्छन् वाज सहस्रिणम् ।१। एतं त्रितस्य योषणो हरिं हिन्वन्त्यद्रिभिः । इन्दुमिन्द्राय पीतये ।२। एतं त्यं हरितो दश मर्मृज्यन्ते अपस्युवः । याभिर्मदाय शुम्भते ।३। एष स्य मानुषीष्वा श्येनो न विक्षु सीदति । गच्छञ्जारो न योषितम् ।४। एष स्य मद्यो रसो ऽव चष्टे दिवः शिशुः । य इन्दुर्वारमाविशत् ।५। एष स्य पीतये सुतो हरिरर्षति धर्णसिः । क्रन्दन् योनिमभि प्रियम् ।६।२८

यह सोम यजमान की अपरिमित अन्न वस्त्र प्रदान करने के लिए कामनाप्रद होते हुए अन्त्र वस्क्षके छन्ने को लाँघकर द्रोण-कलश में गमन करते हैं ।१। त्रित ऋषि की उङ्गलियों से यह हरे रङ्ग के सोम इन्द्र के पीने के लिए पाषाण द्वारा मर्दित होते हैं ।२। दश उङ्गलियाँ इन सोमों को संस्कृत करती हैं । इन्द्र के लिये यह सोम शोधे जाते हैं ।३। मनुष्यों में यह सोम बाज के समान बैठते हैं । जैसे पति पत्नी के पास जाता है, वैसे ही यह सोम कलश में गमन करते हैं ।४। सोम के हर्षप्रदायक रस सब पदार्थों के दृष्टा हैं । स्वर्ग के पुत्र रूप सोम छन्ने से गिरते हैं ।५। हरे रङ्ग के और सबके धारणकर्ता सोम पीने के लिए निष्पन्न होते हुये द्रोणकलश में गिरते हैं ।६। (२८)

सूक्त ३९

(ऋषि–बृहन्मतिः । देवता–यजमानः, सोमः । छन्द–गायत्री)

आशुरर्ष बृहन्मते परि प्रियेण धाम्ना । यत्र देवा इति ब्रवन् परिष्कृण्वन्ननिष्कृतं जनाय यातयन्निषः । वृष्टिं दिवः परि स्रव ।२। सुत एति पवित्र आ त्विषिं दधान ओजसा । विचक्षाणो विरोचयन् ।३। अयं स यो दिवस्परि रघुयामा पवित्र आ । सिन्धोरूर्मा व्यक्षरत् ।४। आविवासन् परावतो अथो अर्वावतः सुतः । इन्द्राय सिच्यते मधु ।५। समीचीना अनूषत हरिं हिन्वन्त्यद्रिभिः । योनावृतस्य सीदत ।६।१९

यह सोम कर रहे हैं कि जहां देवगण हैं उसी दिशा में हम गमन करते हैं। हे सोम ! तुम शीघ्र ही देवताओं के शरीर में रमण करने के लिए जाओ ।१। हे सोम! सबको शुद्ध करते हुये तुम यज्ञकर्त्ता को अन्न-रूप वृष्टि प्रदान करो ।२। तेजस्वी होते हुए यह सोम पदार्थों को देखते और शीघ्र ही छन्ने में क्षरित होते हैं ।३। जल की तरगों के समान यह सोम छन्ने द्वारा छन कर गिरते और स्वर्ग की ओर गमन करने की कामना करते हैं ।४। यह निष्पन्न सोम दूर या पास में स्थित इन्द्र के लिए मधुर रस सीचते हैं ।५। एकत्र हुए स्तोता हरे वर्ण वाले सोम को पाषाण से कूटते हुये स्तुति करते हैं । इसलिए हे देवताओं ! तुम इस यज्ञ में प्रतिष्ठित होओ ।६। (२९)

सूक्त ४०

(ऋषि—बृहन्मतिः । देवता—पवमानः, सोम । छंद—गायत्री)

पुनानो अक्रमीदभि विश्वा मृधो विचर्षणिः । शुम्भन्ति विप्रं धीतिभिः ।१। आ योनिमरुणो रुहद्गमदिन्द्रं वृषा सुतः । ध्रुवे सदसि सीदति ।२। नू नो रयिं महामिन्द्रो ऽस्मभ्यं सोम विश्वतः आ पवस्व सहस्रिणम् ।३। विश्वा सोम पवमान द्युम्नानीन्दवा भर । विदाः सहस्रिणीरिषः।४। स नः पुनान आ भर रयिं स्तोत्रे सुवीर्यम् । जरितुर्वर्धया गिरः ।५। पुनान इन्दवा भर सोम द्विबर्हसं रयिम् । वृषन्निन्दो न उक्थ्यम् ।६।२०

सबके देखने वाले सोम हिंसकों का उल्लंघन करते हैं । उस सोम को स्तोतागण स्तुतिओं से सजाते हैं ।१। यह अरुण वर्णवाले सोम द्रोण-कलश को प्राप्त होते हैं फिर कामनाओं के देने वाले होकर इन्द्र की ओर गमन करते हुए यथास्थान पहुँचते हैं ।२। हे सोम ! निष्पन्न होकर तुम हमको सब ओर से बहुत सा धन लाकर दो । । हे सोम ! तुम हमको सहस्रों प्रकार के धन और अनेक प्रकार से अन्न लाओ ।४। हे सोम ! तुम निष्पन्न होकर पुत्रों से सम्पन्न धन लाकर स्तुतियों को अलंकृत करो ।५। हे सोम ! शुद्ध होते समय तुम आकाश-पृथिवीमें बढ़े हुए धनों को हमारे पास लाओ ।६। (३०)

सूक्त ४१

(ऋषि–मेध्यातिथिः । देवता–पवमान-, सोमः । छंद–गायत्री)

प्र ये गावो न भूर्णयस्त्वेषा अयासो अक्रमुः । घ्नन्तः कृष्णामप त्वचम् ।१। सुवितस्य मनामहे ऽति सेतुं दुराव्यम् । साह्वांसो दस्युमव्रतम् ।२। शृण्वे वृष्टेरिव स्वनः पवमानस्य शुष्मिणः । चरन्ति विद्युतो दिवि ।३। आ पवस्व महीमिषं गोमदिन्दो हिरण्यवत् । अश्वावद्वाजवत् सुतः ।४। स पवस्व विचर्षण आ मही रोदसी पृण । उषाः सूर्यो न रश्मिभिः ।५। परि णः शर्मयन्त्या सोम विश्वतः । सरा रसेव विष्टपम् ।६।३१

हे स्तोता ! असुरों को मारकर विचरण करने वाले जल के समान द्रव, तेजयुक्त और निष्पन्न सोम की भले प्रकार स्तुति करो ।१। दुष्ट बुद्धि को तिरस्कृत करते हुए हम सोमके निमित्त राक्षसों को मारने वाली स्तुति करते हैं ।२। बलवान् सोम के तेज से अभिषव किये जाते समय अन्तरिक्ष में घूमते हैं और सोम का शब्द, वर्षा के शब्दके समान ही सुनाई पड़ता है ।३। हे सोम ! निष्पन्न होकर तुम गौ, अश्व पुत्रादि से सम्पन्न धन का प्रेरण करो ।४। हे सोम ! तुम बहो ! सूर्य के द्वारा दिनों को पूर्ण किये जाने के समान तुम आकाश पृथिवी को पूर्ण करो ।५। हे सोम ! जैसे नदियाँ पृथिवी को पूर्ण करती है, वैसे ही तुम अपनी कल्याणमयी धाराओं से सम्पन्नता दो ।६। (३२)

सूक्त ४२

(ऋषि–मेध्यातिथिः । देवता–पवमानः, सोमः । छंद–गायत्री)

जनयन् रोचना दिवो जनयन्नप्सु सूर्यम् । वसानो गा अपो हरिः ।१। एष प्रत्नेन मन्मना देवो देवेभ्यस्परि । धारया पवते सुतः ।२। वावृधानाय तूर्वये पन्ते वाजसातये । सोमाः सहस्रपाजसः ।३। दुहानः प्रत्नमित् पयः पवित्रे परि षिच्यते । क्रन्दन् देवाँ अजीजनत् ।४। अभि विश्वानि वार्या ऽभि देवाँ ऋतावृधः । सोमः पुनानो अर्षति ।५। गोमन्नः सोम वीरवदश्वावद्वाजवत् सुतः । पवस्व बृहतीरिषः ।६।३२

यह सोम हरे रङ्ग के है, यह नक्षत्रों और सूर्यको उत्पन्न करते हुए नीचे गिरने वाले जलोंसे ढकते हैं ।१। यह सोम प्राचीन ढङ्ग से निष्पंन होकर देवताओं के निमित्त धारा रूप क्षरित होते है ।२। यह असंख्य सोम बढ़े हुये अन्न की प्राप्ति के लिए शीघ्र ही गिरते हैं ।३। यह रस युक्त सोम छंने को पार करते हुए शब्द करतें हैं और देवताओंको प्रकट करते हैं ।४। निष्पन्न होते समय यह सोम अपने धनों के सहित यज्ञ के बढ़ाने वाले देवताओं के अभिमुख होते हैं ।५। हे सोम ! निष्पन्न होकर तुम हमें गौ, घोड़े वीर आदि से सम्पन्न धन प्रदान करो ।६। (६२)

सूक्त ४३

(ऋषि–मेध्यातिथिः । देवता–पवमान सोमः । छंद—गायत्री)

यो अत्य इव मृज्यते गोभिर्मदाय हर्यतः । तं गीर्भिर्वासयामसि ।१। तं नो विश्वा अवस्युवो गिरः शुम्भन्ति पूर्वथा । इन्दुमिन्द्राय पीतये ।२। पुनानो याति हर्यतः सोमो गीर्भिः परिष्कृतः। विप्रस्य मेध्यातिथेः ।३। पवमान विदा रयिमस्मभ्यं सोम सुश्रियम् । इन्द्रो सहस्रवर्चसम् ।४। इन्दुरत्यो न वाजसृत् कनिक्रन्ति पवित्र आ । यदक्षारति देवयुः ।५। पवस्व वाजसातये विप्रस्य गृणतो वृधे । सोम रास्व सुवीर्यम् ।६।३३

निरन्तर गमन करने वाले सोम देवताओंके निमित्त गव्यसे मिश्रित होते हैं । हम उन सोम के लिए स्तुतियाँ करते हुए प्राप्त करते हैं ।१। रक्षा की कामना वाले स्तोत्र इन्द्र के लिए सोम को गुण युक्त करते हैं ।२। निष्पन्न किये जाते समय मेध्यातिथि के लिए यह सोम स्तुतियों से सजकर कलशमें पहुँचते हैं ।३। यह निष्पन्न होते हुए सोम हमको सुन्दर तेज वाले तथा समृद्धधन दो ।४। वे सोम युद्ध में जाते हुए घोड़े के समान शब्द करते हुए देवताओं की कामना करते हैं ।५। हे सोम ! स्तुति करने वाले मुझ मेध्यातिथि की वृद्धि के लिए सिंचित होओ । हे सोम ! मुझे सुन्दर बल वाला पुत्र और अन्न प्रदान करो ।६। (३३)

॥ षष्ठ अष्टक समाप्त ॥

सप्तक अष्टक

प्रथम अध्याय

सूक्त ४४

(ऋषि–अयास्यः । देवता–पवमानः सोमः । छन्द—गायत्री)

प्र ण इन्दो महे तन ऊर्मि न बिभ्रदर्षसि । अभि देवाँ अयास्यः ।१। मती जुष्टो धिया हितः सोमो हिन्वे परावति । विप्रस्य धारया कविः ।२। अयं देवेषु जागृविः सुत एति पवित्र आ । सोमो याति विचर्षणिः ।३। स नः पवस्व वाजयुश्चक्राणश्चारुमध्वरम् । वर्हिष्माँ आ विवासति ।४। स नो भगाय वायवे विप्रवीरः सदावृधः । सोमो देवेष्वा यमत् ।५। स नो अद्य वसुत्तये क्रतुविद्गातुवित्तमः । वाजं जेषि श्रवो बृहत् ।६।१

हे सोम ! तुम हमारे लिये महान् धन देने वाले होते हुए आगमन करते हो । अयास्य ऋषि तुम्हारी धाराओं को धारण करते हुए देव पूजन के निमित्त गमन करते हैं ।१। स्तोताओं ने सोमकी स्तुति कर यज्ञ में स्थापित किया । उस सोम की धारायें दूर देश तक गमन करती हैं ।२। यह सोम निष्पन्न होकर देवताओं की ओर गमन करते हैं । यह पहिले खंने में गिरते हैं ।३। हे सोम ! कुश-सम्पन्न ऋत्विज तुम्हारी सेवा करते हैं । तुम हमारे प्रति आकर्षित होते हुए हमारे अहिंसात्मक यज्ञ सम्पन्न करते हुए गिरो ।४। विद्वान उन सोमों को भग और वायु देवता के लिये अर्पित करते हैं, यह सदा प्रवृद्ध सोम हम यजमानों

के लिए धन प्रदान करें ।५। हे सोम ! तुम हमारे कर्मोंके अनुसार प्राप्त होने वाले लोकों के मार्गों को जानते हो । हमारे धन के लिए तुम अन्न बल पर आज अधिकार करो ।६। (१)

सूक्त ४५

(ऋषि–अयास्यः । देवता—पवमानः, सोमः । छन्द–गायत्री)

स पवस्व मदाय कं नृचक्षा देववीतये । इन्दविन्द्राय पीतये ।१। स नो अर्षाभि दूत्यं त्वमिन्द्राय तोशसे । देवान् त्सखिभ्य आ वरम् ।२। उत त्वामरुणं वयं गोभिरञ्ज्मो मदाय कम् । वि नो राये दुरो वृधि ।३। अत्यू पवित्रमक्रमीद् वाजो धुरं न यामनि । इन्दुर्देवेषु पत्यते ।४। समी सखायो अस्वरन् वने क्रीलन्तमत्यविम् । इन्दुं नावा अनूषत ।५। तया पवस्व धारया यया पीतो विचक्षसे । इन्दो स्तोत्रे सुवीर्यम् ६।२

हे सोम ! तुम देवताओं के देखने वाले हो । तुम देवताओं के आह्वान के लिए शक्ति सहित सिंचित होओ ।१। हे सोम ! तुम इन्द्र द्वारा पान किये जाते हो । हमारे लिये दौत्य कर्म वाले होकर देवताओं के पास से श्रेष्ठ वरणीय धनों को हमारे पास लाओ ।२। हे सोम ! हम तुम्हें गव्य में मिश्रित करते हैं । तुम हमारे लिये धन द्वार का उदघाटन करो ।३। जाते समय घोड़ा जैसे रथ के धुरे को छोड़ जाता है वैसे ही छंने को लाँघकर सोम देवताओं में पहुँचते हैं ।४। जब सोम छंने को लांघते हुये क्रीड़ा करते हैं तब स्तोता उनकी स्तुति करतेहैं ।५। हे सोम! तुम जिस धारा के पीने पर स्तोताको सुन्दर बल प्रदान करते हो, उसी धारा के रूप में क्षरित होओं ।३। (२)

सूक्त ४६

(ऋषि–अयास्यः । देवता–पवमानः, सोमः । छंद–गायत्री)

असृग्रन् देववीतये ऽत्यास: कृत्व्या इव । क्षरन्त: पर्वतावृध: ।१। परिष्कृतास इन्दवो योषेव पित्र्यावती । वायुं सोमा असृक्षत ।२। इते सोमास इन्दव: प्रयस्वन्तश्चमू सुता: । इन्द्रं वर्धन्ति कर्मभि:।३। आ धावता सुहस्त्य: शुक्रा गृभ्णीत मन्थिना । गोभि: श्रीणीत मत्सरम् ।४। स पवस्व धनंजय प्रयन्ता राधसो महः । अस्मभ्यां सोम गातुवित् ।५। एतं मृजन्ति मर्ज्यं पयमानं दश क्षिप: । इन्द्राय मत्सरं मदम् ।६।३

पाषाणों द्वारा कूटनेपर रस रूप सोम कर्तव्य पथमें बढ़ते हुये अश्व के समान यज्ञमें गमन करते हैं ।१। जैसे पिता द्वारा अलङ्कारों से विभूषिता कन्या पति की ओर गमन करती है,उसी प्रकार यह सोम वायुकी ओर गमन करते हैं ।२। सभी अन्न-सम्पन्न होकर यज्ञमें इन्द्र को हर्षित करतें हैं ।३। हे ऋत्विजो ! तुम्हारी भुजायें सुन्दर कर्म वाली हैं । तुम शीघ्र यहाँ आओ और इस उज्ज्वल सोम को मथानोंसे मथो । फिर इसे गव्यादि के मिश्रण से सुस्वादु बनाओ ।४। तुम शत्रु के धनों को जीतने वाले और अभीष्ट मार्ग पर ले जाने वाले हो । तुम हमारे लिए अपरिमित धन देने वाले होकर गिरो।५। दशों उङ्गलियाँ हर्षकारी और क्षरण धर्मा सोम को छंने में शुद्ध करती है ।६।   (३)

सूक्त ४७

(ऋषि—कविर्भार्गव: । देवता—पवमान:, सोम: । छंद—गायत्री)

अया सोम: सुकृत्यया महश्चिदभ्यवर्धत । मन्दान उद्वृषायते ।१। कृतानीदस्य कर्त्वा चेतन्ते दस्युतर्हणा । ऋणा च धृष्णुश्चयते ।२। आत् सोम इन्द्रियो रसो वज्रः सहस्रसा भुवत् । उक्थं यदस्य जायते ।३। स्वयं कविर्विधर्तरि विप्राय रत्नमिच्छति । यदी मर्मृज्यते धिय: ।४। सिषासतू रयीणां वाजेष्वर्वतामिव । भरेषु जिग्युषामसि ।५।४

यह सोम श्रेष्ठ संस्कार कर्म द्वारा वृद्धि को प्राप्त हुये हैं और प्रसन्न होकर जलवान् वृषभके समान शब्द करने वाले हैं ।१। इस सोम को हमने असुर नाशक कर्म से सम्पन्न किया है । यह सोम ऋण के भी चुकाने वाले हैं ।२। इन्द्र के स्तोत्र के प्रकट होते ही इन्द्र के लिये बलवान्, वज्र के समान अहिंसनीय और हर्यश्व रस से सम्पन्न सोम धनदाता होते हुये क्षरित होते हैं ।३। उङ्गलियों द्वारा संस्कृत होने वाले सोम कामनाओं के धारण करने वाले इन्द्र से मेधावी स्तोता के लिए श्रेष्ठ धन प्राप्त कराने वाले हैं ।४। हे सोम ! जैसे रणभूमि की ओर गमनशील अश्वों को तृणादि देते हैं, वैसे ही तुम भी रणभूमि में पशुका पराभव करने वाले को धन प्रदान करते हो ।४।   (४)

सूक्त ४८

(ऋषि—कविर्भार्गवः । देवता—पवमानः, सोमः । छंद—गायत्री)

तं त्वा नृम्णानि बिभ्रतं सधस्थेषु महो दिवः । चारुं सुकृत्ययेमहे ।१। संवृक्तधृष्णुमुक्थ्यं महामहिव्रतं मदम् । शतं पुरो रुरुक्षणिम् ।२। अतस्त्वा रयिमभि राजानं सुक्रतो दिवः । सुपर्णो अव्यथिर्भरत्।३। विश्वस्मा इत् स्वर्दृशे साधारणं रजस्तुरम् । गोपामृतस्य विर्भरत्।४। अधा हिन्वान इन्द्रियं ज्यायो महित्वमानशे । अभिष्टिकृद्विचर्षणिः ।५।५

हे सोम ! तुम स्वर्ग के निवासी, देवताओं में स्थित और धनों के धारण करने वाले हो । तुम्हारे माध्यम द्वारा यज्ञ करते हुये तुमसे धन माँगते हैं ।१। हे सोम ! तुम प्रशंसनीस, श्रेष्ठ कर्म वाले शत्रुओं के हन्ता और शत्रुओं के दृढ़ नगरोंके तोड़ने वाले हो ! अतः तुमसे हम धन की याचना करते हैं ।२। हे सुन्दरकर्मा सोम ! तुम धनों के स्वामी हो । तुम्हें बाज स्वर्ग से सुगमतापूर्वक यहाँ लाया था ।३। यज्ञ के संरक्षक, जलप्रेरक और स्वर्ग में निवास करने वाले देवताओं के लिये बाज

सोम को स्वर्ग से लाया था ।४। हे सोम ! तुम यजमानों के अभीष्टों को देखने वाले और मनुष्यों के कर्मों को सूक्ष्मता से देखने वाले हो । तुम अपनी स्तुति के योग्य महिमा को पाते हो । (५)

सूक्त ४९

ऋषि—कविर्भार्गव । देवता—पवमानः सोमा । छंद—गायत्री)

पवस्व वृष्टिमा सु नो ऽयामूर्मिं दिवस्परि । अयक्ष्मा बृहतीरिषः।१। तया पवस्य धारया यया गाव इहागमन् । जन्यास उप नो गृहम् ।२। घृतं पवस्व धारया यज्ञेषु देववीतमः । अस्मभ्यं वृष्टिमा पव।३। स न ऊर्जे व्यव्ययं पवित्रं धाव धारया । देवासः शृणवन् हि कम् ।४। पवमानो असिष्यदद्रक्षांस्यपजंघनत् । प्रत्नवद्रोचयन् रुचः ।५।६

हे सोम ! आकाश में जल को तरंगित करो । हमारे निमित्त बर्षा करते हुय अक्षय अन्नों से पृथिवी भर दो ।१। हे सोम ! तुम्हारी जिस धारा के प्रभाव से शत्रुओं के देशों में उत्पन्न हुई गौयें हमें प्राप्त होती हैं, उसी धारा के रूप में क्षरित होओ ।२। हे सोम ! तुम इस यज्ञ मण्डप से देवताओं की कामना करते हो । तुम हमारे लिए घृतके साथ गिरो ।३। हे सोम हमारे अन्न के निमित्त तुम छन्ना में धारा रूप से गमन करो । तुम्हारे जाने की ध्वनि को देवगण श्रवण करें ।४। यह सोम राक्षसों को संहार करने वाली अपनी दीप्तिको बढ़ाते हुये क्षरित होते हैं ।५।

सूक्त ५०

(ऋषि—लवध्यः । देवता—पवमानः, सोमः । छन्द—गायत्री)

उत् ते शुष्मास ईरते सिन्धोरूर्मेरिव स्वनः। वाणस्य चोंदया पविम्।१। प्रसवे त उदीरते तिस्रो वाचो मखस्युवः । यदव्य एषि सानवि ।२। अव्यो वारे परि प्रियं हरिं हिन्वन्त्यद्रिभिः पवमानं मधुश्चुतम् ।३। आ पवस्व मदिन्तम पवित्रं धारया कवे । अर्कस्य योनिमासदम् ।४। स पवस्व मदिन्तम गोभिरञ्जानो अक्तुभिः । इन्दविन्द्राय पीतये ।५।७

हे सोम ! तुम्हारा वेग समुद्र के समान है। धनुष से छोड़े हुये बाण के समान तुम शब्द करते हो ।१। हे सोम! तुम जब छन्नेको प्राप्त होते हो, तब तुम्हार शोधित होने पर यज्ञ करने वाले यजमान के मुख में तीन प्रकार की बाणी प्रकट होती है ।२। यह सोम पाषाणों द्वारा अभिषुत, मधुर रस से सम्पन्न हरे रंग के और देवताओं के लिए प्रिय है। ऋत्विग्गण इन्हें भेड़ के बालों पर रखते हैं ।३। हे सोम ! तुम अत्यन्त शोभन कर्म वाले और अधिक हर्ष वाले हो। तुम छन्नेको पार करते हुए इन्द्र के उदर को प्राप्त होने के लिए उनके सामने गिरो ।४। हे सोम ! तुम सुमधुर दुग्धादि से मिश्रित होकर इन्द्र के पीनेके निमित्त हर्ष प्रदायक होते हुए गिरो ।५। (७)

सूक्त ५१

(ऋषि—उचथ्यः। देवता—पवमानः सोमः। छंद–गायत्री)

अध्वर्यो अद्रिभिः सुतं पवित्र आ सृज। पुनीहीन्द्राय पातवे ।१। दिवः पीयूषमुत्तमं सोममिन्द्राय वज्रिणे। सुनोता मधुमत्तमम् ।२। तव त्य इन्द्रो अन्धसो देवा मधोर्व्यश्नते। पवमानस्य मरुतः ।३। त्वं हि सोम वर्धयन् त्सुतो मदाय भूर्णये। वृषन् त्स्तोतारमूतये ।४। अभ्यर्ष विचक्षण पवित्रं धारया सुतः। अभि वाजमुत श्रवः ।५ ८

हे ऋत्विज ! पाषाणों द्वारा पीते हुये सोमों को छंनों पर डाल कर इन्द्रके लिये संस्कृत करो। हे अध्वर्युओं ! स्वर्गके अमृतरूप, सुमधुर सोम को वज्रधारी इन्द्र के लिए निष्पीड़ित करो ।२। हे सोम ! तुम्हारे हर्ष प्रदायक रस को इन्द्र और मरुद्गण आदि देवता अपने शरीर में रमाते हैं ।३। हे सोम निष्पीड़ित के पश्चात् तुम देवताओं को हर्षित करो और कामनाओं के वर्षक होते हुये शीघ्र ही स्तोता की रक्षा के लिए तत्पर होओ ।४। हे सोम ! तुम निष्पन्न होकर छंने में पहुँचो और हमारे अन्न से सम्पन्न यश की रक्षा करो ।५। (८)

सूक्त ५२

(ऋषि–उतथ्यः । देवता–पवमानः, सोमः । छंद–गायत्री)

परि द्युक्षः सनद्रयिर्भरद्वाज नो अन्धसा । सुवानो अषपवित्र आ ।१। तव प्र नेभिरध्वभिरव्यो वारे परि प्रियः । सहस्रधारो यात् तना ।२। चरुर्न यस्तमीङ्खयेन्दो न दानमीङ्खय । वधैर्वधस्न-वींखय ।३। नि शुष्ममिन्दवेषां पुरुहूत जनानाम् । यो अस्मां आदिदेशति ।४। शतं न इन्द ऊतिभिः सहस्रं वा शुचीनाम् । पवस्व मंहयद्रयिः ।५।९

हे सोम ! तुम धनदाता हो । छने में क्षरित होते हुए तुम हमारे बल को बढ़ाने वाले होओ ।१। हे सोम ! तुम्हारी धाराओं से देवता हर्षित होते हैं । उनके बढ़ते हुए तुम छंने की ओर जाते हो ।२। हे सोम ! चरु के समान खाद्यको हमें दो । तुम पाषाण द्वारा ताड़ित किये जाने पर प्रवाहित होते हो । अतः पाषाणों से कूटे जाकर रस रूप से प्रकट होओ । । हे सोम ! तुम बहुतों द्वारा आहूत हो । हमारे जिन शत्रुओंका बल हमें संग्रामके लिए आमन्त्रित करता है, तुम उन शत्रुओं को हमसे दूर भगाओ ।४। हे सोम ! तुम धनदाता हो । अपनी स्वच्छ धाराओं सहित बढ़ते हुए तुम हमारे पालक होओ ।५ (९)

सूक्त ५३

(ऋषि–अवत्सारः । देवता—पवमान, सोम । छंद–गायत्री)

उत् ते शुष्मासो अस्थू रक्षो भिन्दन्तो अद्रिवः नुदस्व याः परिस्पृधः ।१। अया निजघ्निरोजसा रथसङ्गे धने हिते । स्तधा अबिभ्युषा हृदा ।२। अस्य व्रतानि नाधृषे पवमानस्य दूढ्या । रुज यस्त्वा पृतन्यति।३। तं हिन्वन्ति मदच्युत हरिं नदीषु वाजि-नम् । इन्दुमिन्द्राय मत्सरम् ।४।१०

हे सोम ! तुम्हें पाषाण ही प्रकट करता है । जब तुम रस रूप होता हो तब तुम्हारा असुर-हन्ता वेग उत्पन्न होता है। अपने उसी वेग

से हमारी बाधक शत्रु-सेनाओं को रोको ।१। हे सोम ! मैं भयसे रहित होता हुआ शत्रुओं द्वारा रथपर ले जाते हुये धनोंके लिए स्तोत्र करता हूँ, क्योंकि तुम शत्रुओंके नाश करनेमें समर्थ हो ।२। हे सोम ! तुम्हारे तेज को सहने में असुर भी समर्थ नहीं है । तुम्हारे साथ संग्राम के इच्छुक का नाश करो ।३। हरे रंग के इन हर्ष प्रदायक सोमों को इन्द्र के लिये ऋत्विज जलों में युक्त करते हैं ।४। (१०)

सूक्त ५४

(ऋषि-नवत्सारः । पवमानः, सोमः । छंद-गायत्री)

अस्य प्रत्नामनु द्युतं शुक्रं दुदुह्रे अह्रयः । पयः सहस्रसामृषिम्।१
अयं सूर्य इवोपदृगयं सरांसि धावति । सप्त प्रवत आ दिवम् ।२
अयं विश्वानि तिष्ठति पुनानो भुवनोपरि । सोमो देवो न सूर्यः ।३
परिणो देववीतयो वाजाँ अर्षसि गोमतः। पुनान इन्दविन्द्रयुः४।११

सोम के प्राचीन काल से दुहें जाते तेजस्वी रस का मेधावी जन दोहन करते हैं ।१। यह सोम सब विश्व को सूर्य के समान ही देखते हैं । यह स्वर्ग और सप्त नदियों को भी व्याप्त किये हुए हैं । यह तीसों दिन-रात्रि की ओर गमनशील है ।२। यह निष्पन्न सोम सूर्य के समान ही सब लोकों से ऊपर निवास करते हैं ।३। हे सोम ! तुम निष्पन्न होकर इन्द्र की कामना करते हो हमारे इस यज्ञ में गौओ से सम्पन्न अन्न सब ओर से हमें प्राप्त कराओ ।४।

सूक्त ५५

(ऋषि-अवत्सारः । देवता-पवमानः, सोमः । छंद-गायत्री)

यवंयव नो अन्धसा पुष्टंपुष्टं परि स्रव । सोम विश्वा च सौभगा ।१। इन्द्रो यथा तव स्तवो यथा ते जातमन्धसः । नि बर्हिषि प्रिये सदः ।२। उत नो गोविदश्ववित् पवस्व सोमान्धसा। मक्षूतमेभिरहभिः ।३। यो जिनाति न जीयते हन्ति शत्रुमभीत्य। स पवस्व सहस्रजित् ।४।१२

हे सोम ! हमको असंख्य गौ आदि से युक्त अन्न और सुन्दर भाग्य वाला धन प्रदान करो । हे सोम ! हवने तुम्हारी अन्न वाली स्तुति कही है । तुम हमारे हर्षप्रद कुश पर विराजमान होओ । हे सोम ! तुम हमको अश्वों और गौओं के देने वाले हो । तुम शीघ्र ही अन्न के साथ गिरो । हे सोम ! तुम असंख्य वैरियोंके जीतने वाले हो । शत्रुओं को गिराते हो हे सोम ! तुम गिरो ।१-४।

(१२)

सूक्त ५६

(ऋषि-अवत्सारः । देवता पवमानः सोमः । छंद-गायत्री)

परि सोम ऋत बृहदाशुः पवित्रे अर्षति । विघ्नन् रक्षांसि देवयुः ।१। यत् सोमो वाजमर्षति शतं धारा अपस्युयः इन्द्रस्य सख्यमाविशन् ।२। अभि त्वा योषणो दश जारं न कन्यानूषत । मृज्यसे सोम सातये ।३। त्वमिन्द्राय विष्णवे स्वादुरिन्द्रो परि स्रव । नृन् त्स्तोतृन् पाह्यंहसः ।४ १३

देवताओं की कामना करने वाले सोम छंना में गिरकर प्रचुर अन्न देने वाले और असुरों के नाशक होते हैं ।१। कर्म की इच्छा करने वाली सोम की सौ धारायें जब इन्द्र से संख्य भाव स्थापित करती हैं, तब सोम के द्वारा ही हमको अन्न लाभ होता है ।२। जैसी स्त्री अपने प्रिय पुरुष को बुलाती है, वैसे ही सोम ! हमारी दशों उँगलियां इसे धन प्राप्त कराने के उद्देश्य से तुम्हें इन्द्र के लिये शोधती हैं ।३। हे सोम ! तुम अत्यन्त मधुर रस वाले हो । इन्द्र और विष्णु के निमित्त निष्पन्न होते हुए गिरो । तुम हमारे कर्मों के प्रेरक हो, अतः पाप से मुक्त करो ।४।

(१०)

सूक्त ५७

(ऋषि-अवत्सारः । देवता-पवमानः सोमः । छंद-गायत्री)

प्र ते धारा असश्चतो दिवो न यन्ति वृष्टयः । अच्छा वाज सहस्रिणम् ।१। अभि प्रियाणि काव्या विश्वा चक्षाणो अर्षति ।

हरिस्तुञ्जान आयुधा।२। स मर्मृजान रिभो राजेव सुव्रतः । श्येनो न वंसु षीदति ।३। स नो विश्वा दिवो वसूतो पृथिव्या अधि । पुनान इन्दवा भर ।४।१४

आकाश से होने वाली जलवृष्टि जैसे मनुष्यों को अन्न प्रदान करती है, वैसे ही हे सोम! तुम्हारी श्रेष्ठ धारा भी हम अन्नाभिला-षियों को अभीष्ट देती हैं ।१। हरे रंग के सोम, देवताओ के प्रिय कर्मोके दृष्टा होते हुए और राक्षसों को अपने अस्त्रोंसे दबाते हुए यज्ञ मंडप में आगमन करते हैं ।२। मनुष्यों के द्वारा निष्पन्न होने वाले सुन्दर कर्मो से युक्त यह सोम राजा और बीजके समाम भय रहित होते हुए जलमें निवास करतेहैं ।३। हे सोम ! तुम निष्पीड़ित होकर दिव्य और पार्थिव सभी धनों को यहाँ लाओ ।४।　　(१४)

सूक्त ५८

(ऋषि-अवत्सारः । देवता-पवमानः सोमः । छंद-गायत्री)

तरत् स मन्दी धावति धारा सुतस्यान्धसः । तरत् स मन्दी धावति ।१। उस्रा वेद वसूनां मर्तस्य देव्यवसः । तरत् स मन्दी धावति ।२। ध्वस्रयोः पुरुषन्त्योरा सहस्राणि दद्महे। तरत् स मन्दी धावति ।३। आ ययोस्त्रिंशतं तना सहस्राणि च दद्महे। तरत् स मन्दी धावति ।४।१५

यह सोम देवताओं को हर्षित करने वाले हैं । यह स्तोताओं के कल्याण के लिये गिरते हैं । निष्पंन सोमकी यह धारा अन्न रूप क्षरित होती है ।१। सोम की धारा धन सींचने वाली प्रकाश से संपन और मनुष्यों की रक्षक हैं यह प्रसंनतादायक सोम स्तोताओं का कल्याण करने के लिए क्षरित होते हैं ।२। ध्वस्र और पुरुपंति नामक राजाओने हमें सहस्र सहस्र मुद्राये प्रदान की है । यह कल्याणकारी सोम स्तोताओ को प्रसंन करते हुए क्षरित होते है ३। ध्वश्र और पुरुपन्ति नामक राजा और गे हमें तीस सहस्र वस्त्र दान में दिये हैं । यह सोम, स्तुति करने वालों का कल्याण करते हुये क्षरित होते हैं ।५।　　(१५)

सूक्त ५९

(ऋषि—अवत्सार, । देवता—पवमानः, सोमः । छन्द—गायत्री)

पवस्व गोजिदश्वजिद्विश्वजित् सोम रण्यजित्। प्रजावद्रत्नमा भर ।१। पवस्वाद्भ्यो अदाभ्यः पवस्वौषधीभ्यः। पवस्व धिषणाभ्यः ।२। त्वं सोम पवमानो विश्वानि दुरिता तर। कविः सीद नि बर्हिषि ।३। पवमान स्वर्विदो जायमानोऽभवो महान्। इन्द्रो विश्वाँ अभीदसि ।४।१६

हे सोम ! तुम गौ, घोड़े आदि सभी सुन्दर धनों के जीतने वाले हो। तुम हमारे लिए पुत्रादि से सम्पन्न धन प्राप्त कराते हुए क्षरित होओ ।१। हे सोम! तुम सूर्य रश्मियों से,जल से,औषधियों और पाषणों से प्रवाहित होओ ।२। हे सोम ! तुम दुष्टोंके सब उपद्रवों को दूर करते हुए इस कुश पर प्रतिष्ठित होओ ।३। हे सोम! तुम प्रकट होते ही पूज्य हो जाते हो और शीघ्र ही समस्त शत्रुओं के पराक्रमों को अभिभूत करते। अतः इन यजमानों को अभीष्ट दो ।४। (१६)

सूक्त ६०

(ऋषि–अवत्सारः। देवता–पवमानः, सोमः। छन्द–गायत्री)

प्रगायत्रेण गायत पवमानं विचर्षणिम्। इन्दुं सहस्रचक्षसम् ।१। तं त्वा सहस्रचक्षसमथो सहस्रभर्णसम्। अति वारमपाविषुः ।२। अति वारान् पवमानो असिष्यदत् कलशाँ अभि धावति। इन्द्रस्य हार्द्याविशन् ।३। इन्द्रस्य सोम राधसे शं पवस्व विचर्षणे। प्रजावद्रेत आ भर ।४।१७

हे संस्कार को प्राप्त सोम ! तुम सहस्राक्ष हो। हे स्तोताओ ! इन सोम को स्तोत्रों से पूजा करो ।१। हे सोम ! तुमको ऋत्विगण अभिषुत करते और भेड़ के बालों पर छानते हैं ।२। भेड़ के लोम से गिरते हुए सोम कलश को प्राप्त होते हैं। फिर इन्द्र के हृदय में रमण

करते हैं ।३। हे सोम ! तुम इन्द्र के पूजन के निमित्त क्षरित होते हुए, हमको पुत्रादि वाला धन प्रदान करो ।४। (७)

सूक्त ६१ [तीसरा अनुवाक]

(ऋषि–अमहीयुः । देवता–पवमानः, सोमः । छन्द–गायत्री)

अया वीती परि स्रव यस्त इन्दो मदेष्वा । अवाहन् नवतीर्नव ।१ पुरः सद्य इत्थाधिये दिवोदासाय शम्बरम् । अध त्यं तुर्वशं यदुम् परि णो अश्वमश्वविद्गोमदिन्दो हिरण्यवत् । क्षरा सहस्रिणी-रिषः ।३। पवमानस्य ते वयं पवित्रमभ्युन्दतः । सखित्वमा वृणी महे ।४। ये ते पवित्रमूर्मयो ऽभिक्षरन्ति धारया । तेभिर्नः सोम मृलय ।५।१८

हे सोम ! तुम्हारे जिस रस ने युद्ध करते हुए राक्षसों के निन्या नवे पुरों को तोड़ा था, उसी रस के सहित इन्द्र के पीने के लिए प्रवाहित होओ ।१। शम्बर के नगरों की तोड़ने वाले सोमरस ने ही उस शत्रु को दिवोदास के अधीन किया । फिर उसके अन्य शत्रु तुर्वश और यदुओं को भी वशीभूत किया ।२। हे सोम ! गो घोड़े और सुवर्णयुक्त धनों को हमें बाँटों क्योंकि तुम अश्वादि धनों के दाता हो । । हे सोम! तुम छन्ने को भिगो देने वाले हो । हम तुम्हारी मित्रता चाहते हैं ।४। हे सोम ! तुम्हारी जो धारायें छन्नेकी चारों ओर क्षरित होती है उनसे हमें सुखी करो ।५।

स नः पुनान आ भर रयिं वीरवतीमिषम् । ईशानः सोम विश्वतः ।६। एतमु त्यं दक्ष क्षिपो मृजन्ति सिन्धुमातरम् । समादित्येभिरख्यत ।७। समिन्द्रेणोत वायुना सुत एति पवित्र आ । सं सूर्यस्व रश्मिभिः ।८। स नो भगाय वायवे पूष्णे पवस्व मधुमान् । चारुर्मित्रे वरुणे च ।९। उच्चा ते जातमन्धसो दिवि षद्भूम्या ददे । उग्रं शर्म महि श्रवः ।१०।१९

हे सोम ! तुम संसार भर के स्वामी हो । तुम निष्पन्न होकर

पुत्रादि सम्पन्न अन्न धन लाओ।६। नदियाँ जिन सोमों की माता हैं, उन सोमों को दशों उङ्गलियाँ मलती हैं, तब वे सोम आदित्यों के पास गमन करने वाले होते हैं।७। यह निष्पन्न सोम छन्ने से गिरते हुए इन्द्र वायु और सूर्य की रश्मियोंसे संगत होते हैं।८। हे सोम ! तुम निष्पन्न और मधुर रस से सम्पन्न हो। तुम भग, पूषा, मित्र, वरुण और वायु देवताओं के हर्ष के निमित्त क्षरित होओ।९। हे सोम ! तुम्हारा अन्न स्वर्ग में प्रकट होता है और अन्नरूप सुख पृथ्वीपर प्रकट होता है।१०। (१७)

एना विश्वान्यर्य आ द्युम्नानि मानुषाणाम्। सिषासन्तो वनामहे।११। स न इन्द्राय यज्यवे वरुणाय मरुद्भ्यः। वरिवोवित् परि स्रव।१२। उपो षु जातमप्तुरं गोभिर्भङ्गं परिष्कृतम्। इन्दुं देवा अयासिषुः।१३। तमिद्वर्धन्तु नो गिरो वत्सं संशिश्वरीरिव। य इन्द्रस्य हृदंसनिः।१४। अर्षा णः सोम शं गवे धुक्षस्व पिप्युषीमिषम्। वर्धा समुद्रमुक्थ्यम्।१५।२०

हम अपने सब सुखों को इन सोमों की सहायता से ही प्राप्त करते हैं जब इन्हें बाँटने की इच्छा करेंगे तभी बाँट लेंगे।१०। हे सोम निष्पन्न होकर इन्द्र, वरुण और मरुद्गण के लिए क्षरित होओ, क्योंकि तुम अन्न देने वाले हो।१२। यह सो॰ जलों द्वारा प्रेरित, शत्रुओं को मर्दित करने वाले दूध आदि द्वारा सँस्कारित हैं। इनको देवता प्राप्त होते हैं।१३। इन्द्र के हृदय में रमण करने वाला सोम हमारे स्तोत्र से प्रवृद्ध हो। पयस्विनी मातायें जैसे अपने शिशु की कामना करती हैं, वैसे ही यह स्तुतियाँ सोम की कामना करती है।।१०। हे सोम ! हम को अन्न प्रदान करो। हमारी गौओं को सुखी करो। निर्मल जलों की वृद्धि करो।१५। (३०)

पवमानो अजीजनद्दिवश्चित्रं न तन्यतुम्। ज्योतिर्वैश्वानरं बृहत्।१६। पवमानस्य ते रसो मदो राजन्नदुच्छुनः। वि वारमव्यमर्षति।१७। पवमान रसस्तव दक्षो वि राजति द्युमान्।

ज्योतिर्विश्वं स्वर्दृशे।१८। यस्ते मदो वरेण्यस्तेना पवस्वान्धसा। देवावीरघशंसहा।१९। जघ्निर्वृत्रममित्रियं सस्निर्वाजं दिवेदिवे। गोषा उ अश्वसा असि।२०।२१

सोम ने गिरते समय वैश्वानर अग्न की स्वर्ग के वैचित्र्यको बढ़ाने के लिए प्रकट किया।१६। हे सोम ! तुम्हारा हर्षप्रदायक रस मेंषलोम की ओर गमन करता है।१७। हे क्षरणशील सोम ! तुम्हारा रस बढ़ता हुआ क्षरित होता है और सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को व्याप्त करता हुआ स्वर्ग दीप्तिमय होकर उसे देखता है।१८। हे मोम! जो देवताओं की कामना वाला शत्रु-नाशक और स्तुत्य तुम्हारा रज हैं, उसके सहित तुम अन्नके साथ स्रवित होओ।१९। हे सोम ! तुमने शत्रु को मारा हैं। तुम नित्य हो रणक्षेत्र के आश्रित होते हों। तुम गौ ओप अश्वों को देते हों।२०।

(२४)

संमिश्लो अरुषो भव सूपस्थाभिर्न घेनुभिः। सीदञ्छ्येनो न योनिमा।२१। स पवस्व य आविथेन्द्रं वृत्राय हन्तवे। वव्रिवांसं महीरपः।२२। सुवीरासो वयं धना जयेम सोम मीढ्वः। पुनानो वर्ध नो गिरः।२३। त्वोतासस्तवावसा स्याम वन्वन्त आमुरः। सोम व्रतेषु जागृहि।२४। अपघ्नन् पवते मृधो ऽप सोमो अराव्णः। गच्छन्निन्द्रस्य निष्कृतम्।२५।२२

हे सोम ! तुम गव्यादिसे मिश्रित होते हुए, बाजके समान द्रुतगति वाले होकर अपने स्थान पर बैठो।२१। हे सोम ! वृत्र ने जब जलोंको रोका था,तब उसका संहार करनेके समय तुमने इन्द्रकी रक्षाकी थी ऐसे गुण वाले तुम इस यज्ञ में क्षरित होओ।२२। हे सोम ! हम अंगिरस अमहीयु आदि बैरियों के धनपर अधिकार करने वाले हो। तुम सेंचन-समर्थ होते हुए हमारी स्तुतियों को बढ़ाओ।२३। हे सोम ! तुम्हारी रक्षायें पाकर हम अपने शत्रुओं को मार डालें। तुम हमारी रक्षा में सावधान रहो।२४। हे सोम ! तुम अदानियों और बैरियों का वध हुए क्षरित होओ।२ ।

(२५)

महो नो राय आ भर पवमान जही मृध्रः । रास्वेन्दो वीरवद्यशः ।२६। न त्वा शतं चन ह्रुतो राधो दित्सन्तमा मिनन् । यत् पुनानो मखस्यसे ।२७। पवस्वेन्द्रो वृषा सुतः कृधी नो यशसो जने । विश्वा अप द्विषो जहि ।२८। अस्य ते सख्ये वयं तवेन्दो द्युम्न उत्तमे । सासह्याम पृतन्यतः ।२९। या ते भीमान्यायुधा तिग्मानि सन्ति धूर्वणे । रक्षा समस्य नो निदः ।३०।२३

हे सोम ! शत्रुओंको नष्ट करो । हमारे लिए धन लाओ पुत्रादि से सम्पन्न यश दो ।२६। हे सोम ! अपने शोधनकाल में जल तुम हमें धन देना चाहते हो और जब हमको अन्नादि से सम्पन्न करने के इच्छा करते हो, तब सौ शत्रु भी तुम्हें हिंसित करनेमें समर्थ नहीं होते ।२७। हे सोम ! तुम हमारे यश को सब देशों से विस्तृत करो और हमारे बैरियों को नष्ट करो ।२८। हे सोम ! हम इस यज्ञ में तुम्हारी मैत्रीको प्राप्त करेंगे और तब हम श्रेष्ठ अन्न से बलवान् होकर युद्धकी कामना वाले अपने शत्रुओं का संहार करेंगे ।२९। हे सोम ! तुम्हारे जो आयुध शत्रु का हनन करने वाले, भयङ्कर और तीक्ष्ण हैं, उनके द्वारा हमें शत्रुओं द्वारा प्राप्त होने वाले अपयश से बचाओ ।३०। (२६)

सूक्त ६२

(ऋषि—जमदग्निः । देवता—पवमानः, सोमः । छन्द—गायत्री)

एते असृग्रमिन्दवस्तिरः पवित्रमाशवः विश्वान्यभि सोभगा ।१। विघ्नन्तो दुरिता पुरु सुगा तोकाय वाजिनः । तना कृण्वन्तो अर्वते ।२। कृण्वन्तो वरिवो गवे ऽभ्यर्षन्ति सुष्टुतिम् । इलामस्मभ्यं संयतम् ।३। असाव्यंशुर्मदायाऽप्सु दक्षो गिरिष्ठाः । श्येनो न योनिमासदत् ।४। शुभ्रमन्धो देववातमप्सुधूतो नृभिः सुतः । स्वदन्ति गावः पयोभिः ।५।२४

यह सोम छन्ने के पास शीघ्रतापूर्वक इसलिए लाये जाते हैं कि यह हमें सब सौभाग्य प्रदान करेंगे ।१। यह बलवान् सोम हमारे पुत्रादि को सुख देने वाले तथा हमारे पापों को दूर करने वाले हैं । इन्हें हम

इसलिए छन्नेके समीप ले जाते हैं ।२। यह सोम हमारी गौओं को और हमको अन्न प्रदान करते हुए हमारे स्तोत्रों की ओर गमन करते हैं ।३। हें सोम ! तुम पर्वत में उत्पन्न होते, जल में बढ़ते और हर्ष के लिए निष्पन्न होते हो । वेगवान् बाजके समान यह भी अपने स्थान को वेग से प्राप्त होते हैं ।४। ऋत्विजों द्वारा वसतीवरों से झंकृत सोम देवताओं के लिए निवेदित और सुन्दर रस वाले होते हैं इन्हें गो दुग्धादि में मिश्रित करके सुस्वादु बनाते हैं ।५। (२४)

आदीमश्वं न हेतारो ऽशूशुभन्नमृताय । मध्वो रसं सधमादे ।६। यास्ते धारा मधुश्चुतो ऽसृग्रमिन्द ऊतये । ताभिः पवित्रमासदः ।७। सो अर्षेन्द्राय पीतये तिरो रोमाण्यव्यया । सीदन् योना वनेष्वा ।८। त्वमिन्दो परि स्रव स्वादिष्ठो अङ्गिरोभ्यः । वरिवोविद्घृतं पयः ।९। अयं विचर्षणिर्हितः पवमानः स चेतति । हिन्वान आप्यं बृहत् ।१०।२५

फिर ऋत्विज इन हर्षप्रदायक सोम के रस को यज्ञ स्थान में अमृतत्व की प्राप्ति के लिए विराजमान करते हैं ।६। हे सोम मधुर रस सींचने वाली तुम्हारी धारायें रक्षा के लिए प्रकट हुई, हैं, तुम उनके साथ छन्ने में प्रतिष्ठित होओ ।७। हे सोम ! भेड़ के बाल रूप छन्ने से निकल कर इन्द्रके पीने के लिए पात्रमें स्थित होओ ।८। हे सोम ! तुम हमारे लिए धन प्राप्ति में सहायक हो । तुम दूध और घृत रूप से हम आंगिरसों के लिए वर्षणशील होओ । । इन सोमों को जल में अत्यन्त अपने महान् रस को देते हुए सब जानते हैं ।१०। (२४)

एष वृषा वृषव्रतः पवमानो अशस्तिहा। करद्वसूनि दाशुषे।११। आ पवस्व सहस्रिणं रयिं गोमन्तमश्विनम् । पुरश्चन्द्र पुरुस्पृहम् ।१२ एष स्य हरि षिच्यते मर्मृज्यमान आयुभिः । उरुगायः कविक्रतुः ।१ । सहस्रोतिः शतामघो विमानो रजसः कविः । इन्द्राय पवते मदः ।१४। गिरा जात इह स्तुत इन्दुरिन्द्राय धीयते । विर्योना वसताविव ।१५।२६

यह सोम धनों की वृष्टि करने वाले, वृष्य, असुरहन्ता और टपकने वाले हैं। हविदाता यजमान इनके द्वारा धन प्राप्त करते हैं।११। हे सोम ! तुम यथेष्ट एवं बहुतों द्वारा काम्य गवादि धन के सहित क्षरणशील होओ।१२। यह क्षमतावान् सोम मनुष्यों द्वारा संस्कृत होकर सिंचित होते हैं। यह सोम अनेक स्तुतियोंसे सुशोभित होते हैं।१३। इन्द्र के लिए क्षरित होने वाले यह सोम विश्वस्रष्टा, क्रान्तकर्मा और हर्षप्रदायक हैं।१४। पक्षी के घोंसले में जाने के समान स्तोत्रों द्वारा स्तुत सोम इस यज्ञ में इन्द्र के लिए प्रस्तुत होते हैं।१५। (२६)

पवमानः सुतो नृभिः सोमो वाजमिवासरत्। चमूषु शक्मनासदम्।१६। तं त्रिपृष्ठे त्रिवन्धुरे रथे युञ्जन्ति यातवे। ऋषीणां सप्त धीतिभिः।१७। तं सोतारो धनस्पृतमाशुं वाजाय यातवे। हरिं हिनोत वाजिनम्।१८। आविशन् कलशं सुतो विश्वा अर्षन्नभि श्रियः। शूरो न गोषु तिष्ठति।१९। आ त इन्दो मदाय कं पयो दुहन्त्यायवः। देवा देवेभ्यो मधु।२०।१७

यह निष्पन्न सोम चमसों में अपने स्थानों को प्राप्त करने के लिए यज्ञ में जाते हैं।१६। ऋत्विग्गण तीन पृष्ठों वाले तीन स्थानों और सात रस्सियों वाले इस यज्ञ रूप रथ में इन सोम को देवताओं के निमित्त योजित करते हैं।१७। सोम को संस्कृत करने वाले ऋत्विजों! यह सोम धन को उत्पन्न करने वाला और बलवान् है जैसे युद्ध के लिए अश्व सजाया जाता है, वैसे ही इसे यज्ञ में जाने के लिए सजाओ।१८। गौओं में जैसे वृषभ जाते हैं, वैसे ही कलशों की ओर गमन करते हुए और सब धनों को हमें प्रदान करते हुए यह सोम निर्भय होकर वास करते हैं।१९। हे सोम ! इन्द्र आदि देवताओं के निमित्त स्तोतागण तुम्हारे मधुर रस का दोहन करते हैं।२०। (२७)

आ नः सोमं पवित्र आ सृजता मधुमत्तमम् देवेभ्योदेव श्रुत्तमम्।२१। एते सोमा असृक्षत गृणानाः श्रवसे महे। मदिन्त-

मस्य धारया ।२२। अभि गव्यानि वीतये नृम्णा पुनानो अर्षसि । सनद्वाजः परि स्रव ।२३। उत नो गोमतीरिषो विश्वा अर्ष परि-ष्टुभः गृणाना जमदग्निना ।२४। पवस्व वाचो अग्रियः सोम चित्राभिरूतिभिः । अभि विश्वानि काव्या ।२५।२८

हे ऋत्विजो ! जिनका नाम भी रुचिकर है, उन सोमों को इन्द्रादि देवताओं के निमित्त छन्ने में रखो ।२१। यह स्तुत्य सोम महान् अन्न के निमित्त अत्यन्त शक्तिशाली धाराओं से सम्पन्न होते हैं ।२२। हे निष्पन्न सोम ! तुम सेवनार्थ गव्यादि को प्राप्त करते हो और अन्न देते हुए गिरते हो ।२ । हे सोम ! मैं जमदग्नि ऋषि तुम्हारा स्तोता हूँ । तुम हमको गवादि से युक्त धन प्रदान करो ।२४। हे सोम! अपने पूज्य रक्षा-साधनों सहित हमारे स्तोत्रों पर क्षरित होओ ।२५।   (८)

त्वं समुद्रिया अपो ऽग्रियो वाच ईरयन् । पवस्व विश्वमेजय ।२६। तुभ्येमा भुवना कवे महिम्ने सोम तस्थिरे । तुभ्यमर्षन्ति सिन्धवः।२७। प्र ते दिवो न वृष्टयो धारा यन्त्यसश्चतः अभि शुक्रा मुपस्तिरम् ।२८। इन्द्रायेन्दुं पुनीतनोग्रं दक्षाय साधनम् । ईशान वीतिराधसम् ।२९। पवमान ऋतः कविः सोमः पवित्रमासदत् । दधत् स्तोत्रे सुवीर्यम् ।३०।२९

हे सोम ! तुम संसारको कँपाने वाले हो । हमारी स्तुतियोंसे प्रसंन होकर आकाश से जल वृष्टि करो ।२६। हे सोम ! यह लोक तुम्हारी महिमासे ही स्थित हैं और सब नदियाँ तुम्हारे अनुकूल चलती हैं ।२७। हे सोम ! दिव्य जलधारा के समान तुम्हारी उज्ज्वल धारायें छन्ने की ओर गमन करती हैं ।२ । हे ऋत्विजो ! बल के कारण रूप, धन के स्वामी और प्रदाता उग्रकर्म सोम को इन्द्र के लिए अर्पित करो ।२९। यह सोम क्रान्तकर्मा और सत्य रूप है । हमारे स्तोत्रों को बल देते हुए यह सोम छन्ने पर बैठते हैं ।३०।   (२९)

सूक्त ६३

(ऋषि—निध्रुविः कश्यपः । देवता—पवमानः, सोमः ।
छन्द—गायत्री)

आ पवस्व सहस्रिणं रयिं सोम सुवीर्यम् । अस्मे श्रवांसि धारय ।१। इषमूर्जं च पिन्वस इन्द्राय मत्सरिन्तमः । चमूष्वा नि षीदसि ।२। सुत इन्द्राय विष्णवे सोमः कलशे अक्षरत् । मधुमाँ अस्तु वायवे ।३। एते असृग्रमाशवो ऽति ह्वरांसि बभ्रवः । सोमा ऋतस्य धारया।४। इन्द्रं वर्धन्तो अप्तुरः कृण्वन्तो विश्वमार्यम् । अपघ्नन्तो अराव्णः ।५ ३०

हे सोम ! तुम असंख्य धन और जल सींचो । हमको अन्न प्रदान करो ।१। हे सोम ! तुम अत्यन्त हर्ष प्रदायक हो । इन्द्र को अन्न बल और रस से तुम्हीं पूर्ण करते हो चमसों में स्थित होतेहो ।२। यह प्रचुर रस वाले सोम विष्णु,वायु और इन्द्रके निमित्त निष्पीड़ित होकर द्रोण-कलश में पहुँचते हैं ।३। यह पीले रङ्ग के सोम जल के द्वारा निमित्त होते हैं और असुरों की ओर गमन करते है ।४। यह सोम इन्द्रकी वृद्धि करते हुए और हमारे लिए भी कल्याणकारी होते हुए गमन करते हैं। यह सोम-रस लोभी व्यक्तियों को नष्ट कर देते हैं ।५। (३०)

सुता अनु स्वमा रजों ऽभ्यर्षन्ति बभ्रवः । इन्द्रं गच्छन्त इन्दवः ।६। अया पवस्व धारया यया सूर्यमरोचयः । हिन्वानो मानुषीरपः ।७। अयुक्त सूर एतशं पवमानो मनावधि । अन्तरिक्षेण यातवे ।८। उत त्या हरितो दश सूरो अयुक्त यातवे । इन्दुरिन्द्र इति ब्रुवन् ।९। परीतो वायवे सुतं गिर इन्द्राय मत्सरम् । अव्यो वारेषु सिञ्चत ।१०।३१

यह निष्पन्न सोम अपने स्थान को प्राप्त करने के लिए इन्द्र की ओर गमन करते हैं ।६। हे सोम ! तुमने मनुष्यों के उपकार जलो को आकाश से वृष्टि की ओर रस से ही सूर्य को प्रकाश दिया। । अपने उसी

रस को प्रवाहित करो ।७। यह सोम अन्तरित में चलने के लिए और मनुष्यों के हित के निमित्त सूर्य के अन्न को योजित करते हैं। । इन्द्र का नामोच्चारण करते हुए यह सोम सूर्य के रथ में दशो दिशाओं में गमन करने के लिए अश्व को योजित करते हैं ।६। हे स्तोताओं ! वायु और इन्द्र के निमित्त हर्षकारी एवं निष्पन्न सोमको मेषलोम पर स्थिति करो ।१०।

पवमान विदा रयिमस्मभ्यं सोम दुष्टरम् । यो दूणाशो वनुष्यता ।११। अभ्यर्ष साहस्रणं रयिं गोमन्तमश्विनम् । अभि वाजमुत श्रवः।१२। सोमो देवो न सूर्यो ऽद्रिभिः पवते सुतः । दधानः कलशें रसम् ।१३। एते धामान्यार्या शुक्रा ऋतस्य धारया । वाजं गोमन्तनक्षरन् ।१४। सुता इन्द्राय वज्रिणे सोमासो दध्याशिरः । पवित्रनत्मक्षरन् ।१५।३२

हे सोम ! तुम्हारा जो धन शत्रुओं के लिये दुर्लभ हैं, जिस धन को हिंसक असुर भी नष्ट करने में समर्थ नहीं हैं, अपने उस धनको हमें प्रदान करो ।११। हे सोम ! हमें असंख्य गौयें, अश्व, बल, अन्न आदि श्रेष्ठ धन प्रदान करो ।१२। यह सोम सूर्य के समान दमकते हुए हैं। पाषाणों से निष्पन्न सोम-रस रूप होकर कलश में गिरते हैं ।१३। यह निष्पन्न, उज्ज्वल सोम यजमानों के घरों में अन्न, पशु आदि के रूप में स्वयं बरसते हैं ।१४। यह दूधि आदिसे मिश्रित एवं निष्पन्न सोम इन्द्र के लिए ही छन्ने में जाकर टिकते हैं ।१५।

(२३)

प्र सोम मधुमत्तमो राये अर्ष पवित्र आ । मदो यो देववीतमः।१६। तमी मृजन्त्यायवो हरिं नदीषु वाजिनम् । इन्दुमिन्द्राय मत्सरम् ।१७। आ पवस्व हिरण्यवदश्वावत् सोम वीरवत् । वाजं गोमन्तमा भर ।१८। परि वाजे न वाजयुमव्यो वारेषु सिञ्चत । इन्द्राय मधुमत्तमम् ।१९। कविं मृजन्ति मर्ज्यं धीभिर्विप्रा अवस्यवः । वृषा कनिक्रदर्षति ।२०।३३

हे सोम ! तुम्हारे अत्यन्त मधुर रस की इच्छा देवता करते हैं, उस रस को हमें धन-लाभ कराने के लिए प्रवाहित करो ।१६। यह सोम हरे रङ्ग के हैं। ऋत्विज इन्हें वसतीवरी जलों में इन्द्र के लिए संस्कारित करते हैं।१७। हे सोम हमारे लिये पशु आदि धनों को प्राप्त कराओ। अश्वादि से सम्पन्न सुवर्ण और पुत्रादि से युक्त धन हमे बाँटो ।१८। यज्ञ की कामना वाले यह सोम अत्यन्त मधुर है। हे ऋत्विजो ! इनका शोधन करो ।१६। रक्षा की कामना वाले विद्वान् जिन क्रान्त-कर्मा सोमों को अपनी दशों अँगुलियों द्वारा शुद्ध करते हैं,वह क्षरणशील सोम शब्द करते हुए कलश को प्राप्त होते हैं ।२०। (३३)

वृषणं धीभिरप्तुरं सोममृतस्य धारया। मती विप्राः समस्वरन् ।२१। पवस्व देवायुषगिन्द्रं गच्छतु ते मदः। वायुमा रोह धर्मणा ।२२। पवमान नि तोशसे रयिं सोम श्रवाय्यम्। प्रियः समुद्रमा विश ।२३। अपघ्नन् पवसे मृधः क्रतुवित् सोम मत्सरः। नुदस्वादेवयुं जनम्।२४। पवमाना असृक्षत सोमाः शुक्रास इन्दवः। अभि विश्वानि काव्या ।२५।३४

कामनाओं के वर्षक सोम को ऋत्विग्गण अपनी बुद्धि ने उँगलियों द्वारा लल के सहित प्रेरित करते हैं ।२१। हे सोम ! तुम उज्ज्वल हो। तुम्हारा हर्षकारी रस तुम्हारी कामना करने वाले इन्द्र की ओर गमन करे। तुम अपने धारक रस के सहित वायु से सुसंगत होओ ।२२। हे सोम ! तुम शत्रुओं के ऐश्वर्य को निर्मल करने वाले हो। तुम इस कलश में प्रविष्ट होओ ।२३। हे सोम ! तुम शत्रु-हन्ता और मदकारी हो, तुम देवताओं से द्वेष करने वाले असुरों को ऐश्यर्यहीन करते हो। तुम हमको सुमति प्रदान करते हुए क्षरित होओ ।२४। हे सोम ! तुम दीप्त और क्षरणशील हो। स्तोत्रों को सुनते हुए तुम ऋत्विजों द्वारा शोधित होते हो ।५। (३४)

पवमानास आशवः शुभ्रा असृग्रमिन्दवः। घ्नन्तो विश्वा अप द्विषः ।२६। पवमाना दिवस्पर्यन्तरिक्षादसृक्षत। पृथिव्या

अधि सानवि ।२७। पुनानः सोम धारयेन्द्रो विश्वा अप स्त्रिधः । जहि रक्षांसि सुक्रतो ।२८। अपघ्नन् त्सोम रक्षसो ऽभ्यर्षं कनिक्रदत् । द्यु मन्तं शुष्ममुत्तमम् ।२९। अस्मे वसूनि धारय सोम दिव्यानि पार्थिवा । इन्दो विश्वानि वार्या ।३०।३५

सब शत्रुओं के नाशक सोम सुन्दर, क्षरणशील, दीप्त और शीघ्र गामी हैं ।२ । यह सभी सोम पृथिवी के ऊंचे भाग-पर्वत, आकाश और यज्ञ स्थान में प्रकट होते हैं ।२७। हे सोम ! तुम सुन्दर कर्म वाले हो । धारा रूप से प्रवाहित होते हुए सब शत्रुओं का हनन करो ।२८। हे सोम ! हमारे शत्रुओं और असुरों को नष्ट करतेहुए तुम हमको यशश्वी बल प्रदान करो ।२९। हे सोम ! द्युलोक और पृथिवी में प्रकट अपने सब धन हमें प्रदान करो ।३०।

(३५)

सूक्त ६४

(ऋषि—कश्यपः । देवता—पवमानः, सोमः । गायत्री)

वृषा सोम द्युमाँ असि वृषा देव वृषव्रतः । वृषा धर्माणि दधिषे ।१। वृष्णस्ते वृष्ण्यं शवो वृषा वनं वृषा मदः । सत्यं वृषन् वृषेदसि ।२। अश्वो न चक्रदो वृषा सं गा इन्दो समर्वतः । वि नो राये दुरो वृधि ।३। असृक्षत प्र वाजिनो गव्या सोमासो अश्वया। शुक्रासो वीरयाशवः ।४। शुम्भमाना ऋतायुभिर्मृज्यमाना गभस्त्योः । पवन्ते वारे अव्यये ।५।३६

हे वर्षक सोम ! तुम मनुष्यों के हित करने वाले तथा देवताओं द्वारा अनुमोदित कर्मों के धारण करने वाले हो । तुम अपने उज्ज्वल गुणों के सहित बरसते हो ।१। हे सोम ! तुम्हारा बल कामनाओं को वर्षा करने वाला है । तुम्हारे अवयव तथा रस भी वर्षक है । तुम सब प्रकार से वर्णनशील और मधुर गुणों से सम्पन्न हो ।२। हे सोम ! तुम घोड़े के समान शब्द करने वाले हो । हमें अश्वादि पशु देते हुए धन द्वार का उद्घाटन करो ।३। गौ, अश्व, पत्र आदि की कामना से इस सुन्दर वेगवान् और बल सम्पन्न सोम का संस्कार किया गया है ।४।

यज्ञ करने वाले विद्वान इन सोमों को अपने हाथों से स्वच्छ करते हैं तब यह सोम मेष लोमों पर गिरते हैं ।५।

(३६)

ते विश्व! दाशुषे वसु सोमा दिव्यानि पार्थिवा । पवन्तामान्तरिक्ष्या ।६। पवमानस्य विश्ववित् प्र ते सर्गा असृक्षत । सूर्यस्येव न रश्मयः।७। केतुं कृण्वन् दिवस्परि विश्वा रूपाभ्यर्षसि । समुद्रः सोम पिन्वसे ।८। हिन्वानो वाचमिष्यसि पवमान विधर्मणि । अक्रान् देवो न सूर्यः ।९। इन्दुः पविष्ट चेतनः प्रियः कवीनां मती । सृजदश्वं रथीरिव ।१०।३७

हविदाता यजमान के निमित्त दिव्य, पार्थिव और अन्तरिक्षके सब धनों की यह सोम वृष्टि करे ।६। हे सोम ! तुम संसार के देखने वाले हो । तुम्हारी धारायें सूर्य रश्मियों के समान चमकती हुये निकल रही हैं ।७। हे सोम ! तुम हमको अन्तरिक्ष के सब रूप के अन्नों को भेजों और विभिन्न धन-रत्नादि भी हमें प्रदान करो ।८। हे सोम ! जैसे सूर्य आकाश पर आरूढ़ होते हैं वैसे ही जब तुम्हारा रस छन्ने पर आरूढ़ होता है तब तुम शब्द करते हुए मार्ग में प्रेरित होतेहो । यह सोम देवताओको प्रिय हैं । यह स्तोताओं के स्तोत्रोंमें गिरते हैं । रथी जिसप्रकार अपने अश्व को चलाता है, वैसे ही यह सोम अपनी तरंगों को चलाते हैं ।१ ।

(३७)

ऊर्भिर्यस्ते पवित्र आ देवावीः पर्यक्षरत् । सीदन्नृतस्ययोनिमा ।११। स नो अर्ष पवित्र आ मदो यो देववीतमः । इन्दविन्द्राय पीतये ।१२। इषे पवस्व धारया मृज्यमानो मनीषिभिः । इन्दो रुचाभि गा इहि ।१३। पुनानो वरिवस्कृध्यूर्जं जनाय गिर्वणः । हरे सृजान आशिरम् ।१४। पुनानो देववीतय इन्द्रस्य याहि निष्कृतम् । द्युतानो वाजिभिर्यतः ।१५।३८

हे सोम ! देवताओं की कामना करने वाली तुम्हारी तरगों छन्ने पर गिरती हैं ११। हे देवताओं की कामना करने वाले सोम ! तुम अपने हर्षकारी गुण सहित इन्द्र के पीने के लिए छन्ने पर गिरतें हो ।१२। हे सोम ! तुम ऋत्विजों द्वारा संस्कारित होकर अन्न के लिये

गिरों और गौओं की ओर वृद्धि के लिए गमन करो ।१३। हे सोम ! तुम दुग्धादि से मिश्रित किये जाते हो । निष्पन्न होने पर तुम यजमान के लिये अन्न-धन प्रदान करो।१४। हे सोम ! तुम यजमानों द्वारा लाए जाने पर, यज्ञ के निमित्त निष्पन्न होओ और इन्द्र के प्रति गमन करो ।१५।

प्र हिन्वानास इन्दवो ऽच्छा समुद्रमाशवः । धिया जूताअसृक्षत ।१६। मर्मृजानास आयवो वृथा समुद्रमिन्दवः । अग्मन्नृतस्य योनिमा ।१७। परि णो याह्यस्मयुर्विश्वा वसून्योजसा । पाहि नः शर्म वीरवत् ।१८। मिमाति वह्निरेतशः पदं युजान ऋक्वभिः । प्र यत् समुद्र आहितः ।१९। आ यद्योनिं हिरण्ययमाशुर्ऋतस्य सीदति । जहात्यप्रचेतसः ।२०।३९

यह सोम उँगलियों द्वारा उठाये जाकर अन्तरिक्ष की ओर जाते हैं। ।१६। यह विभिन्न सोम अन्तरिक्ष की ओर सरलता से गमन करते हैं और जल पात्र में प्रविष्ट होते हैं ।१७। हे सोम ! तुम हमारी शुभ कामना करते हो तुम अपने बल से हमारे सब धनोंका पालन करो और हमारे पुत्र तथा घर आदिकी भी भले प्रकार रक्षा करो ।१८। हे सोम ! वहनशील अश्व शब्द करता हुआ यज्ञमें स्तुति करने वालों द्वारा नियत स्थान पर आता है तब उस अश्व के समान सोम जल में बैठते हैं ।१९। वेगवान सोम यज्ञ के स्वर्णिम स्थान पर जब प्रतिष्ठित हो जाते हैं, तब वे स्तुतियों से सहित कर्मों को प्राप्त नहीं होते ।२०।

अभि वेना अनूषतयक्षन्ति प्रचेतसः । मज्जन्त्यविचेतसः ।२१ इन्द्रायेन्द्रो मरुत्वते पवस्व मधुमत्तमः । ऋतस्य योनिमासदम् ।२२। तं त्वा विप्रा वचोविदः परिष्कृण्वन्ति वेधसः । सं त्वा मृजन्त्यायवः ।२३। रसं ते मित्रो अर्यमा पिबन्ति वरुणः कवे । पवमानस्य मरुतः।२४। त्वं सोम विपश्चितं पुनानो वाचमिष्यसि। इन्दो सहस्रभर्णसम् ।२५।४०

सुन्दर बुद्धि वाले स्तोता सोम का स्तुतिपूर्वक पूजन करते हैं और

कुबुद्धि वाले पुरुष नरक को प्राप्त होते हैं ।२१। हे अत्यन्त मधुर सोम! इन्द्र और मरुद्गण के लिये यज्ञ मण्डप में क्षरित होओ ।२२। हे सोम! कर्म करने वाले स्तोता भले प्रकार संस्कृत करने के पश्चात् तुमको स्तुतियों से सुसज्जित करते हैं ।२३। हे सोम ! मित्र, अर्यमा, वरुण आदि देवता तुम्हारे रस का पान करते हैं ।२४। हे सोम! तुम ज्ञान से छना हुआ और बहुतों का पालन करने में समर्थ शब्द प्रेरित करते हो ।२५। (४०)

उतो सहस्रभर्णसं वाचं सोम मखस्युवम् । पुनान इन्दवा भर ।२६। पुनान इन्दवेषां पुरुहूत जनानाम् । प्रियः समुद्रमा विश ।२७। दविद्युतत्या रुचा परिष्टोभन्त्या कृपा । सोमाः शुक्रा गवाशिरः ।२८। हिन्वानो हेतृभिर्यत आ वाज वाज्यक्रमीत् । सीदन्तो वनुषो यथा ।२९। ऋधक् सोम स्वस्तये संजग्मानो दिवः कविः । पवस्व सूर्यो दृशे ।३०।४१

हे क्षरणशील सोम ! तुम सहस्रों को पालने वाला, यज्ञ की कामना युक्त वाक्य हमें प्राप्त कराओ ।२६। हे सोम ! तुम बहुतों द्वारा आहूत एवं क्षरणशील हो । तुम स्तोताओं के स्नेही रूप से कलश में स्थित होओ ।२७। यह दुग्ध में मिश्रित किये जाने वाले सोम और शब्द करने वाली दीप्तिमयी धाराओं के युक्त होते हैं ।२८। युद्ध-स्थल में पहुँचते ही वीर पुरुष आक्रमण करते हैं, उसी प्रकार यह सोम स्तुति करने वालों से प्रेरित होकर यज्ञ में छा जाते हैं ।२९। हे सोम ! तुम श्रेष्ठ बल से युक्त होते हुए सुन्दर दर्शन के निमित्त आकाश से बहो ।३०। (४१)

सूक्त २६

(ऋषि-भृगुर्वारुणिर्जमदग्निर्वा । देवता-पवमानः । सोमः ।
छन्द—गायत्री)

हिन्वन्ति सूरमुस्रयः स्वसारो जामयस्पतिम् । महामिन्दुं महीयुवः ।१। पवमान रुचारुचा देवो देवेभ्यस्परि । विश्वा वसून्या विश ।२। आ पवमान सुष्टुतिं वृष्टिं देवेभ्यो दुवः । इषे पवस्व

संयतम् ।३। वृषा ह्यसि भानुना द्युमन्तं त्वा हवामहे पवमान स्वाध्यः ।४। आ पवस्व सुवीर्यं मन्दमानः स्वायुध । इहो ष्विन्दवा गहि ।५।१

हे सोम! यह अंगुलि रूप दश स्त्रियाँ तुम्हारे निष्पीड़िनकी कामना करती हुई तुम्हें क्षरित करती है ।१। हे सोम ! तुम छन्ने द्वारा शुद्ध होकर दमकते हो । तुम देवताओं के पास से सब धनों को हमें प्राप्त कराओ ।२। हे सोम ! देवताओं की सेवा के लिए सुन्दर स्तोत्र से युक्त तृष्टि करते हुए हमें अन्न दो ।३। हे सोम! तुम इच्छित फल देने वाले हो । हम तुम्हें अपने इस सुन्दर कर्म वाले यज्ञ में आहूत करते हैं ।४। हे सोम ! तुम्हारे आयुध सुन्दर हैं । तुम हमारे यज्ञ में देवताओं को हर्ष युक्त करते हुए हमको सुंदर और बलवान् पुत्र प्रदान करो ।५। (१)

यदद्भिः परिषिच्यसे मृज्यमानो गभस्त्योः । द्रुणा सधस्थमश्नुषे ।६। प्र सोमाय व्यश्ववत् पवमानाय गायत् । महे सहस्रचक्षसे ।७। यस्य वर्णं मधुश्चुतं हरिं हिन्वन्त्यद्रिभिः । इन्दुमिन्द्राय पीतये ।८। तस्य ते वाजिनो वय विश्वा धनानि जिग्युषः । सखित्वमा वृणीमहे ।९। वृषा पवस्व धारया मरुत्वते च मत्सरः । विश्वा दधान ओजसा ।१०।२

हे सोम ! तुम भुजाओं के द्वारा वसतीवरी जल से सिंचित हो । तुम उस समय काठ के पात्र में बैठकर अपने नियत स्थान पर पहुंचते हो ।६। हे स्तोताओं ! जैसे व्यश्व ऋषि ने सोम के शोधन-कालमें स्तुति की थी, वैसे ही तुम भी निष्पन्न होने पर महिमावान् हुये सोमके लिये स्तुतियों का गान करो ।७। हे अध्वर्युओ ! तुम दस्युओं को रोकने वाले हरे मधुर और दमकते हुए सोमको इन्द्र के लिये पाषाणों मे निष्पन्न करो ।८। हे सोम! तुम शत्रुओं के सब धनों के स्वामी हो, हम तुम्हारी मैत्री चाहते हैं ।९। हे सोम! तुम इच्छित फलों के दाता हो । तुम द्रोण कलश में क्षरित होओ और इन्द्र तथा मरुद्‌गण के लिये हर्षित करो । तुम स्तुति करने वालोंको धन देते हुए अपनी शक्तियों को बढ़ाओ ।१०।

तं त्वा धर्तारमोण्योः पवमान स्वर्दृशम्‌ हिन्वे वाजेषु वाजिनम्‌ ।११। अया चित्तो विपानया हरिः पवस्व धारया युजं वाजेषु चोदय ।१२। आ न इन्द्रो महीमिषं पवस्व विश्वदर्शतः । अस्भ्यं सोम गातुवित्‌ ।१३। आ कलशा अनूषतेन्दो धाराभिरोजसा । एन्द्रस्य पीतये विश ।१४। यस्य ते मद्यं रसं तीव्रं दुहन्त्यद्रिभिः। स पवस्वाभिमातिहा ।१५।३

हे सोम ! तुम स्वर्ग-द्रष्टा: आकाश-पृथिवी के धारक और बलवान्‌ हो। मैं तुम्हें रणक्षेत्रमें प्रेरित करता हूँ ।१। हें सोम! हमारी उङ्गलियों से निष्पीड़ित होकर द्रोण कलश से गमन करो । तुम हरे रङ्ग वाले हो, अपने सखा इन्द्र को हर्षित करते हुए रणक्षेत्र में प्रेरित करो ।१२। हे सोम ! तुम संसार को प्रकाशित करने वालेहो । तुम हमको यथेष्ट अन्न दो और अन्त में स्वग के द्वार को बताओ ।१३। हे सोम ! शोधित होते हुए हमारी बलवती धाराये द्रोण-कलश में जाती हुई स्तुति करने वालों के द्वारा प्रशंसित होती है। हे क्षरणशील सोम ! तुम इन्द्र के पीने के लिए यहाँ आकर चमस में स्थित होओ ।१४। हे सोम ! तुम्हारा रस हर्ष प्रदायक है। अध्वर्यु आदि उसे पाषाणों के द्वारा दुहते हैं। तुम पापियों को नष्ट करने वाले होते हुए गिरो ।१४। (३)

राजा मेधाभिरीयते पवमानो मनावधि । अन्तरिक्षेण यातवे ।१६। आ न इन्दो शतग्विनं गवां पोषं स्वश्व्यम्‌ । वहा भगत्ति-मूतये ।१७। आ न. सोम सहो जुवो रूपं न वर्चसे भर । सुष्वा-णो देववीतये ।१८। अर्षा सोम द्युमत्तमो ऽभि द्रोणानि रोरुवत्‌ । सीदञ्छ्येनो न योनिमा ।१९। अप्सा इन्द्राय वायवे वरुणाय मरुद्भ्यः । सोमो अर्षति विष्णवे ।२०।४

यज्ञ के आरम्भ होने पर सोम की आकाश से क्षरित होकर द्रोण-कलश में जाने के लिए स्तुति की जाती हैं ।१। हे सोम ! हमारे पोषण

के लिए सहस्त्रों गौओं से सम्पन्न और सबको पुष्टि देने वाले धन को दो तथा अश्वादि से युक्त ऐश्वर्य भी दो ।१७। हे सोम ! तुम देवताओं के पीने के लिए निष्पन्न होओ तथा शत्रु के नाश में समर्थ बल और श्रेष्ठ सौन्दर्य भी हमको प्रदान करो ।१८। हें सोम ! बाज पक्षीके अपने नीड़ में जाने के समान ही यह दैदीप्यमान, उज्ज्वल और क्षरणशील सोम छन्ने में छनते हुए द्रोण-कलश को प्राप्त होते हैं ।१९। यह सोम विष्णु, वायु, वरुण, इन्द्र तथा अन्य सब देवताओं के लिए प्रवाहित होते हैं। ।२०। (४)

इषं तोकाय नो दधदस्मभ्यं सोम विश्वतः । आ पवस्व सहः स्त्रिणम्।२१। ये सोमासः परावति ये अर्वावति सुन्वि रे । ये वादः शर्यणावति ।२२। य आर्जीकेषु कृत्वसु ये मध्ये पस्त्यानाम् । ये वा जनेषु पञ्चसु ।२३। ते नो वृष्टिं दिवस्परि पवन्तामा सुवीर्यम् । सुवाना देवास इन्दवः।२४। पवते हर्यतो हरिर्गृणानो जमदग्निना हिन्वानो गोरधि त्वचि ।२५।५

हे सोम ! तुम हमको सहस्त्रों की संख्या में बल धन प्रदान करो और हमारे पुत्र को भी अन्नादि दो ।२१। दूर अथवा पास से निष्पन्न होने वाले सोम शर्यण वत् सरोवरमें उत्पन्न हुए हैं । वे श्रेष्ठ गुण वाले सोम हमको इच्छित फल प्रदान करें ।२। जो आर्जीक में, सरस्वती के किनारे और पञ्चजन में अभिषुत होने वाले सोम हैं, वे हमें इच्छित फल दें ।२३। यह उज्ज्वल सोम आकाश-म गंसे आकर सुन्दर बल वाले पुत्र और धन प्रदान करें ।२४। यह देवताओं, की कामना वाले हरेरङ्ग के सोम समदग्नि द्वारा स्तुत होकर पात्र में स्थित होते हैं ।२५। (५)

प्र शुक्रासो वयोजुवो हिन्वानासो न सप्तयः । श्रीणाना अप्सु मृञ्जत ।२६। तं त्वा सुतेष्वाभुवो हिन्विरे देवतातये । स पवस्वानया रुचा ।२७। आ ते दक्षं मयोभुवं वह्निमद्या वृणीमहे । पान्तमा पुरुस्पृहम् ।२८। आ मन्द्रमा वरेण्यमा विप्रमा मनीषि-

णम् । पान्तमा पुरुस्पृहम् ।२९। आ रयिमा सुचेतुनमा सुक्रतो तनूष्वा । पान्तमा पुरुस्पृहम् ।३०।६

जैसे जलसे घोड़ों को धोया जाता हैं, वैसे ही यह अन्नों को प्रेरित करने वाले, उज्ज्वल सोम दुग्धादिमें मिश्रित किये जाते और वसतीवरी जलों में धोये जाते हैं ।२६। हे सोम ! स्वच्छ होने के पश्चात् ऋत्विग्गण तुम्हें देवताओं के निमित्त पाषाणों के द्वारा कटते हैं। हे निष्पन्न सोम ! तुम अपनी श्रेष्ठ धाराओं के रूप में द्रोण-कलश को प्राप्त होओ ।२७। हे सोम ! हम यज्ञ करने वाले तुम्हारे रक्षक अभिलषणीय और सुखकारी बल की यज्ञ स्थान में कामना करते हैं ।२८। हे हर्षप्रदायक सोम ! तुम अनेकों द्वारा स्तुत मेधावी, सबके रक्षक और सुन्दर मति वाले हो । हम यज्ञकर्ता विद्वान तुम्हारी इच्छा करते हैं ।२९। हे सोम ! तुम हमारे पुत्रों को बुद्धि और धनोंसे युक्त करो तुम सबकी रक्षा करने वाले और अनेकों द्वारा कामना किये गये हो । हम तुम्हारी शरण लेते हैं ।३०। (६)

सूक्त ६६

(ऋषि–शत वैखानसाः । देवता–पवमानः, सोमः, अग्नि । छन्द–गायत्री, अनुष्टुप्)

पवस्व विश्वचर्षणे ऽभि विश्वानि काव्या । सखा सखिभ्य ईड्यः।१। ताभ्यां विश्वस्य राजसि ये पवमान धामनी । प्रतीची सोम तस्थतुः ।२। परि धामानि यानि ते त्वं सोमासि विश्वतः । पवमान ऋतुभिः कवे ।३। पवस्व जनयन्निषो ऽभि विश्वानि वार्या । सखा सखिभ्य ऊतये ।४। तव शुक्रासो अर्चयो दिवस्पृष्ठे वि तन्वते । पवित्र सोम धामभिः ।५।७

हे स्तुत्य सोम ! तुम हमारे मित्र और सूक्ष्म दर्शकहो । तुम हमारी स्तुतियों वाले श्रेष्ठ कर्म में गिरो ।१। हे सोम तुम अपने तिर्यक पत्रों के द्वारा सम्पूर्ण विश्वके अधिपयि हो ।२। हे सोम ! तुम श्रेष्ठ कर्म वाले हो । तुम्हारा तेज सब ओर व्याप्त है । तुम अपने उस तेज से ही सब

ऋतुओं में व्याप्त होते हुए शोभा पाते हो ।३। हे मित्र रूप सोम हमारी रक्षा के लिये हमारे स्तोत्रों को सुनते हुए तुम हमको अन्न प्रदानार्थ आगमन करो ।४। हे सोम ! तुम्हारी दैदीप्यमती रश्मियां भूलोक में जल को बढ़ाती हैं ।५।

(७)

तवेमे सप्त सिन्धवः प्रशिषं सोम सिस्रते । तुभ्यं धावन्ति धेनवः ।६। प्र सोम याहि धारया सुत इन्द्राय मत्सरः । दधानो अक्षिति श्रवः।७। समुत्वा धीभिरस्वरन् हिन्वतीः सप्त जामयः । विप्रमाजा विवस्वतः ।८। मृजन्ति त्वा समग्रुवो ऽव्ये जीरावधि ष्वणि । रेभो यदज्यसे वने ।९। पवमानस्य ते कवे वाजिन् त्सर्गा असृक्षत । अर्वन्तो न श्रवस्यवः ।१०।८

हे सोम ! सप्त नदियाँ तुम्हारी अनुवर्तिदि हैं । गायें दुग्धादि से पूर्ण करने को दौड़ती हैं ।६। हे सोम ! हमने तुम्हें इन्द्र के हर्ष के लिए ही निष्पीड़ित किया है । तुम छन्ने से द्रोण-कलश में क्षरित होओ और हमको यथेष्ट धन प्रदान करो ।७। हे सोम! तुम मेधावी और क्षरणशील हो । स्तुति करने वाले सात होताओं ने देवताओं की सेवा करने वाले यजमान के यज्ञ स्थान मे तुम्हारी स्तुति की थी ।८। हे सोम ! जब तुम वसतीवरी जलों से सीचे जाते हुए शब्द करते हो तब दशों उङ्गलियाँ तुम्हें भेड़ के बालों वाले छन्नेपर गिरती हुइ निचोड़ती हैं ।९। हे सोम? अन्न वाहक जैसे द्रुतवेगकारी होते हैं वैसे ही तुम्हारी उज्ज्वल धारायें यजमान के लिए अन्न की इच्छा करती हुई वेगसे गमन करती है ।१०।

(८)

अच्छा कोशं मधुश्चुतमसृग्रं वारे अव्यये । अवावशन्त धीतयः ।११। अच्छा समुद्रमिन्दवो ऽस्तं गावो न धेनवः । अग्मन्नृतस्य योनिमा।१२। प्र ण इन्दो महेरण आपो अर्षन्ति सिन्धवः यद्गोभिर्वासयिष्यसे।१३। अस्य ते सख्ये वयमियक्षन्तस्त्वोतयः । इन्दो सखित्वमुश्मसि ।१४। आ पवस्व गविष्टये महे सोम नृचक्षसे । एन्द्रस्य जठरे विश ।१५।९

ऋत्विजों द्वारा द्रोण कलश पर और मेवलोम पर मधुर रस वर्षक सोमों रखे जाते हैं। उन सोमोंको संस्कारित करनेको हमारी उँगलियाँ कामना करती हैं ।११। जैसे पयस्विनी गौयें अपने गोष्ठ में गमन करती हैं, वैसे ही यह सोम द्रोण-कलश में गमन करते हैं। यही सोम यज्ञ-स्थान को प्राप्त होते हैं ।१२। हे सोम ! जब तुम गव्य से मिश्रित किये जाते हो,तब हमारे यज्ञमें वसतीवरी जलगमन करते हैं ।१३। हे सोम ! हम पूजन करने वाले पुरुष तुम्हारे बन्धुत्व को प्राप्त करने वाले कर्म में लगकर तुम्हारे रक्षात्मक साधनों और मैत्री-भाव को चाहते हैं ।१४। हे सोम ! जिन इन्द्रने अङ्गिराओं को खोज निकाला था, उन महान् इन्द्र के निमित्त प्रवाहित होकर तुम उनके उदर में स्थित होओ ।१५। (९)

महाँ असि सोम ज्येष्ठ उग्राणामिन्द्र ओजिष्ठ । युध्वा सञ्छः श्वज्जिगेथ ।१६। य उग्रेभ्यश्चिदोजीयाञ्छूरेभ्यश्चिच्छरतरः । भूरिदाभ्यश्चिन्मंहीयान ।१७। त्वं सोम सूर एषस्तोकस्य साता तननाम् । वृणीमहे सख्याय वृणीमहे यज्याय ।१८। अग्न आयूंषि पवस आ सुवोर्जमिषं च नः । आरे बाधस्व दुच्छुनाम ।१९। अग्निर्ऋषिः पवमानः पाञ्चजन्यः पुरोहितः । तमीमहे महागयम् ।२०।१०

हे सोम ! तुम देवताओं को देने वाले, स्तुत्य और महान् हो तुमने शत्रुओं से संग्राम कर उनके धनों को प्राप्त किया था। तुम महान् बल वालों में भी हो ।१६। यह सोम बलवानों में बली, वीरों में वीर और देने वालोंमें अत्यन्त देने वाले हैं ।१७। हे यज्ञ-प्रेरक सोम ! तुम शोभन बल वाले हो। हमें पुत्र प्रदान करो। हमको अन्नादि धनदो। हे सोम! शत्रु के द्वारा बाधित होने पर हम तुमसे रक्षाकी याचना करते हैं और तुम्हारी मैत्री भी चाहते हैं ।१८। हे सोम ! तुम हमारे रक्षक हो। असुरों को दूर भगाओ। हमको रस और अन्न प्रदान करो ।१९। अग्नि-देव । ऋषियों, चारों वर्ण वाले मनुष्यों और निषाद के हितैषी हैं। उन्हीं अग्नि से हम अन्न और धनादि माँगते हैं ।२०। (१०)

अग्ने पवस्व स्वपा अस्मे वर्चः सुवीर्यम्। दधद्रयिं मयि पोषम् ।२१। पवमानो अति स्त्रिधो ऽभ्यर्षति सुष्टुतिम्। सूरो न विश्वदर्शतः ।२२। स मर्मृजान आयुभिः प्रयस्वान् प्रयसे हितः। इन्दुरत्यो विचक्षणः ।२३। पवमान ऋतं बृहच्छुक्रं ज्योतिरजीजनत्। कृष्णा तमांसि जंघनत् ।२४। पवमानस्य जङ्घ्नतो हरेश्चन्द्रा असृक्षत। जीरा अजिरशोचिषः ।२५।११

हे अग्ने ! तुम सुन्दर कर्म वाले हो, हमको तेजस्वी बनाओ और गौ तथा पुत्रादि प्रदान करो ।२१। सोम शत्रुओं के पार जाते हैं वे सूर्य के समान सब प्राणियों के लिए दर्शन करने योग्य हैं वे स्तुति करने वालों के सुन्दर स्तोत्र को प्राप्त होते हैं ।२२। बारम्बार शोधन योग्य सोम देवताओं का सामीप्य प्राप्त करते हैं । वे सर्वद्रष्टा सोम हितैषी और हर्षदायक अन्न से सम्पन्न है ।२३। इस सोम ने अन्धकार नाशक, दीप्त, सर्वव्यापी और उज्ज्वल तेज को प्रकट किया ।१४। यह सोम हरे रङ्ग के अन्धकार-नाशक और क्षरणशील हैं, उनकी प्रसन्नता देने वाली धाराएँ छन्ने से छन रही हैं ।२४। (११)

पवमानो रथीतमः शुभ्रेभिः शुभ्रशस्तमः। हरिश्चन्द्रो मरुद्गणः ।२६। पवमानो व्यश्नवद्रश्मिभिर्वाजसातमः। दधत् स्तोत्रे सुवीर्यम् ।२५। प्र सुवान इन्दुरक्षाः पवित्रमत्यव्ययम्। पुनान इन्दुरिन्द्रमा ।२८। एष सोमो अधि त्वचि गवां क्रीलत्यद्रिभिः। इन्द्रं मदाय जोहुवत् ।२९। यस्य ते द्युम्नवत् पयः पवमानाभृतं दिवः। तेन नो मृल जीवसे ।३०।१२

हे सोम ! तुम अपनी तरङ्गों से जगत् को व्याप्त करते हो । तुम हरे रङ्ग की धारा वाले, स्वच्छ कीर्ति वाले, क्षरणशील और मरुद्गणसे सुसङ्गत हो ।२६। यह सोम क्षरणशील, अन्न देने वाले और स्तोता को पुत्रवान् बनाने वाले हैं । यह अपनी तरङ्गों से सम्पूर्ण जगत् को व्याप्त करते हैं ।२७। यह सोम मेष लोभ वाले छन्ने से पार होते हुए गिरे हैं । यह संस्कृत होकर इन्द्रके उदरमें स्थित हो ।२८। तरङ्गों वाले यह सोम

पाषाणों से क्रीड़ा करते हैं। इन्होंने हर्षपूर्वक इन्द्र को आहूत किया है ।२९। हे सोम ! तुम्हारे पास रसरूपी अन्न हैं। उसके द्वारा हमारी दीर्घायु के लिए आनन्द दो ।२०। (१२)

सूक्त ६७

(ऋषि–भरद्वाजः, कश्यपः, अत्रिः, विश्वामित्रः, जमदग्निः, वसिष्ठः। देवता–पवमान, सोमः, अग्निः, सविता, विश्वेदेवा। छन्द–गायत्री, अनुष्टुप्, उष्णिक्)

त्वं सोमासि धारयुर्मन्द्र ओजिष्ठो अध्वरे। पवस्व मंहयद्रयिः ।१। त्वं सुतो नृमादनो दधन्वान् मत्सरिन्तमः। इन्द्राय सूरिरन्धसा।२। त्वं सुष्वाणो अद्रिभिरभ्यर्ष कनिक्रदत्। द्युमन्तं शुष्ममुत्तमम्।३। इन्दुर्हिन्वानो अर्षति तिरो वाराण्यव्यया। हरिर्वाजमचिक्रदत् ।४। इन्दो व्यव्यमर्षसि वि श्रवांसि सौभगा। वि वाजान् त्सोम गोमतः ।५। २३

हे सोम ! तुम अत्यन्त ओजस्वी हो। इस हिंसा-रहित यज्ञ में तुम स्तुति करने वालों को धन देतेहो। हे सोम ! तुम द्रोण-कलश में क्षरित होओ ।१। तुम ऋत्विजों को प्रसन्न करने वालेहो। हे सोम ! उन ऋत्विजों को धन-प्रदान करते हुए निष्पन्न अन्नके सहित इन्द्र को हर्ष प्रदान करने वाले होओ ।२। हे सोम ! तुम पाषाणोंसे पीसे जाकर शब्द करते हुए कलश की ओर गमन करो और तब शत्रु को सुखाने वाले उज्ज्वल बल से सम्पन्न होओ ।३। यह सोम लोढ़े से पीसे जाकर भेड़ के बालों वाले छन्नेपर बैठते हैं और यह हरे रंग वाले सोम अन्न को सम्बोधित करते हैं कि तुम्हारे साथ मैं इन्द्रको आहूत करता हूँ ।४। हे सोम ! भेड़ के बालों वाले छन्नेसे निष्पन्न होते हुए तुम गौओंसे युक्त बल, सौभाग्य तथा हव्य आदि को पाते हो ।५। (१३)

आ न इन्दो शतग्विनं रयिं गोमन्तमश्विनम्। भरा सोम सहस्रिणम् ।६। पवमानास इन्दवस्तिरः पवित्रमाशवः। इन्द्रं यामेभिराशत ।७। ककुहः सोम्यो रस इन्दुरिन्द्राय पूर्व्यः। आयुः

ववत आयवे ।८। हिन्वन्ति सूरमुस्रय: पवमानं मधुश्चुतम् । अभि गिरा समस्वरन् ।९। अविता नो अजाश्व: पूषा यामनियामनि । आ भक्षत् कन्यासु न: ।१०।१२

हे सोम ! तुम पात्रों में क्षरित होते हो । हमको सहस्र घोड़े गौयें और धन प्रदान करो ।६। छन्ने से छनते हुए सोम अनेक धाराओंके रूप में कलश में गिरते है ।७। यह सोम पूर्व पुरुषों द्वारा निष्पीड़ित सोम के समान ही इन्द्र के लिए द्रोण-कलश में गिरते हैं ।८। कार्य-रत हर्षकारी रसको प्रेरित करती हैं तब स्तुति करने वाले विद्वान् इनका भले प्रकार स्तव करते हैं ।९। अजवाहन वाले पूषा देवता हमारे लिए यात्राओं में रक्षक हों । वे हमें दर्शनीय वधू प्रदान करें ।१०। (१४)

अयं सोम: कपर्दिने घृतं न पवते मधु । आ भक्षत् कन्यासु न: ।११। अयं त आघृणे सुतो घृतं न पवते शुचि । आ भक्षत् कन्यासु न: ।१२। वाचो जन्तु: कवीनां पवस्व सोम धारया । देवेषु रत्नधा असि ।१३। आ कलशेषु धावति श्येनो वर्म वि गाहते । अभि द्रोणा कनिक्रदत् ।१४। परि प्र सोम ते रसो ऽसर्जि कलशे सुत: । श्येनो न तक्तो अर्षति ।१५।१५

यह सोम घृत के समान पूषा के लिए गिरें और हमें रमणीय वधू दें ।११। हे तेजस्वी पूषन् ! शुद्ध घृतके समान यह निष्पन्न सोम तुम्हारे लिए क्षरित होते हैं ।१२। हे सोम ! तुम स्तोता के स्तोत्र को उत्पन्न करने वाले हो, तुम दिव्य रत्नादि के देने वाले हो । तुम निष्पन्न होकर द्रोण-कलश को प्राप्त होओ ।१३। बाज अपने घोंसले की ओर जाता हुआ जैसे शब्द करता है वैसे ही शब्द करते हुए हम सोम द्रोण-कलशमें जाते हैं ।१४। हे सोम ! तुम्हारा रस श्येन के समान सर्वत्र गमनशील है यह कलशों में विस्तार को प्राप्त होता है ।१५। (१५)

पवस्व सोम मन्दयन्निन्द्राय मधुमत्तम: ।१६। असृग्रन् देववीतये वाजयन्तो रथा इव।१७ ते सुतासो मदिन्तमा: शुक्रा वायुमसृक्षत ।१८। ग्राव्णा तुन्नो अभिष्टुत: पवित्रं सोम गच्छसि ।

दधत् स्तोत्रे सुवीर्यम् ।१९। एष तुन्नो अभिण्टुतः पवित्रमति गाहते । रक्षोहा वारमव्ययम् ।२२।१६

हे सोम ! तुम अत्यन्त मधुर रससे सम्पन्न हो। तुम इन्द्रको हर्षित करते हुए आगमन करो ।१६। ऋत्विग्गण निष्पन्न और अन्न से युक्त सोम को देवताओं के लिये अर्पित करते हैं। रथ के समान यह सोमभी शत्रुओं के ऐश्वर्य को छीन लेते हैं।१७। यह उज्ज्वल, दीप्त सोम-रस वारुके लिए शोभित हुआ है।१८। हे सोम! पाषाणोंसे पीसे जाकर तुम स्तुति करने वाले को सुन्दर धन देने वाले होकर छन्नेकी ओर जाते हो ।१९। यह पाषाणों से कूट कर निकाले गये सोम-रस राक्षसों का हनन करने वाले हों। यह सोमछन्ने को पार करते हुए द्रोण-कलश में जाते हैं।२०। (१६)

यदन्ति यच्च दूरके भयं विन्दति मामिह। पवमान वि तज्जहि ।२१। पवमानः सो अद्य नः पवित्रेण विचर्षणिः। यः पोता सः पुनातु नः ।२२। यत् ते पवित्रमर्चिष्यग्ने विततमन्तरा। ब्रह्म तेन पुनीहि नः ।२३। यत् ते पवित्रमर्चिवदग्ने तेन पुनीहि नः। ब्रह्मसवैः पुनीहि नः ।२४। उभाभ्यां देव सवितः पवित्रेण सवेन च। मां पुनीहि विश्वतः २५।१७

हे सोम! दूर या पास कहीं भी स्थित भय को तुम नितांत नष्ट करो ।२१। यह सोम सबके देखने वाले और क्षरणशील है। यह छन्ने द्वारा शुद्ध हुये सोम हमारा शोधन करें ।२२। हे सोमरूप अग्ने ! तुम्हारे तेज में जो शोधन-सामर्थ्य है, उसके द्वारा हमारे शरीर को पुत्रादि के बढ़ाने वाले सामर्थ्य से सम्पन्न करो ।२३। हे अग्ने ! तुम्हारा सूर्यादि ज्योतिषी वाला तेज शुद्धकरने वाला हैं, ससे हमें शुद्ध करो और सोमके अभिषव द्वारा भी हम में पवित्रता स्थापित करो ।१४। हे सोम! तुम तेजस्वी हो, तुम्हारा तेज भी पाप के शुद्ध करने वाला है। उसके द्वारा मुझे शुद्ध करो ।२५। (१७)

त्रिभिष्ट्वं देव सवितर्वर्षिष्ठैः सोम धामभिः। अग्ने दक्षैः

पुनीहि नः ।२६। पुनन्तु मां देवजनाः पुनन्तु वसवो धिया । विश्वे देवाः पुनीत मा जातवेदः पुनीत मा जातवेदः पुनीहि मा ।२७। प्र प्यायस्व प्र स्यन्दस्व सोम विश्वेभिरंशुभिः । देवेभ्य उत्तमं हविः ।२८। उप प्रियं पनिप्नतं युवानमाहुतीवृधम् । अगन्म बिभ्रतो नमः ।२९। अलाय्यस्य परशुर्ननाश तमा पवस्व देव सोम आखुं चिदेव देव सोम ।३०। यः पावमानीरध्येत्यृषिभिः संभृतं रसम् । सर्वं स पूतमश्नाति स्वदितं मातरिश्वना ।३१। पावमानीर्यो अध्येत्यृषिभिः सभृतं रसम् । तस्मै सरस्वती दुहे क्षीरं सर्पिर्मधूदकम् ।३२।१८

हे पवमान अग्ने ! तुम अपने सर्व समर्थ तीन तेजों के द्वारा हमको पवित्र करो ।२६। इन्द्रादि देवता मुझे पवित्र करें । वसु देवता अग्नि तथा अन्य सब देवता मुझे शुद्ध करें ।२७। हे सोम ! हमारी वृद्धि करो और अपनी तरंगोंके द्वारा देवताओं के रस रूप अन्न प्रदान करो ।२८। हे सोम ! तुम आहुतियों द्वारा बढ़ने वाले हो । तुम शब्द करने वाले क्षरणशील और हर्षदायक हो । हम ऐसे तुम्हारी सेवा में नमस्कार करते हुए उपस्थित होते हैं ।२९। हे सोम। तुमने अपने तेज के सहित क्षरित होओ । हम सबके मारने वाले शत्रु का नाश करो । हे सोम ! उस आक्रमणकारी वैरी के आयुध नष्ट हो जाँय ।३०। ऋषियों द्वारा सम्पादित वेद के सारभूत सोमयुक्त सूतों का पाठ करने वाला पुरुष वायु देवता के द्वारा शुद्ध किये गये पापशून्य-अन्न को खाता है ।३१। जो पुरुष ऋषियों द्वारा सम्पादित वेद के सार रूप सोमात्मक सूक्तों का पाठ करता है उन वेद पाठों के लिये देवी सरस्वती दूध, घृत और सोम का स्वयं दोहन करती हैं ।३२।　　　　(१८)

सूक्त ६८

(ऋषि—वत्सप्रिभलिन्दनः । देवता—पवमानः सोमः । छन्द—जगती, त्रिष्टुप्)

प्र देवमच्छा मधुमन्त इन्दवो ऽसिष्यदन्त गाव आ न धेनवः ।

बर्हिषदो वचनावन्तऊधभिः परिस्रुतमुस्रिया निर्णिज धिरे ।१
स रोरुवदभि पूर्वा अचिक्रददुपारुहः श्रथयन् त्स्वादते हरिः ।
तिरः पवित्रं परियन्नुरु ज्रयो नि शर्याणि दधते देव आ वरम् ।२
वि यो ममे यम्या संयती मदः साकंवृधा पयसा पिन्वदक्षिता ।
मही अपारे रजसी विवेविददभिव्रजन्नक्षितं पाज आ ददे ।३
स मातरा विचरन् वाजयन्नपः प्र मेधिरः स्वधया पिन्वते पदम् ।
अंशुर्यवेन पिपिशे यतो नृभिः सं जामिभिर्नसते रक्षते शिरः ।४
सं दक्षेण मनसा जायते कविर्ऋतस्य गर्भो निहितो यमा परः ।
यूना ह सन्ता प्रथमं वि जज्ञतुर्गुहा हितं जनिम नेममुद्यतम् ।५।१६

जैसे दुग्ध को सींचने वालीं गौयें आनन्द देने वालीं होती हैं, वैसे ही क्षरणशील सोमके लिए हर्षदायक होते हैं। शब्द करने वाली गौयें सब और प्रवाहमान सोमसे संयुक्त होने वाले दूध को इन्द्र के लिये धारण करती है।१। वह हरे रंग वाले सोमा स्तोताओंके श्रेष्ठ स्तोत्रोंके श्रवण करते हुए वृक्षों पर आरूढ़ औषधियों को फल वाली बनाकर छन्ने में वेग से प्रवाहित होते हैं और यजमानों को उत्कृष्ट धनवान करते हुए राक्षसों का हनन करते हैं।२। सोम ने अपने साथ स्थित रहने वाली आकाश पृथिवी रचना की और उन्हें विस्तृत सामर्थ्य देने के लिये अपने रस से सिंचित किया। अधिक विस्तारमयी इन आकाश पृथिवीको बनाकर सोमने अमृतत्व से युक्त पाया।३। यह सोमआकाश पृथिवीमें घूमते और अन्तरिक्ष से जल का प्रेरण करते हैं। अन्नके साथ ही अपने स्थान में रहते है और ऋत्विजों द्वारा जौ से मिश्रित होते हुए उंगलियों से सँगति करते हुए सब प्राणियों के पालक होते हैं।४। यज्ञ में स्तुतियोंके योग्य सोम-पृथिवी पर उत्पन्न होते हैं, वे देवताओं द्वारा नियमित सूर्य में रमते हुए सर्वोदय काल में विशेषतः प्रकट होते हैं। इनमें से एक सोम गुफा में छिप जाते हैं और दूसरे उत्पन्न होते हैं।५। (१६)

मन्द्रस्य रूपं विविदुर्मनीषिणः श्येनो यदन्धो अभरत् परावतः ।
तं मर्जयन्त सुवृधं नदीष्वाँ उशन्तमंशुं परियन्तमृग्मियम् ।६

त्वां मृजन्ति दश योषणः सुतं सोम ऋषिभिर्मतिभिर्धीतिभिर्हितम्
अव्यो वारेभिरुत देवहूतिभिर्नृभिर्यतो वाजमा दर्षि सातये ।७
परिप्रयन्तं वय्यं सुषसदं सोमं मनीषा अभ्यनूषत स्तुभः ।
यो धारया मधुमाँ ऊर्मिणा दिव इयर्ति वाचं रयिषालमर्त्यः ।८
अयं दिव इयर्ति विश्वमा रजः सोमः पुनानः कलशेषु सीदति।
अद्भिर्गोभिर्मृज्यते अद्रिभिः सुतः पुनान इन्दुर्वरिवो विदत्प्रियम् ९
एवा नः सोम परिषिच्यमानो वयो दधच्चित्रतमं पवस्व ।
अद्वेषे द्यावापृथिवी हुवेम देवा धत्त रयिमस्मे सुवीरम् ।१०।२०

इस सोम रूप अन्न को पक्षी रूप वाली गायत्री स्वर्ग से लाई थी। सोम के स्वरूप को मेधावी जन जानते है । यह सोम देवताओं को अभिलाषा करने वाले,सब ओर गमनशील सब प्रकार प्रवृद्ध और स्तुत्य हैं । ऋत्विज इन्हें वसतीवरी में शुद्ध करते हैं ।६। हे सोम! तुम ऋषियों के दोनो हाथों द्वारा उत्पन्न होकर पात्रोंमें जातेहो । उनकी दशों उंगलियां तुम्हें मेषलोम वाले छन्नों पर शुद्ध करती हैं । देवाह्वाक ऋत्विकों के द्वारा तुम एकत्र किये जाते हुए स्तुयि करने वाले को अन्न प्रदान करते हो ।७। यह सोमपात्रों में गमन करने वाले, देवताओं द्वारा किए गए, सुन्दर स्थान वाले हैं । स्तोता इनका स्तव करते हैं । यह सोम वस्तोवरी जलों के साथ कलश में प्रविष्ट होते हैं। यह अमृत गुणों वाले सोम शत्रुओंके धनों को वशीभूत करते हैं ।८। आकाशसे सब जलों को प्राप्त करने वाले सोम छन्ने में छनते हुए द्रोण कलश को प्राप्त होते हैं । यह सोम पाषाणों से पिसते जल और दूध से मिश्रित होते और फिर पूर्णतया शोधित होकर स्तोताओं को उत्कृष्ट धन प्रदान करते है ।९। हे सोम! क्षरित होकर तुम हमको विविध अन्न देने वाले बनो ! हे देवताओ! हमको वीर पुत्रादिसे सम्पन्न धन प्रदान करो । हम द्यावापृथिवी कों स्तुति करते हैं ।१०। (२०)

॥ तृतीय खण्ड समाप्त ॥

एक मौन व्यक्तित्व का मौन समर्पण

—

डा० चमनलाल गौतम—एक व्यक्ति का नहीं वरन् ऐसे विशाल धार्मिक संस्थान का नाम है जो सतत् २४ वर्षों से ऋषि प्रणीत आर्ष साहित्य के शोध, प्रकाशन और व्यापक साहित्य प्रचार का कार्य देश विदेश में करता रहा है। यह उनकी तप साधना का ही परिणाम है कि किसी भी आर्थिक सहयोग के बिना वेद, उपनिषद्, दर्शन, स्मृतियाँ, पुराण व मन्त्र-तन्त्र आदि साधनात्मक साहित्य की ३०० से अधिक पुस्तकों को प्रकाशित करके घर-घर में पहुँचाने की पवित्रतम साधना कर रहें है। मन्त्र-तन्त्र, योग, वेदान्त व अन्य धार्मिक विषयों पर १५० खोज पूर्ण ग्रन्थों का लेखन, सम्पादन एक ऐसा अविस्मरणीय व असाधारण कार्य है जिस पर उनके अथक श्रम, गम्भीर अध्ययन तप, प्रतिभा और मौलिक सूझ-बूझ की स्पष्ट छाप दिखाई देती हैं। स्वस्थ साहित्य की रचना और प्रचार का उनकी जीवन योजना का यह पहला चरण पूरा हुआ।

पिछले २४ वर्षों से लगातार चल रही आध्यात्मिक साधना के महा-पुश्चरण का दूसरा चरण भी समाप्त हो रहा है। तीसरे चरण आध्यात्मिक साधनाओं और अनुभूतियों के विश्वव्यापी विस्तार का शुभारम्भ विश्व ओंकार परिवार की स्थापना के साथ बसन्तपञ्चमी की परम पवित्र बेला के साथ हो गया है। अत: उनका शेष जीवन तीसरे चरण की सफलता, ओंकार साधना में प्रविष्ट करके उच्च आध्यामिक भूमिका में प्रशस्त करता ओंकार अथवा उच्च आध्यात्मिक साहित्य की रचना व प्रचार-प्रसार को समर्पित है।

—स्वामी सत्य भक्त

विश्व ओंकार परिवार की स्थापना

✦★✦

ॐ परमात्मा का सर्वश्रेष्ठ व स्वाभाविक नाम हैं। इसे मन्त्र शिरोमणि, मन्त्र सम्राट, मन्त्र राज, बीजमन्त्र और मन्त्रों का सेतु आदि उपाधियों से विभूषित किया जाता है। इसे श्रेष्ठतम् महानतम् और पवित्रतम् मन्त्र की संज्ञा भी दी जाती है। सारे विश्व में इसकी तुलना का कोई मन्त्र नहीं हैं। ॐ सभी मन्त्रों को अपनी शक्ति से प्रभावित करता है। सभी मन्त्रों की शक्ति ओंक[illegible] ही शक्ति है। यह शक्ति और सिद्धिदाता हैं। भौतिक व आत्मिक उत्था[illegible] लिए कोई भी दूसरी श्रेष्ठ व सरल साधना नहीं है।

सभी ऋषिमुनि ॐ की शक्ति और साधना से ही अपना आत्मिक उत्थान करते रहे हैं। परन्तु आज आश्चर्य है कि ॐ का अन्य मन्त्रों की तरह व्यापक प्रचार नहीं है। इस कमी का अनुभव करते हुए विश्व ओंकार परिवार की स्थापना की गई है। आप भी अपने यहाँ इसका एक प्रचार केन्द्र स्थापित करें। शाखा स्थापना का सारा साहित्य निःशुल्क रूप से प्रधान कार्यालय, बरेली से मँगवा लें, आपको केवल इतना करना है . स्वयं ओंकारोपासना आरम्भ करके ४ अन्य मित्रों व सम्बन्धियों को प्रेरित करें और सभी संकल्प पत्र व शाखा स्थापना का प्रार्थना पत्र प्रधान कार्यालय को भिजवा दें। इस वर्ष २७००० साधकों द्वारा ९०० करोड़ मन्त्रों के जप का महापुरश्चरण पूर्ण किया जाना है। आशा है ओंकार को जन-जन का मन्त्र बनाने के इस श्रेष्ठतम् आध्यात्मिक महायज्ञ में सम्मिलित होकर महान् पुण्य के भागी बनेंगे।

विनीत :—

संस्कृति संस्थान **चमनलाल गौतम**

ख्वाजाकुतुब, वेदनगर, बरेली–२४३००३ (उ.प्र.)